हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला–१४८

भारत का भाषा सर्वेक्षण

[भाग ९]

पश्चिमी हिन्दी

सकलनकर्ता तथा सम्पादक

(स्वर्गीय) सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन

अनुवादक

डा० निर्मला सक्सेना

सुरेन्द्र वर्मा

हिन्दी समिति

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

लखनऊ

प्रथम संस्करण

१९६७

मूल्य

८ ५०

आठ रुपये, पचास पैसे

मुद्रक

नरेन्द्र भार्गव

भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी

प्रकाशकीय

सुप्रसिद्ध भाषाविद् ग्रियर्सन ने भारतीय भाषाओ का सर्वेक्षण करके उनकी उत्पत्ति, विकास, बोलनेवालो की सख्या, वाक्य-रचना, नाम एव क्रिया-पद आदि का विशद अध्ययन प्रस्तुत किया है। भारतीय भाषाओ से परिचित होने के लिए यह सर्वेक्षण शाश्वत सदर्भ के रूप मे काम आता रहेगा। उनका यह महान् कार्य कई खण्डों मे विभक्त है। ९ वे खण्ड में भारतीय आर्य भाषाओ के केन्द्रीय वर्ग में आनेवाली भाषाओ यथा, पश्चिमी हिन्दी तथा पजाबी, राजस्थानी तथा गुजराती, भीली भाषाएँ, खानदेशी आदि तथा पहाडी का उल्लेख किया गया है। इनमे पश्चिमी हिन्दी इस वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। इसका अध्ययन एक रोचक विषय है। शौरसेनी अपभ्रश से उद्भूत पश्चिमी हिन्दी सभी प्राकृतो मे सबसे अधिक सस्कृतनिष्ठ है। इसके अतर्गत पाँच बोलियाँ—हिन्दोस्तानी, बाँगरू, ब्रजभाखा, कनौजी तथा बुदेली आती है। उत्तर भारत के जिस क्षेत्र मे यह बोली जाती है, वहाँ से वस्तुत आर्य सभ्यता का प्रसार समस्त भारतवर्ष मे हुआ था। प्रस्तुत सर्वेक्षण मे पश्चिमी हिन्दी तथा उसके अतर्गत आनेवाली बोलियो का विस्तृत विवेचन किया गया है तथा स्थान-स्थान पर इन बोलियो मे पायी जाने वाली विभिन्नताओ से भी परिचय कराया गया है। सभी बोलियो तथा उनकी उप-बोलियो के उदाहरणो से यह ग्रन्थ और अधिक उपयोगी बन गया है।

आशा है कि प्रस्तुत हिन्दी रूपान्तर से न केवल भाषा विज्ञान के छात्र वरन् वे सभी लोग समान रूप से लाभ उठा सकेंगे जिन्हे भारत की विभिन्न भाषाओ और बोलियो से परिचित होने की जिज्ञासा है।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'

सचिव, हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश

प्राक्कथन

भारतीय-आर्य भाषाओ के केन्द्रीय वर्ग से सबधित नवम खण्ड के चार भाग है —
भाग १, पश्चिमी हिन्दी तथा पजाबी भाग २, राजस्थानी तथा गुजराती
भाग ३, भीली भाषाएँ, खानदेशी, आदि भाग ४, पहाडी

इनमें से तृतीय भाग का कुछ अश प्रोफेसर कोनो ने लिखा है और कुछ अश मैंने। अन्य भागों की रचना मैंने की है।

इस सर्वे के लिए प्राप्त सूचना के अनुसार केन्द्रीय वर्ग के अन्तर्गत आने वाली भाषाएँ और बोलने वालो की सख्या निम्नलिखित है —

पश्चिमी हिन्दी	३८,०१३,९२८	भीली, आदि	४,१००,६७५
पंजाबी	१२,६७७,६३९	पूर्वी पहाडी[1]	१४३,७२१
राजस्थानी	१५,८४२,०८७	मध्य पहाडी	१,१०७,६१२
गुजराती	१०,६४६,२२७	पश्चिमी पहाडी	८१६,१८१
		पूर्ण सख्या	८३,३४८,०७०

इनमें राजनीतिक तथा भाषा-भाषियो की सख्या की दृष्टि से पश्चिमी हिन्दी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। भारतवर्ष की अन्तर्प्रादेशिक भाषा हिन्दोस्तानी इसी की बोलियो के अन्तर्गत आती है। तथापि, यह स्मरणीय है कि हिन्दोस्तानी इस भाषा की प्रतिनिधि बोली नही है। आगरा तथा मथुरा के चारो ओर बोली जाने वाली ब्रजभाखा प्रतिनिधि बोली है। प्रादेशिक भाषा के रूप मे हिन्दोस्तानी उत्तर-पश्चिम की ओर पजाब की सीमा के निकट बोली जाती है। अत पश्चिमी[2] सीमा पर बोली जाने वाली पजाबी से यह यथेष्ट रूप मे मिश्रित है। पश्चिमी हिन्दी सयुक्त प्रान्त (वर्तमान उत्तर प्रदेश) के पश्चिमी भाग मे बोली जाती है तथा पजाब के मध्य भाग में पजाबी। राजपूताना मे राजस्थानी तथा गुजरात में गुजराती बोली जाती है। भीली भाषाएँ तथा इस वर्ग मे आने वाली अन्य भाषाएँ, प्रमुख रूप से,

१ पूर्वी पहाड़ी की इस संख्या में केवल भारत में निवास करने वाले भाषा-भाषियो की गणना की गयी है। इसकी मूल-भूमि नेपाल में इसके बोलने वालो की संख्या अधिक है किंतु यह ज्ञात नहीं है। अतः उपर्युक्त संख्या में उसे सम्मिलित नहीं किया जा सका है।

२ हिन्दोस्तानी पर पंजाबी का जो प्रभाव पड़ा है उसमें सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि पश्चिमी हिन्दी में 'औ' अथवा 'ओ' से अन्त होने वाली संज्ञाएँ जैसे 'छोड़ौ' अथवा 'घोड़ो' पंजाबी के समान हिन्दोस्तानी में आकारान्त हो जाती है जैसे 'घोड़ा'। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है कर्ताकारक में 'ने' परसर्ग का प्रयोग।

भील प्रदेश तथा खानदेश में बोली जाती है। किन्तु बंगाल में मिदनापुर से लेकर पंजाब के मध्यभाग तक—उत्तरी भारत में अनेक स्थानों में इसके उपनिवेश बिखरे हुए हैं।

केन्द्रीय वर्ग की भाषाओं तथा अन्य भारतीय भाषाओं के पारस्परिक संबंध का विस्तृत विवरण इस खण्ड में देना असंभव होगा क्योंकि इस प्रश्न के समाधान के लिए उत्तरी भारत की प्राचीन तथा आधुनिक सभी आर्यभाषाओं के विकास एवं प्रसार के पूर्ण इतिहास पर विचार करने की आवश्यकता होगी। अतएव भाषा सर्वे के भूमिका-खण्ड में यह विवरण देना उचित होगा किन्तु शेष सभी खण्डों के तैयार हो जाने के बाद ही भूमिका-खण्ड लिखा जा सकता है। यहाँ इतना उल्लेख कर देना पर्याप्त होगा कि पश्चिमी हिन्दी केन्द्रीय वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। पंजाबी भाषा दो विभिन्न भाषाओं के सम्मिश्रण से बनी है—पहली प्राचीन पिशाच भाषा—जिससे पश्चिमी पंजाब में बोली जाने वाली लंहदा विशेष प्रभावित हुई—तथा दूसरी मध्य-देश की प्राकृत जो पश्चिमी हिन्दी की जननी थी। दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम की ओर जब पश्चिमी हिन्दी का प्रसार हुआ तब उसी का रूप राजस्थानी हुआ किन्तु इसमें गूजर आक्रमणकारियों की भाषा का बहुत अधिक सम्मिश्रण हुआ है। गूजरों की कुछ टोलियाँ तो पश्चिम की ओर से आयी थीं और कुछ नेपाल तथा काश्मीर के मध्यवर्ती हिमालय-प्रदेश सपादलक्ष से आयी थीं। इसी प्रकार के क्रम में और आगे चलकर गुजराती आती है। पैशाची उद्गम की कोई प्राचीन उत्तर-पश्चिमी भाषा इसकी मूलाधार है। यह पैशाची सिंधी की मूल उद्गम भाषा से मिलती-जुलती रही होगी। जब पश्चिमी हिन्दी यहाँ तक फैली तो उसके सामने यह मूल प्रभाव लुप्त हो गया किन्तु इसके कुछ चिन्ह अभी तक अवशिष्ट हैं। भीली बोलियाँ अधिकांशतः अनार्य जातियों द्वारा बोली जाने वाली गुजराती के ही अविकसित रूप हैं। तीनों पहाड़ी भाषाओं का आधार भी खसों द्वारा बोली जाने वाली पैशाची से मिलती-जुलती कोई प्राचीन भाषा है। बाद में इसका स्थान गूजर आक्रमणकारियों की भाषा ने ले लिया। जैसा कि ऊपर बताया गया है, यही मिश्रित भाषा राजपूताना ले जायी गयी। कुछ समय बाद, राजपूताना से हिमालय-प्रदेश में दुबारा आकर बसे हुए लोगों की भाषा का यथेष्ट प्रभाव इस पर फिर पड़ा जो अब राजस्थानी बोलते थे। इन विभिन्न भाषाओं के विकास एवं प्रसार का विशेष विवरण प्रत्येक भाग की भूमिकाओं में मिलेगा।

इस खण्ड के चारों भाग कुछ वर्ष पहले तैयार हो गये थे और मुद्रण के लिए भेज दिये गये थे। आवश्यक और विशेष टाइपों की प्राप्ति में कठिनाई के कारण प्रथम तथा द्वितीय भागों के प्रकाशित होने में यथेष्ट विलंब हुआ। मुझे खेद है कि इस कारण इन भागों की ग्रन्थ-सूची मुखपृष्ठों पर अंकित तिथियों तक नहीं दी जा सकी है।

कैम्बरले, ११ अगस्त, १९१४

जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ

विषय पृष्ठ

उदाहरण

पश्चिमी हिन्दी

भूमिका

भौगोलिक स्थिति

प्राचीन सस्कृत भूगोलशास्त्रियो का मध्यदेश तथा पश्चिमी हिन्दी का क्षेत्र लगभग एक ही है। मध्यदेश पश्चिम मे सरस्वती तथा पूर्व में वर्तमान इलाहावाद के वीच का प्रदेश था। इसकी उत्तरी सीमा हिमालय पर्वत श्रेणी तथा दक्षिणी सीमा नर्मदा नदी थी। परम्परानुसार, इन सीमाओ के मध्य में ब्राह्मण धर्म का पवित्र देश स्थित था। यह हिंदू सस्कृति का केन्द्र तथा उसके देवी-देवताओ का इहलौकिक निवास-स्थान था। पश्चिमी हिन्दी का प्रसार पूर्व मे इलाहावाद तक नहीं है। इसकी पूर्वी सीमा लगभग कानपुर है, किंतु अन्य वातो में जिस क्षेत्र मे यह वोली जाती है वह लगभग विलकुल मध्यदेश ही है। सयुक्त प्रान्त (वर्तमान उत्तरप्रदेश) के पश्चिमी भाग, पजाव के पूर्वी ज़िलो, पूर्वी राजपूताना (राजस्थान), ग्वालियर, वुदेलखड तथा मध्यप्रान्त (वर्तमान मध्यप्रदेश) के उत्तर-पश्चिमी ज़िलो में यह स्थानीय भाषा के रूप मे वोली जाती है। इसके अतिरिक्त इसकी सवसे महत्त्वपूण वोली हिन्दोस्तानी लगभग पूरे भारतीय प्रायद्वीप में वोली और समझी जाती है तथा जनता के कुछ वर्गों की मातृभाषा भी है।

वोलियाँ

हिन्दोस्तानी

पश्चिमी हिन्दी के अतर्गत पाँच वोलियाँ आती हैं—हिन्दोस्तानी, वाँगरू, व्रजभाखा, कनौजी तथा वुन्देली। स्थानीय भाषा के रूप मे हिन्दोस्तानी पश्चिमी रुहेलखंड, गगा के ऊपरी दोआव तथा पजाव के अवाला ज़िले में वोली जाती है। मुसलमान विजेताओ द्वारा पूरे भारत में इसका प्रचार हुआ और इसमें साहित्यिक विकास भी यथेष्ट हुआ। इन परिस्थितियो के अतर्गत इसके तीन प्रमुख विभेद मिलते हैं—साहित्यिक हिन्दोस्तानी का मुसलमान तथा हिन्दू दोनो ही समान रूप से साहित्य तथा वोलचाल में प्रयोग करते हैं, उर्दू जिसे मुस्लिम शिक्षा-पद्धति को अपनाने वाले हिन्दू तथा मुसलमान दोनो ही प्रधानतया प्रयोग में लाते है और इसका तीसरा आधुनिक विकास हिन्दी है, जिसका प्रयोग केवल हिंदू पद्धति के अनुसार शिक्षित हिंदू करते हैं। उर्दू के भी दो

प्रभेद हैं—दिल्ली और लखनऊ का प्रामाणिक साहित्यिक रूप तथा दक्खिनी जो दक्षिण भारत के मुसलमानो द्वारा बोली जाती है तथा उनके साहित्य का माध्यम भी है।

बाँगरू

बाँगरू पश्चिमी हिन्दी की एक बोली है, जो पूर्वी पजाब मे बोली जाती है। यह 'जाटू' और 'हरियानी' के नामो से भी पुकारी जाती है। इस पर निकटवर्ती राजस्थानी तथा पजाबी का यथेष्ट प्रभाव पडा है।

ब्रजभाखा

ब्रजभाखा पश्चिमी मध्यवर्ती दोआब तथा इसके उत्तरी एव दक्षिणी प्रदेशो की बोली है।

कनौजी

कनौजी वास्तव में ब्रजभाखा का ही एक रूप है, किन्तु केवल लोकमत के कारण इसको पृथक् स्थान दिया गया है। यह पूर्वी केन्द्रीय दोआब तथा उसके उत्तर में स्थित प्रदेश मे बोली जाती है।

बुन्देली

बुन्देली ग्वालियर तथा बुन्देलखड मे बोली जाती है। मध्यप्रात (मध्यप्रदेश) के समीपवर्ती जिलो मे भी यह बोली जाती है।

बोलनेवालों की संख्या

आगे उपर्युक्त बोलियो का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इन बोलियो के बोलने वालो की अनुमानित पूर्ण सख्या यहाँ दे देना पर्याप्त होगा —

हिन्दोस्तानी	
स्थानीय बोली	५, २८२, ७३३
साहित्यिक हिन्दोस्तानी (उर्दू और हिन्दी को मिलाकर)	७, ६९६, २६४
दक्खिनी	३, ६५४, १७२
	१६, ६३३, १६९
बाँगरू	२, १६५, ७८४
ब्रजभाखा	७, ८६४, २७४
कनौजी	४, ४८१, ५००
	१२, ३४५, ७७४
	६ ८६९, २०१
पश्चिमी हिन्दी-भाषियो की अनुमानित पूर्ण संख्या	३८, ०१३, ९२८

यह जनसख्या १८९२ की सयुक्त राज्य (ग्रेटब्रिटेन और आयर्लैंड) की जनसख्या (३८, १०४, ९७५) के लगभग समान है तथा वर्तमान समय में फ्रास की जनसख्या (३८, ६४१, ३३३) से दो-तिहाई मिलियन (अर्थात् १०,०००००) कम है। जिस क्षेत्र मे पश्चिमी हिंदी बोली जाती है, उसका क्षेत्रफल मे लगभग २००,००० वर्गमील अनुमानित करता हूँ। इसकी तुलना हम जर्मन साम्राज्य (२०९,०००) तथा फ्रास (२०४,०००) के क्षेत्रफलो से कर सकते हैं ।

पडोसी भाषाओ के सदर्भ मे पश्चिमी हिन्दी की उत्पत्ति तथा भौगोलिक स्थिति

जैसा कि परिचयात्मक टिप्पणी में स्पष्ट किया गया है, पश्चिमी हिंदी उस समूह की सबसे शुद्ध प्रतिनिधि है। यह शौरसेनी अपभ्रश से प्रत्यक्षत उद्भूत हुई है, जो सभी प्राकृतो में सबसे अधिक सस्कृतनिष्ठ है। यह उस क्षेत्र मे बोली जाती है, जो आर्य सभ्यता के सारे हिंदोस्तान मे फैलने का केन्द्र था । इसकी प्रमुख बोली ब्रजभाखा का क्षेत्र मथुरा प्राचीन काल में भारतवर्ष के सबसे पवित्र नगरो में से एक था।

जिन चार भापाओ से भारतीय आर्य भाषाओ का केन्द्रीय समूह बनता है, उनमे पश्चिमी हिंदी विशिष्ट है । वस्तुत इसको समूह का अकेला सदस्य मानना अधिक सही, यद्यपि अधिक दुरूह, होगा। दूसरी तीन भाषाएँ पजाबी, राजस्थानी तथा गुजराती, इसकी और सम्बद्ध लहदा, सिंधी और मराठी की मध्यवर्ती है, जो मेरे द्वारा निर्धारित बाह्य चक्र मे आती हैं। ये भाषाएँ—पजाबी, राजस्थानी और गुजराती— पश्चिमी हिंदी के पश्चिम तथा दक्षिण में बोली जाती हैं । यह भी स्मरणीय है कि इसके पूर्व में पूर्वी हिंदी है, एक दूसरी भाषा, जो पश्चिमी हिन्दी तथा बाह्यचक्र की बोलियो की मध्यवर्तिनी है, किंतु मध्यवर्तिनी भाषाओ के इन दोनो क्रमो में बिलकुल विरोधी विशेषताएँ है। उनके अपने-अपने आधार बिलकुल पृथक् है जैसा कि इस सर्वेक्षण के भाग ६ मे बतलाया गया है,पूर्वी हिंदी केन्द्रीय समूह की विशेषताओ से प्रभावित बाह्य चक्र की एक भाषा है, जब कि पजाबी, राजस्थानी तथा गुजराती अपनी मुख्य विशेषताओ के कारण केन्द्रीय समूह की सदस्य है। इन पर बाह्यचक्र के प्रभाव के केवल चिन्ह मिलते है, जो पश्चिम की ओर जाने पर और भी स्पष्ट होते जाते है। इन्हें भाषाओ के भेदकारी मध्यवर्ती समूह के रूप मे वर्गीकृत करना सबसे सही होगा, किन्तु इन भापाओ को पश्चिमी हिंदी के साथ समझना और एक केन्द्रीय समूह की सदस्य मानना अधिक सुविधाजनक है, क्योकि इनमें शुद्धता की दृष्टि से उस समूह की वास्तविक विशेषताएँ नही है ।

पश्चिमी हिन्दी की भाषागत सीमाएँ इस प्रकार हैं—

इसके उत्तर-पश्चिम में पजावी है, दक्षिण-पश्चिम और दक्षिण मे राजस्थानी है, दक्षिण-पूर्व मे मराठी और पूर्व मे पूर्वी हिन्दी है। इसके उत्तर में हिमालय के निचले दक्षिणी ढलाव की भारतीय-आर्य बोलियाँ जौनसारी, गटवाली और कुमायूँनी है। ये धीरे-धीरे पजावी, राजस्थानी और पूर्वी हिंदी मे परिवर्तित हो जाती हैं। किन्तु इसके और मराठी के बीच कोई मध्यवर्ती बोली नही है। मराठी केन्द्रीय समूह की भापाओ में कही भी समाहित नही होती, वरन् उससे तीव्र भेदकारी रेखा द्वारा पृथक् है। यह सच है कि ऐसी कुछ कवीली बोलियाँ हैं, जिनमे पश्चिमी हिदी और मराठी दोनो की विशेषताएँ है, लेकिन ये केवल यात्रिक मिश्रण है, बोली के वास्तविक मध्यवर्ती रूप नही। मराठी को हम सतपुडा सीमा के किनारे पर नागपुर मे पूर्णत प्रचलित समझ सकते है। उत्तरी पहाडी बोलियाँ इस ग्रथ के ५वे भाग मे वर्णित है, जिनका राजस्थानी से निकट का सबध है।

लिपियाँ

पश्चिमी हिंदी के लेखन की दो शैलियाँ है—हिंदोस्तानी के कुछ रूपो के लिए फारसी और दूसरी बोलियो के लिए देवनागरी (जिसके नये रूप कैथी तथा महाजनी है)। इनमे से किसी के भी वर्णन की यहाँ आवश्यकता नही है। बोलियो को देवनागरी शैली मे लिखते समय वर्ण की एक महत्त्वपूर्ण अनियमितता होती है। जब तद्भव शब्दो मे इसके वर्ण य अथवा व होते है, तव इसका रूप नही होता। ऐसे सयुक्त शब्द क्रमश र्य एव ख् रूप में लिखे जाते है, जैसे, व्रजभाखा 'मारचौ', बुन्देली 'ख्वावो' (हिन्दोस्तानी' 'रोना')।

सामान्य व्याकरणिक विशेषताएँ

परिचित हिंदोस्तानी व्याकरण को सभी पश्चिमी हिंदी बोलियो के व्याकरण का आदर्श माना जा सकता है। प्रत्येक उपयुक्त स्थान पर पूर्णत वर्णित है और यहाँ मैं केवल एक विशेषता की ओर निर्देश करके सतोष कर रहा हूँ, जिसके कारण पश्चिमी हिंदी केन्द्रीय समूह की भाषाओ में अत्यधिक विशिष्ट है। यह विशेषता रचना की विश्लेषणात्मक पद्धति है, जिस पर इस सर्वेक्षण की पहली जिल्द मे कुछ विस्तार से विचार किया जायगा, यहाँ केवल उल्लेख ही किया जा रहा है। समूह की सभी भाषाओ मे पश्चिमी हिंदी ही वह भाषा है, जो विश्लेषण को उसकी सीमा तक ले जाती है। इसकी प्रामाणिक बोली में क्रिया के लिए मुख्यत केवल एक काल (वर्तमान सम्भाव्य) और सज्ञाओ के लिए केवल एक कारक (तथाकथित विकारी रूप) प्रयुक्त होता है।

समय और सबधो के लगभग सभी दूसरे भेद प्रत्ययो, सहायक क्रियाओ एव परसर्गों की सहायता से व्यक्त किये जाते है।

भाषा के प्रारम्भिक सन्दर्भ

'हिंदोस्तानी' शब्द के प्रयोग की यूल द्वारा दी हुई सबसे पुरानी तिथि १६१६ है, जब टेरी टॉम कारएट को 'इदोस्तान अथवा अधिक लोक-प्रचलित भाषा'[1] मे अभ्यस्त बतलाते हैं। टेरी अपनी 'पूर्वी भारत की यात्रा' (१६५५) में 'इदोस्तान' देश की जन-प्रचलित बोली का सक्षिप्त वर्णन करता है, जो नीचे जे० ओगिल्वी के अतर्गत उद्धृत है। इसी प्रकार फ्रायर (१६७३) कहता है (यूल द्वारा उद्धृत). "कचहरी की भाषा फारसी है, जो इदोस्तान में सामान्यतया बोली जाती है (जिसके लिए कोई उपयुक्त शैली नही है, लिखित भाषा 'बनयान' कही जाती है)।" इस प्रकार यह स्पष्ट है कि १७ वी शताब्दी के प्रारम्भ में इग्लैंड में यह समझा जाता था कि भारत में बोलचाल की भाषा का यही रूप है। दूसरी ओर इस विषय के अधिकारियो के एक अन्य वर्ग के अनुसार भारत की बोलचाल की भाषा मलय थी, जैसा कि नीचे के उद्धरणो मे ओगिल्वी ने माना है। इसके अतिरिक्त, डेविड विलकिन्स ने चैम्बरलेन के ईश-प्रार्थना (१७१५ में प्रकाशित) के विभिन्न रूपातरो की भूमिका मे कहा है कि वे बगाली भाषा का कोई रूपातर प्राप्त नही कर सके, क्योकि बोली का वह रूप मृत हो रहा था और मलय द्वारा पीछे छोडा जा रहा था, इसलिए बगाली के लिए उन्होने बगाली शैली में लिखित एक मलय रूपातर दिया है।

यह सम्भव है कि ओगिल्वी को अपनी त्रुटि के लिए उतनी क्षमा न मिल सके, जितनी दृष्टिगत होती है, क्योकि श्री क्वारिठ्च १८८७ मे प्रकाशित अपने 'ओरेटिएल कैटेलाग' मे एक शब्दकोश की पाडुलिपि का उल्लेख करते है, जो तब उनके अधिकार में थी (कैटेलाग मे नम्बर ३४, ७२४)[2]। सदेहास्पद स्थिति मे वे इसकी तिथि 'सूरत, लगभग १६३०' देते है। यह फारसी, हिन्दोस्तानी, अग्रेजी और पुर्तगाली का एक शब्दकोश है और उन्होने, इस प्रकार का पहला कार्य होने के कारण इसे एक बडी उत्सुकता कहा है। सम्भवत यह सूरत की अग्रेजी फैक्टरी के प्रयोग के लिए सगृहीत हुआ था।

१. इस तथा अन्य उद्धरणो के लिए देखिए, हॉब्सन-जॉब्सन हिन्दोस्तानी तथा मूर्स। पाठको को यह याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि १८ वीं शताब्दी में 'हिन्दोस्तानी' को सामान्यत. 'मूर्स' कहा जाता था।

२. यह तब से बिक चुकी है और मै इसे खोजने में असफल रहा।

इसमे फारसी देशी तथा रोमन वर्णों मे और हिन्दोस्तानी गुजराती तथा रोमन वर्णों मे दी गयी है। यह एक बार मोडे गये पूर्वी रंगीन कागजो की छोटी-सी पाण्डुलिपि है।

प्रसिद्ध यात्री पेत्रो देला वल सूरत मे १६२३ के प्रारम्भ मे आए और भारत मे नवम्बर १६२४ तक रहे। उनका प्रमुख क्षेत्र सूरत और गोआ था। उनकी 'भारतीय यात्राएँ' १६६३ मे प्रकाशित हुई और उन्हे यूरोप मे सर्वप्रथम नागरी, अथवा उनके शब्दो मे 'नाघेर' वर्णो का उल्लेख करने का सम्मान प्राप्त हुआ। उन्होंने एक अन्य भाषा का भी उल्लेख किया है जो यूरोप मे लैटिन की तरह सारे भारत मे प्रचलित थी और इसी शैली मे लिखी जाती थी[2], लेकिन यह सम्भवत संस्कृत थी, हिंदोस्तानी नही।

आगरा मे सन् १६२० मे एक जेसुइट कालेज की स्थापना हुई और इसमें सन् १६५३ मे पादरी हेनरिक रॉथ[3] आये। यहा उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया और इस भाषा के एक व्याकरण की रचना की। वे १६६४ मे रोम गये और बाद में आगरा लौटे जहाँ १६६८ मे उनकी मृत्यु हुई। रोम मे उनकी भेंट किरचेर से हुई थी, जो उस समय उस नगर मे अपनी पुस्तक 'China Illustrata' के प्रकाशन की अनुमति ले रहे थे। उन्होने इन्हे नागरी वर्णों से सबधित सूचनाएँ दी जिन्हे इन्होने अपने कार्य मे सम्मिलित कर लिया था। यह पुस्तक एम्सटेरडेम मे १६६७ मे प्रकाशित हुई और इसका पूरा नाम Athanasii Kircheri e Soc Jesu CHINA Monumentis qua sacris qua profanis, nec non variis Naturae et Artis Spectaculis, aliarumque Rerum memorabilium Argumentis ILLUSTRATA' है। रॉथ की देन (मौखिक सूचनाओ के अतिरिक्त) विष्णु के दस अवतारो के चित्रो का एक सकलन (जिनमे से नौ के शीर्षक रोमन और नागरी मे है) और पांच प्लेटें हैं। इनमे से चार में नागरी वर्ण वर्णित है और पाँचवी लैटिन मे यातिर नोस्तिर तथा ऐव मेरिया प्रस्तुत करती है, जो नागरी शैली में यथेष्ट विकृत रूप मे लिखा गया है। यातिर नोस्तिर इस प्रकार प्रारम्भ होता है—यातिर नोस्तिर की एस इन सेलिस्।[4]

१. देखिये एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका। यूल (हॉब्सन-जॉन्सन) १६५०–५३ तिथि देते हैं। (हैकलुइट सोसाइटी के लिए एडवर्ड ग्रे द्वारा सम्पादित, १८९२, दो भाग)।

२ 'वियेना ओरियन्टल जर्नल' १६ पृ० २०५ पर तथा आगे देखिये प्रोफेसर जैकहैरिया का लेख।

३. वही, पृ० ३१३ पर तथा आगे।

४. यह सब प्रो० जैकहैरिया के ऊपर उल्लिखित लेख से लिया गया है। कोलिस् का सेलिस् द्वारा प्रतिनिधित्व रोचक है। नीचे उल्लिखित बेलिगत्ती के कार्य में शब्द के इटैलियन उच्चारण का प्रतिनिधित्व चेलिस द्वारा हुआ है।

१६७३ मे कास्मोग्राफर जॉन ओगिल्वी ने लन्दन मे एक पुस्तक प्रकाशित की—"एशिया, पहला भाग, फार्स तथा उसके अनेक प्रदेशो का सही वर्णन, मुगल महान् का विस्तृत साम्राज्य तथा भारत के दूसरे भाग, उनके अनेक साम्राज्य और क्षेत्र शहरो, कस्बो और उनके प्रसिद्ध स्थानो के नामकरण एव वर्णन सहित, विभिन्न प्रथाएँ, आचार, धर्म तथा निवासियो की भाषाएँ, उनकी राजनैतिक सत्ता और व्यावसायिक स्थिति, प्रत्येक देश के विशिष्ट पशु एव पौधे। सर्वाधिक प्रामाणिक लेखको से सगृहीत तथा अनूदित, परवर्ती पर्यवेक्षणो द्वारा परिवर्धित, टिप्पणियो द्वारा व्याख्यायित और विशिष्ट मानचित्रो एव उपयुक्त मूर्ति-चित्रो द्वारा सज्जित।" पृष्ठ ५९-६० पर वे फारसी भाषा और उसकी तीन बोलियो—खिराज़ी, रोस्ताज़ी तथा हारमाज़ी का वर्णन करते है। पृष्ठ १२९ पर उन्होने मलय भाषा का विषय लिया है। वे कहते है, जहाँ तक भारतीयो की भाषा का प्रश्न है, वह मूर्स तथा महमेटन्स से केवल सामान्यत पृथक् है, किन्तु उनमें दूसरी बोलियाँ भी है। उनकी भाषाओ मे कोई भी ऐसी नही है, जिसका मलयन से अधिक प्रचार हो। फिर वे मलयन की एक शब्दावली प्रस्तुत करते है। आगे वे इस बात पर कुछ हिचकिचाते है, (पृ० १३४) क्योकि उन्होने पहले पेत्रो देला वल को यह बतलाने के लिए उद्धृत किया है कि इसी बोली का प्रयोग हर जगह होता था, लेकिन उसकी लेखन-शैलियाँ पृथक् थी। आगे वे किरचेर की (पेत्रो देला वल की नही)[1] प्रामाणिकता के आधार पर बतलाते है कि 'नाघेर' शब्द का प्रयोग भाषा और शैली, दोनो के ही नाम के लिए होता है। फिर वे आगे बढते है, श्री एडवर्ड टेरी के अनुसार (ऊपर देखिये) इदोस्तान की लोक-प्रचलित भाषा फारसी तथा अरबी के साथ निकटत सम्बद्ध है, किन्तु मधुर एव उच्चारण मे सरल है। अनेक बातो को कुछ ही शब्दो से व्यक्त करनेवाली यह बहुत प्रवाहपूर्ण भाषा है। वे हमारे समान ही लिखते और पढते है, अर्थात् बायें हाथ से दाये की ओर (इस अतिम उल्लेख से स्पष्ट है कि नागरी-जैसी किसी लिपि की ओर सकेत है, फारसी की ओर नही)। सम्मानित वर्गों, न्यायालयो, व्यवसायो तथा लेखन मे फारसी प्रयुक्त होती है, 'सामान्य महुमेतन्स तुर्की बोलते है, लेकिन तुर्को—जैसे प्रवाह एव ओजसहित नही। विद्वान् पुरुष तथा महुमेतन धर्म-गुरु

१. जैसा कि ओ० डेपट के 'एशिया' (डच में १६७२ में प्रकाशित, जर्मन अनुवाद नूर्नबर्ग, १६८१) के एक प्रसंग में है, जिसे ओगिल्वी ने स्पष्टत. उपर्युक्त उद्धरण में अनूदित किया है। फिर भी प्रो० ज़ैकहैरिया के अनुसार जहाँ तक वे खोजने में समर्थ हुए किरचेर नाघेर का उल्लेख तक नहीं करते है। मैंने डेपर का कार्य नहीं देखा है, लेकिन ओगिल्वी ने यहाँ से काफी निश्चित रूप से ग्रहण किया है।

अरबी बोलते है, किन्तु किसी भी भाषा का विस्तार अधिक नही है और मलयन की अपेक्षा अधिक नही प्रयुक्त होती है।—दि नीदरलैड्स ईस्ट इडिया कम्पनी ने हाल मे ही उस बोली की सामान्य बातचीत का एक शब्दकोश और इस भाषा की 'न्यू टेस्टामेट' तथा दूसरी पुस्तकें प्रकाशित की है। इसके अतिरिक्त, हालैंड के मत्री भारत की अपनी अनेक फैक्ट्रियो मे मलयन भाषा पढाते है—न केवल गिरजो मे, वरन् स्कूलो में भी।"[1]

इसी वर्ष भारतीय भाषाओ से सम्बद्ध फ्रायर का अधिक सही वक्तव्य मिलता है, जिसे पहले ही उद्धृत किया जा चुका है।

१६७८ मे एम्सटेरडेम मे हेनरीकस ड्रेकेस्टीनकृत[2] 'Hortus Indicus Malabaricus adornatus per H. V R. T. D की पहली जिल्द प्रकाशित हुई। परिचय मे सस्कृत की ग्यारह तिथियुक्त पक्तियाँ नागरी लिपि मे है। तिथि सन १६७५, ईसा के बाद, तक जाती है।

र्बालन में सन् १६८० मे एन्ड्रीमुलर ने, काल्पनिक नाम टॉमस लुदेकेन के अतर्गत, ईश-प्रार्थना के विविध रूपातरो का एक सग्रह इस शीर्षक से प्रस्तुत किया . 'Oratio Orationum S. S. Orationis dominicoe Versiones praeter authenticam fere centum, eaque longe emendatius quam antehac, et e probatissimis Autoribus potius quam prioribus Collectionibus, jamque singula genuinis Lingua sua characteribus, adeoque magnam Partem ex Aere ad Editionem a Barnimo Hagio traditae editaeque a Thoma Ludekenio, Solq. March Berolini, ex Officina Rungiana, Anno 1680.[3] वारनीमस हैग्यिस ने उल्लेख किया है कि शिल्पी भी स्वय मुलर के लिए एक काल्पनिक नाम है। इस सग्रह मे रॉय के यातिर नोस्तिर को मूल लैटिन का केवल अनुवाद नही, वरन् वस्तुत. सस्कृत मानकर पुनर्प्रकाशित किया गया।

सन् १६९४ में शतरज पर टामस हाइड का एक ग्रन्थ 'Historia Shahiludii'

१. मुझे खेद है कि मै उल्लिखित डच कार्य का कोई सूत्र नहीं दे सकता। सम्भवतः मेरे पाठक दे सकें। ओगिल्वी प्रमुख भारत को बृहत्तर भारत की डच बस्तियो से भ्रमित कर गए लगते है, जहाँ मलय निःसदेह बोलचाल की भाषा थी।
२. देखिये प्रो० मैकडॉनेल, जे० आर० ए० एस०, १९००, पृ० ३५० । यह कार्य १६७८ से १७०३ तक १२ जिल्दो में आया।
३. एडेलग, मिथ्रिडेट्स, जिल्द १, पृ० ६५४, तथा आगे।

शीर्षक से प्रकाशित हुआ। पृष्ठ १३२-१३७ पर वे 'हाथी' के लिए नागरी शैली में खचित बारह विभिन्न संस्कृत पर्याय देते हैं।

अभी तक हमने केवल कुछ सामान्य बातो तथा हिंदोस्तानी की विविध लेखन शैलियो को ही लिया है। १८ वी शताब्दी के प्रारम्भ के साथ हमे भाषा का गम्भीर वृत्त देने वाले प्रथम प्रयास दृष्टिगत होते है। बेलगत्ती कृत 'Alphabetum Brammhanicum' (नीचे देखिये) में दी हुई अमदुज्जी की भूमिका के अनुसार फ्रासिसकस एम० तुरोनेनसिस नामक एक कपूचिन सत ने सूरत में, सन् १७०४ मे 'Lexicon Linguae Indostanicas' पाडुलिपि पूरी की, जिसके दो भागो मे से प्रत्येक मे दुहरे कॉलमों वाले चार सौ से पाँच सौ के बीच पृष्ठ थे। असदुज्जी के समय मे यह पाडुलिपि रोम के प्रचार-पुस्तकालय में सुरक्षित रही, लेकिन जब सन् १८९० में मैंने वहाँ इसकी खोज की तो यह नही मिल सकी।

अब हम पहले हिंदोस्तानी व्याकरण पर आते है। जॉन जोशुआ केटलेर (कोटलर, केसलर तथा केटलर भी लिखा जाता है) धर्म से लूथरन थे। ये प्रूशिया के एलबिन्जेन नामक स्थान में उत्पन्न हुए थे। उन्होने शाहआलम बहादुर शाह (१७०८-१७१२) तथा जहाँदरशाह (१७१२) से डच प्रतिनिधि के रूप मे मान्यता प्राप्त की थी। वे सन् १७११ में सूरत मे डच ईस्ट इंडिया कम्पनी के व्यापार-निर्देशक थे। लाहौर को (दिल्ली होते हुए) जाते हुए और वहाँ से आते हुए वे आगरा से गुजरे किन्तु उनके कभी वहाँ रहने का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है, यद्यपि डच कम्पनी की एक फैक्टरी इस नगर मे सूरत के अधीन थी। वह १० दिसम्बर १७११ को लाहौर के निकट पहुँचे, जहाँदरशाह के साथ दिल्ली लौटे और अत मे २४ अक्टूबर १७१२ को वहाँ से चलकर २० अक्टूबर को आगरा पहुँचे। आगरा से वे सूरत लौटे। केटलेर सन् १७१६ में सूरत मे डच कम्पनी के तीन वर्ष तक निर्देशक रह चुके थे। फिर वे फारस में कम्पनी के प्रतिनिधि नियुक्त हुए और उन्होने तीस वर्ष तक डच अथवा ईस्ट इडीज की सेवा करने के पश्चात् जुलाई १७१६ में बटाविया छोड दिया। उन्होने कुछ अरब आक्रमणकारियो के विरुद्ध फारसी गवर्नर के आदेशो के अनुसार एक डच जहाज को सचालित होने की आज्ञा नही दी थी। अत दो दिन बदी रहने के पश्चात् इस्फहान से लौटते समय फारसी समुद्र-सीमा पर गमब्रूम में ज्वर से उनकी मृत्यु हो गयी। उन्होने जन-प्रचलित हिंदोस्तानी के एक व्याकरण तथा एक शब्दावली की रचना की, जो डेविड मिल द्वारा उनके 'Miscellanea

१. देखिये जी० ए० ग्रियर्सन, प्रोसीडिंग्स ए० एस० बी० मई १८९५, तुलना के लिए एडेलंग, मिथ्रिडेट्स, खंड १, पृ० १९२।

Orientalia' (नीचे देखिये) मे सन् १७४३ में प्रकाशित हुए थे। हम यह मान सकते है कि ये लगभग १७१५ में लिखे गये होगे।

इसी वर्ष ईश-प्रार्थना के रूपातरो का एक दूसरा सग्रह प्रकाशित हुआ, जिसके लेखक जॉन चैम्बरलेन थे। एम्सटेरडम में छपी इस पुस्तक की भूमिका डेविड विलकिन्स ने लिखी थी। उन्होने अनेक नमूने भी प्रस्तुत किये थे। इसका पूरा शीर्षक था. 'Oratio dominica in, diversas amnium fere Gentium Linguas versa- et propriis cujusque Linguae characteribus expressa, una-cum Dissertationibus nonnullis de Linguarum Origine, variisque ipsarum Permutationsibus Editore Joa. Chamberlanio Anglo-Britanno, Regiae Societatis Iondinensis Socio. Amstelodami, typis Guil. et David Goerei, 1715 अपने वर्तमान उद्देश्य के लिए इस प्रसिद्ध कार्य के सबध मे यह कहना पर्याप्त होगा कि इनने रॉथ के यातिर नोस्तिर को उद्धृत किया, किंतु यूलर के समान इसे सस्कृत समझने की भूल नही की।

मतुरिन वेयसियेर लक्रोज़ नात में सन् १६६१ मे उत्पन्न हुए थे। सन् १६९७ मे वे वर्लिन मे इलेक्टर के पुस्तकाध्यक्ष हो गये और उसी नगर मे १७३९ मे उनकी मृत्यु हुई। पुस्तकाध्यक्ष के रूप मे उन्होने भाषावैज्ञानिक विषयो पर अपने समय के विद्वानो– डेविड विलकिन्स, जॉन चैम्बरलेन, जीगेनवाल्ग, टी० एस० वेयट आदि के साथ वृहत् पत्र-व्यवहार किया। उनकी मृत्यु के पश्चात् यह 'Thesavri Epistolici La Croziani Ex Bibliotheca Iordaniana edidit I1o. Lvdovicvs Vhlivs Lipsiae, 1742.' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमे वे हमे उल्लिखित 'Oratio Dominica' के सकलन में विलकिन्स तथा चैम्बरलेन को सहायता देते दृष्टिगत होते है। हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पत्र वे है जो थियोफिलस सीगफ्रायड देयर को तथा वेयर द्वारा इनको लिखे गये हैं। वेयर उन प्रतिभाशाली विद्वानो मे से एक थे जिन्होने सेंट पीटर्सवर्ग मे इम्पीरियल एकेडमी की स्थापना की थी। वेयर के एक पत्र में (तिथि जून १, १७२६) हिंदोस्तानी के लिए अभिप्रेत मेरी समझ में यूरोप मे प्रथम प्रकाशित पहले गव मिदलते हैं। ये 'मुगल हिन्दी' द्वारा प्रयुक्त पहली चार सख्याएँ (१–हिकु, २–गू, ३–त्रे, ४–चहर) है, जो आठ भाषाओ की सख्याओ के तुलनात्मक उल्लेख मे दी गयी है, किंतु ये सख्याएँ वस्तुत हिंदोस्तानी नही है। 'गू' स्पष्टत ग़लत छपा है, दूसरी सख्याएँ लहदा या सिंधी की हैं (१–लहदा, हिक, सिंवी, हिकु, ३, लहदा, त्रइ, सिंधी, त्रे ;

४–लहदा, चार; सिंधी, चारि।[1] दो वर्ष पश्चात् इम्पीरियल एकेडेमी द्वारा प्रकाशित तीसरी और चौथी जिल्दों में (१७२८ तथा १७२९ के कार्यक्रम क्रमश १७३२ एवं १७३५ मे प्रकाशित हुए) बेयर नागरी वर्णो के उच्चारण पर प्रकाश डालते हैं—पहले चीन में प्रकाशित एक त्रिभाषीय लिपि-पुस्तिका की सहायता से, जिसमें नागरी का तिब्बती रूप (लानशा), वर्तमान तिब्बती तथा मंचू लिपियाँ थी और बाद में मिशनरी शुल्ट्ज की सहायता से, जिनका शीघ्र ही उल्लेख किया जायेगा।[2] अंत मे, नवम्बर, १७३२ मे लक्रोज़ बेयर को लिखते हैं कि मराठो द्वारा प्रयुक्त लिपि 'बलबडे' कही जाती है, जो ब्राह्मणो द्वारा प्रयुक्त 'नागर' या 'देवनागर' से पृथक् नहीं है। तत्पश्चात् वे बतलाते है कि उनके मतानुसार किस प्रकार 'बलबडे' लिपि हेब्रू से उद्भूत हुई है। उनका मत चैम्बरलेन के कार्य मे पुन प्रस्तुत रॉथ के पातिर नोस्तिर में दिये गये अक्षरो पर आधारित है।

हमारी दूसरी सीढ़ी मिलकृत 'Dissertationes Selectae' है। इसका पूरा नाम है 'Davidis Millii Theologiae D ejusdemque, nec non Antiquitatum Sacrarum, & Linguarum Orientalium in Academia Trajectina, Professoris Ordinarii, Dissertationes selectae, varia S Litterarum et Antiquitatis Orientalis Capita exponents et illustrantes Curis Secundis, novisque Dissertationibus, Orationibus, et Miscellaneis Orientalibus auctae Lugduni Batavorum 1743' इसमें हमारी मुख्य रुचि इस तथ्य मे है कि इस 'Miscellanea Orientalia मे उन्होने केट्लेर का हिंदोस्तानी व्याकरण तथा शब्दावली प्रकाशित की जो, जैसा कि हम देख चुके है, लगभग १७१५ मे लिखी

१. बेयर अपनी पुस्तक 'Historia Regni Groecorum Bactriani' में पृ० ११३ पर तथा आगे संख्याएँ अधिक शुद्ध रूप में देते है। पेट्रोपोली, १७३८। यहाँ वे पहली दस संख्याएँ देवनागरी तथा अनुवाद दोनो में देते है। अक्षर इस प्रकार है, १, हेकु; २, द्व, ३, त्रे; ४, चार; ५, पंज; ६, छे,; ७, सते; ८, आदज; ९, नओ; १०, नद्ग। वे कहते है कि उन्होने इन्हें एक मुल्ताननिवासी से प्राप्त किया। मेरा ध्यान इस कार्य की ओर आकृष्ट करने के लिए मुझे प्रो० कुह्न को धन्यवाद देना है।

२. लक्रोज तथा बेयर से संबधित अधिक जानकारी के लिए देखिये, ग्रियर्सन, जे० ए० एस० बी०, जिल्द, १२।१८९३, भाग १, पृ० ४२, तथा आगे।

गयी थी। उन्होंने भारतीय लिपियो के चित्रो वाली कुछ प्लेटें भी दी है। दो में नागरी लिपि के चित्र है। मै निश्चित नही हूँ कि उन्होंने कहाँ से उन्हे प्राप्त किया था। तीसरी सेट पीटर्सबर्ग की इम्पीरियल एकेडमी द्वारा प्रकाशित बेयर के लेख से ली गयी है और लातशा, सामान्य तिब्बती तथा मचू लिपियो को प्रदर्शित करती है। चौथी मे बगाली लिपि के चित्र है। 'Miscellanea Orientalia' पुस्तक के पृष्ठ ४५५–६२२ में है, Caput, I, De Lingua Hindustanica (पृ० ४५५-४८८), Latin, Hindostani, and Persian vocabulary (पृ० ५०४-५०९), Etymologicum Orientale harmonicum (लैटिन, हिंदोस्तानी, फारसी तथा अरबी की तुलनात्मक शब्दावली पृ० ५१०-५३८)। प्लेटो के अतिरिक्त शेष हिंदोस्तानी अश रोमन लिपि मे है और पुस्तक लैटिन मे लिखी गयी है। हिंदोस्तानी शब्दो का अक्षर-विन्यास उच्चारण की डच-व्यवस्था पर आधारित है, जैसे मे किया, Feci, मे कर चुका, Feci, मुझे, mihi। हिंदोस्तानी लिखने के लिए फारसी-अरबी लिपि के लाभ बतलाये गये है। पुराने सभी व्याकरणो की शुद्धता की इन दो कसौटियो में से (पुरुषवाचक सर्वनामो के एकवचन तथा बहुवचन रूपो के भेद और करण कारक मे 'ने' का प्रयोग) केटलेर पहली पर सही, किन्तु दूसरी पर गलत है। वे 'मैं' (जिसे वे 'मे' लिखते है) तथा 'तू' (तोए) को एकवचन मानते है और 'हम' ('हम') तथा 'तुम' ('तोम') को बहुवचन। 'ने' के प्रयोग का उन्हे कुछ पता नही है। दूसरी ओर, वे 'हम' के लिए गुजराती 'आप' का प्रयोग सिखलाते है।

केटलेर के व्याकरण में केवल हिंदोस्तानी के सज्ञा-रूप तथा लकार ही नही है वरन् उस भाषा में दि टेन कमान्डमेंट्स, दि क्रीड तथा ईश-प्रार्थना के रूपातर भी है। अतिम का उनका अनुवाद हिन्दोस्तानी मे किसी यूरोपीय भाषा के बिल्कुल प्रारम्भिक ज्ञात अनुवाद के नमूने के रूप में यहाँ दिया जा सकता है। यह इस प्रकार है—
'Hammare baab-ke who asmaanmehe-Paak hoee' teere naom-auwe hamko moluk teera-hoe resja teera-Sjon asmaan ton sjimienme-Rootie hammare nethi hamkon aasde-Oor maaf-kaar taxier apne hamko-Sjon mafkarte apre Karresdaar onkon-Nedaal hamko is was wasjeme-Belk hamko ghaskar is boerayse Teeroe he patsjayi, Soorrauri alemgiere heametme. Ammen'

केटलेर का व्याकरण प्रकाशित होने के अगले वर्ष मे प्रसिद्ध मिशनरी शुल्ट्ज़ की पुस्तकें प्रकाशित हुई जिनका नाम ही एक से अधिक बार, इससे पूर्व आ चुका है।

इसका पूरा शीर्षक है : 'Viri plur, Reverendi Benjamin Schultzii Missionarii Evangelici Grammatica Hindostanica Collects in diuturna inter Hindostanos Commoratione in justum Ordinem redactis ac large Exempotum (sic) Luce perfusis Regulis constans et Missionariorum Usui consecrata. Edidit-et de suscipienda barbararum Linguarum Culture prefatus-est. D Jo Henr. Callenberg. Halae Saxonum, 1744' (कुछ प्रतियो में तिथि १७४५ है।) शुल्ट्ज़ केटलेरकृत व्याकरण के अस्तित्व से अपगत थे और उन्होंने भूमिका में उसका उल्लेख किया है। शुल्ट्ज़ का व्याकरण लैटिन में है। हिंदोस्तानी शब्द फारसी-अरबी लिपि में अनुवादसहित दिये गये है। नागरी लिपि ('देपनागरी') की भी व्याख्या की गयी है। वे मूर्धन्य वर्णों की ध्वनियो को और (अपने अनुवाद में) महाप्राणो को छोड देते है। वे पुरुपवाचक सर्वनामो के एकवचन एव बहुवचन रूपो से परिचित है, किन्तु सकर्मक क्रियाओ के भूतकालो के साथ प्रयुक्त होनेवाले 'ने' के प्रयोग से अनभिज्ञ है।

चार वर्षों के पश्चात् जॉन फ्रेडरिक फ्रिट्ज़ ने शुल्ट्ज़ की भूमिका सहित 'Sprachmeister' का प्रकाशन किया। इसका शीर्षक यह है : 'Orientalisch-und Occidentalischer Sprach meister, Welcher nicht allein hundert Alphabete nebst ihrer Aussprache, So bey denen meisten Europaisch-Asiatisch-Africanisch-und Americanischen Volckern und Nationen gebrauchlich sind, auch einigen Tabulis polyglottis verschiedener Sprachen und Zahlen Vor Augen leget, Sondern auch das Gebet des Herrn, in 200 Sprachen und Mund-Arten mit dererselben characteren und Lesung, nach einer Geographischen Ordnung mittheilet Aus glaubwurdigen Auctoribus zusammen getragen, und mit darzu nothigen Kupfern versehen. Leipzig, Zufinden bey Christian Friedrich Gessnern. 1748' फ्रिट्ज की पुस्तक अपनी पूर्ववर्ती चैम्बरलेन की पुस्तक से बहुत आगे है। पहले भाग (पृ० १–२१९) मे सौ से अधिक विभिन्न भाषाओ के वर्णों की तालिका प्रत्येक के प्रयोग के नियमो सहित दी गयी है। पृष्ठ १२०–१२२ पर हमें हिंदोस्तानी के सन्दर्भ मे फारसी-अरबी लिपि की उपयोगिता वर्णित मिलती है। यह सकेत किया जा सकता है

कि मूर्धन्य अक्षरो के सभी उल्लेख विलुप्त है। पृष्ठ १२३ पर हमे 'देपनागरम्', पृ० १२४ पर 'वलवड्' तथा पृ० १२५-१३२ पर 'अकर नागरी' मिलती है, जो सही ढग मे एक ही लिपि के विभिन्न रूपो के रूप मे वर्गीकृत की गयी है। लेकिन अनुवाद प्राय अशुद्ध है, उदाहरण के लिए, 'अकर नागरी' के अतर्गत ढ का अनुवाद 'घ ज' है और बतलाया गया है कि इसके पूर्व न् ध्वनि सदैव सुनायी देती है और ज़ अरबी जीम के समान स्पष्टत उच्चरित होता है। इसमे मूर्धन्य अक्षरो के अस्तित्व का उल्लेख है। 'अकर नागरी' के अतिरिक्त कही भी महाप्राण तथा अल्पप्राण अक्षरो के बीच भेद करने का प्रयत्न नही किया गया है। पृष्ठ २०४ पर हिंदोस्तानी सख्याएँ १–९ मे, और १०, २०, ३० आदि, ९० तक दी गयी है। वे प्रारम्भ होती है, येक, दो, तिन, चहर, पच, छे, सत, अट्ट, नौ, दस। दूसरे भाग (पृ० २–१२८) मे ईश-प्रार्थना के रूपातर है। पृष्ठ ८१–८२ पर शुल्ट्ज का फारसी-अरबी शैली मे 'Hindostanica seu Mourica seu mogulsch' का रूपातर अनुवादसहित दिया गया है। पत्र इस प्रकार प्रारम्भ होता है– 'आसमान– पो'[1] रहता–सो हमर वाप, तुमरा नौन पाक करना होने देओ, तुमारी पदसछ्ही आने दिओ', आदि। नागरी लिपि के रूपातर रॉथ द्वारा अनूदित रूपातर है सस्कृत 'देवनागरम् सस्कृत' मे और भोजपुरी 'अकर-नागरिका' मे (अतिम दो शुल्ट्ज द्वारा)। अत मे 'पिता', 'स्वर्ग', 'पृथ्वी' तथा 'रोटी' के लिए उद्धृत सभी भाषाओ के पर्यायो पर तुलनात्मक वक्तव्य एव कुछ दूसरे परिशिष्ट है। इन चार शब्दो के हिन्दोस्तानी रूप क्रमश 'वाप', 'आसमान', 'दुनिया' और 'रोसी' दिये गये है।

हमारी अगली प्रामाणिक पुस्तक जॉन बेल कृत 'रूस मे सेट पीटर्स वर्ग से यात्राएँ एशिया के विभिन्न भागो को' (ग्लासगो, १७६३, नया सस्करण, एडिनवरा, १८०६) है। इसके १२ वे अध्याय मे 'इदोस्तान' की सख्याएँ दी गयी है।

अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व की पुस्तक 'Alphabetum Brammhanicum Seu Indostanum Universitatis Kasi Romae, 1761 Typis Sac Congregationis de Propag Fide' है। इसके लेखक कैसिआनो वेलिगत्ती नामक एक कपूचिन मिशनरी है और इसकी भूमिका जॉन्स क्रिस्टोफोरस अमदुतिअम (अमदुज्जी) ने लिखी है। इस भूमिका में भारतीय भाषाओ से सबधित तब की जानकारी का एक अत्यत पूर्ण विवरण है। यह सही रूप में सस्कृत (समस्क्रीत) को विद्वानो की भाषा बतलाती है और फिर 'वखा वोली' अथवा 'वेका वोली' या सामान्य वोली का उल्लेख करती है, जो 'कासी अयवा वेनारस' के विश्वविद्यालय में वोली जाती है। फिर

१. यह 'पो' परसर्ग दक्खिनी हिन्दोस्तानी का है

यह भारत की दूसरी प्रमुख लिपियाँ गिनवाती हैं, जिनका (नागरी, नागरी सोरतेनसिस अथवा वलवदु के अतिरिक्त) हमसे तुरत सबध नही है। उनका एक 'Lexicon Linguae Indostanicae' पुस्तक का उल्लेख अधिक रुचिकर है। इसकी रचना फ्रासिसकस एम० तुरोनेसिस नामक एक कपूचिन मिशनरी ने सन् १७०४ में की थी। इसकी पाडुलिपि उस समय रोम के प्रचार-पुस्तकालय में थी। इसका अमदुज्जी ने यथेष्ट विस्तारसहित वर्णन किया है। धर्म के सत्य से सबधित एक ईसाई तथा एक भारतवासी के सवादो की पाडुलिपि (? हिन्दोस्तानी मे) का भी वे उल्लेख करते है, जो चम्पारन के वर्तमान ज़िले में वितिया के राजा को जोसफस एम० गरग्नानेनसिस तथा वेलिगत्ती द्वारा समर्पित की गयी थी। विवेच्य पुस्तक के लेखक भी ये ही हैं। 'Alphabetum Brammhanicum' महत्त्व की है, क्योकि यह पहली ऐसी पुस्तक है (जहाँ तक मुझे पता है), जिसमे भारतीय शब्द भारतीय लिपि मे अलग-अलग टाइपो में छपे हैं। केवल देवनागरी लिपि ही टाइपो मे नही है, वल्कि कैथी को भी यही सम्मान मिला है। वेलिगत्ती देवनागरी लिपि को 'Alphabetum expressum in litteris Universitatis Kasi' कहते है और इसके उपयोग का (सयुक्त व्यजन-सहित) सौ से अधिक पृष्ठो में सूक्ष्म विवरण देने के पश्चात् वे आगे पृष्ठ ११० पर 'Alphabetum populare Indostanorum vulgo Nagri' को लेते हैं। वे कहते हैं कि यह सभी देशवासियो द्वारा परिचित पत्रो तथा सामान्य पुस्तको के लिए और धार्मिक अथवा लौकिक सभी विषयो के लिए, जो भाखा वोली या देशी वोली मे लिखी जा सकती हों, प्रयुक्त होती है।[1] फिर वे यहाँ भी अलग-अलग टाइपो का प्रयोग करते

१. इस बात पर वेलिगत्ती के कथन अमदुज्जी की अपेक्षा अधिक सही हैं किन्तु यहाँ उनके अनुवाद भी असफल हो जाते हैं। काउन्ट डि गवर्नेटिस (Bollettino Italiano degli Studdi Orientali, फीरेन्ज़, १८७६–७७, प्र० ४४–४५) पालिनसकृत एक 'Grammatica Mora (vuol dire Hindostani) adopera i caratteri devanagarici. Segue un parvum Dictionarium indostanum de Nominibus ut plurimum obviis in Historia India' का उल्लेख करते हैं। एस० वार्थोलोमेओ अगले पृष्ठ पर 'Alphabeta Indica' की भूमिका के लेखक के रूप में उल्लिखित हैं। काउन्ट डि गवर्नेटिस द्वारा उल्लिखित कार्य स्पष्टतः पांडुलिपि-रूप में है और इसे १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से सम्बद्ध होना चाहिए। इस सदर्भ के लिए मैं प्रोफेसर ढेकहैरिया के सौजन्य के प्रति आभारी हूँ।

हुए कैथी लिपिका अच्छा विवरण देते है। यह पुस्तक मस्याओ तथा पढने के अभ्यास के लिए दिये गये उदाहरणो से समाप्त होती है। ये अतिम लैटिन यातिर नोम्तिर तथा एप मेरिया के देवनागरी में अनुलिपि हैं। इनके पश्चात् इनवोकेशन ऑफ द ट्रिनिटी, ईश-प्रार्थना, ऐवमेरिया तथा एपोस्टल्स' क्रीड का भी हिन्दोस्तानी मे उसी लिपि मे अनुवाद दिया गया है। सब बातो को ध्यान मे रखते हुए 'Alphabetum Brammhanicum' अपने समय की बहुत ही अच्छी रचना है।

'Alphabetum Brammhanicum' के साथ हिंदोस्तानी पुस्तक-सूची की पहली अवस्था पूर्ण समझी जा सकती है। हैडले का व्याकरण सन् १७७३ मे प्रकाशित हुआ और उसके बाद अनेक दूसरे और बेहतर व्याकरण प्रकाशित हुए, जैसे, पुर्तगाली 'Gramatica Indostana' (१७७८. हैडले से बहुत अधिक श्रेष्ठ), गिलक्राइस्ट की अनेक पुस्तके (१७८७ से प्रारभ होनेवाली) और लेबेडेफ का व्याकरण (१८०१)। इनमें से प्रत्येक नीचे उपयुक्त स्थान पर वर्णित है। लेबेडेफ का कार्य लेखक की असाधारण पर्यटन-वृत्ति के कारण नामोल्लेख से अधिक का अधिकारी है। यह उल्लेखनीय व्यक्ति अपनी पुस्तक की भूमिका मे अपने जीवन का वृत्तात देता है, जिससे हमे मालूम होता है कि इन्होने अपना भारतीय जीवन (ऊपरी तौर से बैंडमास्टर के रूप मे) सन् १७८५ से मद्रास मे प्रारम्भ किया। वहाँ दो वर्ष ठहरने के पश्चात् वे कलकत्ता चले गये, जहाँ उनकी भेट एक पण्डित से हुई। उसने इन्हे सस्कृत, बगाली और हिंदोस्तानी (अथवा, जैसा कि उन्होने कहा, भारतीय मिश्रित बोली) पढायी। उनका दूसरा प्रयास बंगाली मे दो अग्रेजी नाटको का अनुवाद करना था, जिनमें से एक सन् १७९५ तथा अगले वर्ष बडी सफलता के साथ (लेखक के अनुसार) जनता के सामने खेला गया। एडलग के अनुसार[1] इसके बाद वे मुगल महान् के नाट्य-प्रवधक हो गये और अत मे पूर्व में बीस वर्षो से अधिक रहने के बाद इग्लैण्ड लौटे। लन्दन मे उन्होने अपना व्याकरण प्रकाशित किया और रूसी राजदूत वोरोन्ज़ो से परिचय किया, जिसने उन्हें रूस भेज दिया। वे रूसी विदेशी मत्रालय में नियुक्त हुए और एक सस्कृत प्रेस की स्थापना के लिए उन्हें एक बडी सरकारी राशि मिली। मुझे उनके किसी और लेखन-कार्य की जानकारी नही है। उनके सरक्षको

१ मिथ्रिडेट्स, १. १८५, उसी आधार के अनुसार वे जन्म से एक उकरेन कृषक थे और उनकी संगीतात्मक प्रतिभा के कारण राजकुमार रसुमोस्की ने उन्हें अपने साथ ले लिया तथा उन्हें इटली ले गए। वहाँ वे वायोलिन सेलोवादन में पारगत हो गए और फिर पेरिस और लन्दन तक घूमे। वहाँ उन्होने एक लॉर्ड के यहाँ काम किया, जो गवर्नर के रूप में भारत गए।

के आधार पर ही यह आशा की जानी चाहिए कि उनका सस्कृत तथा बगला का ज्ञान हिन्दोस्तानी से अधिक था जिसे उन्होने अपने व्याकरण मे प्रदर्शित किया है। इसकी अनुलिपि का ढग ही (कोन हय हुआ—वहाँ कौन है) अत्यत अशुद्ध नही है, बल्कि भाषा के व्याकरणिक गठन का पूरा विवरण भी ऐसा ही है। उनकी भूमिका के अतिम शब्दो से प्रकट होता है कि वे उसकी अपूर्णताओ के प्रति सजग नही थे, साथ ही वे कहीं-कहीं भारतस्थित अपने समकालीन यूरोपियनो के चरित्र पर भी प्रकाश डाल देते हैं—'इस पुस्तक में भारतीय शब्द जानकारी की दृष्टि से इतने सहज है कि कोई शका नही रह जाती। यूरोपीय अभ्यासी किसी पडित या मुशी की तनिक सहायता से, यहाँ तक कि साहबो के बच्चे तक, थोडे ही समय में उनके (देशवासियो के) मुहावरो की जानकारी प्राप्त करने में और असाधारण सुविधा से भारतीय बोलियो पर अधिकार प्राप्त करने में असफल नही हो सकते।'

अत में हम भारतीय भाषाओ की जानकारी से सबधित प्रारम्भिक काल के अतिम दिनों की पुस्तको का उल्लेख करेंगे जो कलकत्ते मे हिंदोस्तानी का गम्भीर अध्ययन प्रारम्भ हो चुकने के बाद प्रकाशित हुई थी। सन् १७८२ मे इवरस एवेल ने कोपेन-हैगेन में 'Symphona Symphona, sive undecim Linguarum Orientalium Discors exhibita concordia Tamulicae videlicet, Granthamicae, Telugicae, Sanscrutamicae, Marathicae, Balabandicae, Canaricae, Hindostanicae, Cuncanicae, Gutzaratticae et Peguanicae non characteristicae, quibus ut explicativo-Harmonica adjecta est Latine' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित की। यह इन ग्यारह भाषाओ के तिरपन शब्दो की तुलनात्मक शब्दावली है। इन शब्दो में शरीरांग, स्वर्ग, सूर्य आदि, कुछ पशु, घर, पानी, समुद्र, पेड व्यक्तिवाचक सर्वनाम तथा सख्याएँ हैं।

सन् १७९१ में एक अज्ञातनामा लेखक की 'Alphabeta Indica, id est Granthamicum seu Sanscrdamico–Malabaricum, Indostanum sive Vanarense, Nagaricum vulgare, et Talenganicum' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसकी भूमिका पॉल्निस ए एम० बार्थोलोमेओ ने लिखी है। यह इन चार लिपियो का सग्रह है, जो सभी अलग टाइपो मे है।

जॉन क्रिसटफ एडलग कृत' 'Mithridates oder allgemeine sprachenkunde mit dem Vater Unser als Sprachprobe in bey nahe funfhundert sprachen und Mundarten' शीर्षक पुस्तक को पुराने

तथा नये भाषाविज्ञान के बीच की कडी के रूप मे लिया जा सकता है। इस महान् लेखक जैसा प्रसिद्ध भाषाविज्ञानवेत्ता जैसे भी भाषावैज्ञानिक विषय को छुए उसे अलंकृत करने मे असफल नही होता। उस समय के लिए यह कार्य ज्ञान तथा उत्कृष्ट क्रमबद्धता का आश्चर्यजनक उदाहरण है। जहाँतक भारतीय भाषाओ का प्रश्न है, यह पुस्तक उनसे सम्बद्ध १८ वी शताब्दी के अंत की समस्त जानकारी का (जो वास्तव मे अधिक नही थी) सार प्रस्तुत करती है। इसमे 'Mongolisch-Indostanisch oder Mohrisch' (अर्थात् उर्दू) (जिल्द १, पृष्ठ १८३ पर और आगे) तथा 'Rein oder Hoch-Indostanisch Dewa Nagra' साथ-साथ 'Allgemeine Sprachen in Indostan' के रूप मे वर्णित है। 'Rein oder Hoch-Indostanische' से अभिप्राय मथुरा और पटना के बीच बोली जाने वाली विभिन्न 'हिंदी' बोलियो से है, किन्तु उदाहरणस्वरूप अशुद्ध अक्षर-विन्यास में संस्कृत मे ईश-प्रार्थना दी गयी है। यह शुल्ट्ज़ की देन है जो अपनी राष्ट्रीयता के कारण भ् तथा प् के बीच अन्तर नही कर सके थे, जैसे 'भोजनम्' को वे 'पोदसनम्' लिखते है।

हिन्दोस्तानी

'यह केवल अतिसिद्धातवादिता है—नही, भाषा का जीवित सस्था के रूप मे नियमन करने वाले सिद्धान्तो की मिथ्या धारणा है, जो सरस तथा उपयुक्त बोलचाल की शैलियो और वर्गभाषा की उपेक्षा करती है। स्वस्थ एव ओजपूर्ण रहने के लिए किसी साहित्यिक भाषा की जडे शब्दबहुल लोकप्रचलित बोली की भूमि में रहनी चाहिए, जिससे वह अपने विशिष्ट रसायनशास्त्र के अनुसार, अपेक्षित आहार प्राप्त कर सके और पचा सके। उसे व्यापक अर्थ मे जीवन के समीप रहना चाहिए। जीवन स्वय को सदैव कुछ स्तरो पर बोली, प्रातीय प्रयोग एव लोक-प्रचलित मुहावरो के रूप मे व्यक्त करेगा। यह एक मनोवैज्ञानिक नियम है जिसे समस्या की एक शर्त के रूप मे स्वीकार कर लेना चाहिए।'—डब्ल्यू० आर्चर, 'पाल माल मैगजीन,' अक्तूबर, १८९९

पश्चिमी हिंदी की एक बोली की दृष्टि से हिंदोस्तानी के कई रूप है। इन्हे सर्व-प्रथम दो शीर्षको के अतर्गत लिया जा सकता है—वर्नाक्यूलयर हिंदोस्तानी तथा उसके आधार पर निर्मित साहित्यिक हिंदोस्तानी। वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी गगा के ऊपरी दोआब और पश्चिमी रुहेलखड की भाषा है। साहित्यिक हिंदोस्तानी सामान्यत पूरे भारत की शिष्ट भाषा है और उसे समस्त उत्तरी भारत के शिक्षित मुसलमानो तथा नर्मदा के दक्षिण मे बसे मुसलमानो की जन-भाषा समझा जा सकता है। साहित्यिक हिन्दोस्तानी वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी से उद्भूत हुई है और अभी तक इसकी जडे उसमें है। अत पहले वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का विवरण उपयुक्त होगा, किन्तु सुविधा की दृष्टि से यहाँ पहले साहित्यिक हिंदोस्तानी को लिया जाता है। साहित्यिक हिंदोस्तानी को उसके अत्यधिक प्रचार और महत्त्व के कारण निश्चित रूप से पश्चिमी हिंदी की आदर्श बोली समझना चाहिए। इसका व्याकरण तथा इसकी साहित्यिक शैली के विविध प्रतिमान निश्चित है और उन विभिन्न जनभाषाओ से तुलना करने के लिए उपयुक्त रूप प्रस्तुत करते है, जिन पर यह आधारित है अथवा जिनसे यह सम्बद्ध है।

हिंदोस्तानी के दो मुख्य भेदो—वर्नाक्यूलर तथा साहित्यिक हिंदोस्तानी—के बोलने वालो की अनुमानित सख्या निम्नलिखित है—

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी	५,२८२,७३३
साहित्यिक हिन्दोस्तानी	११,६३३,१६९
कुल जोड	१६,९१५,९०२

साहित्यिक हिन्दोस्तानी[1], उर्दू तथा हिन्दी

बोली का नाम

'हिंदोस्तान' शब्द उद्‌गम की दृष्टि से फारसी है और इसका शाब्दिक अर्थ 'हिंदोओ' अथवा 'हिंदुओ का देश' है। इसके द्वारा भारतीय लेखक पश्चिम मे पजाव, पूर्व में वगाल, उत्तर मे हिमालय और दक्षिण मे विन्ध्य के वीच के प्रदेश को द्योतित करते है। सस्कृत भूगोल का प्राचीन मध्यप्रदेश इसी के अन्तर्गत है, किन्तु प्राचीन मध्यदेश की अपेक्षा हिंदोस्तान का पूर्व मे वहुत अधिक विस्तार है।[2]

यूरोपीय प्रभाव से गढे गए 'हिंदोस्तानी' शब्द का अर्थ हिंदोस्तान की भाषा है। यह अपने शाब्दिक अर्थ से अधिक व्यक्त करता है, क्योकि हिंदोस्तान मे हिंदोस्तानी के अतिरिक्त तीन दूसरी भाषाएँ—विहारी, पूर्वी हिन्दी तथा राजस्थानी भी वोली जाती है। इस भूभाग की जनसख्या लगभग ९० मिलियन अर्थात् ९ करोड है और यह उतना ही वडा है, जितने जर्मनी, फ्रास और स्पेन सम्मिलित रूप से।

१. ठीक नाम 'हिंदोस्तानी' है, 'हिंदुस्तानी' नहीं जैसा कि सामान्यतः लिखा जाता है। समस्त प्रारम्भिक यूरोपीय लेखक इसका सही अक्षर-विन्यास 'ओ' करते थे, 'उ' नहीं। यह शब्द फ़ारसी एवं उर्दू काव्य के 'दोस्ताँ' और 'वोस्ताँ' वाले तुकांत के साथ प्रयुक्त हुआ है, अत. दूसरा स्वर 'ओ' है, 'उ' नहीं। यहाँ तक कि अब सामान्यत. उच्चरित 'हिंदू' शब्द शुद्ध रूप में 'हिंदो' होना चाहिए और भारत में (जहाँ ईरान में विलुप्त 'उ' और 'ओ' का भेद सुरक्षित है) फारसी कविता के शुद्ध पाठकर्ताओ के द्वारा यह प्राय. इसी रूप में वोला जाता है। 'हिंदो' प्राचीन शब्द 'हिंदौ' का प्रतिनिधि है। 'हिंदौ' प्राचीन 'हेंदव' का आधुनिक फ़ारसी रूप है। 'हेंदव' का अर्थ था हप्तहिंदु (संस्कृत 'सप्तसिंधु') अथवा आजकल की 'सात नदियो' के देश का निवासी। दो सरिताओ (सम्भवत. सरस्वती तथा दृशद्वती अथवा घग्गर) के विलोप के कारण अब यही पंजाब कहलाता है। देखिये ल्याल कृत 'Sketch of the Hindustani Language', पृष्ठ १, सर चार्ल्स ल्याल ने सादी की इन पंक्तियो की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है, वोस्ताँ (सम्पादक ग्राफ, मुकदमा १२७)—

'सादी लज्जाहीन होकर वाग में गुलाव और भारत में मिर्च लाए है अर्थात् वे न्यूकैसिल में कोयले लाये है।'

२. मध्यदेश को पूर्वी सीमा वर्तमान इलाहावाद थी।

प्रारम्भिक नाम

भारत पर लिखनेवाले सबसे पुराने लेखक (जैसे टेरी और फ्रेयर) यहाँ की प्रचलित भाषा को 'इदोस्तान' कहते थे। १८वी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग मे लैटिन मे लेखको ने Lingua Indostanica, Hindustanica अथवा Hindostanica का उल्लेख किया है। भारत में सबसे पुराने अंग्रेजी लेखक यहाँ की भाषा को 'मूर्स' कहते थे और गिलक्राइस्ट ने लगभग १७८७ ई० मे सबसे पहले 'Hindostani' अथवा उनके अक्षर-विन्यास के अनुसार 'Hindoostanee' शब्द गढा था।[1]

वोली का प्रवेश :

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी से पृथक् साहित्यिक हिंदोस्तानी अनेक शैलियो में सभ्य समाज की भाषा तथा जन सामान्य की भाषा के रूप मे लगभग समस्त भारत में प्रचलित है। यह गद्य एव पद्य साहित्य की भी भाषा है।

भाषा-भाषियों की सख्या

हिंदोस्तानी वोलने की क्षमता रखनेवालो में से अधिकाश अपनी-अपनी मातृभाषाओ के अतिरिक्त इसे एक दूसरी भाषा के रूप में प्रयुक्त करते हैं इसलिए जिन भाषा-भाषियो के वीच यह प्रचलित है उनकी अनुमानित सख्या देना ही सम्भव हो सकेगा। यह सच है कि उर्दू रूपवाली हिंदोस्तानी, विशेषत वडे शहरो में, शिक्षित मुसलमानो की एकमात्र भाषा है, लेकिन इन्हें उन वहुत सारे द्विभाषीय लोगो से अलग करनेवाले आंकडे उपलब्ध नही हैं। हिंदोस्तानी के केवल दक्खिनी रूप के लिए लगभग सही आँकड़े मिलते है।

निम्नलिखित तालिका मे प्रान्तो के अनुसार साहित्यिक हिंदोस्तानी के किसी-न-किसी रूप में वोलनेवालो की अनुमानित सख्या है। गगा के ऊपरी दोआव और पश्चिमी रुहेलखड में रहनेवाले वर्नाक्यलर हिंदोस्तानी के वोलनेवालो को और पश्चिमी हिंदी की दूसरी वुंदेली, कनौजी, व्रज अथवा वाँगरू वोलियाँ वोलनेवालो को मैंने इसमें सम्मिलित नही किया है। दक्खिनी के आँकडे कुल जोड के रूप में दे दिये गये हैं। प्रदेशो के अनुसार विस्तार आगे दिए जायँगे, जव हम इस वोली पर विस्तारपूर्वक विचार करेंगे। आसाम, वगाल, सयुक्तप्रात, राजपूताना, मध्यभारत, अजमेर-मेरवाड और काश्मीर के आँकडे सर्वेक्षण के लिए मँगवायी गयी सूचनाओ पर आधारित हैं। दूसरो का आधार आवश्यक सुधारो के पश्चात् सन् १८९१ की जनगणना है।

१—फर्गूसन ने सन् १७७३ में 'Dictionary of the Hindostan Language' प्रकाशित की थी। इस विषय की अधिक जानकारी के लिए पुस्तक-सूची देखिए।

बबई प्रेसीडेंसी के सम्बन्ध मे मैने गुजरात तथा सिंध की हिंदोस्तानी को साहित्यिक हिन्दोस्तानी और प्रेसीडेंसी के शेष भाग की भाषा को दक्खिनी माना है।

भारत के विभिन्न प्रान्तो मे साहित्यिक हिन्दोस्तानी के बोलनेवालों की अनुमानित सख्या सम्बन्धी तालिका

प्रान्त	भाषा-भाषियो की अनुमानित सख्या
असम	३८ २९०
बगाल	१,८२८ ३७२
बिहार	४ ०००
बम्बई	१०१,१९१
गुजरात	१८,००९
सिंध	११९,२००
बर्मा	८३ ६९४'
मध्य प्रान्त	८०,२५६
पजाब	१,३२०,८०१
सयुक्त प्रान्त	३,८५९,२९१
बडौदा	११,०२६
मैसूर	२५,५३४
राजपूताना, मध्य भारत तथा अजमेर	३२२,०००
कश्मीर	८००
दक्खिनी के आँकडे	३,६५४,१७२
कुल जोड	११,३५०,४३६

बोली का उद्गम

जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, साहित्यिक हिंदोस्तानी गगा के ऊपरी दोआब तथा पश्चिमी रुहेलखड मे बोली जानेवाली वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी पर आधारित है। यह दिल्ली के मुगल दरबार के बहुभाषी बाज़ार में बोलचाल की भाषा के रूप में

१ इनमें से अधिकाश सम्भवत: दक्खिनी के भाषा-भाषी है, लेकिन इस संबंध में निश्चित सूचना उपलब्ध नहीं है।

विकसित हुई और मुगल साम्राज्य के कर्मचारियो द्वारा भारत मे हर जगह ले जायी गयी। इसके उपरान्त इसकी स्थिति सुरक्षित हो गयी। यह मुगल सम्राटो के धर्म के अनुयायियो के द्वारा निजी भाषा के रूप में ग्रहण कर ली गई। सरल व्याकरण तथा विपुल शब्द-भडार के कारण यह उस कमी को पूरा कर सकी जो भारत-जैसे बहुभाषी देश मे बोलचाल की एक जनभाषा के लिए सदा महसूस की जाती रही थी। इसके कम-से-कम दो रूपो मे यथेष्ट साहित्यिक विकास हुआ।[1]

उर्दू

इसके अनेक मान्य रूप है जिनमे से उर्दू, रेख्ता, दक्खिनी तथा हिंदी का उल्लेख किया जा सकता है। उर्दू हिंदोस्तानी का वह रूप है जो फारसी शैली मे लिखा जाता है और जिसके शब्द-समूह में फारसी (अरबीसहित) शब्दो का मुक्त प्रयोग होता है। यह नाम 'उर्दू-ए-मुअल्ला' अथवा दिल्ली में राजमहल के बाहर के शाही सैनिक बाज़ार से उदभूत कहा जाता है। यह मुख्यत पश्चिमी हिंदोस्तान के शहरो में मुसलमानो तथा फारसी सभ्यता से प्रभावित हिंदुओ द्वारा बोली जाती है। यह सच है कि हिंदोस्तानी के प्रत्येक रूप मे फारसी शब्द प्रयुक्त होते है, चाहे वह ग्रामीण बोली हो अथवा बनारस के हरिश्चद्र—जैसे आधुनिक लेखक की परिष्कृत हिंदी। इसके प्रयोग का विरोध अग्रेजी के लैटिन व्युत्पत्ति वाले शब्दो के विरोध के समान कृत्रिम विशुद्धता मानना पडेगा। किंतु सलीस उर्दू में फारसी शब्दो का प्रयोग अस्वाभाविक सीमा तक पहुँच जाता है। इस प्रकार की रचनाओ में हमें ऐसे पूरे-के-पूरे वाक्य मिलते है जिनमें शुरू से आखिर तक फारसी शब्द होते है—केवल व्याकरण ही भारतीय होता है। फिर भी यह एक विचित्र तथ्य है कि हिंदोस्तानी का यह अत्यधिक फारसीकरण, जैसा कि सर चार्ल्स ल्याल ने सही रूप मे कहा है, जन सामान्य की भाषा से अनभिज्ञ विजेताओ का कार्य नही था। वास्तव में

१ हिन्दोस्तानी का यह विवरण मीर अमनकृत 'बागो-बहार' की भूमिका पर आधारित उन विवरणो से भिन्न है जो अब तक अधिकांश लेखको द्वारा (जिनमें प्रस्तुत लेखक भी सम्मिलित है) दिये जाते रहे हैं। उनके अनुसार उर्दू उन विभिन्न कबीलो की भाषाओ का मिश्रण है जो झुडो में दिल्ली के बाजार में आते थे। उपर्युक्त स्पष्टीकरण सन् १८८० में सर्वप्रथम सर चार्ल्स ल्याल ने प्रस्तुत किया था और भाषा सर्वेक्षण द्वारा उनके दृष्टिकोण की सही स्थिति स्पष्ट हुई है। हिंदोस्तानी गंगा के ऊपरी दोआब तथा पश्चिमी रुहेलखंड की भाषा है जिसमें से थोड़े ग्रामीण मुहावरे हटाकर कुछ साहित्यिक पॉलिश कर दी गयी है।

ग्रहणशील हिंदू द्वारा किये गये अपने शासको की भाषा को स्वीकृत करने के प्रयत्नो के फलस्वरूप उर्दू ने यह रूप ग्रहण किया। इस शैली के आविष्कारक राजकीय पदो पर नियुक्त और फारसी से परिचित कायस्थ तथा खत्री थे, फारस के निवासी अथवा फारसी को ग्रहण करनेवाले तुर्क नही थे जिन्होने अनेक शताब्दियो से साहित्य मे केवल फारसी भाषा का प्रयोग किया था।[1] कायस्थो एव हिंदुओ को ही इन दोनो बातो का श्रेय है—अपनी जन-भाषा के लिए फारसी लिपि अपनाने का और फलस्वरूप उन शब्दो को प्राथमिकता देने का जो उस लिपि के लिये सहज है। 'फारसी अब भारत मे विदेशी नही कही जा सकती है। यद्यपि इसका अत्यधिक प्रचार सुरुचि के विरुद्ध है, फिर भी इसे आज के हिंदू साहित्य से बहिष्कृत करने का प्रयास (जैसा कि कुछ ने किया भी है) मूर्खतापूर्ण शुद्धतावाद तथा एक राजनीतिक गलती होगी।' एक विद्वान् का एक विवादास्पद प्रश्न के एक पक्ष के समर्थन में क्या मत है यह बतलाने के लिए मैंने सर चार्ल्स ल्याल की पुस्तक से उपर्युक्त उद्धरण दिया है। मै सोचता हूँ कि उनके द्वारा प्रतिपादित सामान्य सिद्धात की समीचीनता के सबध मे किसी को शका नही होगी। हिंदोस्तानी मे एक बार किसी शब्द के घुलमिल जाने पर किसी को उसके प्रयोग का विरोध करने का अधिकार नही है, चाहे उसका उद्गम कुछ भी हो। मतभेद केवल इसी बात पर हो सकता है कि किन शब्दो को नागरिकता का अधिकार मिले और किनको नही। अततोगत्वा यह शैली का ही प्रश्न है और हिंदोस्तानी में अंग्रेज़ी के समान अनेक शैलियाँ हैं। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं हिंदोस्तानी के उस रूप को भी अच्छा समझता हूँ जिसमे से सदिग्ध नागरिकतावाले शब्द बहिष्कृत हो, लेकिन साथ ही यह भी स्वीकार करता हूँ कि यह केवल रुचि की ही बात है।

रेख़्ता

रेख़्ता (बिखरा हुआ या टूटा हुआ) वह रूप है जो उर्दू भाषा काव्य के लिए प्रयुक्त होने पर लेती है। यह नाम उस शैली से उद्भूत हुआ है जिसके फलस्वरूप

१ इसी प्रकार अंग्रेजी जानने वाले बंगाली बाबुओं द्वारा अंग्रेज़ी शब्दसमूह बंगाली में सम्मिलित किया जा रहा है। जब ये सज्जन आपस में बंगाली में बात करते हैं तो कभी-कभी प्रत्येक दूसरा शब्द अंग्रेज़ी का होता है। एक बार मुगेर में मैंने एक बाबू को दूसरे से यह कहते सुना था 'ए देशेर क्लाइमेट कांस्टीट्यूशनेर जन्य अति हेल्दी।' एक बार एक भारतीय पशु-चिकित्सक ने मुझसे कहा था, 'कुत्ते का सलीवा बहुत ऐंटीसेप्टिक हैं' और श्री ग्राहम बेली ने एक बार एक पंजाबी दंत्य-चिकित्सक को दूसरे से यह कहते हुए सुना था, 'कंटीन्यूअली एक्सकेवेट न करो।'

फ़ारसी शब्द इसमे 'बिखेरे' रहते है। जब स्त्रियो की अपने शब्दसमूहवाली विशिष्ट बोली मे कविताएँ लिखी जाती है तब उसे रेख्ती कहते है।[1]

दक्खिनी

हिंदोस्तानी का दक्षिण के मुसलमानो द्वारा प्रयुक्त रूप दक्खिनी[2] है। उर्दू के समान यह फारसी लिपि मे लिखी जाती है लेकिन फारसीकरण से बहुत-कुछ बची हुई है। इसमे ऐसे व्याकरणिक रूप (जैसे 'मुझको' के लिए 'मेरे को') प्रयुक्त होते हैं जो उत्तरी भारत के ग्रामीण क्षेत्रो मे प्रचलित है, किन्तु साहित्यिक भाषा मे नही मिलते। दक्षिण के दक्षिणी भाग मे इसमे भूतकाल में सकर्मक क्रियाओ के पूर्व करण कारक के चिह्न 'ने' का प्रयोग नही होता जो पश्चिमी हिंदोस्तानी की सभी बोलियो की एक विशेषता है।

हिन्दी

हिन्दी शब्द का प्रयोग अनेक विभिन्न अर्थों में किया जाता है। यह फारसी भाषा का शब्द है, भारतीय नही। यह शब्द सही अर्थ में 'भारत का निवासी' अर्थ द्योतित करता है जो 'हिंदू' अथवा अ-मुसलमान भारतीय से पृथक् है। अमीर खुसरो 'हिंदू' तथा 'हिंदी' में अतर स्पष्ट करते हुए एक जगह लिखते हैं कि, 'बादशाह ने पकडे जानेवाले हिंदुओ को तो हाथी से कुचलवा डाला, किंतु मुसलमान को जो हिंदी थे छोड दिया।' इस अर्थ में (जिसमे अब तक देशवासियो द्वारा इसका प्रयोग होता है।) बगाली तथा मराठी उतनी ही हिंदी हैं जितनी की दोआब की भाषाएँ। दूसरी ओर यूरोपियन इस शब्द का प्रयोग दो परस्पर विरोधी अर्थों मे करते है—कभी हिंदोस्तानी के सस्कृतनिष्ठ अथवा कम-से-कम फारसीयुक्त रूप को सकेतित करने के लिए जो हिंदुओ द्वारा इस भाषा के साहित्य में प्रयुक्त होता है और सामान्यत नागरी शैली में लिखा जाता है, और कभी-कभी साधारण अर्थ में बगाल तथा पजाब के बीच के प्रदेश में बोली जानेवाली ग्रामीण बोलियो को द्योतित करने के लिए। प्रस्तुत पृष्ठो में मैंने इस शब्द को पहले ही अर्थ मे प्रयुक्त किया है। यह हिंदी, जिसे कभी-कभी 'उच्च हिंदी' भी कहा जाता है, उत्तर भारत के उन हिंदुओ की साहित्यिक गद्य-भाषा है जो उर्दू का प्रयोग नही करते। इसका

१. यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि उर्दू के इस विवरण का अधिकाश भाग सर चार्ल्स ल्याल कृत 'Sketch of the Hindustani Language' पर आधारित है।
२ दक्खिनी का विस्तृत विवरण अलग से आगे दिया गया है।

उद्गम आधुनिक है—इसका प्रयोग अंतिम शताब्दी के प्रारम्भ में अंग्रेज़ी प्रभाव के फलस्वरूप होने लगा था। इस समय तक हिंदू गद्य-लेखन मे उर्दू का प्रयोग न करने पर अपनी स्थानीय बोली अवधी, बुंदेली अथवा व्रजभाषा आदि का आश्रय लेता था। इस परम्परा के विपरीत लल्लूलाल ने डा० गिलक्राइस्ट की प्रेरणा से प्रसिद्ध 'प्रेम-सागर' की रचना की, जिसके उर्दू में लिखे गये गद्यांशो मे उन समस्त स्थलो पर भारतीय आर्य शब्द रखे गये जहाँ कोई अन्य लेखक इस भाषा के उस रूप मे फारसी शब्दो का प्रयोग करता। इस प्रकार यह गगा के ऊपरी दोआब की वास्तविक जन-भाषा की ओर लौटना कहा जा सकता है। इस नये प्रयोग की दिशा आरम्भ से ही सफल रही। हिंदी मे लिखी इस प्रथम पुस्तक के विषय के प्रति सभी हिंदू आकृष्ट हुए और लेखक की शैली उन्हें अरबी साज के समान सगीतात्मक एव लयात्मक लगी। फिर इस भाषा ने एक आवश्यकता की पूर्ति की अर्थात् यह हिंदुओ की बोलचाल की भाषा बन गयी। इसने भिन्न-भिन्न प्रदेशो के व्यक्तियो को मुसलमानो के अपवित्र शब्दो (उनके लिए) का आश्रय लिए बिना एक-दूसरे से बातचीत करने की सभावना प्रदान की। यह हर जगह सरलतापूर्वक बोधगम्य थी, क्योकि इसका व्याकरण उस भाषा का था जिसे प्रत्येक हिंदू को राजकीय अधिकारियो के साथ व्यवहार के सिलसिले मे प्रयुक्त करना पडता था और इसकी शब्दावली उत्तरी भारत की सभी सस्कृतनिष्ठ भाषाओ की सामान्य सम्पत्ति थी। इसके अतिरिक्त टिप्पणियो आदि को छोडकर बहुत थोडा गद्य किसी भी आधुनिक भारतीय जनभाषा में इसके पूर्व लिखा गया था। साहित्य लगभग पूर्णत काव्य तक ही सीमित रहा था। इसलिए 'प्रेमसागर' की भाषा सहज रूप से बगाल से लेकर पजाब तक समस्त हिंदोस्तान की आदर्श हिंदू गद्य-शैली बन गयी और उसका यह स्थान आज तक सुरक्षित है। आजकल उत्तर भारत का कोई भी हिंदू गद्य लिखते समय हिंदी अथवा उर्दू के अतिरिक्त किसी अन्य बोली की कल्पना नही करता है, किंतु काव्य-रचना के लिए वह तत्काल पुरानी जन-बोलियो मे से किसी एक को अपना लेता है, जैसे तुलसीदास की अवधी अथवा आगरा के अधे गायक की व्रजभाखा। पिछले ही कुछ वर्षो के अन्दर हिंदी में कविता लिखने के प्रयत्न हुए है जिन्हे, प्रस्तुत लेखक के मतानुसार, साधारण ही सफलता मिली है। हिंदी मे लल्लूलाल के समय मे शैली के कुछ नियम विकसित हो गये है जो उसे उर्दू से पृथक् करते हैं। इनमे प्रमुख नियम शब्द-क्रम से सम्बद्ध है जो हिंदोस्तानी के उस रूप की अपेक्षा हिंदी मे कम स्वतत्र है। हिंदी कुछ वर्षो से सस्कृत के घातक प्रभाव में पड गयी है। पडितो के हाथो मे पड जाने और कुछ ऐसे यूरोपीय लेखको के प्रोत्साहन के फलस्वरूप जिन्होने हिंदी सस्कृत माध्यम से सीखी है हिंदी शैली भी बगाली की तरह बिगड रही है। हिंदी की अपनी

शब्दावली अत्यन्त विपुल है जिसकी जडे उस सबल ग्रामीण समुदाय में है जिसकी भाषा पर वह आधारित है। इसीलिए अधिकाश आधुनिक हिंदी पुस्तको मे मिलने वाले दस मे नौ सस्कृत शब्द अनुपयोगी और दुर्बोध हैं। संस्कृत शब्दो के प्रयोग से शैली की शोभा बढी समझी जाती है। मानो अठारह साल की एक सुदर लडकी अपनी परदादी के भारी जेवरो का स्वाँग रचाकर आकर्षण बढा सकती हो। कुछ समझदार देशी विद्वान, कृत्रिम शुद्धता की भावना का प्रदर्शन किए बिना, इस बहुत आसानी से लगी छूत से बचने की कोशिश कर रहे हैं। हमें आशा करनी चाहिए कि उन्हें अपने इस प्रयास मे पर्याप्त प्रोत्साहन मिलेगा।

'हिन्दोस्तानी,' 'उर्दू' तथा 'हिन्दी' की परिभाषाएँ

अब हम हिंदोस्तानी के उपर्युक्त तीन प्रमुख रूपो की इस प्रकार परिभाषा दे सकते है—हिंदोस्तानी मुख्यरूप से गगा के ऊपरी दोआब की भाषा है और भारत के अतर्प्रादेशिक व्यवहार की माध्यम भी है। यह फारसी तथा देवनागरी दोनो लिपियो मे लिखी जा सकती है और इसकी साहित्यिक शैली मे अत्यधिक फारसी एव सस्कृत शब्दो को समान रूप से बचाया जाता है। उर्दू हिंदोस्तानी की वह शैली है जिसमें फारसी शब्द अधिक मात्रा में प्रयुक्त होते है और जो इसलिए केवल फारसी लिपि मे लिखी जा सकती है। इसी प्रकार हिन्दी हिंदोस्तानी की वह शैली है जिसमें सस्कृत शब्दो का प्राचुर्य रहता है और जो इस कारण केवल देवनागरी लिपि में लिखी जा सकती है। स्वर्गीय श्री ग्राउस द्वारा प्रस्तुत ये परिभाषाएँ सुबोध भी है और एक दूसरे की सीमा में भी नही आती लेकिन अभी तक इन तीनो शब्दो का प्रयोग मोटे ढग से हुआ है। 'पूर्वी हिंदी' नाम के द्वारा मैं मध्यवर्ती बोलियो के उस समूह को द्योतित करता हूँ जिसमे अवधी प्रमुख है और 'पश्चिमी हिंदी' के द्वारा बोलियो के उस वर्ग को व्यक्त करता हूँ जिसमें ब्रजभाखा तथा हिंदोस्तानी (अपने विभिन्न रूपो मे) प्रधान है।

साहित्य

साहित्यिक भाषा के रूप में हिंदोस्तानी के प्राचीनतम नमूने उर्दू के है, या यो कहिए कि रेख़्ता के है क्योंकि वे पद्यात्मक रचनाएँ थी। साहित्य में इसका सर्वप्रथम प्रयोग १६ वी शताब्दी मे दक्षिण मे प्रारम्भ हुआ था। इसके सौ वर्ष पश्चात् रेख़्ता के जनक वली औरगाबादी ने इसे प्रामाणिक रूप दिया। वली के आदर्श पर ही दिल्ली मे भी इसमें रचना होने लगी जहाँ अनेक कवि हुए। इनमे सौदा (मृत्यु १७८०, प्रसिद्ध व्यग्यो के रचयिता) तथा मीर तकी (मृत्यु १८१०) विशेष रूप से उल्लेखनीय है। १८ वी शताब्दी के मध्य में दिल्ली के सकटकाल मे लखनऊ में (दिल्ली की ही जैसी

प्रसिद्धि वाला) दूसरा केन्द्र बना। उर्दू काव्य तथा पूर्वी एवं पश्चिमी हिंदी की विभिन्न बोलियो मे लिखे गये काव्य मे एक बडा अतर छदशास्त्र का है। पहले मे छंद फारसी भाषा के हैं किंतु दूसरे में बिलकुल भिन्न भारतीय पद्धति अपनायी गयी है। इसके अतिरिक्त उर्दू काव्य-रचना के फारसी सिद्धान्तो पर लगभग पूर्णत अवलबित है। ये सिद्धात उन पुरानी रचनाओ से बिलकुल पृथक् हैं जिनसे देशी साहित्य का जन्म हुआ। उर्दू गद्य पिछली शताब्दी के प्रारम्भ मे कलकत्ता मे साहित्यिक माध्यम के रूप मे अस्तित्व मे आया। हिंदी गद्य के समान इसकी स्थिति भी अग्रेज़ी प्रभाव के परिणामस्वरूप थी और विशेष कारण था फोर्ट विलियम कॉलेज के लिए हिंदोस्तानी के दोनो रूपो मे पाठ्य-पुस्तको की आवश्यकता। उर्दू की इन प्रारम्भिक पुस्तको मे मीर अम्मनकृत 'बागो-बहार' एव हफीजुद्दीन अहमदकृत 'ख़िरद अफरोज़' प्रसिद्ध उदाहरण हैं। इसी प्रकार हिंदी में लल्लूलाल का पूर्व उल्लिखित 'प्रेमसागर' है। इसके बाद उर्दू तथा हिंदी दोनो के गद्य सम्पन्नता की ओर विकसित हुए, किंतु इस सबध मे पिछली शताब्दी मे प्रकाशित विपुल साहित्य का सविस्तार वर्णन अनावश्यक होगा। उर्दू तथा हिंदी के दिवगत लेखको मे सर्वाधिक प्रसिद्ध क्रमश स्वर्गीय सर सैयद अहमद बहादुर तथा बनारस के स्वर्गीय हरिश्चद्र हैं। हिंदी मे काव्य-रचना अवश्य नही हुई जबकि उर्दू कविता अब भी फलफूल रही है।

उर्दू तथा हिन्दी के प्रमुख केन्द्र

उर्दू तथा हिन्दी भारत की दो महान् धार्मिक परम्पराओ की प्रतिनिधि हैं और इनके क्षेत्र दूर-दूर है। दो प्रतिद्वंद्वी नगर दिल्ली तथा लखनऊ उर्दू के वास्तविक प्रमुख क्षेत्र होने का दावा करते हैं। इन दो शहरो के लेखको और उनके अनुगामियो की शैली मे यथेष्ट भिन्नता दिखायी देती है। लखनऊ तथा दिल्ली की उर्दू के बीच कुछ अतर तो सामान्य है जैसे क्रियार्थक सज्ञा के रूप में असमापिका क्रिया का प्रयोग अथवा कुछ क्रियाओ का सकर्मक अथवा अकर्मक रूप मे प्रयोग, लेकिन प्रमुख भेद है लखनऊ की उर्दू का दिल्ली की उर्दू की अपेक्षा अधिक फारसीमय होना। लखनऊ के लेखको को ऐसे वाक्य लिखने में मज़ा आता है जो रचना तथा शब्दावली की दृष्टि से पूरी तरह फारसी-मय हो, बस, उनके अत मे एक सहायक क्रिया अवश्य रहती है। दूसरी ओर दिल्ली की उर्दू अधिक भारतीय है। इसमें लेखक किसी शब्द का प्रयोग करने मे इसलिए नही सकुचाते क्योकि वह देशी उद्गम का है। दिल्ली के नये लेखको ने कृत्रिम शैली से बचने के पक्ष का बडा समर्थन किया है। उर्दू लेखको का यह नया वर्ग १९ वी शताब्दी के पिछले बीस वर्षो मे आगे आया है। अनेक उत्कृष्ट उपन्यासो के लेखक नज़ीर अहमद इसमे

सबसे प्रसिद्ध हैं। उनकी प्रारम्भिक पुस्तको की भाषा बहुत सरल एव स्पष्ट है और उनकी रचनाओ मे गहरा व्यावहारिक ज्ञान तथा हास्य की उत्तम परख दोनो ही दिखलायी पडते हैं। नये वर्ग के लेखकों में हाली, मुहम्मद हुसेन आज़ाद (कुछ व्यक्तियो के अनुसार विशुद्धतम उर्दू गद्य के रचयिता), रतननाथ 'सरशार' तथा अब्दुल हलीम शरर उल्लेखनीय हैं। ये लेखक साहित्य मे उस स्वाभाविकता के पक्षपाती है जो लखनऊ के लेखको की कृत्रिम विचारपद्धति तथा शैली के विरुद्ध है।

हिंदी मे भी लेखको के दो वर्ग हैं—आगरा का तथा बनारस का। बनारस का हिंदी गद्य साहित्यिक बंगाली के समान ही कृत्रिम है। लखनऊ की उर्दू से इसकी दो बातो में समानता है—सरल भाषा के प्रयोग की अधिकाधिक उपेक्षा और शब्दावली को लगभग केवल उन्ही शब्दो तक सीमित रखना जो सस्कृत से सीधे लिये गये है। इसमें देशी भारतीय शब्द फारसी उद्गम के समान ही बहिष्कृत है। इसके विपरीत आगरा के लेखक संस्कृतनिष्ठता से अपेक्षाकृत अधिक मुक्त हैं वरन् स्वतत्रतापूर्वक उन विदेशी शब्दो को भी स्वीकार करते हैं जो भारत की सामान्य शब्दावली में घुलमिल गये है।

साहित्यिक हिन्दोस्तानी के विभिन्न रूप

इस सबंध में यह उल्लेख यहाँ फिर किया जा सकता है कि साहित्यिक हिंदोस्तानी पश्चिमी हिंदी की एक बोली पर न केवल आधारित है, वरन् इसका अब तक उससे जीवित सबध है। विभिन्न लेखकों ने बिना सकोच के अपनी देशी बोली के मुहावरो का प्रयोग अपनी रचनाओ मे किया है जिनमे से अनेक आदर्श गद्यशैली मे सम्मिलित हो गये है। इस प्रकार गिलक्राइस्ट के समय से आज की साहित्यिक हिंदोस्तानी बहुत भिन्न है। अनेक मुहावरो का अब प्रयोग नही होता और अनेक नये मुहावरे प्रयोग में आने लगे हैं। इसलिए 'तोता कहानी' तथा 'बागोबहार' जैसी पुस्तकें आज की परिष्कृत उर्दू के लिए आदर्श नही मानी जा सकती है। अनेक यूरोपीय लेखको ने इस परिवर्तन का विरोध किया है और नये मुहावरो की 'अव्याकरणिक अथवा अशुद्ध प्रयोग' कह कर निंदा की है। वे भूल जाते हैं कि ये रचनाएँ, जिन्हे वे क्लासिक समझते हैं, वास्तव में हिंदोस्तानी गद्य-लेखन के प्रारम्भिक प्रयास है। इसके अतिरिक्त सौ वर्षो के अभ्यास ने देशी मुहावरो के अपार भडार की सहायता से महान् क्षमताओ से युक्त बोली के इस रूप को बहुत समुन्नत कर दिया है। भाषा जैसी है वैसी न हो, वरन् ऐसी हो जैसी शिक्षक के अनुसार उसे होना चाहिए—मेरे विचार में सर्वप्रथम श्री प्लेट्स ने किसी भाषा के पढाने की इस अत्यधिक परम्परावादी पद्धति पर प्रहार किया था। उन्होने यह ठीक ही आग्रह किया था कि यूरोपियनो द्वारा लिखे

गये व्याकरण अतिम रूप से निर्दोष नही माने जा सकते, चाहे वे कितने ही विद्वतापूर्ण क्यो न हो। श्रेष्ठ लेखको की भाषाशैली ही प्रमाणस्वरूप होती है। भाषा व्याकरणो के अनुरूप नही बनायी जा सकती, व्याकरण ही अनिवार्यत भाषा के अनुरूप होने चाहिए।[१] वह शुद्धतावाद झूठा है जो किसी उपयुक्त शब्द या मुहावरे को, चाहे वह जनभाषा का ही क्यो न हो, केवल इसीलिए निंदा करता है क्योकि किसी पूर्ववर्ती लेखक ने अब तक उसका प्रयोग नही किया था।[२]

लिपि

हिंदोस्तानी के लिए लिपि विशेष के प्रयोग के पीछे कारण प्राय धार्मिक है। मुसलमान कुछ अतिरिक्त चिह्नो के साथ सामान्यत फारसी लिपि का प्रयोग करते है। सरल हिंदोस्तानी जो न अधिक फारसीकृत होती है और न अधिक सस्कृतनिष्ठ, दोनो ही लिपियो मे लिखी जाती है। अक्सर पाठको के एक बडे वर्ग को पसद आनेवाली पुस्तक दो सस्करणो मे प्रकाशित की जाती है—एक मुसलमानो के लिए फारसी लिपि मे और दूसरा हिंदुओ के लिए देवनागरी लिपि मे। अनेक शिक्षित हिंदू, विशेषतया कायस्थ, दोनो लिपियो का समान ज्ञान रखते है।

जब हिंदोस्तानी अधिक फारसीकृत होकर उर्दू का रूप ले लेती है तब शब्द ध्वन्यात्मक दृष्टि से प्राय इतने विदेशी हो जाते है कि उन्हे सुविधापूर्वक देवनागरी मे नही लिखा जा सकता। इसीलिए उर्दू सदैव फारसी लिपि मे लिखी जाती है।

१ देशी बोलियो से शब्द-ग्रहण के एक उदाहरण के लिए मै यहाँ 'उसने' के स्थान पर 'उन्ने' प्रयोग का उल्लेख कर सकता हूँ। अनेक वैयाकरणो ने इसके विषय में अपनी दक्षता का प्रदर्शन किया है और अनेक ने अशुद्ध मान कर इसकी निंदा की है। यह एक बहुत सामान्य देशी शब्द 'उने' या 'उनी' है जो दक्खिनी में अभी तक सुरक्षित है। साहित्यिक भाषा में मिथ्या सादृश्य के कारण 'न' का द्वित्व हो गया है। अन्य उदाहरण सम्प्रदान के लिए 'को' के स्थान पर 'के' का प्रयोग है। सारे उत्तरी भारत में प्राय. सम्प्रदान के लिए 'के' प्रयुक्त होता है और यह ठीक भी है। पूर्व में यह नियम है, वहाँ 'को' सुनायी ही नहीं पड़ता। श्री प्लेट्स के अतिरिक्त सभी वैयाकरणो ने इस 'के' को कद् का विकृत रूप बतलाया है। 'उसको सख्त चोट लगी है' जैसे वाक्यो में यह स्पष्ट ही संप्रदान कारक में है, जैसा श्री प्लेट्स ने भी उल्लेख किया है।

२. इस सेक्शन के प्रारभ में दिये गये डब्ल्यू० आर्थर के विचारो से तुलना कीजिए।

इन्हीं कारणो से अत्यधिक सस्कृतनिष्ठ हिंदी सदा देवनागरी मे लिपिबद्ध होती है। उन कट्टरपथियो के लिए, जिन्हे अधिक ममज्ञ होनी चाहिए किंतु नही है, लिपि की यह समस्या दुर्भाग्यपूर्वक एक प्रकार की धार्मिक कट्टरता बन गयी है। वास्तविक हिंदोस्तानी दोनो में से किसी भी लिपि मे सुविधापूर्वक लिखी जा सकती है, मुसलमान इस फारसी मे पढना सबसे अधिक सुविधाजनक समझते है और हिंदू देवनागरी मे। किंतु क्योकि हिंदोस्तानी के ये दोनो अतिवादी रूप अपनी अलग-अलग एक शैली मे ही लिखे जा सकते है, इसलिए कट्टरपंथी लिपि और भाषा को एक समझते है। उनका कहना है कि क्योकि एक रचना देवनागरी में लिखी गयी है इसीलिए वह हिंदुओ की भाषा हिंदी है और क्योकि वह दूसरी रचना फारसी लिपि मे लिखी गयी है इसलिए वह मुसलमानो की भाषा उर्दू है। ये गलत धारणाएँ है। लिपि से कोई भाषा नही बनती। अगर बनती होती, तो अग्रेजी लिपि में लिखी हिंदोस्तानी के सबध में हमे यह कहना होता कि यह अग्रेज़ी भाषा है, हिंदोस्तानी नही। लेकिन ये कट्टरपथी भी ऐसा नही कह सकते, यद्यपि तर्क की दृष्टि से बात यहाँ तक ही पहुँचेगी। यहाँ यह उल्लेख आवश्यक है, क्योकि भारत सरकार द्वारा मान्य लिपि से सम्बद्ध नीति काफी ग़लत ढग से समझी गयी है। जब कुछ मामलो मे सरकारी कागज़ो मे देवनागरी लिपि को स्वीकृत करनेवाले आदेश दिये गये, तो एक हगामा मच गया। अनेक नेकनीयत मुसलमान भी यह समझे कि सरकारी कचहरियो में हिंदी भाषा लायी जा रही है। सरकार यह भलीभाँति समझती थी कि जनसाधारण के लिए सस्कृतनिष्ठ हिंदी उतनी ही दुर्बोध है, जितनी फारसी-मय उर्दू, इसलिए उसने दोनो मे से किसी के प्रयोग करने के सबध मे प्रयत्न नही किया। उसने केवल यही आदेश दिया कि सरकारी कागज़ो की भाषा मे परिवर्तन किये बिना उन्हे ऐसी लिपि में लिखा जाय जो उन्हे पढनेवाले समझ सके।[1]

इस सर्वेक्षण के खड ५, भाग २ मे पृष्ठ ७ पर तथा आगे देवनागरी एव कैथी लिपियो का पूर्ण विवरण दिया गया है। अत यहाँ इन दोनो के तथा फारसी लिपि के सबध

१ सामान्य भारतीय लिखित कागज़ोको पहले पढता है और फिर उसका अर्थ समझता है। कम शिक्षित व्यक्तियों के लिए ये दोनो अवस्थाएँ साथ-साथ नहीं चलती है। 'जब उसने किसी सदेश को पढा और समझा', प्राय: दुहराये जाने वाले ऐसे वाक्यो से यह स्थिति स्पष्ट हो जाती है। इसी प्रकार अपने-आप कोई पत्र पढना 'पढ़ना' नहीं, 'पढ लेना' (अर्थात् पढना और समझना) है। इस सबध में यह भी उल्लेख-नीय है कि भारत के कुछ भागो में उर्दू लिखने के लिए स्थानीय लिपि प्रयुक्त होती है, जैसे उड़ीसा के मुसलमान उड़िया लिपि का प्रयोग करते है।

मे कुछ कहना अनावश्यक होगा। अतिम मे सम्बद्ध अपेक्षित सामग्री विद्यार्थी को किसी भी हिंदोस्तानी व्याकरण मे मिल सकती है। यहाँ इतना बता देना पर्याप्त होगा कि भारतीय भाषाओ की उन विशेष ध्वनियो के लिए प्रयुक्त लिपिचिन्ह, जो फारसी मे नही मिलते, निम्नलिखित है
ڈ ڈھ ڑ ڑھ ٹ ٹھ अर्थात् ढ् ड् ढ़् ड़् ठ् ट्। प्रत्येक नये लिपि-चिन्ह को ऊपर ط तोय लगाकर प्रकट किया जाता है।

हिन्दोस्तानी व्याकरण

हिंदोस्तानी इतनी सुपरिचित भाषा है कि उसके व्याकरण की यहाँ केवल एक रूप-रेखा ही दे देना पर्याप्त होगा। फिर भी मै कुछ विस्तार से कर्ता एव कर्मसहित क्रिया के प्रयोगो की चर्चा करूँगा।

प्रयोग और उनका उद्गम

भारत की प्रत्येक आर्यभाषा के समान हिंदोस्तानी भी किसी प्राचीन भारतीय बोली से निकली है जो वैदिक ऋचाओ में मिलनेवाली प्राचीन सस्कृत से बहुत भिन्न नही रही होगी। शताब्दियो के विकास के फलस्वरूप यह प्राचीन बोली बदल गयी और इसके विभिन्न रूपो के उदाहरण लगभग २५० पू० ई० से १००० ईसवी तक के मिलते हैं। आधुनिक आर्यभाषाएँ अपने वर्तमान रूपो में १००० ईसवी के लगभग स्थिर हो गयी थी।

सस्कृत व्याकरण के प्रमुख तत्त्वो में उस प्राचीन भारतीय बोली का व्याकरण दृष्टिगत होता है जिससे हिंदोस्तानी निकली है। इसके व्याकरण की परीक्षा करने पर विदित होता है कि इसमें क्रिया के काल बहुत पूर्ण किंतु कुछ जटिल हैं। वर्तमान और भविष्यत् का एक रूप सरल था। ये कुछ घिसे हुए रूप में आज भी सुरक्षित हैं, यद्यपि भविष्यत् का रूप आजकल साहित्यिक हिंदोस्तानी मे प्रयुक्त नही होता है। भूतकालो की स्थिति भिन्न थी। प्राचीन भारतीय बोली मे अनद्यतन भूत (लङ) के अतिरिक्त तीन काल थे जो बीते समय, अपूर्णभूत और दो सामान्य भूतो (लुङ) को व्यक्त करते थे। इसमे एक भूतकालिक कृदत भी था जो सदैव अकर्मक होता था अर्थात् सकर्मक क्रियाओ में यह कर्मवाच्य का अर्थ द्योतित करता था। इस प्रकार अकर्मक क्रिया 'जाना' का भूतकालिक कृदत 'गया' था, लेकिन सकर्मक क्रिया 'मारना' का भूतकालिक कृदत 'मार कर के' नही, वरन् कर्मवाच्य मे 'मारा गया' था। सस्कृत के सदृश प्राचीन भारतीय बोली मे यह भूतकालिक कृदत किसी सहायक क्रिया के बिना प्राय भूतकाल के समान प्रयुक्त होता था। जब वक्ता को 'वह गया' कहना होता था, तब वह 'वह

चला गया' कहता था और जब उसे 'मैंने उसे मारा' कहना होता था, तब वह 'वह मेरे द्वारा मारा गया' कहता था। इस प्रकार इस कृदत मे कर्मवाच्य का भाव अभी तक सुरक्षित है। भूतकालिक कृदत का एक और प्रकार है जिसे भाववाच्य कहते हैं। प्राचीन भारतीय वोली के वोलनेवाले को जब 'वह चला गया है' कहना होता था, तब वह प्राय 'उसके द्वारा जाने का काम किया गया है' कहता था।[1]

प्राचीन भारतीय वोली में भूतकालो में क्रियाओ के रूप अत्यंत जटिल थे। अपूर्ण-भूत का प्रयोग दो प्रकार से होता था और जहाँ तक उनमे से सामान्यत प्रयुक्त रूप का नवध था, सस्कृत वैयाकरण भी उसके नियमो से सहमत नही थे। दो सामान्य भूतो के रूपो को ठीक ढग से चलाना और भी कठिन था। दूसरी ओर भूतकालिक कृदत की रचना अपेक्षाकृत अधिक सरल है। प्राचीन भारतीय वोली से विकसित होने के पश्चात् भाषा ने भूतकाल के जटिल रूपो का पूर्णत पालन नही किया। वह धीरे-धीरे उन्हे छोडती गयी और उसने भूतकाल से द्योतित होने वाले भाव को व्यक्त करने के लिए भूतकालिक कृदत का आश्रय लिया। इस प्रक्रिया में प्राचीन भारतीय वोली मे व्यवहृत होने वाले भूतकालिक कृदत के प्रयोग के सभी नियम सुरक्षित रहे, साथ ही उसने अपनी ओर से भी एक नियम वढा कर उनमे वृद्धि की। इसलिए 'वह गया' का भाव व्यक्त करने के लिए हिंदोस्तानी निम्नलिखित मे से किसी एक का प्रयोग करती है—

१—(कर्तृवाच्य), वह चला (सस्कृत, स चलित)
२—(भाववाच्य), उसने चला (सस्कृत, तेन चलितम्)
३—(कर्मवाच्य), मैंने वह मारा (सस्कृत, मया स मारित)
४—(भाववाच्य), मैंने उसको मारा (सस्कृत मे यह 'मया तस्य कृते मारितम्' होगा, लेकिन सस्कृत मे सकर्मक क्रियाओ का प्रयोग भाववाच्य में नही होता।)

चौथा प्रयोग स्पष्ट ही दूसरे के सादृश्य पर आधारित आधुनिक वोली का एक विकास है—कम-से-कम उस प्राचीन भारतीय वोली में इसके होने का प्रमाण नहीं मिलता जिससे हिंदोस्तानी निकली है।

१. यह स्मरणीय है कि लैटिन में भी अकर्मक क्रियाएँ सामान्यतः दो प्रकार से प्रयुक्त की जा सकती हैं। 'मैं खेलता हूँ' के लिए या तो कर्तृवाच्य के अर्थ में 'ludo' (मैं खेलता हूँ) कह सकते हैं और या भाववाच्य के अर्थ में 'luditur a me' (यह खेल मेरे द्वारा खेला गया है)।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भूतकाल को व्यक्त करने के लिए भूतकालिक कृदत के प्रयोग की तीन पद्धतियाँ हैं। इनमें से एक कर्तृवाच्य हिंदोस्तानी में अकर्मक क्रियाओ तक तथा कर्मवाच्य सकर्मक क्रियाओ तक सीमित है, लेकिन भाववाच्य का प्रयोग अकर्मक एव सकर्मक दोनो क्रियाओ मे होता है। यद्यपि साहित्यिक हिंदोस्तानी इनका पहले के साथ प्रयोग निषिद्ध करती है।

भारतीय वैयाकरणो द्वारा दिये हुए इन तीन प्रयोगो के नाम निम्नलिखित हैं—

१. कर्त्तरि प्रयोग

२ कर्मणि प्रयोग

३. भावे प्रयोग

एक बात और है। भूतकालिक कृदत एक विशेषण भी होता है और इसलिए उसका लिंग-परिवर्तन हो जाता है। कर्तृ-कर्म वाच्य वाक्यो मे यह स्वाभाविक तथा कर्ता के अनुरूप होता है। यदि एक पुरुष जाये, तो हम कहते हैं 'मर्द चला', लेकिन यदि एक स्त्री जाये, तो हम कहते हैं 'औरत चली'। कर्मवाच्य वाक्यो में यह जिसे अंग्रेज़ी भाषा मे कर्म कहेंगे उसके अनुरूप होता है जैसे, यदि, 'औरत ने घोड़ा मारा' वाक्य को कर्मवाच्य मे परिवर्तित करें, तो 'औरत के द्वारा एक घोडा मारा गया' वाक्य मे कृदत 'मारा' को 'घोडे' के अनुरूप होना चाहिए, 'औरत' के नही, और 'औरत ने घोडी मारी' वाक्य मे 'मारी' क्रिया 'घोडी' के अनुरूप होगी।

भाववाच्य प्रयोगो मे कृदत का रूप नपुसक लिंग मे होता है, लेकिन यह लिंग-भेद साहित्यिक हिंदोस्तानी मे नही रहा। इसके लिए पुंल्लिग का प्रयोग किया जाता है, इसलिए कृदत भी सदैव पुंल्लिग मे ही होता है। इस प्रकार ऊपर उदाहरणस्वरूप दिये गये दोनों वाक्य क्रमश 'औरत ने घोडे को मारा' तथा 'औरत ने घोडी को मारा' होंगे।

प्रयोगो की इन विशेषताओ पर पूरा अधिकार अत्यत महत्त्वपूर्ण है। अन्यथा आगे आने वाले उदाहरणो मे पक्तिवद्ध अनुवादो को समझना सरल नही होगा जिनमें ये तीनो प्रयोग, जहाँ भी आये है, शाब्दिक ढग से अनूदित कर दिये गये हैं।

उर्दू तथा हिंदी व्याकरण की तुलना

उर्दू तथा हिंदी मे सज्ञा एव क्रिया के रूपो के बीच महत्त्वपूर्ण अतर नही है। उर्दू प्राय 'इज़ाफत'– जैसे फारसी प्रयोगो को ग्रहण कर लेती है, लेकिन यह केवल उधार ही है और इससे अधिक कुछ नही। हिंदोस्तानी के इन रूपो मे शब्दावली का तो वैभिन्य ही है, साथ ही एक महत्त्वपूर्ण अतर शब्द-क्रम का भी है। हिंदी गद्य भारतीय

आर्यभाषाओं के लगभग व्यापक नियम का अनुसरण करता है। इसमे शब्दो का क्रम निश्चित है और यह किसी बात पर बल देने के लिए ही बदला जा सकता है। सामान्य क्रम इस प्रकार है—वाक्य के अव्यय अथवा उस-जैसे आदि परिचयात्मक शब्द, कर्ता, अपने उपागोसहित अप्रत्यक्ष कर्म, अपने उपागो सहित प्रत्यक्ष कर्म और सबके अत में क्रिया। विशेषण तथा सबधकारक उन शब्दो के पहले आते है जिनकी वे विशेषता बतलाते हैं। उदाहरण के लिए अग्रेज़ी वाक्य 'आइ गिव जॉन्स गुड बुक टु यू' (मैं देता हूँ जॉन की अच्छी किताब तुमको) हिंदी मे इस प्रकार होगा 'मै तुम्हे जॉन की अच्छी किताब देता हूँ।' दूसरी ओर उर्दू मे फारसी तथा सामी भाषाओ के प्रभाव के कारण यह नियम बहुत शिथिल हो गया है। शब्द-क्रम के सबध मे फारसी अथवा सामी नियम प्राय: माना जाता है (जिसमें क्रिया कर्म के पहले होती है) और क्रिया अक्सर अत से वाक्य के मध्य मे आ जाती है। वाक्य मे यह शब्द-क्रम इतना महत्त्वपूर्ण है कि केवल इसी के आधार पर हिंदी विद्वान् किसी पुस्तक की भाषा को हिंदी अथवा उर्दू निर्धारित करते है। इस सबध मे पिछली शताब्दी मे लिखी गयी इशा (देखिए पृष्ठ ३५) की 'कहानी ठेठ हिंदी में' शीर्षक पुस्तक अच्छा उदाहरण है। इस पुस्तक मे शुरू से आखिर तक एक भी फारसी शब्द नही है। फिर भी इसे उर्दू पुस्तक माना गया है, क्योंकि लेखक द्वारा शब्द-क्रम की फारसी शैली प्रयुक्त हुई है। लेखक मुसलमान थे जो अपने विद्यार्थी-जीवन में मौलवियो द्वारा प्राप्त शिक्षा के प्रभाव से नही बच सके।

हिन्दोस्तानी शब्दावली

हिंदोस्तानी की शब्दावली चार शीर्षको में विभाजित की जा सकती है :—

१ विशुद्ध हिंदोस्तानी शब्द
२. सस्कृत से लिये गये शब्द
३. फारसी (अरबीसहित) से लिये गये शब्द
४ दूसरे स्रोतो से लिये गये शब्द

अतिम को छोडा भी जा सकता है, क्योंकि ऐसे शब्द प्रत्येक भाषा में मिलते है।

फारसी-अरबी तत्त्व

फारसी तथा अरबी शब्द मुसलमानो के पूर्व के काल की प्राचीन ईरानी भाषा से नही (यद्यपि एक अश उसकी भी देन है), वरन मुगल विजेताओ की अरबीयुक्त फारसी से आये है। इस प्रकार आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओ में फारसी के माध्यम से अरबी और कुछ तुर्की शब्द आये। मुसलमान धर्म के प्रभाव से अरबी शब्दो के

आगमन का दूसरा रास्ता खुला और कुछ शब्द पश्चिमी समुद्र-सीमा पर अरबी व्यापारियो द्वारा आये। फिर भी प्रमुखत भारतीय भाषाओ मे, चाहे वे आर्यभाषा हों अथवा नही, अरबी तत्त्व फारसी के साथ और उस भाषा के एक भाग के रूप मे ही आया है। फारसी शब्दो के साथ उनका जो उच्चारण आया है वह आज का ज़नाना-सा नही है वरन् मुगल-काल का है। फारसी शब्दो के घुलने-मिलने की मात्रा का वैभिन्न्य स्थानविशेष और भाषा-भाषियो के धर्म पर निर्भर है। फिर भी हर कही बोलियो में घुले-मिले कुछ फारसी शब्द ऐसे मिलते हैं जिनका ठेठ ग्रामीणो द्वारा भी प्रयोग किया जाता है। इनमे और लखनऊ के उच्च शिक्षाप्राप्त उन मुसलमान लेखको की उर्दू मे, जिसमें वाक्यात मे क्रिया के अतिरिक्त शायद ही किसी भारतीय आर्य शब्द का प्रयोग होता हो, अनेक भेद मिलते हैं। फिर भी हर स्थिति में हिंदोस्तानी की केवल शब्दावली ही प्रभावित हुई है, वाक्य-गठन नही। केवल मुसलमानो की ही उर्दू मे हमे शब्दो का फारसी क्रम मिलता है। इसके सिवाय न तो फारसी प्रयोगो का प्रारम्भ हुआ और न अरबी नियमो के अनुसार अरबी शब्दो के रूप बने (शुद्धतावादी अवश्य अपवाद है), वरन् उन्होने हिंदोस्तानी के व्याकरण के अनुसार स्वरूप ग्रहण किया।

संस्कृत तत्त्व : तत्सम और तद्भव

संस्कृत से आये शब्दो ने दो रूप लिये—अक्षर-विन्याससहित सीधे सस्कृत शब्दकोश से आना और थोडे-बहुत अशुद्ध रूप में उच्चरित होना एव उसी के अनुसार लिखा जाना। दोनो ही वर्गो के शब्दो को 'तत्सम्', अर्थात् 'उसके (सस्कृत के) समान' कहा गया है। यूरोपीय विद्वानो ने दूसरी श्रेणी के विकृत तत्सम शब्दो को 'अर्धतत्सम' की सज्ञा दी है। शब्दो का यह ग्रहण शताब्दियो से चल रहा है, लेकिन पिछले सौ वर्षो मे यह अपनी चरम सीमा को पहुँचा है।

विशुद्ध हिंदोस्तानी शब्द ही भाषा का आधार है। ये उस प्राचीन भारतीय बोली से उद्भूत हुए हैं जिसके सस्कृत से सबध का मैंने पहले ही उल्लेख किया है। यह प्राचीन बोली विभिन्न अवस्थाओ से होती हुई अत में उसी प्रकार हिंदोस्तानी बनी जिस प्रकार लैटिन भाषा इटैलियन, फ्रेंच आदि बनी। यह प्राचीन भारतीय बोली अपना मूल रूप छोडने के पश्चात् और अतिम रूप से हिंदोस्तानी बनने के पूर्व प्राकृत अवस्था मे होकर गुज़री। पारिवारिक सबधो की भाषा में यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय बोली और सस्कृत सगी बहिने थी। प्राकृत प्राचीन भारतीय बोली की पुत्री के समान थी और सस्कृत की भतीजी तथा हिंदोस्तानी प्राचीन भारतीय बोली की पोती और संस्कृत की भतीजी की लडकी के समान है। हिंदोस्तानी मे सस्कृत शब्द, जो

प्राय एक ही वाक्य मे ठेठ हिंदुस्तानी शब्दो के साथ प्रयुक्त होते हैं, प्राकृत के माध्यम से प्राचीन भारतीय बोली से आये है।' ये ठेठ हिदोस्तानी शब्द भारतीय विद्वानो के द्वारा 'तद्भव' कहे जाते हैं। तद्भव का शाब्दिक अर्थ है 'उससे (सस्कृत अथवा प्राचीन भारतीय बोली से) उत्पन्न।' इस प्रकार हिंदोस्तानी शब्दावली का भारतीय तत्व तद्भव शब्दो से बना है जिसमें भिन्न-भिन्न मात्राओ में तत्सम शब्दो का मिश्रण है। उदाहरण के लिए, आज का देशी शब्द 'आज्ञा' जो सस्कृत से प्रत्यक्षत. लिया गया तत्सम शब्द है, कुछ भाषाओ मे इसका अर्धतत्सम रूप 'आग्या' मिलता है। हिंदी 'आन' इसका तद्भव रूप है जो प्राकृत 'आणा' से उद्भूत हुआ है। इसी प्रकार 'राजा' तत्सम शब्द है, लेकिन 'राय' अथवा 'राव' तद्भव। नि सदेह प्रत्येक शब्द के दो अथवा तीन रूप नही मिलते। सामान्यत किसी शब्द का केवल तत्सम अथवा तद्भव रूप ही मिलता है, लेकिन कभी-कभी विभिन्न अर्थों मे ये दोनो ही रूप प्रयोग मे आते हैं जैसे सस्कृत शब्द 'वश' का अर्थ 'परिवार' तथा 'बाँस' दोनो ही है। इसी के साथ हिंदी में अर्धतत्सम 'बस' (परिवार) मिलता है और तद्भव 'बाँस।'[2]

इस प्रकार कई सौ वर्षो से हिंदोस्तानी की शब्दावली साहित्यिक सस्कृत से प्रभावित हो रही है। केवल शब्दावली ही पर सस्कृत का प्रभाव प्रत्यक्षत. दिखलायी पडता है। व्याकरण पर बहुत ही कम प्रभाव मिलता है। प्रभाव की यह प्रक्रिया हिंदोस्तानी के बिलकुल प्रारम्भिक काल से चलती रही है। सस्कृत के प्रभाव से विकास की गति शिथिल हो सकती है, और कही-कही सम्भवत हुई भी है, किंतु रुकी कभी नही। जिस प्रकार हिंदोस्तानी की शब्दावली में सस्कृत शब्द लिये गये हैं, उस प्रकार हिंदोस्तानी के व्याकरण में सस्कृत का एक भी व्याकरणिक रूप नही आया है। इतना ही नहीं, हिंदोस्तानी में इन सभी तत्सम शब्दो की वही स्थिति है, जो उधार लिये गये विदेशी शब्दो की। व्याकरणिक प्रयोगो मे इनका रूप भी बहुत ही कम अवसरो पर परिवर्तित

१. बंगाली में भी यही स्थिति है। मैंने एक उपन्यास के वर्णनात्मक अंश में तत्सम शब्द 'दीपशलाका' देखा है और बिलकुल दूसरी पंक्ति में, जहाँ एक पात्र देशी भाषा का प्रयोग करता है, तद्भव शब्द 'दियासलाई'।

२. यूरोपीय भाषाओ में भी तत्सम एवं तद्भव शब्द मिलते हैं। जैसे—' 'lapsus calami' में 'lapsus' तत्सम है और 'lapse' अर्धतत्सम, दोनो का अर्थ 'गिराव' है। इस शब्द का तद्भव रूप 'lap' है जिसका अर्थ 'वस्त्र का लटकने वाला भाग' है। इसी प्रकार 'fragile' तथा 'redemption' अर्धतत्सम हैं और 'frail' तथा 'ransom' इनके तद्भव रूप हैं।

होता है। जैसे तद्भव शब्द 'घोडा' का विकृत रूप 'घोडे' है, लेकिन तत्सम शब्द होने के कारण 'राजा' का विकृत रूप नही होता है। अब सभी आधुनिक भारतीयआर्य भाषाओ में क्रियारूप अवश्य परिवर्तित होते हैं, किन्तु सज्ञा रूपो मे परिवर्तन आवश्यक नही है। इसीलिए तत्सम शब्द नियमानुसार क्रियाओ के समान नही प्रयुक्त होते हैं। यदि ऐसा करना आवश्यक ही हो तो यह किसी तद्भव क्रिया की सहायता से किया जाना चाहिए। उदाहरणार्थ तत्सम शब्द 'दर्शन' (देखना) को यदि 'वह देखता है' वाक्य मे प्रयुक्त करना हो तो हम 'दर्शन' नही कह सकते। इसके लिए 'दर्शन करे' कहना होगा। दूसरी ओर सभी आधुनिक बोलियो में सज्ञा रूपो का सश्लेषणात्मक ढग से बनना आवश्यक नही है और उधार लिये गये सज्ञा रूप सदैव विश्लेषणात्मक ढग से बनते हैं। इस प्रकार तत्सम सज्ञाएँ (जिनके रूप अवश्य ही विश्लेषणात्मक होते हैं) प्रचलित हैं तथा सभी भाषाओ की उच्च साहित्यिक शैलियो मे अत्यन्त प्रचलित हैं। कुछ छिटपुट अपवादो के बावजूद यह नियम प्रतिपादित किया जा सकता है कि भारतीय आर्यभाषाओ में सज्ञाएँ या तो तत्सम (अर्धतत्समसहित) हो सकती है और या तद्भव, लेकिन क्रियाएँ तद्भव ही होनी चाहिए।

तत्सम शब्दो के अत्यधिक प्रयोग के दुष्परिणाम

छापेखाने और शिक्षा के प्रभाव के फलस्वरूप पिछली शताब्दी मे कुछ आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओ मे तत्सम शब्दो का प्रयोग बहुत बढ गया है। वस्तुत गणना के आधार पर यह सिद्ध कर दिया गया है कि एक आधुनिक बगाली पुस्तक में ८८ प्रतिशत विशुद्ध सस्कृत शब्द होते थे। इनमे प्रत्येक तत्सम शब्द अनावश्यक था और उसके स्थान पर किसी देशी पर्याय का प्रयोग किया जा सकता था। इसका परिणाम अत्यत शोचनीय हुआ है। इस कारण भाषा दो रूपो में बँट गयी, एक तो वह जो जन-सामान्य द्वारा समझी जाती है और दूसरी साहित्यिक जो केवल प्रेस के माध्यम से जानी जाती है एव सस्कृत से अनभिज्ञ लोगो के लिए दुर्बोध है।[१] इस प्रकार साहित्य जनसाधारण से पृथक् हो गया, किंतु साहित्यिक वर्गो की दृष्टि में यह एक साधारण बात थी।

इस दृष्टि से बगाली मे यह एक बडी दुर्बलता आ गयी है। इसने उच्च कोटि के जनप्रिय एव ओजस्वी साहित्य-सृजन की सामर्थ्य तब तक के लिए खो दी है जब तक

१. स्काटलैंड के एक गिर्जाघर में नया नियुक्त हुआ पादड़ी वहाँ के निवासियो से मिला। 'यह नया पादड़ी वास्तव में विद्वान् है', एक उत्साही पत्नी ने अपने पति से कहा। पति ने उत्तर दिया कि, 'हाँ अवश्य है क्योंकि उसके द्वारा बोले गये आधे शब्दो का अर्थ तुम नहीं समझ सकीं।'
—सेंट जेम्स गजट।

कोई असाधारण प्रतिभासम्पन्न लेखक इस दुष्प्रभाव से भाषा को मुक्त नही कर देता है। कुछ अन्य भारतीय भाषाओ में भी, जिनमें हिन्दी प्रमुख है, इसी कुप्रभाव के चिह्न दिखायी देने लगे हैं। हिन्दी साहित्य का केन्द्र बनारस सस्कृतज्ञ पडितो के प्रभाव मे है। बगाली को सस्कृत से सहायता लेने की आवश्यकता हो सकती है, किन्तु हिन्दी को कदापि नही है। हिन्दी उन बोलियो से निकली है जो पाँच सौ वर्षो से किसी भी भाव को अत्यत पूर्ण रूप से व्यक्त करने में सक्षम रही है और आज भी है। हिन्दी के विपुल तद्भव तथा देशी शब्द-भडार में अमूर्त भावनाओ की अभिव्यक्ति के लिए असीम सामर्थ्य है। इसके प्राचीन साहित्य मे श्रेष्ठतम काव्य और धर्मनिष्ठा की उपयुक्त अभिव्यजनाएँ हैं। इसमें दर्शन और रीतिशास्त्र की पुस्तके हैं जिनमे महान् सस्कृत लेखको-जैसी सूक्ष्मता से विषय का विवेचन किया जाता है और सस्कृत शब्दो का प्रयोग नही के बराबर है। हिन्दी का ऐसा शब्द-भडार और ऐसी अभिव्यजना-शक्ति होते हुए भी पिछले कुछ वर्षो से इस प्रकार की पुस्तकें लिखी जा रही है जो उत्तर भारत के लाखो व्यक्तियो द्वारा नही पढी जाती हैं, वरन् जिनका उद्देश्य अपेक्षाकृत थोडे-से सस्कृतज्ञ विद्वानो के समक्ष लेखक की विद्वत्ता का प्रदर्शन मात्र होता है। दुर्भाग्यवश इस समय सर्वाधिक शक्तिशाली अग्रेजी प्रभाव भी सस्कृतज्ञो के पक्ष में ही रहा है। यह सस्कृतनिष्ठ हिंदी मिशनरियो द्वारा बहुत प्रयुक्त हुई है और बाइबिल के अग्रेजी अनुवाद भी इसी में किये गये हैं। उन थोडे-से भारतीय लेखको को जिन्होने ठेठ हिंदी के प्रयोग का समर्थन किया, मार्गभ्रष्ट प्रयासो के इतने सबल आदर्शों के समक्ष विशेष सफलता नही मिल सकी। विज्ञान तथा कला के तकनीकी नामो के लिए सस्कृत शब्दो के प्रयोग के पक्ष मे तर्क दिये जा सकते हैं और मैं उन्हें मानने को तैयार हूँ, किन्तु इस प्रकार का अधिक उधार लिया जाना रुकना चाहिए। यदि प्रसिद्ध लेखक पथप्रदर्शन करे तो बगला का जो परिणाम हुआ, उससे हिन्दी को बचाने के लिए अब भी समय है। इस सबध में बुद्धिसगत निर्णय लेकर सम्बद्ध प्रदेशो के शिक्षा अधिकारी भी बहुत कुछ कर सकते हैं।

अत्यधिक फारसीकरण के दुष्प्रभाव

यही बात उर्दू के उस रूप पर लागू होती है जो फारसी से बोझिल है। जहाँ तक शब्दावली का प्रश्न है, मुसलमानो की हिंदोस्तानी हिंदुओ की हिंदोस्तानी से सदैव भिन्न रहेगी, लेकिन इस कारण बोली के सरल एव ललित रूपो को सैकडो ऐसे विजातीय शब्दो से लादने की आवश्यकता नही है जो लेखक के ही अधिकाश समानधर्मानुयायियो के लिए दुर्बोध हो। उर्दू सरल भी हो सकती है और पडिताऊ भी। पहला रूप भारत का है, किन्तु दूसरा एक विदेशी भाषा की नकल है। इस सबध में एक देशभक्त भारतीय मुसलमान के निर्णय में कोई हिचकिचाहट नही होनी चाहिए।

हिन्दोस्तानी व्याकरण की रूपरेखा

१. संज्ञा

(क) पुंल्लिग	(ख) स्त्रीलिंग	परसर्ग	विशेषण
(१) आकारात तद्भव	(१) ईकारात, प्रत्यक्ष	कर्ता –	(१) पु० आकारात तद्भव
एक० बहु०	एक० बहु०	कर्म (१)–	
कर्ताकारक-आ –ए	कर्ताका०-ई-इयाँ विकृत	कर्म (२) को	पु -आ विकृत एक० एव बहु०–ए०
विकृत –ए –ओ	विकृत –ई –इयो	करण–ने	स्त्री०–ई
आकारात तद्भव जो सवध सूचक और कुछ दूसरी सज्ञाएँ हैं, विकृत वहुवचन के अतिरिक्त परिवर्तित नही होतीं जैसे चाचा, लाला। सक्षेप मे ये सख्या २ के अनुसार है।	(२) अन्य	उपकरण–से	(२) अन्य रूप परिवर्तित नही होते ।
	एक० बहु०	सम्प्रदान-को, के लिए	
	कर्ताकारक – – ऐं	अपादान–से	
	विकृत – – ओ	सवध–का, के, की	
		अधिकरण–में, पर	
(२) अन्य			
एक० बहु०			
कर्ताकारक – –			
विकृत – –ओ			

२. सर्वनाम

	(क) व्यक्ति-वाचक		(ख) सकेंतवाचक		(ग) सवध-वाचक	(घ) नित्य-सवधी	(ङ) प्रश्न-वाचक		(प) अनिश्चय-वाचक	
	प्रथम	मध्यम	निकटवाचक	दूरवाचक			पु०	नपु० स्त्री०	चेतन	अचेतन
मूलरूप										
एक०	मैं	तू	यह, येह, यिह	वह, वोह, वुह	जो	सो	कौन	क्या	कोई	कुछ
बहु०	हम	तुम	यह, येह, यिह	वह, वोह, वुह	जे	ते	कौन	–	–	–
विकृतरूप										
एक०	मुझ	तुझ	इस	उस	जिस	तिस	किस	काहे	किसी	–
बहु०	हन	तुम	इन	उन	जिन	तिन	किन	–	–	–

३. क्रियाएँ

(क) नियमित, सकर्मक तथा अकर्मक

क्रियार्थक सज्ञा (Infinite)	धातु+ना
क्रियार्थक सज्ञा (Verbal Noun)	धातु+–(विकृत आ)
वर्तमानकालिक कर्तृवाचक कृदत	धातु+ता
भूतकालिक कर्मवाचक कृदत	धातु+आ
भविष्यकालिक कर्मवाचक कृदत	धातु+ना
पूर्वकालिक	धातु+के,कर, करके
कर्तृवाचक सज्ञा	धातु+ने वाला, -ने हारा.

मूलकाल

वर्तमान सबंधवाचक	धातु+पुरुषवाचक प्रत्यय
अप्रत्यक्ष भविष्यत्	धातु+गा

कृदंती काल

भूतकाल =भूतकालिक कृदत
पूर्वकालिक भूत =वर्तमानकालिक कृदंत

सयुक्त काल—

निश्चयवाचक वर्तमान वर्तमानकालिक कृदत+हूँ आदि
अनद्यतन् भूत " " +था
अपूर्णभूत भूतकालिक कृदत+हूँ आदि अक०
अथवा है सक०
पूर्णभूत +था
और अन्य अनेक रूप

पुरुषवाचक प्रत्यय

	१	२	३
एक०	-ऊँ	-ए	-ए
बहु०	-एँ	-ओ	-एँ

रचना

सकर्मक क्रियाएँ सभी काल कर्मवाचक या भाववाचक भूतकालिक कृदत से बनते हैं।

दूसरे काल कर्तृवाचक हैं।

अकर्मक क्रियाएँ सदैव कर्तृवाचक होती है।

कर्मवाचक-भूतकालिक कर्मवाचक कृदत+√जा का उपयुक्त काल

(ख) सहायक क्रिया

(१) √ह वर्तमान

	१	२	३
एक०	हूँ	है	है
बहु०	हैं	हो	हैं

(२) √थ, भूत

	एक०	बहु०
पु०	था	थे
स्त्री०	थी	थीं

(३) √हो, भूतकाल के अतिरिक्त नियमित (देखिये शीर्षक ग)

(४) √जा, भूतकाल के अतिरिक्त नियमित (देखिये शीर्षक ग)

(ग) अनियमित क्रियाएँ—

	क्रियार्थक सज्ञा	भूतकालिक कर्मवाचक कृदन्त
(१)	होना	हुआ
(२)	मरना	मुआ
(३)	करना	किया

क्रियार्थक सज्ञा	भूतकालिक कर्मवाचक कृदन्त
(४) देना	दिया
(५) लेना	लिया
(६) जाना	गया
(७) ठान्ना	ठाया

(घ) प्रेरणार्थक—

(क) धातु-स्वर को छोटा करते हुए 'आ' तथा 'वा' को जोडना।

(ख) अनेक भाववाचक क्रियाएँ स्वर को बडा करने से प्रेरणार्थक हो जाती है।

(ग) अनियमित

	सकर्मक	प्रेरणार्थक
(१) छूटना	छोडना	छुडाना
(२) टूटना	तोडना	तोडवाना
(३) फटना	फाडना	फाडवाना
(४) फूटना	फोडना	फोडवाना

और अन्य

(ङ) सयुक्त क्रिया

(क) प्रत्यक्ष क्रियामूलक सज्ञा से भृशार्थक, शक्यता-बोधक, पूर्णता-बोधक।

(ख) विकृत क्रियामूलक सज्ञा से पौन पुन्यार्थक, इच्छार्थक ।

(ग) विकृत क्रियार्थक सज्ञा से आरम्भिकता-बोधक, अनुमति-बोधक, सामर्थ्य-बोधक।

(घ) विकृत वर्तमानकालिक कृदत से कर्तृवाच्य, निरतरता-बोधक, गत्यर्थक।

दक्खिनी हिन्दोस्तानी अथवा मुसलमानी

बोली का नाम और उद्गम

मुसलमान सैनिको ने दक्षिण में सहधर्मानुयायियो पर अपनी भाषा बिलकुल प्रारम्भ से ही आरोपित कर दी। आज भारत की भाषा चाहे मराठी, तमिल या तेलुगु हो अथवा कोई दूसरी द्रविड बोली, दक्षिणी भारत के सभी मुसलमान हिंदोस्तानी के उस रूप का प्रयोग करते है जो दक्षिण की दक्खिनी अथवा मुसलमानो की मुसलमानी भाषा के रूप मे जानी जाती है। हिंदोस्तानी सर्वप्रथम दक्षिण मे ही उर्दू के रूप में विकसित हुई और 'रेख्ता के जनक' वली औरगाबादी के द्वारा उसका साहित्यिक परिष्कार हुआ। वली के आदर्श पर दिल्ली मे भी रचना होने लगी और उसके बाद

उर्दू काव्य सारे उत्तरी भारत में फैला। इसके दक्षिणी उद्गम का एक प्रभाव यह है कि आज भी हमें उत्तर में लिखे उर्दू काव्य में दक्खिनी हिंदी के ऐसे विशिष्ट प्रयोग मिलते हैं जिनका प्रयोग प्रामाणिक गद्य में नहीं होता।

साहित्यिक हिन्दोस्तानी से संबंध

दक्खिनी हिन्दोस्तानी को सामान्यत विकृत हिंदोस्तानी कहा जाता है। यद्यपि ऐतिहासिक आधार पर साहित्यिक हिंदोस्तानी को ही दक्खिनी हिन्दोस्तानी का विकृत रूप कहना अंशत सही होगा, क्योंकि हम देख चुके हैं कि हिंदोस्तानी साहित्य का प्रारम्भ दक्षिण में हुआ। जन-प्रचलित हिंदोस्तानी परिष्कृत होने के पूर्व ही मुसलमानी सेनाओं द्वारा दक्षिण में ले जायी गयी। उस समय उसमें अनेक ऐसी विशेषताएँ थीं जो आज के साहित्यिक गद्य में नहीं मिलती, लेकिन उनमें से कुछ दक्षिण में सुरक्षित हैं जैसे 'मेरे कू' जैसे वाक्यांशों में सज्ञा-रूपों के आधारस्वरूप सबंधकारक के विकृत रूप का प्रयोग, जहाँ प्रामाणिक रूप 'मुझको' प्रयुक्त होना चाहिए। इसके अतिरिक्त विकृत बहुवचन रूप 'आं' वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी तथा दक्खिनी में तो आज तक विद्यमान है, लेकिन उर्दू गद्य से यह बहिष्कृत है। इसी प्रकार क्रियार्थक सज्ञा की अनुनासिकता, जैसे 'मारनां' में, पुराने नपुसक लिंग का ही अवशेष है। यह आधुनिक साहित्यिक बोलियों से विलुप्त हो गयी है, लेकिन बोलियों में अभी तक प्रचलित है। प्रसग आने पर ऐसे ही उदाहरण आगे दिये जायेंगे।

केवल एक दृष्टि से दक्खिनी हिन्दोस्तानी विकृत भाषा कही जा सकती है। द्रविड परिवार की निकटवर्ती भाषाओं के प्रभाव से मद्रास तथा बम्बई प्रेसीडेंसी के दक्षिणी भाग में सकर्मक क्रियाओं के भूतकाल की कर्मवाच्य रचना छोड़ दी गयी। सकर्मक तथा अकर्मक क्रियाएँ अब समान ढग से व्यवहृत होती हैं। कर्ता कभी-कभी ही करण-कारक में 'ने' के साथ रखा जाता है। वैसे 'ने' को छोड दिया जाता है। क्रिया, वचन तथा लिंग की दृष्टि से कर्ता (यद्यपि करणकारक में) के अनुरूप होती है, कर्म के नहीं। दूसरी ओर मध्य बम्बई में मराठी के कारण करणकारक का उचित व्यवहार अभी होता है।

बोली का प्रदेश

स्थूल रूप से नर्मदा घाटी के दक्षिण में सतपुडा पर्वत-श्रेणी को बोली के मान्य साहित्यिक रूपों के दक्खिनी हिंदोस्तानी तथा दिल्ली एव लखनऊ की प्रामाणिक हिंदोस्तानी के बीच की सीमा कहा जा सकता है। नीचे दी गयी दक्खिनी हिंदोस्तानी के भाषा-भाषियों की अनुमानित सख्या का आधार सन् १८९१ की जनगणना के आँकडे हैं।

दक्खिनी हिन्दोस्तानी बोलने वालो की अनुमानित संख्या संबंधी तालिका

बेरार		२७४,१०२
बम्बई		
बम्बई शहर	९४,४३१	
थाना	२४,८२१	
कोलाबा	५,९३२	
रत्नगिरि	२५,८९७	
कनारा	१८,६२७	
खानदेश	११७,८४४	
नासिक	४७,९७७	
अहमदनगर	४८,८४७	
पूना	५७,६६९	
शोलापुर	५६,६६९	
सतारा	४०,७८१	
बेलगाव	७९,९५०	
धारवाड	१०१,२१६	
बीजापुर	७९,९९९	
जागीरें	२५४,२८२[1]	
		१,०५१,९१२
मध्य प्रात (वर्तमान मध्यप्रदेश)		
नागपुर	४१,६१६	
वर्धा	१४,८३६	
चाँदा	१०,९३९	
भाँदरा	११,६८५	
		७९,०७६

१. इनमे से अनेक हिंदोस्तानी के प्रामाणिक रूप का प्रयोग करते है, लेकिन उन्हें पृथक् करना असम्भव है ।

मद्रास—		
ब्रिटिश क्षेत्र	८१७,१४६	
देशी रियासतें	१७,७०७	
		८३४,८५३
निज़ाम की रियासत		१,१९८,३८२
मैसूर		२०८,९२८
कुर्ग		६,९१९
	कुल जोड़	३,६५४,१७२

पुस्तक-सूची, व्याकरण

दक्खिनी से सम्बद्ध पुस्तकें पश्चिमी हिंदी की सामान्य पुस्तक-सूची में सम्मिलित है। मै यहाँ उन प्रमुख वातो का सक्षिप्त विवरण देता हूँ जिनमें यह वोली प्रामाणिक हिंदोस्तानी से पृथक् है।

उर्दू तथा हिन्दी वर्तनी

उपर्युक्त सावारण टिप्पणी के वाद हिंदोस्तानी व्याकरण के प्रमुख शीर्षको की सलग्न सक्षिप्त रूपरेखा देना यथेष्ट होगा। उर्दू में शब्द अथवा शब्दाश का अत्य 'अ' छोड दिया जाता है किन्तु देवनागरी लिपि मे लिखे जाने वाले हिंदी के समस्त उदाहरणो में इसे वरावर लिखा जाता है। उर्दू की यह सावारण लेखन-प्रणाली है। उदाहरणस्वरूप 'देखना' शब्द में हिंदी में शब्दाश 'देख' के अंत का 'अ' लिखा जाता है किन्तु उर्दू लिपि मे 'دیکھنا' लिखा जाता है। साहित्यिक हिंदोस्तानी के समस्त उदाहरणों में इस सिद्धान्त का अनुसरण किया गया है। व्याकरण की रूपरेखा में भी 'अ' छोड दिया गया है।

शब्द-रूप

संज्ञाएँ

विकृत एकवचन रूप प्रामाणिक उर्दू के समान ही वनता है। कर्ताकारक तथा विकृत वहुवचन प्राय भिन्न ढग से वनते हैं। सामान्य नियमानुसार कर्ताकारक वहुवचन 'ए' अथवा आकारात होता है और विकृत वहुवचन 'ओं' अथवा योकारात। कभी-

कभी 'ओ' कर्ताकारक वहुवचन के लिए प्रयुक्त होता है और 'आ' विकृत वहुवचन के लिए। उदाहरण निम्नलिखित हैं—

कर्ताकारक एक०	विकृत एक०	कर्ताकारक वहु०	विकृत वहु०
पियाला	पियाले	पियाले	पियालो
अदेशा	अदेशे	अदेशे	अदेशयो
घोडा	घोडे	घोडे	घोडो
कौवा	कौवे	कौवे	कौंवो
वनिया	बनिये	वनिये	वनियो
आश्ना	आश्ना	आश्नाओ	आश्नाओ
दाना	दाना	दानाया	दानाओ
मह्हीना	मह्हीना	मह्हीन्या	मह्हीन्या, –यो
माओ	माओ	मावा, माओ	मावा, माओ
घर	घर	घरा	घरा
आदमी	आदमी	आदम्या	आदम्या
सू	सू	सुवा	सुवा, सुवो
नद्दी	नद्दी	नद्या	नद्या

सामान्य परसर्ग निम्नलिखित हैं—

कर्तृ	ने, नी
सम्प्रदान-कर्मकारक	कू, कू, को, के–तई, कतई, कने
अपादान	सू, सू, सो, सो, से, सें, सती
सवधकारक	का, (के, की) (प्रामाणिक भाषा के समान)
अधिकरण	मे, मो, पो, पा, पर

सर्वनाम

प्रथम दो पुरुषवाचक सर्वनाम निम्नलिखित हैं—

	उत्तम पुरुष	मध्यम पुरुष
एक० कर्ताकारक	मई	तू, तू, तई
सवधकारक	मेरा (–रे, –री), मुझ, मुज	तेरा (-रे, -री), तुझ, तुज
कर्मकारक– –सम्प्रदान	मुझे, मुजे, मुजे, मुझ–कू, मेरे-कने आदि।	तुझे, तुजे, तुझ-कू, तेरे-कने आदि।
विकृत	मुझ, मुज, मेरे	तुझ, तुज, तेरे

बहु० कर्ताकारक	हम, हमें, हमों, हमारा	तुम, तुमें, तुमे, तुम्हे, तुम्हो
संबधकारक	हमारा (-रे, -री), हमारा (-रें, -री) हमन	तुमारा (-रे, -री), तुमारा (-रे, -री), तुमन, तुम
कर्मकारक--सम्प्रदान	हमें, हमना, हम-कू, हमन-कू, हमों-कू, हमारे-कने आदि।	तुम्हें, तुमना, तुम-कू, तुमन-कू, तुम्हो-कू, तुमारे-कने आदि।
विकृत	हम, हमन, हमना, हमों, हमारे	तुम, तुमन, तुमना, तुम्हो, तुमारे

प्रामाणिक से भिन्न रूप विकृत नहीं समझे जाने चाहिए। ये सभी पश्चिमी हिंदी की विभिन्न बोलियों में मिलते हैं और इन्हे उर्दू का प्रामाणिक रूप बनने के पहले ही दक्षिण मे लाया गया था। एक बात की ओर ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया जा सकता है—संबधकारक के विकृत रूप का सामान्य विकृत आधार के लिए व्यवहार प्रामाणिक उर्दू से लगभग पूर्णत: बहिष्कृत यह प्रयोग उत्तरी हिंदोस्तान की सभी जन-प्रचलित बोलियो मे सामान्य है। 'हमना' तथा 'तुमना' क्रमश 'हमन' एव 'तुमन' के विकृत रूप हैं और राजस्थानी प्रभाव को द्योतित करते हैं।

अन्य पुरुष के सर्वनामसहित संकेतवाचक सर्वनाम निम्नलिखित है—

एक०	यह	वह (स्त्री०, पु०, नपु०)
कर्ताकारक	ए, ये, यो, येह, इने, ई	ओ, वो, वोह, उने, ऊ
कर्मकारक-सम्प्रदान	इसे, इस, इस-कू, आदि।	उसे, उस, उस—कू
विकृत	इस (विशेषण के रूप मे भी), ये	उस
बहु०		
कर्ता कारक	इन, इनू, इनू, इनो, इन्हें	उन, उनू, उनू, उनो, उन्हे, वे, वो, वोह
कर्मकारक-सम्प्रदान	इन—कू आदि।	उन—कू आदि।
विकृत	इन, इनू, इनू, इनो, इन्हो, इन्हें, इनन	उन, उनू, उनू, उनो, उन्हो, उन्हें, उनन

एकवचन प्राय बहुवचन के लिए और बहुवचन प्राय एकवचन के लिए प्रयुक्त होता है। कर्तृ एकवचन प्राय 'इने' अथवा 'इनी' और 'उने' अथवा 'उनी' है।

निजवाचक सर्वनाम—

	एक० तथा बहु०
कर्ताकारक	आप, अप, आपे, आपे, अपे, अपें, अपसे, अपन
संबधकारक	आप—का (—के,—की), अपना (—ने, —नी), आपना (—ने, —नी), अपन, अपस आदि।
विकृत	आप अपने, आपने, अपन, अपस, अपसें

सवंधवाचक, नित्यसवंधी तथा प्रश्नवाचक सर्वनाम—

एक०	कौन	वह	कौन ?
कर्ताकारक	जो, जो, जिने, जिन	सो	को, कों, कोन, किने, किन
विकृत	जिस	तिस	किस
वहु०			
कर्ताकारक	जो, जो, जिने, जिन	सो	को, को, कोन, किने, किन
विकृत	जिन	तिन	किन

हिंदोस्तानी सम्प्रदान—कर्मकारक 'जिसे', वहुवचन 'जिन्हे' तथा अन्य भी प्रयुक्त होते हैं।

'क्या' अथवा 'का', विकृत रूप 'काहे, काही' अथवा 'की' नपुसक प्रश्नवाचक सर्वनाम हैं।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम 'कोई', विकृत रूप 'कोई, किसी' अथवा 'किनू' तथा 'कुछ', विकृत रूप 'कुछ' है। ये पुरुषो तथा वस्तुओ दोनो के लिए प्रयुक्त होते हैं लेकिन 'कोई' अधिकतर पहले के लिए व्यवहृत होता है और 'कुछ' दूसरे के लिए। इनके अतिरिक्त 'जो कोई', 'जिन कोई', 'जे कोई' अथवा 'जा कोई' तथा 'जो कुछ', 'जे कुछ' एवं 'जा कुछ' रूप भी हैं।

क्रिया-रूप

क्रियार्थक सज्ञा प्रामाणिक हिंदोस्तानी के समान सामान्यत नाकारात होती है, लेकिन कभी-कभी 'अन्' 'न्' अथवा नाकारात रूप भी मिलता है जैसे 'मारना', 'मारन' अथवा 'मार्ना'; विकृत पुल्लिग 'मारने' या 'मारनें', स्त्री० एक० 'मारनी', वहु० 'मारनिया' अथवा 'मार्न्या'; 'जान' (हिं० जाना), 'देन का' (हिं० देने का)।

वर्तमान कालिक कृदत ताकारात होता है और कभी-कभी 'अत' अथवा तकारात रूप भी मिलते हैं जैसे 'मारता' या 'मारत', 'देत'। स्त्रीलिंग वहुवचन 'तिया', अथवा त्याकारात होता है जैसे 'मारतिया' अथवा 'मार्त्या'।

भूतकालिक कृदत आकारात अथवा कभी-कभी याकारात होता है जैसे 'मारा' या 'मार्‍या'। स्त्रीलिंग वहुवचन याकारात होता है जैसे 'मार्‍या'। अनियमित रूप प्रामाणिक हिंदोस्तानी के ही समान होते है। इनके अतिरिक्त 'करा' अथवा 'कर्‍या,' 'मुआया' ('मुआ' के लिए) जैसे रूप भी मिलते हैं। यह कृदत कभी-कभी कर्ता के सवंधकारक के साथ प्रयुक्त होता है यथा 'वह मेरा मारा हैं' अर्थात् वह मेरे द्वारा मारा गया है या मैंने उसे मारा है।

पूर्वकालिक कृदत के कई रूप है जैसे 'मार को' अथवा 'मारे को'। 'मार' अथवा 'मारे' से सम्वद्ध परसर्ग के दूसरे रूप 'के, कर, कर के, कर को, कर कर, को,' तथा 'का' है। दूसरी क्रियाओ के उदाहरण ये हैं—'हो को', अथवा 'होए को', 'आकर' अथवा 'आए कर'।

वर्तमान, मैं हूँ

एक०	वहु०
१. हू	है या है, है
२. है	है या है (मद्रास), हो (वम्वई)
३. है	है या है, है

वहुवचन प्राय एकवचन के लिए भी प्रयुक्त होता है।

भूतकालिक रूप प्रामाणिक के ही समान 'था' है। कभी-कभी 'था' के स्थान पर 'अया' भी मिलता है।

कर्तृवाचक क्रिया के रूप प्रामाणिक हिंदोस्तानी के समान ही चलते हैं। दक्खिनी तथा प्रामाणिक हिंदोस्तानी के वीच के कुछ अतर इस प्रकार है—

मद्रास में मध्यम पुरुष वहुवचन उत्तम पुरुष तथा अन्य पुरुषो के समान ही है जैसे 'तुम मारे' (तुम मार सकते हो)। वम्वई में यह प्रामाणिक हिंदोस्तानी के समान ही ओकारात है यथा 'तुम मारो'। वर्तमान 'अभिप्राय' (प्राचीन) वर्तमान और भविष्य के रूप मे भी प्राय प्रयुक्त होता है। वहुवचन के स्थान पर एकवचन का व्यवहार सामान्य रूप से होता है।

द्वितीय आज्ञार्थक वहुवचन 'ओ', 'ओ' अथवा औकारात होता है जैसे 'मारो, मारों' अथवा 'मारौं'।

भविष्यत् रूप हमेशा की तरह वर्तमान अभिप्राय अथवा प्राचीन वर्तमान मे 'गा' (पु० वहु० 'गे', स्त्री० एक० 'गी', वहु० 'ग्या') जोडने से वनता है जैसे 'मैं मारूँगा।' मद्रास में द्वितीय पुल्लिग वहुवचन 'मारेंगे' है, 'मारोगे' नही। एकवचन सामान्यत वहुवचन के लिए प्रयुक्त होता है जैसे 'हम मारेगा' अथवा 'मारेंगे'।

अकर्मक क्रियाओ के भूतकालिक रूप प्रामाणिक हिंदोस्तानी के समान ही होते है यथा 'मैं चला'। सकर्मक क्रियाओ की स्थिति दूसरी है। वम्वई मे 'मैंने मारा' अथवा 'मैंने यह वात सुनी' के समान प्रामाणिक रूप प्रयुक्त होते है। दूसरी ओर मद्रास मे 'ने' सामान्यत विलुप्त हो जाता है और क्रिया इस प्रकार व्यवहृत होती है जैसे वह अकर्मक तथा लिग एव वचन की दृष्टि से कर्ता के अनुरूप हो जैसे 'मैं मारा', (मैंने [जो पुरुष है] मारा), 'मैं मारी', (मैंने [जो स्त्री है] मारा)। कभी-कभी 'ने' भी

प्रयुक्त होता है लेकिन यहाँ यह अवाछित है, क्योकि वाक्य-विन्यास उसी ढग का रहता है जिसमे इसका व्यवहार नही होता अर्थात् 'ने' का प्रयोग होने पर भी क्रिया लिंग एव वचन की दृष्टि से कर्ता के ही अनुरूप होती है, कर्म के नही, उदाहरणार्थ 'ओ मारी' अथवा 'ओने मारी'। प्रदेशविशेष के अनुसार सकर्मक क्रियाओ के भूतकाल से सम्बद्ध प्रयोग भी इसी प्रकार के हैं। वम्बई मे कर्मवाचक वाक्य-गठन होता है, लेकिन मद्रास में नही। वम्बई मे 'ने' का प्रयोग भी नियमित नही है। अकर्मक क्रियाओ के साथ ही प्राय इसका प्रयोग नही किया जाता है जैसे 'उसने चला', (वह चला।) मे वरन् सकर्मक क्रियाओ के वर्तमान काल के साथ भी इसका व्यवहार होता है यथा 'मैंने मारता हूँ', (मैं मारता हूँ।)

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी

साहित्यिक हिन्दोस्तानी से भेद

पश्चिमी हिंदी की वह वोली जो पश्चिमी रुहेलखड, गगा के ऊपरी दोआव तथा पजाव के अम्वाला ज़िले में वोली जाती है, वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी है। दिल्ली मे विकसित होनेवाली साहित्यिक हिंदोस्तानी का आधार भाषा का यही रूप है। इसके व्याकरण में प्रामाणिक भाषा से केवल कुछ सामान्य अतर है और इनमे भी अधिकतर ऐसे है जिनमें किसी भाव को प्रकट करने के लिए वैकल्पिक रूप से दो या तीन रास्ते अपनाये जा सकते हैं। ऐसी स्थितियो मे साहित्यिक हिंदोस्तानी ने प्राय. एक ही रूप को प्रामाणिक माना है और शेप को छोड दिया है।

शव्दावली

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी की शव्दावली में फारसी तथा अरवी शव्दो का रूप ठेठ ग्रामीणजनो द्वारा भी प्रभावित होता है। ये शव्द प्राय उधार लिये जाने की प्रक्रिया मे ही विकृत हो जाते हैं जैसे माँ के लिए 'मा' के प्रयोग की अपेक्षा मुज़फ्फरनगर का एक ग्रामीण 'मलदह्' कहता है जो अरवी शव्द 'वालिदा' का विकृत रूप है। ऐसी ही विकृतियो के अन्य उदाहरण ये हैं—

'मुहाफजत' के लिए 'महौंजत'
'इतकाल' के लिए 'काल' (इसमें स० 'काल, 'समय' तथा 'मृत्यु' से भ्रम हुआ है।)
'तमस्सुक' के लिए 'तमक्कुस'
'मतलव' के लिए 'मतवल'
'गुवाही' के लिए 'उगाही'

वोली का प्रदेश

रामपुर रियासत तथा मुरादावाद एव विजनौर ज़िलो की वोली साहित्यिक हिंदोस्तानी के अत्यविक समान है। नि सदेह इसका कारण इस्लाम का प्रभाव है जो इन क्षेत्रो में सदैव व्यापक रहा। अपने वर्तमान उद्देश्य के लिए गगा-यमुना के वीच के ऊपरी दोआव के साथ (दक्षिण से उत्तर की ओर) मेरठ, मुज़फ्फरनगर एव सहारनपुर ज़िलो तथा देहरादून के मैदानी भाग को लिया जा सकता है। देहरादून के पहाडी भाग मे पहाडी-वर्ग की जौनसारी वोली वोली जाती है। ऊपरी दोआव की वोली साहित्यिक हिंदोस्तानी के समान है, लेकिन यह समानता वहुत अविक नही है। ऊपरी दोआव की वोली मे अनेक ऐसे वैकल्पिक रूप भी प्रयुक्त होते है जो प्रामाणिक वोली अथवा पश्चिमी रुहेलखड की वोली में नही मिलते। ऊपरी दोआव के आगे यमुना नदी के उस पार पंजाव प्रारम्भ हो जाता है। यमुना के पश्चिमी किनारे पर दक्षिण से उत्तर की ओर दिल्ली, कर्नाल तथा अम्वाला ज़िले है। दिल्ली (शहर को छोड कर) ज़िले तथा कर्नाल की वोली हिंदोस्तानी नही, 'वागरू' अथवा 'जाटू' है। वागरू पश्चिमी हिंदी की एक भिन्न वोली है जो पजावी तथा राजस्थानी से अत्यविक प्रभावित हुई है। अम्वाला में राजस्थानी का प्रभाव समाप्त हो जाता है। इस ज़िले के पूर्वी भाग तथा कलसिया एव पटियाला की वोली वस्तुत हिंदोस्तानी ही है और इस पर पजावी का थोडा ही प्रभाव है। पश्चिमी अम्वाला की वोली तो स्पष्ट रूप से पजावी है। इधर पजावी तथा पश्चिमी हिंदी की प्रतिनिवि वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी के वीच की सीमा घघ्घर (प्राचीन दृशद्वती) नदी है। उपरोक्त सीमा में ही कथ्यभाषा के रूप में वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी व्यवहृत होती है।

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी वोलने वालो की अनुमानित संख्यासंवधी तालिका

पश्चिमी रुहेलखड—	
रामपुर रियासत	३९४,०००
मुरादावाद	९०९,४००
विजनौर	६००,०००
ऊपरी दोआव—	
मेरठ	१,०१७,७६५
मुज़फ्फरनगर	५९९,४०२
सहारनपुर	९७०,०००
देहरादून	९०,०००
पजाव—	
अम्वाला कलसिया तथा पटियाला (पजौर निज़ामत)	७०२,१६६
कुल जोड	५,२८२,७३३

जिस क्षेत्र मे कथ्यभाषा वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी है, उसमे साहित्यिक हिन्दोस्तानी बोलनेवालो की अनुमानित संख्यासंबंधी तालिका

पश्चिमी रुहेलखड—	
रामपुर रियासत .	१५६,०००
मुरादाबाद	२६९,०००
बिजनौर . `	१८९,०००
ऊपरी दोआब—	
मेरठ	३६८,४६१
मुजफ्फरनगर	१७२ ०००
सहारनपुर .	–
देहरादून .	–
पजाब—	
अम्बाला, आदि . .	–
कुल जोड	१,१५४,४६१

अतिम तीन ज़िलो में साहित्यिक हिंदोस्तानी बोलनेवालो की सख्या कम है, इसलिए उसका अनुमान अलग से नही लगाया गया है।

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी की विशेषताएँ

भौगोलिक दृष्टि से पश्चिमी हिंदी के उत्तरी-पश्चिमी कोने मे वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का क्षेत्र है। इसके पश्चिम में पजाबी अथवा दिल्ली एव कर्नाल की राजस्थानीमिश्रित उपभाषा बोली जाती है। इसके उत्तर मे भारतीय आर्य परिवार की पहाडी भाषाएँ बोली जाती है। इन पहाडी भाषाओ का सबध वस्तुत राजस्थानी से है तथा इसके दक्षिण एव पूर्व में पश्चिमी हिंदी की ब्रजभाखा का क्षेत्र है।

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी की भौगोलिक स्थिति को देख कर सहज मे ही स्पष्ट हो जाता है कि यह तथा इसके आधार पर निर्मित साहित्यिक हिंदोस्तानी उस स्थान की भाषाएँ हैं, जहाँ ब्रजभाखा धीरे-धीरे पजाबी में परिवर्तित हो जाती है। वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी के व्याकरण का अध्ययन यह सरलतापूर्वक प्रमाणित कर देता है।

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी के अतिरिक्त पश्चिमी हिंदी की अन्य बोलियो में क्रिया के तदभव कृदतीय रूप, विशेषण तथा सज्ञापद ओकारात अथवा औकारात होते है, जैसे

हिंदी 'भला' के 'भलो', 'भलौ', 'मारा' के 'मारो', 'मार्यौ' तथा 'घोडा' के 'घोडो', 'घोडयौ' रूप अन्य वोलियो मे मिलते हैं। इसी प्रकार इन वोलियो मे सवधकारक मे 'को' या 'कौ' अनुसर्ग प्रयुक्त होते है, उदाहरणार्थ 'घोडे कौ'। पजावी मे 'ओ' तथा 'औ' के स्थान पर 'आ' प्रत्यय मिलता है। ठीक यही 'आ' प्रत्यय वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी तथा साहित्यिक हिंदोस्तानी मे व्यवहृत होता है यथा 'भला', 'मारा', 'घोडा', 'घोडे का'। सवधकारक में पजावी मे 'घोडे दा' अवश्य हो जायगा। इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि हिंदोस्तानी में 'आ' प्रत्यय वस्तुत पजावी से ही आया है। सवधकारक में हिंदोस्तानी ने पजावी के 'दा' अनुसर्ग को न अपना कर उसके स्थान पर 'का' को ही ग्रहण किया है। यह 'का' भी वस्तुत 'को' या 'कौ' का आकारात रूप ही है।

वर्नाक्यूलर (साहित्यिक मे नही) हिंदोस्तानी में मूर्धन्य 'ण्' तथा 'ळ्' व्यजनो का व्यवहार स्वच्छंदतापूर्वक होता है। ये व्यजन पश्चिमी हिंदी की अन्य वोलियो मे नही मिलते, लेकिन पूर्वी पजावी तथा राजस्थानी में सामान्य है।

संज्ञाओ के विकृत वहुवचन पजावी तथा राजस्थानी के समान प्राय. आकारात होते है। साहित्यिक हिंदोस्तानी तथा पश्चिमी हिंदी की अन्य वोलियो में यह रूप नही मिलता, किंतु दक्खिनी में सामान्य है।

कर्तृवाचक क्रिया का वर्तमान काल प्राय पुराने वर्तमान, जिसे सामान्यत वर्तमान अभिप्राय कहा जाता है तथा क्रिया धातु के वर्तमान काल के रूपो से मिल कर वनता है जैसे प्रामाणिक रूप 'मारता हूँ' के अतिरिक्त 'मारू हू' प्रयोग भी मिलता है। अनद्यतन् भूत प्राय क्रिया धातु के भूतकालिक रूप को विकृत क्रियार्थक सज्ञा 'ए' के साथ जोडने से वनता है यथा 'मै मारे था', इसका शाब्दिक अर्थ 'मै मारे जा रहा था' है। ये दोनो रूप वहुधा राजस्थानी में मिलते है और व्रजभाखा क्षेत्र के उस भाग में भी सुनाई पडते हैं जो ऊपरी दोआव तथा राजपूताना के वीच मे है।

समीपवर्ती वोलियो के सदर्भ मे वर्नाक्यूलर (तथा साहित्यिक) हिंदोस्तानी का स्थान उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है। वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी से सम्वद्ध और कुछ वातें आगे उदाहरणो के साथ विस्तारपूर्वक कही जायँगी।

बाँगरू, जाटू तथा हरियानी

हम देख चुके है कि ऊपरी दोआव की वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी अम्वाला ज़िले मे पजावी मे अतर्भुक्त हो जाती है। यमुना के पश्चिमी किनारेवाले अम्वाला के दक्षिणी क्षेत्र मे कुछ अन्य तत्त्व मिलते हैं। ये तत्त्व पश्चिम की ओर अम्वाला के समान पजावी के ही नही, वरन् दक्षिण की ओर राजस्थानी की उपभाषा मेवाती के भी है। इस भूमि-भाग मे कर्नाल, रोहतक तथा दिल्ली के ज़िले आते है। दक्षिणी-पूर्वी पटियाला, पूर्वी हिसार तथा रोहतक एव हिसार के वीच का नाभा और झिंद क्षेत्र भी इसी के अतर्गत है। पूर्व मे वाँगर प्रदेश को ऊपरी दोआव से यमुना नदी पृथक् करती है। इसके उत्तर मे अम्वाला, दक्षिण में गुडगाँव, पश्चिम मे पटियाला तथा दक्षिण मे हिसार है। हिसार जिले के पूर्व तथा उसके आसपास का भूमि-भाग हरियाना नाम से जाना जाता है, शेष को वाँगर अथवा खादिर कहते हैं। यहाँ के अधिकतर निवासी जाट है।

खादिर कर्नाल तथा दिल्ली के ज़िलो मे यमुना नदी के पश्चिमी किनारे पर है। कर्नाल में कुछ ही मील चौडे इस क्षेत्र के पश्चिम में वाँगर अथवा ऊँची, सूखी जमीन है। वाँगर का विस्तार कर्नाल ज़िले के उस पार पटियाला रियासत तक है जहाँ निर्वाना का निकटवर्ती क्षेत्र भी वाँगर नाम से ही जाना जाता है। निर्वाना के दक्षिण मे वाँगर क्षेत्र झिंद रियासत की झिंद निज़ामत से होता हुआ पूरे रोहतक ज़िले मे फैला है—झिंद की ददरी निज़ामत के आधे पूर्वी भाग मे और नाभा रियासत के उस आधे उत्तरी भाग मे जो गुडगाँव मे रेवारी के पश्चिम मे स्थित है। इसके पश्चिम मे हिसार का हरियाना क्षेत्र है, यह नाभ झिंद रियासत की दोनो निज़ामतो के लिए भी प्रयुक्त होता है। भौगोलिक दृष्टि से दिल्ली ज़िले के दो भाग है, दक्षिणी (छोटा) और उत्तरी (वडा)। उत्तरी भाग कर्नाल के समान खादिर तथा वाँगर मे विभक्त है, जिनके वीच की सीमा अनुमानत ग्राड ट्रक रोड मानी जाती है। दक्षिणी भाग मे मुख्यतया पहाडियाँ हैं। इन पर गूजर रहते है और अपने-जैसे अन्य कवीलो के समान राजस्थानी के एक रूप का प्रयोग करते है। पहाडियो के वीच के क्षेत्र तथा यमुना के निकट फैला हुआ खादिर यहाँ कुछ चौडा है। पहाडियो के पश्चिम मे नजफगढ के निकट का नीचा, दलदली क्षेत्र दावर वाँगर का भाग नही, वरन् गुडगाँव का विस्तार है। दावर के निवासी अहीर गुडगाँव के पश्चिम की वोली अहीरवाटी का व्यवहार करते हैं। अहीरवाटी रोहतक की दक्षिणी तहसील झज्जर तक फैली है, यद्यपि वस्तुत यह भूमि-भाग वाँगर से सवद्ध है।

हरियाना, बाँगर तथा खादिर की बोली समान है—केवल एक झज्जर तहसील का अपवाद है। यह बोली पश्चिमी हिंदी का एक रूप है जो शब्दसमूह में पजाबी और व्याकरण मे अहीरवाटी से प्रभावित है। अहीरवाटी स्वय पश्चिमी हिंदी तथा राजस्थानी की मिश्रित बोली है और उसे इन दोनो में से किसी के भी अतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है। इस सर्वेक्षण मे अहीरवाटी को राजस्थानी की मेवाती बोली का एक रूप माना गया है। अहीरवाटी के दक्षिण मे गुडगाँव तथा अलवर मे बोली जाने वाली विशुद्ध मेवाती है और पश्चिम मे बीकानेर तथा शेखावाटी प्रदेश की बागरी एव शेखावाटी।

क्षेत्रविशेष तथा बोलने वालो की जातियो के अनुसार बाँगरू के कई स्थानीय नाम है। हरियाना तथा उसके पड़ोस में वह हरियानी, देसवाली अथवा देसडी कहलाती है। रोहतक तथा दिल्ली के आसपास जाटो की अधिक आबादी के कारण इसे जाटू तथा दिल्ली के चमारो की आबादी के कारण इसे चमरवा बोली भी कहते है। अन्य स्थानो मे इसे बाँगरू अथवा बाँगर (खादिर की भी) बोली के नाम से पुकारा जाता है। प्रत्येक स्थान में यह बोली एक ही है, चाहे इसका नाम कुछ भी हो। वैसे इसके लिए सर्वश्रेष्ठ सामान्य नाम बाँगरू है। खादिर के अपवाद के अतिरिक्त यह हरियाना-बाँगर क्षेत्र यमुना की जल-सीमा को नही छूता, यद्यपि यह नदी के इतने निकट है।

हिसार ज़िले की भाषागत स्थिति का निम्नलिखित विवरण स्थानीय गजट द्वारा प्राप्त सूचनाओ पर आधारित है—

हिसार ज़िले के दक्षिण-पूर्व में एक महत्त्वपूर्ण भूमि-भाग का नाम हरियाना है। यह घग्घर से सीची जानेवाली अपनी सीमा के बाहर ज़िले के दक्षिण-पूर्वी कोने में और उसके आगे तक फैला हुआ है। उत्तर की ओर फतहबाद तहसील के यथेष्ट भाग मे इसका विस्तार है, लेकिन दक्षिण में बागड़ की मरु-भूमि के कारण यह क्रमश सिमटता गया है। इसकी सीमाओ मे हिसार तथा फतहबाद के पूर्वी भाग, सम्पूर्ण हसी तहसील और भिवानी तहसील के अर्धपूर्वी भाग का थोडा अश है। हिसार में पश्चिमी हिंदी, पजाबी तथा राजस्थानी—ये तीन विभिन्न भाषाएँ मिलती है। पश्चिमी हिंदी हरियानी के रूप मे, पजाबी मालवी, राठी अथवा घग्घर घाटी के पछहाडा मुसलमानो की पछहाडी बोली के रूप में तथा राजस्थानी बागडी के रूप में मिलती है। हरियाना के उस क्षेत्र की सीमा-रेखा जिसमें थोडी-बहुत विशुद्ध हरियानी का प्रयोग होता है, दक्षिण में फतहबाद से तोहाना तक और पूर्व मे फतहबाद, हिसार तथा कैरू के बीच से जाती है। इन सीमाओ के अतर्गत ज़िले की चार दक्षिणी तहसीलो का आधे से अधिक भाग है। इस क्षेत्र की उत्तरी सीमा के पार घग्घर घाटी के पजाबी बोलनेवाले पछहाडा है। फतहबाद के उत्तर-पश्चिम मे सिरसा तहसील स्थित है जिसमें पश्चिमी हिंदी व्यवहार

की दृष्टि से अज्ञात है। हरियानी-भाषी प्रदेश की पश्चिमी सीमा के उस पार हरियानी तथा बागडी के बीच का विवादास्पद क्षेत्र है। ऐसी कोई निश्चित रेखा नही है जहाँ हरियानी का व्यवहार समाप्त होता हो और बागडी का प्रारम्भ। इस परिवर्तन का रूप यह है—हरियानी की अपेक्षा स्वरो का विवृत उच्चारण तथा शब्द-समूहगत एव व्याकरणिक अतर। फतहबाद, हिसार तथा भिवानी तहसीलो मे यह परिवर्तन बहुत मामूली है। इस कारण यह कहना सदेहास्पद होगा कि शुद्ध बागडी इन स्थानो में कही भी बोली जाती है। विवादास्पद क्षेत्र के यथेष्ट भाग मे बाहर से आकर बसने वाले बागडी है और उनके इस प्रकार आ बसने के परिणामस्वरूप उनकी बागडी बोली मे अनेक हरियानी तत्त्व समाहित हुए है। हरियानी से भिन्न शुद्ध बागडी सिरसा तहसील के दक्षिण-पश्चिम में बोली जाती है।

इस क्षेत्र की उत्तरी सीमा के पार घग्घर घाटी के पछहाडो के बीच पजाबी का व्यवहार होता है। सिरसा तहसील तक के घाटी के पूरे ढलान पर तथा उस स्थान तक जहाँ घाटी बीकानेर-सीमा को पार करती है, इसी बोली का प्रयोग किया जाता है। घग्घर घाटी के दक्षिण मे स्थित सिरसा तहसील के एक भाग मे बागडी सामान्य बोली है जो घग्घर के उत्तर में पजाबी मे परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार पजाबी-भाषी क्षेत्र घग्घर घाटी तथा उसके उत्तर मे स्थित ज़िले के एक भाग को छूता है। इस ज़िले की पजाबी दो बोलियो मे विभक्त की जा सकती है—सिख जाटो की स्वाभाविक बोली मालवी पजाबी तथा पश्चिम के पछहाडा मुसलमानो की पछहाडी अथवा राठी बोली। राठ पछहाडा का दूसरा नाम ही है। इस प्रकार पछहाडी तथा राठी एक ही बोलियाँ है। पछहाडी मे मालवी के समक्ष दो विशेषताएँ है—अनुनासिक ध्वनियो की अधिक प्रमुखता तथा हिंदोस्तानी एव बागडी शब्दो का मिश्रण। मालवी घग्घर के उत्तर में सिरसा तहसील मे, बुबलादा मे तथा घग्घर की निकटवर्ती फतहबाद तहसील में बोली जाती है। फिर भी पछहाडी जन-भाषा के रूप मे घग्घर के निकट पूरे ज़िले मे प्रयुक्त होती है और कुछ ऐसे गाँवो में भी बोली जाती है जो इस नदी की धारा से यथेष्ट दूरी पर है।

अब फिर हरियानी को लिया जाय। हरियाना का एक स्थानीय नाम देस है। इस कारण हरियानी को प्राय देसडी अथवा देसवाली भी कहा जाता है। झिद रियासत की ददरी निज़ामत का उत्तर-पूर्वी भाग तथा दुजना रियासत का सम्बद्ध भाग भी हरियाना के अतर्गत है और यहाँ बोली जानेवाली बाँगरु को भी हरियानी कहा जाता है। ददरी के शेष भाग मे तथा सम्बद्ध लोहारू रियासत मे लोक-भाषा बागडी है।[1]

१. यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि 'बाँगर' शब्द का 'बागड़' से कोई संबंध

झिंद की झिंद निजामत वस्तुत वाँगर का क्षेत्र है, लेकिन यहाँ की वोली हरियानी नाम से प्रसिद्ध है। जनसामान्य हरियानी तथा वाँगरू के वीच का अंतर जानने का दावा करते हैं। उनके अनुसार केवल पहली वोली ही जाटो के वीच तथा कर्नाल के रोर गाँवो में सुनी जाती है, दूसरी नही। लेकिन उदाहरणो से प्रकट होता है कि वोली के इन दोनो रूपो मे कोई अतर नही। यह अवश्य है कि हरियाना शव्द-समूह कभी-कभी वागडी से एक-दो शव्द ग्रहण कर लेता है।[2]

भाषा-भाषियों की संख्या

नीचे विभिन्न नामो से वाँगरू वोलनेवालो की अनुमानित सख्या दी गयी है। इस सवध मे यह उल्लेख करना आवश्यक है कि दिल्ली के लिए दिये गये आँकडे वे नही हैं जो इस जिले की मूल प्रारभिक भाषा-सूची मे प्रकाशित हुए थे। इस सूची मे डावर की अहीरवाटी को मेवाती के अतर्गत रख दिया गया था और जाटू तथा चमरवा के लिए अलग-अलग आँकडे दिये गये थे जव कि ये दोनो वोली का एक ही रूप हैं। इस कारण यहाँ जाटू के लिए दिल्ली के जो आँकडे दिये गये हैं, वे जाटू तथा चमरवा के लिए प्रस्तुत मूल आँकडो का जोड ही है।

वाँगरू

कर्नाल	७९१,०००
पटियाला (निर्वाना)	८०,०००
दक्षिणी नाभा	४,५३५

नहीं। 'वाँगर' का शव्दार्थ है 'ऊँची भूमि'। इससे सूखी वंजर जमीन का अर्थ द्योतित होता है जो कुएँ अथवा नदी से नहीं सींची जाती, वरन् (जहाँ नहरें नहीं है) वर्षा पर अवलम्बित होती है। 'वागड़' के दो अर्थ लगाये जाते हैं। एक के अनुसार इसका अर्थ 'वागर' अर्थात् 'घास' है जो इसी भूमि-भाग में उगती और रस्सियाँ वनाने में प्रयुक्त होती है। दूसरे लोगो के अनुसार इस शव्द का सवध पंजावी 'वाकड़' अथवा 'वक्कड़' (वकरा) से है और इसका अर्थ है वकरो का देश।

२ 'सिरसा सेटिलमेंट रिपोर्ट' के द्वितीय परिशिष्ट में श्री जे० विल्सन ने लिखा है कि 'देसवाली' का सवधकारक परसर्ग 'गा' (पु० वि० 'गे'; स्त्री० 'गी') है। वस्तुत. इसका संवंध वागड़ी से है। हरियाना से प्राप्त उदाहरणो में मुझे यह रूप नहीं मिला और सिरसा हर प्रकार से वास्तविक हरियाना प्रदेश के वाहर ही है।

जाटू

रोहतक (झज्जर के अतिरिक्त) . .	४९५,९७२
दिल्ली (चमरवा सहित)	२३६,३२४

हरियानी अथवा देसवाली

हिसार	३१५,८६४
दुजाना	३६,४५०
झिंद (झिंद तथा उत्तर-पूर्वी ददरी) .	२०५,६३९

मिश्रित बोली होने के कारण बाँगरू का विस्तृत विवेचन यहाँ नहीं किया जा रहा है। आगे उदाहरणों के साथ हम इसकी विशेषताओं की चर्चा करेंगे।

ब्रजभाखा अथवा अंतर्वेदी

बोली का नाम

ब्रजभाखा का अन्य नाम ब्रजभाषा भी है। यह ब्रजमडल की भाखा है। गगा-यमुना का दोआव आर्यों की पवित्र यज्ञ-भूमि होने के कारण अतर्वेद कहलाता है। इसी कारण ब्रजभाखा को अतर्वेदी (अतर्वेदी) भी कहते हैं। इन दोनो नामो में से किसी के द्वारा ब्रजभाखा के सम्पूर्ण क्षेत्र का भलीभाँति वोध नही हो पाता, क्योकि यह ब्रजमडल तथा दोआव के आगे भी वोली जाती है, यद्यपि इसका विस्तार किसी भी प्रकार सम्पूर्ण परवर्ती प्रदेश में नही है। यदि सन् १८३२ में ज़िले में जोडा गया सदवद वाला पूर्वी कोना तथा महावन का एक भाग हटा दिया जाय, तो ब्रजमडल का क्षेत्र मोटे तौर पर आधुनिक मथुरा जिला माना जा सकता है। इसी के अतर्गत कृष्ण की लीला-भूमि गोकुल तथा वृन्दावन है, किंतु ब्रजभाखा का क्षेत्र इसमे अधिक विस्तृत है।

ब्रजभाखा के लिए प्राय सक्षिप्त रूप में 'ब्रज' शब्द का ही प्रयोग किया जाता है। उधर मध्य दोआव अर्थात् आगरा, एटा, मैनपुरी, फर्रुखावाद एव इटावा की वोली को अतर्वेदी कहा जाता है। इनमें से फर्रुखावाद तथा इटावा की वोली कनौजी तथा शेष की ब्रज है।

बोली का प्रदेश

यदि मथुरा को केंद्र माना जाय, तो दक्षिण में ब्रजभाखा आगरा, भरतपुर के अधि-काश भाग, धौलपुर, करौली, ग्वालियर के पश्चिमी भाग तथा जयपुर के पूर्वी भाग में वोली जाती है। उत्तर में इसका विस्तार गुडगाँव के पूर्वी भाग तक है। उत्तर-पूर्वी दोआव में यह वुलदशहर, अलीगढ, एटा, मैनपुरी तथा गगा के उस पार वदायूँ, वरेली तथा नैनीताल की तराई में वोली जाती है। इस प्रकार इसका विस्तार दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर जाने वाले नियमित आकार के एक क्षेत्र में है। यह भूमि-भाग सामान्यत ९० मील चौडा और ३०० मील लम्वा है। इसका क्षेत्रफल मोटे रूप से २७,००० वर्गमील तथा वोलने वालो की सख्या लगभग ७,८५०,००० है।

विभिन्न वोलियाँ

विभिन्न स्थानो मे ब्रजभाखा में कुछ अतर हो जाता है। मथुरा, अलीगढ तथा पश्चिमी आगरा की ब्रजभाखा आदर्श है। अलीगढ के उत्तर मे वुलदशहर है जहाँ की वोली में वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का अधिक सम्मिश्रण हो जाता है। जहाँ

तक व्रजभाखा व्याकरण का सबध है, मुख्य अतर यह है कि इधर व्रज का 'औ' प्रत्यय 'ओ' मे परिणत हो जाता है जैसे 'चल्यौ' को यहाँ 'चल्यो' बोलते है।

आगरे के पूर्व में धौलपुर तथा करौली के मैदानी भाग एव ग्वालियर के पडोस में प्राय आदर्श व्रजभाखा ही है, किंतु इधर एक अतर अवश्य मिलता है और वह है अतीत-काल के कृदतीय रूप से 'य्' का विलोप, यथा 'चल्यौ' के स्थान पर 'चलौ' प्रयुक्त होने लगता है। दोआब के एटा, मैनपुरी एव बुलदशहर जिलो में भी 'य्' का लोप हो जाता है और 'औ' 'ओ' मे परिणत हो जाता है। इस प्रकार यहाँ 'चलौ' का रूप 'चलो' हो जाता है। यही विशेषता गगा के पार बदायूँ तथा बरेली जिलो की व्रजभाखा मे भी दृष्टिगत होती है। इधर व्रजभाखा कनौजी में परिवर्तित हो जाती है जहाँ नियमित रूप से 'चलो' का ही व्यवहार होता है। पुन ग्वालियर के उत्तर-पश्चिम मे भी 'औ' 'ओ' मे परिवर्तित हो जाता है और यहाँ भी 'य्' विलुप्त हो जाता है। इधर व्रजभाखा बुदेली के भदौरी रूप में परिवर्तित हो जाती है।

भरतपुर तथा इसके दक्षिण की डाग बोली मे 'य्' सुरक्षित है तथा 'औ' कभी 'ओ' मे परिवर्तित होता है, कभी नही भी होता। इधर व्रजभाखा राजस्थान की जयपुरी बोली में अतर्भुक्त हो जाती है, जहाँ 'य्' विद्यमान है, लेकिन प्रत्ययस्वरूप 'ओ' का ही व्यवहार होता है, 'औ' का नही। इसी प्रकार गुडगाव मे व्रजभाखा मेवाती में अतर्भुक्त हो जाती है। यहाँ भी 'औ' 'ओ' मे परिणत हो जाता है, किंतु 'य्' सुरक्षित है। अत मे नैनीताल की तराई मे व्रजभाखा एक मिश्रित भाषा का रूप धारण कर लेती है। इसे वहाँ 'भुक्सा' कहा जाता है, क्योकि इसके बोलने वाले भुक्सा लोग है। मैंने इसे व्रजभाखा के अतर्गत रखा है, किंतु समान औचित्यसहित इसे कनौजी अथवा हिंदोस्तानी के अतर्गत भी रखा जा सकता है।

व्रजभाखा बोलने वाले ऊपर की इन सारी विशेषताओ को नही जानते, फिर भी वे इसकी कई विभिन्न बोलियो से परिचित है। ये लोग पूर्व की कनौजी मे अतर्भुक्त होने वाली व्रजभाखा को अतर्वेदी कहते हैं। ग्वालियर के उत्तर-पूर्वी कोने में धौलपुर के सामने सिकरवाड राजपूतो के कारण यहाँ की व्रजभाखा 'सिकरवाडी' नाम से जानी जाती है। करौली के समतल भूभाग तथा चम्बल पार की बोली जादो (यादव) राजपूतो के कारण 'जादोबाटी' कहलाती है। भरतपुर के दक्षिण के ऊबडखाबड क्षेत्र तथा करौली एव जयपुर के पूर्व के प्रदेश को 'डाग' कहते है, इसलिए इधर के पहाडो के गूजरो की बोली 'डागी' नाम से प्रख्यात है। जयपुर में इसकी कई उपबोलियाँ हो जाती हैं जैसे डागी, डगरवारा, कालीमाल तथा डागभाग। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, नैनीताल की तराई की व्रजभाखा 'भुक्सा' कहलाती है।

अतीत काल के कृदतीय रूप के 'यौ, औ, यो' अथवा 'ओ' को कसौटी मान कर व्रजभाषा के विभिन्न रूपों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है—

१ आदर्श व्रज ('चल्यौ')
   मथुरा
   अलीगढ
   पश्चिमी आगरा
२. आदर्श व्रज ('चल्यो')
   वुलदशहर
३. आदर्श व्रज ('चलौ')
   पश्चिमी आगरा
   धौलपुर
   जादोवाटी (करौली का मैदानी भाग और ग्वालियर)
४. कनौजी मे अतर्भुक्त व्रज ('चलो')
   एटा
   मैनपुरी
   वदायूँ
   वरेली
५ भदौरी में अतर्भुक्त व्रज ('चलो')
   सिकरवाडी (ग्वालियर के उत्तर-पश्चिम की वोली)
६. राजस्थानी (जयपुरी) मे अतर्भुक्त व्रज ('चल्यौ' या 'चल्यो')
   भरतपुर
   डांग वोली
७. राजस्थानी (मेवाती) में अतर्भुक्त व्रज ('चल्यो')
   गुडगाँव
८. नैनीताल की तराई की मिश्रित व्रजभाखा

प्रामाणिक व्रजभाखा से विभिन्नताएँ

अलीगढ तथा आगरा जिले के पूर्व में अन्य पुरुष सर्वनाम 'वह' के लिए एक विभिन्न रूप 'ग्व्' तथा 'गु' मिलता है। उसी प्रकार डागी वोली मे एक रूप 'ह्व्' मिलता है जिससे 'ग्व्' तथा 'गु' की व्युत्पत्ति स्पष्ट हो जाती है। व्रजभाखा के पूर्व के ज़िलो में व्यंजनो के द्वित्वीकरण की प्रवृत्ति दिखायी देती है, विशेषकर तव जव व्यजनो मे पहला

'र्' हो। यह विशेषता पड़ोस की बुंदेली के भदौरीरूप में भी मिलती है जैसे 'खर्च्' के लिए खच्चु' (मैनपुरी), 'मरत्' के लिए 'मत्त्' (सिकरवाटी), 'ठाकुरसाहिव' के लिए 'ठाकुस्सा' (एटा), 'नौकरानी' के लिए 'नौकन्नी' (अलीगढ तक उत्तर-पश्चिम मे)।

वदायूँ तथा वुलदशहर जिलो की व्रजभाखा मे निकटवर्ती वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का सम्मिश्रण हो जाता है। वुलदशहर मे कनौजी से भी इसका मिश्रण होता है। यहाँ एक वात और उल्लेखनीय है। व्रजभाखा के अधिकांश भाग मे करणकारक में 'अन्' प्रत्यय लगता है जैसे 'भूखन्' (भूख से), आगरा और धौलपुर मे यह 'अनि' प्रत्यय में परिणत हो जाता है यथा 'भूखनि'। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि 'ने' अनुसर्ग किसी समय करण तथा कर्तृ दोनो मे प्रयुक्त होता था।

डाग वोलियाँ

दक्षिणी भरतपुर, करौली तथा पूर्वी जयपुर की गूजर जातियाँ भी व्रजभाखा का व्यवहार करती हैं। इनकी वोली मे अनेक स्थानीय विशेषताएँ हैं। वास्तव मे इधर की व्रजभाखा मे राजस्थानी का मिश्रण मिलता है और इस प्रकार यह व्रजभाखा तथा राजस्थानी की जयपुरी वोली के वीच की कड़ी है। आधुनिक भारतीय-आर्य भाषाओ के तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि व्रजभाखा के विविध रूपो का वर्गीकरण कुछ स्थलो पर पूर्णत. स्पष्ट नही है। इसी कारण व्रजभाखा-भाषी जिलो को उस क्रम मे रखना सरल नही है जो उदाहरणो के परीक्षण के लिए सुविधाजनक हो।

भाषा-भाषियो की संख्या

व्रजभाखा के वोलने वालो की सख्या निम्नलिखित है—

प्रामाणिक—

मथुरा		६११,७२१
अलीगढ		९९२,२००
आगरा		५४७,०००
धौलपुर		२६२,३३५
जादोवाटी		
करौली	८०,०००	
ग्वालियर	६०,०००	
		१४०,०००

सिकरवाडी (ग्वालियर)	१२७,०००	
एटा	४०१,०००	
मैनपुरी	५३२,०००	
वरेली	८५७,२१३	
	———	४,४७०,४६९

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी से मिश्रित व्रजभाखा

वुलदशहर	९४१,०००	
वदायूं	८२६,५००	
नैनीताल की तराई	१९९,५२१	
	———	१,९६७,०२१
		———
		६,४३७,४९०

राजस्थानी में अंतर्भुक्त व्रजभाखा

गुडगाँव	१४९,७००	
भरतपुर	५०२,३०३	
डाग वोलिया	७७४,७८१	
	———	१,४२६,७८४
		———
	कुल जोड	७,८६४,२७४

जो व्रजभाखा के क्षेत्र के वाहर इमका व्यवहार करते है उनकी सख्या से सवधित कोई मूचना उपलव्ध नही है।

व्रजभाखा की विशेषताएँ

साहित्यिक हिंदोस्तानी की अपेक्षा व्रजभाखा पश्चिमी हिंदी की श्रेष्ठतर प्रतिनिधि है। व्याकरणसवधी विशेषता की दृष्टि से भी इसका साहित्यिक हिंदोस्तानी से अधिक महत्त्व है। वस्तुत साहित्यिक हिंदोस्तानी पश्चिमी हिंदी के उत्तर-पश्चिमी कोने की वोली है और इस पर पजावी का पर्याप्त प्रभाव है। पजावी के समान ही हिंदोस्तानी मे भी तद्भव पुल्लिग सज्ञापद, विशेषण तथा कृदत आकारात होते हैं और इसी समान हिंदोस्तानी मे 'गा' प्रत्यय से सम्पन्न होनेवाला भविष्यत् काल का केवल एक रूप प्रयुक्त होता है। व्रजभाखा मे 'आ' की अपेक्षा 'औ' को साधारणतया

'एह' प्रत्यय जोड कर साधारण वर्तमान का अत्य रूप ही सयुक्त कर दिया जाता है यथा 'मारिहौं' (मारूँगा)। यह रूप वस्तुत सीधे सस्कृत से ब्रजभाषा में आया है। इनकी विभिन्न अवस्थाएँ ये है—स० मारिष्यामि>प्रा० मारिस्सामि, मारिहामि, मारिहौं> ब्रज० मारिहौं। इस प्रकार स्पष्ट है कि ब्रजभाखा का भविष्यत् रूप प्राकृत के नवीनतम भविष्यत् रूप के समान है।

साहित्य

ब्रजभाखा के यशस्वी लेखको की एक लम्बी सूची है। इसका प्राचीनतम ग्रथ जिससे मै परिचित हूँ, चद वरदाई का 'पृथ्वीराज रासौ' है। चद अपने को लाहौर मे उत्पन्न और राजपूतो के चारणो मे सर्वाधिक प्रसिद्ध वतलाता है, लेकिन उसने ब्रजभाखा के एक पुराने रूप मे लिखा है, पजावी अथवा राजस्थानी मे नही। वह अतिम महान् हिंदू सम्राट प्रथ्वीराज चौहान का दरवारी कवि था जो सन् ११९२ मे शहाबुद्दीन के नेतृत्व में आये मुसलमान आक्रमणकारियो द्वारा जीते और मारे गए। 'पृथ्वीराज रासौ' मे चद ने अपने आश्रयदाता के पराक्रम का वर्णन किया है। पृथ्वीराज द्वारा ये वीरतापूर्ण कार्य मध्य दोआव तथा राजपूताना एव वुदेलखड के उत्तर मे किए गये थे, इस कारण ब्रजभाखा का व्यवहार आश्चर्यजनक नही है। इस ग्रथ की भाषा इतनी पुरानी है कि इसके अनेक अग वस्तुत विशुद्ध प्राकृत के है। ग्रथ की शुद्धता सदेहास्पद होने के कारण ऐतिहासिक अथवा भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि मे इसका अधिक महत्त्व नही रह जाता। यह विलकुल निश्चित है कि 'पृथ्वीराज रासौ' मे वहुत प्रक्षेप हुआ है। इसका सपूर्ण पाठ-सपादन अभी नही हो सका है लेकिन नागरी प्रचारिणी सभा ने यह काम सभाल लिया है और विद्यार्थियो के लिए एक अच्छा सस्करण अव (१८१२) सुलभ हो रहा है।

ब्रज की कृष्णोपासना

१५ वी शताब्दी मे उत्तरी भारत मे विष्णु की भक्ति-पद्धति प्रचलित थी जिसके संस्थापक विष्णु स्वामी थे। इनका समय अनिश्चित है। ईश्वर के जिस अवतार को मुख्यत पूजा जाता था वह राधासहित कृष्ण का था। विष्णु स्वामी केवल ब्राह्मणो को उपदेश देते थे और उनकी शिक्षाएँ एक लोकप्रिय धर्म के रूप मे फैलायी नही गयी। उनके कुछ गिने-चुने अनुयायी थे। १५ वी शताब्दी के अत मे आराधना की यह पद्धति परिवर्तित हो गयी जव वल्लभाचार्य नामक एक तैलग ब्राह्मण ने राधा-कृष्णोपासना को जनसाधारण में लोकप्रिय वनाया। इस धर्म का केंद्र कृष्ण, राधा तथा अन्य गोपियों

का क्रीडा-स्थल मथुरा—ब्रजमंडल—था। वल्लभाचार्य के आठ प्रसिद्ध शिष्य थे जो सामूहिक रूप मे 'अष्टछाप' के नाम से जाने जाते है। इन शिष्यो में सर्वाधिक यशस्वी विट्ठलनाथ तथा सूरदास थे। इन आठ गायको ने सारे दोआव को अपने गीतो से गुँजा दिया। इनकी गीत-रचना का माध्यम ब्रजभाखा थी। इन्ही के समय से जिस प्रकार अवधी राम की वीरगाथाओ के वर्णन की और समस्त उत्तरी भारत मे महाकाव्य की भाषा बनी उसी प्रकार ब्रजभाखा सदैव के लिए राधा-कृष्णोपासना का एक उपर्युक्त माध्यम बन गयी। 'अष्टछाप' के शिष्यो तथा अनुयायियो की सख्या अधिक है। इनमें से अनेक ने भाषा पर अपना विलक्षण अधिकार प्रदर्शित करते हुए विशिष्ट शैली में, उत्कृष्ट पदो की रचना की। इन छोटे-छोटे प्रणय-गीतो मे राधा के लिए कृष्ण के प्रेम की तुलना मानवात्मा के लिए ईश्वर के प्रेम से की गयी है। इन पदो का लालित्य तथा इनकी भावप्रवणता अतुलनीय है।

अंधे गीतकार सूरदास नि सदेह इन सबमे महान्तम है। वे सम्राट् अकबर के एक दरबारी कवि के पुत्र थे। सूरदास सात भाइयो में सबसे छोटे थे—शेष छ ने भारत की स्वतत्रता के लिए लडते हुए अपने प्राणो की आहुति दी थी। महाकवि सूरदास की ख्याति का प्रमुख आधार 'सूरसागर' है, पदो के इस सग्रह मे लगभग ६०,००० पक्तियाँ है। सूरदास भारतीय साहित्य मे नि सदेह एक बहुत ऊँचे स्थान के अधिकारी है। वे स्पष्ट और अस्पष्ट, कोमल और कठोर—सभी स्थितियो के सफल चित्रण में सिद्धहस्त है। यह सभव है कि कुछ लेखक किसी विशेष गुण मे सूरदास की समानता कर सके लेकिन अपनी विशिष्ट धारा मे वे सभी के सर्वोत्कृष्ट गुणो को स्वय मे समाहित किये हुए है। पाश्चात्य रुचि को भी उनकी वर्णनात्मक शैली मे एक मधुर एकरसता दृष्टिगत होती है। सूरदास नि सदेह एक महान् कवि थे लेकिन वे कही भी भावजगत् की उस विलक्षण ऊँचाई पर नही पहुँचते जिससे अवध के तुलसीदास की समस्त रचनाएँ प्रकाशमान है।

सूरदास के परवर्ती कवियो की एक सूची देना अनुपयोगी होगा और उनकी पुस्तको का विवरण भी बहुत अधिक स्थान ले लेगा। इसलिए मै यहाँ 'भक्तमाल' के रचयिता नाभादास के उल्लेख से ही सतोष किये ले रहा हूँ। ये जाति से मूलत डोम थे। 'भक्तमाल' महान् वैष्णव सुधारको से सबधित कथाओ का सग्रह है जिसमे से कुछ ऐतिहासिक तथ्य भी लिये जा सकते है। ब्रजभाखा के प्रसिद्ध लेखको मे एक मैनपुरी के देवदत्त (१७ वी शताब्दी के प्रारभिक भाग में) है जिनकी भारतीय विद्वानो मे विशेष ख्याति है। दूसरे रचनाकार विहारीलाल की अतुलनीय 'सतसई' मे लालित्य तथा वाग्वैदग्ध्य की दृष्टि से अन्यतम सात सौ दोहे सकलित है। 'सतसई' बिलकुल सही अर्थो में अनुवादको की निराशा और टीकाकारो की खान कही गयी है। जिस विलक्षण कौशल से कवि ने सही

प्राथमिकता दी जाती है। 'गा' अथवा 'गौ प्रत्ययो से बना हुआ भविष्यत् काल का रूप पजाब से लेकर बिहार तक सारे उत्तरी भारत मे व्यवहृत होता है। पश्चिम मे केवल यही एक रूप है लेकिन पूर्व की ओर जाने पर इसका प्रयोग अधिकाधिक कम होता जाता है, यहाँ तक कि बिहार मे इसके केवल कुछ छिटपुट उदाहरण ही मिलते है।

व्रजभाखा मे कभी-कभी नपुसक लिग भी मिलता है। यह इसकी प्राचीनता का द्योतक है। उत्तरी भारत की अधिकाश बोलियो से यह लिग लुप्त हो चुका है। इन बोलियो मे नपुसक सज्ञापद पुल्लिग मे परिवर्तित हो गये है किंतु व्रजभाखा मे कही-कही यह लिग आज भी सुरक्षित है जैसे क्रियार्थक सज्ञा का लिग इसमें मूलत. नपुसक था। यही कारण है कि व्रजभाखा मे केवल पुल्लिग रूप 'मारनौ' (हिंदोस्तानी 'मारना') ही नही मिलता, वरन् अधिकतर इसका नपुसक रूप 'मारनौं' ही मिलता है। साहित्यिक व्रजभाखा की अपेक्षा ग्रामीण व्रजभाखा मे नपुसक रूप ही अधिक प्रचलित है उदाहरणार्थ 'सोने' का नपुसक रूप 'सोनौं' अथवा 'सोनों' ही ग्रामीण व्रजभाखा में प्रचलित है। इसी प्रकार 'अपनौ (अथवा 'अपनो') धन' में 'अपनौं', 'अपनो' विशेषण नपुसक लिग में है।

ऊपर यह कहा जा चुका है कि व्रजभाखा में हिंदोस्तानी के 'आ' प्रत्यय की अपेक्षा 'औ' ही साधारणतया प्रयुक्त होता है। पूर्व की व्रजभाखा में कनौजी के प्रभाव से 'औ' का 'ओ' उच्चारण करने की प्रवृत्ति है। आगे 'औ' तथा 'ओ' प्रत्ययो का प्रयोग समानार्थी रूप से किया जायगा। मथुरा, दोआब तथा रुहेलखंड की प्रामाणिक व्रजभाखा में नाम धातु के लिए 'औ' प्रत्यय प्रयुक्त नही होता है। इनमे 'औ' के स्थान पर 'आ' प्रत्यय ही सयुक्त होता है जैसे 'घोडा', 'घोडौ' नही। हिंदोस्तानी के समान ही यहाँ की बोलियो मे भी इन विकृत एकवचन तथा कर्ता बहुवचन के रूप एकारात होते है लेकिन मथुरा से दक्षिण की ओर जाने पर ये सज्ञापद ओकारात अथवा औकारात हो जाते है। इसके अतिरिक्त विकृत एकवचन तथा कर्ता बहुवचन के रूप आकारात होते है, एकारात नही। इसका कारण राजस्थानी प्रभाव है। दूसरी ओर विशेषणपद (सबधकारक तथा कृदतोसहित) सर्वत्र 'ओ' अथवा औकारात ही होते है उदाहरण-स्वरूप प्रामाणिक व्रज 'घोडे कौ', दक्षिणी व्रज 'घोडा कौ'; 'भलौ'; 'चल्यौ' आदि। 'औ' के अतिरिक्त हिंदोस्तानी के 'ओ' प्रत्यय के समान सज्ञापदो का एक विकृत बहुवचन रूप 'नि' अथवा 'न्' अत्य होता है जैसे 'घोडन कौ' अथवा 'घोडनि कौ।'

प्रामाणिक हिंदोस्तानी से तुलना करने पर व्रजभाखा के सर्वनाम रूपो में अनेक भिन्नताएँ दृष्टिगत होती है। आगे व्याकरण की चर्चा मे इन पर विस्तारपूर्वक विचार किया जायगा। यहाँ यह उल्लेख ही पर्याप्त होगा कि व्रज मे 'मै' के लिए प्राय 'हौं' सर्वनाम ही प्रयुक्त होता है।

जहाँ तक क्रिया का सबध है, महायक क्रिया के वर्तमान काल के रूप प्राय हिंदोस्तानी के रूपो के समान ही है लेकिन भूतकाल के रूपो मे भेद है क्योकि यहाँ सहायक क्रिया के रूप मे 'हौ' अथवा 'हुतौ' का प्रयोग होता है, 'था' का नही।

वर्तमान कृदतीय के कर्तृवाच्य के रूप 'तु' अथवा 'त्' प्रत्यात होते है जैसे 'मारतु' या 'मारत'। हिंदोस्तानी मे इसके लिए 'ता' प्रत्यय व्यवहृत होता है यथा 'मारता'। प्रामाणिक व्रज का भूतकालिक कृदतीय रूप वस्तुत उल्लेखनीय है, यह 'यौ' प्रत्ययात होता है उदाहरणार्थ 'मार्यौ।' जैसे-जैसे हम पूर्व की ओर वढते जाते है, वैसे-वैसे 'य' के लोप की प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है और 'चल्यौ' तथा 'चलो' जैसे रूप मिलने लगते है। दक्षिण मे इमसे विलकुल उल्टी प्रवृत्ति दिखलायी देती है। उवर विशेषणो मे भी, जो कृदत नही है 'य्' सयुक्त किया जाता है। इस प्रकार इधर 'आछ्यौ' (अच्छा), 'तिहार्यौ' (तुम्हारा) जैसे रूप मिलते है। यह 'य्' वस्तुत सस्कृत के भूतकालिक कृदत 'इ' का अवशेप मात्र है। इसकी विभिन्न अवस्थाएँ इस प्रकार दी जा सकती है—स० मारितक > प्रा० मारिदओ, मारिऔ > व्रज० मार्यौ।

हिंदोस्तानी का वह काल जिसे प्राय सामान्य भूत कहा जाता है तथा साधारणतया वर्तमान अभिप्राय के लिए प्रयुक्त किया जाता है, वस्तुत प्राचीन वर्तमान निश्चयार्थ है जिमका अर्थ निर्दिप्ट हो चुका है। व्रजभाखा मे यह साधारणतया वर्तमान निश्चयार्थ के अपने मूल अर्थ मे ही प्रयुक्त होता है। जव इस काल का अर्थ सुनिर्दिष्ट करना होता है अर्थात् इसे निश्चित वर्तमान का रूप देना होता है, तव इसमे क्रिया धातु का वर्तमान-कालिक रूप सयुक्त कर देते है जैसे 'हौं मारौ—हौं' (मै मारता हूँ।)', 'तू मारै—है' (तू मारता है।)। व्रज मे निश्चित वर्तमान का दूसरा रूप हिंदोस्तानी के समान ही वर्तमान-कालिक कृदत की सहायता से वनता है। इसी प्रकार अपूर्ण काल के रूप वर्तमान के कृदतीय रूपो की महायता से वनते है। व्रज के कुछ क्षेत्रो में अपूर्ण काल के कुछ ऐसे रूप मिलते है जो क्रिया धातु के भूतकालिक रूप को सभी पुरुषो तथा वचनो के लिए प्रयुक्त सामान्य वर्तमान के प्रथम पुरुप एकवचन में जोडने से वनते है।[1]

व्रजभाखा मे भविष्यत्काल के रूप साधारण वर्तमान के रूपो में 'गौ' प्रत्यय सयुक्त करने से वनते है जैसे 'मारौं—गौ' (मारूँगा), लेकिन यहाँ प्राय. धातु मे 'इह' अथवा

१ क्रिया धातु का भूतकालिक रूप जिस अंश में जोड़ा जाता है, उसकी उपरोक्त पहचान मेरे मतानुसार सही नहीं है। मै 'मारै' को क्रियार्थक संज्ञा का एक पुराना अधिकरण कारक मानता हूँ, यथा 'मारै—हौं' (मै, तू अयवा वह मार रहा था।) बिलकुल ऐसा ही भाषागत रूप विहारी की मगही बोली में मिलता है।

स्थान पर सही शब्द का प्रयोग किया है उसके कारण इसका अनुवाद लगभग असभव हो गया है। 'सतसई' का प्रत्येक दोहा अपने में एक सपूर्ण कलाकृति है। कवि की शैली की ऐसी ठोस प्रकृति अनेक कठिनाइयो को जन्म देती है जो विद्वानो मे कुछ दुर्निवार-सा मोह जगाती हैं। ये विद्वान् कवि नही है और उसे छिपाना पसद करते है जो टीका-टिप्पणियो के गहरे अँधेरे मे अस्पष्ट रहता है।

पुस्तक-सूची

मेरी जानकारी के अनुसार पृथक् बोली के रूप मे ब्रजभाखा से सबधित पहली पुस्तक लल्लूलाल का व्याकरण है। यह सन १८११ मे प्रकाशित हुआ था। ऐसा मालूम होता है कि प्रारभिक जेसुइट मिशनरी इससे परिचित नही थे, न ही 'Sprachmeister' जैसे भाषागत उदाहरणो के पुराने सग्रहो मे इसका उल्लेख मिलता है। निम्नलिखित सूची मे मैंने केवल उन्ही व्याकरणो तथा विद्यार्थियो के लिए सहायक पुस्तको का उल्लेख किया है जो ब्रजभाखा से प्रत्यक्षत सबद्ध है। ब्रजभाखा की दूसरी पुस्तको के बारे मे पूरी सूचना पश्चिमी हिंदी की सामान्य पुस्तक-सूची में मिलेगी।

मेरी जानकारी के अनुसार श्रीरामपुर मिशनरियो द्वारा किया गया 'न्यू टेस्टामेट' का 'ब्रज' ('Bruj') रूपातर ही ब्रजभाखा में बाइबिल का अकेला अनुवाद है।

व्याकरण, शब्दकोश तथा अन्य पुस्तके

लल्लूलाल—General principles of Inflection and Conjugation in the Bruj B,hak,ha or the Language spoken in the country of Bruj, in the District of Goaliyur, in the Dominions of the Raja of Bhurtpoor, as also in the extensive Countries of Bueswara, Bhudawur, Unter Bed, and Boondelkhund Composed by Shree Lullo Lal Kub, B,hak,ha Moonshee in the College of Fort Willam. कलकत्ता, १८११.

गासी द तासी—Anecdote relative au Braj Bhakha, traduite de l' Hindoustani Journal Asiatique, ११ (१८२७), प्र० २९८.

गासी द तासी—Rudiments de la langue Hindoui, पेरिस, १८४७.

गार्सा द तासी—Hindi Hindui Muntakhabat. Chrestomathie Hindie et Hinduie a l'usage des Eleves de l'Ecole speciale des Langues Orientales Vivantes près la Bibliothéque Nationale, पेरिस, १८४९.

गार्सा द तासी—Tableau de kaliyug ou de l' Age du Fer, par Wischnu Das, traduit de l' Hindoui Joural Asiatique, ४ १९ (१८५२), पृ० ५५१

प्राइस, डब्ल्यू०—Selections, Hindee and Hindoostanee, to which are prefixed the rudiments of Hindee and Bruj Bhakha Grammar, कलकत्ता, १८२७, दूसरा सस्करण, १८३०

बेलेंटाइन, जे० आर०—Hindi and Braj Bhākhā Grammar, लदन, १८३९, दूसरा सस्करण, १८६८.

बेलेंटाइन, जे० आर०—Grammar of the Hindustani Language, with brief notices of the Braj and Dakhani dielects; लदन, १८४२.

बेट, जे० डी०—A Dictionary of the Hindee Language, बनारस, १८७५। इसमे ब्रजभाखा के अनेक रूप दिये गये है।

केलॉग, एस० एच०, डी० डी०, एल एल० डी०—A Grammar of the Hindi Language, in which are treated the High Hindi, Braj . etc , with Copious philological Notes, पहला सस्करण, १८७६; दूसरा सस्करण, लदन, १८९३.

'आर्य'— Hindi Grammar in Hindi and English, in which is treated the Braj Dialect with illustrations from the Rājnīti, by Arya, बनारस। तिथि नही है।

व्याकरण

ब्रजभाखा के व्याकरण की एक रूपरेखा नीचे दी गयी है। इसे लिखते समय मैं यह मान कर चला हूँ कि पाठक प्रामाणिक हिंदोस्तानी के सिद्धातो से परिचित है। निम्नलिखित अतिरिक्त सूचना उपयोगी होगी। पूर्णता के लिए पूर्ववर्ती पृष्ठो को काफी कुछ पुनरावृत्ति की गयी है।

व्रजभाखा क्षेत्र के अनेक भागो मे, विशेषत भदौरी के निकट पूर्व तथा दक्षिण-पूर्व मे किसी व्यजन के पहले होने पर 'र्' वर्ण का विलोप और परवर्ती व्यजन का द्वित्व हो जाता है जैसे 'मर्द' के लिए 'मद्दु', 'मर जाउ' के लिए 'मज्जाउ' (आज्ञार्थ), 'मरत हूँ' के लिए 'मत्त', 'नौकरनु मू' के लिए 'नौकन्नु मू'। अलीगढ मे इसी प्रकार 'भेज दयौ' के लिए 'भेद दयौ' मे 'ज' का विलोप दृष्टिगत होता है।

'व्' वर्ण की ध्वनि बहुत अनिश्चित है। प्राय यह 'व्' रूप मे उच्चरित होती है यथा 'वह' के लिए 'बो' एव 'वो' प्राय समान अनुपात मे प्रयुक्त होते है। सही ध्वनि वस्तुत इन दोनो वर्णो के बीच की है। 'व्' वर्ण प्राय 'म्' हो जाता है, विशेषत दीर्घ स्वर के पश्चात्। उदाहरणार्थ 'वहा' के लिए 'महा' (अथवा 'भा'); 'चरामतु', 'आमतु', 'मनामन', 'जामे', 'रोमति, 'वामन' (बावन)।

इसी प्रकार महाप्राण व्यजनो का व्यवहार भी बहुत अनिश्चित है। क्रिया धातु मे वे प्राय विलुप्त कर दिये जाते है जैसे अलीगढ मे स्थिति यह है,'ऊ' (मै हू।); 'ए' (तू है, वह है।), 'एँ' (हम है, वे है।); 'औ' (तुम हो।); 'ओ' (वह था।)। इसी प्रकार 'हाथ' के लिए 'हात्' मिलता है। इन शब्दो मे भी 'ह्' की स्थिति बदली है— 'भा' ('वहाँ'), 'भौत' (बहुत), 'कुलफ' (कुफ्ल)।

अलीगढ मे 'क्यो 'के लिए 'छो' मे 'क्य्' 'छ्' मे परिवर्तित हो गया है।

'औ' सध्यक्षर जो व्रजभाखाकी एक प्रमुख विशेषता है, व्रजमडल तथा निकटवर्ती क्षेत्र के अतिरिक्त सामान्यत 'ओ' मे परिवर्तित हो जाता है। वस्तुत सपूर्ण प्रदेश मे ये दो वर्ण परस्पर परिवर्तित हो सकते है जैसे 'चल्यौ' अथवा 'चल्यो'।

इस तथ्य की ओर पहले ही ध्यान आकृष्ट किया जा चुका है कि व्रजभाखा में अ—मूल के दीर्घ पुल्लिग विशेषण (सबधकारक तथा कृदतो सहित) औकारात होते है यथा 'भल्यौ,' 'घर कौ', 'चल्यौ' आदि। व्रजमडल तथा उसके उत्तर एव पूर्व के प्रदेश की व्रजभाखा में धातुओ के साथ यह स्थिति नही है। धातुएँ हिंदोस्तानी के समान यहाँ आकारात होती है और राजपूताना की सीमा के दक्षिणी भूमिभाग मे 'औ' अथवा ओकारात। इसी क्षेत्रमे धातुओ का विकृत एकवचन रूप 'आ' जोड कर बनता है और विकृत बहुवचन रूप 'आ' जोड कर। आगे उत्तर मे भी इसके छिटपुट उदाहरण मिलते है और यहाँ तक कि मथुरा में भी 'थोडे दिना पाछे' जैसे प्रयोगो मे नियमित व्रज-भाखा रूप 'दिनन्' की बजाय 'दिना' व्यवहृत होता है। ये 'आ' अथवा आकारात विकृत रूप नि सदेह राजस्थानी का परिणाम है। सामान्यत इन सज्ञाओ का विकृत एकवचन तथा कर्ताकारक बहुवचन रूप 'ऐ' अथवा एकारात होता है और विकृत बहुवचन रूप 'अन्' अथवा अनिकारात। उदाहरणार्थ—'घोडा', 'घोडै कौ' या 'घोडे को', 'घौडे';

या 'घोडे', 'घोडन कौं' या 'घोडनि कौं'। यहाँ एक महत्त्वपूर्ण अपवाद उल्लेखनीय है, वह यह कि कर्ताकारक के आकारात होने पर भी सबंधवाचक संज्ञाओं के विकृत रूप सर्वत्र राजस्थानी के समान होते हैं। उदाहरणस्वरूप मथुरा के ये उदाहरण दृष्टव्य है—'दो छोडा' ('छोडे' नहीं) (दो पुत्र); 'लोहरे बेटा ने' (छोटे पुत्र के द्वारा)। किसी संज्ञा मे जोडा गया 'ए' अनिश्चय का काम करता है (फारसी से तुलनीय, जैसे 'जाने कौं' (एक निश्चित व्यक्ति का), 'नौकरे' (मथुरा) (नौकर)।

व्रज का सामान्य अविकरण 'ए' है जो सारे उत्तरी भारत मे मिलता है यथा 'घरे' (घर मे)। यहाँ 'ओ' अथवा 'ओं' उपकरण भी विद्यमान है जैसे 'भूखो' अथवा 'भूखों' ([मैं मरा] भूख से)।

कर्ताकारक का परसर्ग सामान्यत 'नें' अथवा 'नै' होता है। कभी-कभी इसका 'न्' रूप भी मिलता है उदाहरणार्थ 'तुम नु महमानि करि-ए।' यह परसर्ग स्थानीय विशेषताओं के कारण व्यवहृत होने वाले उपकरण कारक के 'न्', 'नि' अथवा 'नु' का उद्गम है जैसे 'भूखन्' 'भूखनि', अथवा 'भूखनु' (भूख से)। इस 'अन्' उपकरण तथा विकृत बहुवचन 'अन्' मे भ्रम हो गया है जिसकी एक बिलकुल दूसरी ही व्युत्पत्ति है और इसीलिए अलग से 'इ' अथवा 'उ' को इस विकृत बहुवचन रूप के साथ जोड दिया जाता है यथा 'घोडन्' के अतिरिक्त 'घोडनि'; 'घरन्' के अतिरिक्त 'घरनु' तथा इसी प्रकार 'मजूरनु कौं' (नौकरो का); 'कमेरनु कूं' (श्रमिको को) आदि रूप भी मिलते है।

कभी-कभी उदाहरणार्थ पुराने कारक रूप भी मिल जाते है जैसे 'राजा' का कर्म-सम्प्रदान रूप 'राजैं' (अलीगढ)। इसी प्रकार कर्ताकारक के दुर्बल अ-मूल मे जोडा गया 'उ' प्रत्यय भी मिलता है, यथा 'घर' के लिए 'घरु'। यह प्रत्यय विकृत रूपो मे भी प्रयुक्त होता है यद्यपि वहाँ इसकी व्युत्पत्ति भिन्न है।

व्रज मे नपुसक लिंग की सुरक्षा के अनेक उदाहरण मिलते है। पहले ही इसकी चर्चा की जा चुकी है, इसलिए यहाँ फिर इस पर विचार अनावश्यक है।

दक्षिण मे औकारात विशेषणो में भूतकालिक कृदत के समान 'य्' ध्वनि जुड जाती है जैसे 'अच्छ्यौं' (अच्छा), 'मेर्यौं' (मेरा), 'तिहार्यौ' (तुम्हारा)।

पुरुषवाचक सर्वनामो का कर्म-सम्प्रदान कारक अक्षर-विन्यास के विभिन्न प्रकारो मे प्राय 'मोए'; 'तोए' तथा 'वाए' रूप ले लेता है। इन रूपो का अतिम 'ए' प्रत्यय धातु के साथ दुर्बलतापूर्वक सम्बद्ध रहता है इसलिए सबल प्रत्ययो के जोडे जाने पर यह उन दोनो के बीच मे सन्निविष्ट हो जाता है जैसे 'मू-उ-ऐ' (मुझे भी)। अलीगढ तथा पूर्वी आगरा में पुरुषवाचक सर्वनाम के प्रथम पुरुष का एक यह विशिष्ट रूप मिलता है—'गु' अथवा 'ग्व्' (पु० वा० तथा स० वा०), वि० एक० 'ग्वा'। कर्ता बहु० 'ग्वे', वि० बहु० 'गुनि'।

इसी से सबद्ध 'ग्वा' अथवा "इवा' (यहाँ) है। निश्चयवाचक सर्वनाम रूप की दृष्टि से सबधवाचक सर्वनाम के लगभग समान ही है। अलीगढ तथा पूर्व मे इसका रूप 'जि' (यह) होता है और दक्षिण मे 'जे' (वह)। इसी प्रकार 'झा' शब्द मिलता है जिसका अर्थ स्थानविशेष के अनुसार 'यहाँ' अथवा 'वहाँ' है। एक अन्य शब्द 'तब' का पर्याय 'जब' है जिसका अर्थ 'वहाँ' भी होता है।

मै पहले ही इस वात का उल्लेख कर चुका हूँ कि किस प्रकार कुछ विशेष स्थानों मे सहायक क्रिया का प्रारम्भिक 'ह' विलुप्त हो जाता है। यहाँ दोआव मे मिलने वाले निम्नलिखित रूपो की ओर ध्यान आकृष्ट किया जा सकता है—'नि-ऊ' (मैं नहीं हूँ।), 'त्वै' (रहा है) 'है' के लिए प्रयुक्त होता है और एक लगभग विशुद्ध कनौजी रूप 'हतु-ए' 'वह है' के लिए। निश्चित वर्तमान मे जब क्रिया धातु का 'ह्' विलुप्त होता है तव कभी-कभी यह वर्तमानकालिक कृदत के साथ सयुक्त हो जाता है जैसे 'मरत हू' (मै मरता हूँ) के लिए 'मरतु' मे। पूर्व मे इसका रूप 'मत्तु' भी हो सकता है।

वोलचाल की हिंदोस्तानी मे जो काल सामान्यत वर्तमान सभावनार्थ के अर्थ मे प्रयुक्त होता है व्रजभाखा मे वही सामान्य वर्तमान के अपने मूल अर्थ मे व्यवहृत किया जाता है जैसे 'मारू' ('मै मारता हूँ' तथा 'मै मार सकता हूँ'।) जब इस काल मे क्रिया धातु सयुक्त कर दी जाती है तव निश्चित वर्तमान का एक दूसरा रूप मिलता है यथा 'मारौं हौं' (मै मार रहा हूँ)।

निश्चित वर्तमान तथा अनद्यतनभूत काल बनाने का एक अन्य ढग यह है कि 'ऐ' अथवा 'ए' रूप वाली क्रियार्थक सज्ञा मे उचित सहायक क्रिया जोड दी जाय, यथा 'मारै हौं' अथवा 'मारे हौं' (मै मार रहा हूँ) · 'मारै हौं' अथवा 'मारे हौं' (मै मार रहा था)। सभी वचनो तथा पुरुषो मे 'मारै' अपरिवर्तित रहता है।

पीछे इस वात की ओर ध्यान आकृष्ट किया जा चुका है कि भूतकालिक कृदत का 'य' पूर्व में सामान्यत विलुप्त हो जाता है जब हम कनौजी के निकट पहुँचते है।

कर्ताकारक प्राय अकर्मक क्रियाओ के भूतकालो के साथ प्रयुक्त होता है जैसे (मथुरा) 'लोहरे वेटा-ने चल्यौ' (छोटा पुत्र चला गया।)। यह प्रयोग प्रामाणिक हिंदोस्तानी के विरुद्ध है लेकिन सस्कृत के अनुकूल है। इस क्रिया को अनात्मवाची समझना चाहिए और इस वाक्य का शाब्दिक अर्थ होगा, 'it was gone by the younger son' इसका सस्कृत रूप 'लहुना पुत्रेण चलित' होगा।

इसी प्रकार दृष्टव्य है कि 'कहना' तथा समानार्थी शब्दो के भूतकालिक रूप 'वात' से सामजस्य विठलाने के लिए किस प्रकार स्त्रीलिंग रूप में परिवर्तित किये जाते हैं यथा 'कही' ('उसने कहा'), शाब्दिक अर्थ, 'वात उसके द्वारा कही गयी।'

ब्रजभाखा-व्याकरण की रूपरेखा

१. संज्ञा-रूप

	पुल्लिग		स्त्रीलिग	
	दीर्घ	ह्रस्व	दीर्घ	ह्रस्व
एक०				
कर्ता	घोडा	घर्, घरु	नारी	बात्
विकृत	घोडा, घोडे, घोडै	घर्, घरु	नारी	बात्
बहु०				
कर्ता	घोडा, घोडे, घोडै, घोटे, घोडै	घर, घरु	नारी, नारिया	बातै
विकृत	घोडौं, घोडा, घोडनि, घोडन	घरौं, घरनि, घरन, घरनु	नारियां, नारियनि, नारियन, नारिन्	बातौं, बातनि, बातन

परसर्ग—
कर्ता—ने, नै
कर्म-सम्प्रदान—कु, कृ, कौ, कैं, के
अपादान-करण—सों, सू, तें, ते
सबध—कौ; विकृत पु०, के, स्त्री० की
अधिकरण—मे, मैं, पै, लौं

विशेषण सामान्य पश्चिमी हिंदी की ही भांति होते है, लेकिन दीर्घ पुल्लिग आकारांत शब्द यहां ओकारांत हो जाते है। इनके विकृत रूप एकवचन के रूप 'ऐ' अथवा 'ए' और पुल्लिग बहुवचन के रूप 'ए', 'ए', 'ऐ' या 'ऐ' प्रत्यांत होते है।

सर्वनाम

	मैं	तू	वह (पु० वा०) यह (संकेत वा०)	यह	कौन	वह (संकेत वा०)	कौन ? (प्रश्न वा०)	क्या ? (प्रश्न वा०)
एक० कर्ता	मैं, हौं, हा	तू, तैं, तें	वो, वह, वुह	यह, यिह	जो, जौन	सो, तौन	को, कौ, कौन	कहा, का
विकृत	मो, मुज, मोहि, मुहि	तो, तुज, तोहि, तुहि	विस, वा, वाहि	इस, या, याहि	जिस, जा, जाहि	तिस, ता, ताहि	किस, का, काहि	काहे
कर्म-सम्प्रदान	मोहि, मुहि, मोए, माए, मोऊ, मो	तोहि, तुहि, तोए, तोय, तोऊ, तो	वाहि, वाए, वाय, विसे	याहि, याए, याय, इसे	जाहि, जाए, जाय जिसे	ताहि, ताए, ताय, तिसे	काहि, काए, काय, किसे	...
संबंध	मेरो, मेर्‌यो	तेरो, तेर्‌यो	...	...	जासु	तासु	...	...
बहु० कर्ता	हम	तुम	वे, वै	ये, यै	जो	सो, ते	को, कौ	...
विकृत	हम, हमों, हमनि, हमन	तुम, तुम्हों	उनि, उन, उन्हों, विनि, विन, विन्हों	इनि, इन, इन्हों	जिनि, जिन्, जिन्हों	तिनि, तिन्, तिन्हों	किनि, किन्, किन्हों	...
कर्म-सम्प्रदान	हमें	तुम्हें	उन्हें, विन्हें	इन्हें, इहें	जिन्हें	तिन्हें	किन्हें	...
संबंध	हमारो, हमार्‌यो	तुम्हारो, तुम्हार्‌यो, तिहारो, तिहार्‌यो	...	...	...	...	...	...

उपर्युक्त सभी में, विशेषत उत्तम तथा मध्यम पुरुषों में बहुवचन एकवचन के लिए प्रयुक्त हो सकता है। 'वह' की शब्दरूपावली में 'व्' प्राय 'व्' से स्थानांतरित हो जाता है यथा 'वो', 'वुह', 'विस', 'वा' आदि। इसी प्रकार 'यह' में प्रारंभिक 'य्' के स्थान पर 'ज्' आ जाता है जैसे 'जह्', 'जि', 'जिस', 'जा', और 'जाय'। 'कोई' के अतिरिक्त 'कोऊ', 'कोय' भी हैं, विकृत रूप 'काहू' है। 'कछु' विकृत रूप में परिवर्तित नहीं होता। 'आप' का संबंधसूचक 'अपनो' है।

२ क्रिया-रूप—क सहायक क्रियाएँ तथा अस्तित्वसूचक क्रियाएँ

वर्तमान—'मैं हूँ'।

	एक०	बहु०
१	हौ	हैं
२	है	हौ
३	है	हैं

भूत—'मैं था।' एक० पु० 'हौ, हो', स्त्री० 'ही', बहु० पु० 'हे' अथवा 'हे', स्त्री० 'ही'। भूतकाल मे कनौजी के समान 'हुतौ, हुती, हुते, हुती' रूप भी मिलते हैं। इनमे पुरुष की दृष्टि से कोई परिवर्तन नही होता।

ख. कर्तृवाच्य

क्रियार्थक सज्ञा (Infinitive)—'मारन्, मारनौ' अथवा 'मारनौं', वि० 'मारने' अथवा 'मारनै', 'मारिबौ' अथवा 'मारिबौं'', वि० 'मारिबे' अथवा 'मारिबै' (मारना)। 'मारिबौ' के स्थान पर प्राय 'मारबौ' मिलता है।

वर्तमानकालिक कृदत—'मारतु, मारत' (मारते हुए)।
भूतकालिक कृदत—'मार्यौ' (मारा हुआ)।
यौगिक कृदत—'मारि, मारि कै, मारि करि' (मार कर के)। इन सभी शब्दो ('कै' के अतिरिक्त) की अतिम 'इ' कभी-कभी विलुप्त हो जाती है और कभी-कभी 'कै' के स्थान पर 'के' हो जाता है।

			भविष्यत्—'मैं मारूँगा।'	
	एक०	बहु०	एक०	बहु०
१	मारौं, मारू	मारें, मारहि	मारिहौं, मारैहों, मारौंगो, मारूँगो	मारिहैं, मारैहैं, मारैंगे
२.	मारै, मारहि	मारौ, मारहु	मारिहै, मारैहै, मारैगो	मारिहौ, मारैहौ, मारौगे
३.	मारै, मारहि	मारैं, मारहिं	मारिहै, मारैहै, मारैगो	मारिहैं, मारैहैं, मारैंगे

आज्ञार्थ—'मार, मारहि, मारि' (तू मार), 'मारौ' (तुम मारो), 'मारियो, मारिये, मारिजै' (कृपया मारें)। अन्य काल साहित्यिक हिंदी के सादृश्य पर ही बनते हैं। फिर भी गृहीत काल नीचे देखिए।

ग. अनियमित क्रियाएँ

'होनौ' (होना)। क्रियार्थक संज्ञा (Infinitive)—'होनौ' अथवा 'हौबौ', भूतकालिक कृदंत—'भयौ' (पु० वि० 'भये' अथवा 'भए', स्त्री० 'भयी' अथवा 'भई'); यौगिक कृदंत, 'ह्वै, ह्वै-कैं' आदि, वर्तमान 'होऊँ' आदि, भविष्यत् 'ह्वैहौं, होउँहौं, होउँगो' आदि। शेष रूप नियमानुकूल ही चलते हैं, केवल मध्यम पुरुष बहुवचन भविष्यत् का रूप 'होगे' हो सकता है और भूतकालिक कृदंत का रूप कभी-कभी 'हूत' होता है।

'देनौ' (देना)। क्रियार्थक संज्ञा (Infinitive)—'देनौ' अथवा 'देबौ', भूतकालिक कृदंत—'दियौ' अथवा 'दयौ' (पु० वि० 'दये, दए', स्त्री० 'दयी' अथवा 'दई', अथवा 'दीन्हौ' अथवा 'दीनौ'); वर्तमान 'देउँ' आदि, भविष्यत् 'देहौं, देऊँगो' आदि।

'लेनौ' (लेना)। इसके सभी रूप 'देनौ' के समान हैं।

'ठाननौ' (ठानना)। भूतकालिक कृदंत—'ठयौ' (पु० वि० 'ठये, ठए', स्त्री० 'ठयी, ठई')।

'करनौ' (करना)। क्रियार्थक संज्ञा (Infinitive)—वैकल्पिक रूप 'कीनौ'; भूतकालिक कृदत—'कर्यौ, कियौ, कीन्हौं' अथवा 'कीनौ', 'कै-कै' अथवा 'करि-कै', भविष्यत्—'करिहौं' अथवा 'कैहौं'।

'जानौ (जाना)। भूतकालिक कृदत—'गयौ' (पु० वि० 'गये' अथवा 'गए', स्त्री० 'गयी' अथवा 'गई'।

घ कर्मवाच्य—यह सामान्यतया प्रामाणिक हिंदी के समान ही 'जानौ' के साथ भूतकालिक कृदत का सयोग करके बनाया जाता है। कभी-कभी धातु मे 'इयै' लगाकर भी कर्मवाच्य बनाया जाता है जैसे 'मारियै' (वह मारा जा रहा है)।

(ङ) ग्रहीत काल—निश्चित वर्तमान (Definite Present) का द्योतन करने के लिए कभी-कभी ब्रजभाखा राजस्थानी के नियमो का व्यवहार करती है। ऐसे स्थानो पर सामान्य वर्तमानकाल के साथ वर्तमानकालिक कृदत की अपेक्षा क्रिया धातु का प्रयोग होता है। इस प्रकार 'मारतु हौं' आदि के स्थान पर निम्नलिखित रूप होते हैं—

	एक०	बहु०
१.	मारौ हौं	मारैं हैं
२	मारे है	मारौ हौ
३	मारै है	मारैं हैं

८. णिजंत—यह क्रिया के रूपो में 'आव' प्रत्यय जोड कर बनाया जाता है लेकिन दोहरे णिजत में 'वाव' अथवा 'वा' लगता है। इस प्रकार 'चलनौ' के लिए 'चलावनौ' तथा दोहरे णिजत के रूप मे 'चलवावनौं' अथवा 'चलवानौं' होगा। कभी-कभी 'आव' ह्रस्व 'व' मे परिणत हो जाता है। ऐसी स्थिति में 'पुजावै' अथवा 'पुजवै' रूप होते हैं। भूतकालिक कृदत मे अतिम 'व' प्राय विलुप्त हो जाता है यथा 'वुलायौ' ('वुलवायौ' के लिए) (उसने वुलाया)।

कनौजी

बोली का नाम

कनौजी का नामकरण कनौज नगर के नाम पर हुआ है जो गगा के तट पर फर्रुखाबाद ज़िले मे स्थित है। प्राचीन काल मे यह अत्यत प्रसिद्ध नगर था। 'कनौज' शब्द वास्तव में कान्यकुब्ज का विकसित रूप है। 'रामायण' में भी इस नगर का उल्लेख मिलता है और प्रारभिक अरब भूगोल ज्ञाताओ ने भी भारत के प्रमुख नगर के रूप मे इसकी चर्चा की है। ५ वी शताब्दी के मध्य मे यह राठौर राजपूतो के अधिकार मे आ गया। इस राज्य का पाँचवा शासक जयचद था जो चन्दवरदाई के महाकाव्य का एक प्रमुख पात्र है। सन् ११९३–९४ मे जयचद मुसलमानो द्वारा पराजित हुआ और कनौज भारत के मुसलमान साम्राज्य का एक भाग वन गया। प्राचीन युग मे इस प्रतिष्ठित प्रदेश के नाम को अधीनस्थ तथा निकटवर्ती क्षेत्रो ने अपने नाम के साथ सयुक्त किया। कनौजी से वास्तव मे कनौज के इस पुराने साम्राज्य की वोली से ही अभिप्राय है।

बोली का प्रदेश

आजकल शुद्ध कनौजी दोआव के इटावा एव फर्रुखाबाद तथा गगा के उत्तर मे स्थित शाहजहाँपुर ज़िले मे वोली जाती है। कानपुर तथा हरदोई ज़िलो मे भी कनौजी का प्रचलन है लेकिन हरदोई में पूर्वी हिंदी की उपभाषा अवधी से इसका थोडा-वहुत सम्मिश्रण (स्थानविशेष के अनुसार) होने लगता है। इसी प्रकार कानपुर मे कनौजी पर अवधी के अतिरिक्त वुदेली का भी प्रभाव दृष्टिगत होता है। शाहजहाँपुर के उत्तर मे स्थित पीलीभीत की वोली भी कनौजी ही है लेकिन यहाँ व्रजभाखा का सम्मिश्रण होने लगता है।

भाषागत सीमाएँ

कनौजी के पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम मे व्रजभाखा और दक्षिण में वुदेली का क्षेत्र है। कनौजी के समान ही दोनो पश्चिमी हिंदी की वोलियाँ है। इसके पूर्व तथा उत्तर-पूर्व में पूर्वी हिंदी की अवधी उपभाषा का व्यवहार होता है।

विभिन्न वोलियाँ

कनौजी का क्षेत्र वहुत विस्तृत नही है और सीमाओ पर यह पडोसी वोलियो से पर्याप्त रूप मे प्रभावित है। विशुद्ध कनौजी के क्षेत्रमे भिन्नताएँ कम ही है जिनमे से

से अरबी तथा फारसी मे लिखने वाले अधिकतर मुसलमान लेखक थे लेकिन जनभाषा मे लिखने वाले हिंदू तथा मुसलमान लेखको की भी कमी नही थी।

टिकमपुर अथवा टिकवनपुर नगर कानपुर ज़िले में है। यहाँ १७ वी शताब्दी के मध्य मे चार भाई साहित्य के क्षेत्र में प्रसिद्ध हुए—चितामणि त्रिपाठी, मतिराम त्रिपाठी भूखन त्रिपाठी तथा नीलकठ त्रिपाठी। इन लेखको की विद्वता तथा इनके काव्य-सौष्ठव की ख्याति आज भी है।

पुस्तक-सूची

कनौजी से सवद्ध जो अकेली पुस्तक मैंने देखी है वह श्री केलॉगकृत हिंदी व्याकरण है। श्रीरामपुर मिशनरियो ने सन् १८२१ मे 'न्यू टेस्टामेंट' का एक कनौजी रूपातर प्रकाशित किया था। इसमें जो कनौजी व्यवहृत हुई है वह अगले पृष्ठोमे वर्णित वोली से भिन्न है।

व्याकरण

जैसा कि पहले कहा गया है, कनौजी मे व्रजभाखा से वहुत कम भिन्नता है। इसमे व्रजभाखा का 'औ' प्रत्यय 'ओ' रूप ले लेता है, यद्यपि यह 'ओ' व्रजभाखा के कुछ रूपो मे विद्यमान है। इसके अतिरिक्त दोनो वोलियो मे सज्ञापदो के अत में 'उ' प्रत्यय जोडा जाता है जव कि वोलचाल की हिंदोस्तानी मे ये व्यजनात होते हैं। यह प्रवृत्ति कनौजी मे सभवत कुछ अधिक सामान्य है। इसमें गगा के उत्तर में कभी-कभी 'उ' की जगह 'इ' प्रत्यय भी प्रयुक्त होता है।

साथ मे दी गयी कनौजी की व्याकरणिक रूपरेखा के सदर्भ में कुछ अतिरिक्त वाते निम्नलिखित हैं—

दूसरी वोलियो के समान कनौजी मे भी दो स्वरो के मध्यवर्ती 'ह्' को विलुप्त करने की प्रवृत्ति है यथा 'कहिहीं' के लिए 'कैह्यौं' प्रामाणिक हिंदी के सवल आकारात तद्भव पुल्लिग विशेषण (कर्ताकारक तथा कृदतोसहित) कनौजी मे ओकारात हो जाते हैं जैसे हि० 'छोटा', कनौजी 'छोटो'। सवल पुल्लिग सज्ञाएँ आकारात होती है और यह 'आ' कुछ स्थितियो में (विशेषत सववधवाचक सज्ञाएँ) विकृत एकवचन में भी 'ए' मे परिणत नही होता, उदाहरणार्थ 'लरिका' (पुत्र)', 'लरिका को' ('लरिके को' नही) (पुत्र का)।

ह्रस्व पुल्लिग तद्भव शब्द जो हिंदी में व्यजनात होते हैं, कनौजी मे वैकल्पित रूप से उकारात हो जाते हैं जैसे हिंदी 'घर' कनौजी 'घर' अथवा 'घरु'। यह 'उ' प्रत्यय विकल्प से विकृत एकवचन रूपो मे सुरक्षित रहता है यथा 'घर को' अथवा 'घरु को'।

कनौजी-व्याकरण की रूपरेखा

१ शब्द–रूप

	पुलिंग		स्त्रीलिंग	
	दीर्घ	ह्रस्व	दीर्घ	ह्रस्व
एक वचन				
कर्त्ता	घोडा,	घर अथवा घरु,	नारी	वात
विकृत	घोडा, घोडे	घर, घरु	नारी	वात
बहुवचन				
कर्त्ता	घोडा, घोडे	घर, घरु	नारीँ	वातेँ
विकृत	घोडन्	घरन्, घरुन, घरनु	नारिन	वातन

परसर्ग—		
कर्त्ता	ने	
कर्म–सम्प्रदान	को, काँ	
अपादान–करण	से, सेती, सन, तेँ, ते, करि, कर-के	
सम्बन्ध	को (विकृत 'के'); स्त्री० की	
अधिकरण	मेँ, मइँ, माँ, मोँ, पर, लोँ	

संज्ञा तथा सर्वनाम शब्दो मे, बहुवचन बनाने के लिए कभी-कभी 'ह्वार' अथवा 'ह्वारु' जोडा जाता है।

कभी-कभी एकवचन के अर्थ मे विकृत बहुवचन उपयुक्त होता है। यथा 'जादा दामन-को। (अधिक मूल्य का)। कभी-कभी 'ओँ' अथवा 'अन्' करण एकवचन के लिए मिलते हैं जैसे 'भूखोँ' अथवा 'भूखन्' (भूख से), तथा अधिकरण के लिए 'ए' का प्रयोग भी मिलता है जैसे 'घरे' (घर मे)।

विशेषण साधारण हिंदी के समान ही होते है, केवल दीर्घ पुलिंग रूपो का अन्त 'आ' की अपेक्षा 'ओ' मे होता है।

सर्वनाम

	मैं	तू	वह (पु), वह (सकेतवाचक)	यह	जो	सो	कौन ?	क्या ?	कोई
एकवचन									
कर्ता	मैं	तू	वहु, वुहि, उहि, वउ, वहु	यहु, यिहु, इहु, यौ, जौ, जहु	जौन, जौनु जो	तौन, तौनु, सो	कौन, कौनु को	कहा, का	कोऊ, कोई कौनौ
विकृत	मो	तो	उहि, वहि, वा	इहि, या	जेहि, जा	तेहि, ता	केहि, का	काहे	कौनौ, किसू
कर्म–सम्प्रदान	मोहि	तोहि	उसे उसइ	इसे, इसइ	जिसे, जिसइ	तिसे, तिसइ	किसे, किसइ	...	. .
सबध	मेरो	तेरो	. .	...	...	...	...	...	...
बहुवचन									
कर्ता	हम	तुम	वे, वइ, वे	जे, जइ	जौन, जो	सो	को	..	. .
विकृत	हम	तुम	उन, उन्हों	इन, इन्हों	जिन, जिन्हों	तिन, तिन्हों	किन	...	...
कर्म–सम्प्रदान	हमें, हमइँ	तुम्हें, तुम्हइँ	उन्हें, उन्हइँ	इन्हें, इन्हइँ	जिन्हें, जिन्हइँ	तिन्हें, तिन्हइँ	किन्हें, किन्हइ	..	. . . .
सबध	हमारो	तुम्हारो	...	...	...	. .	. .	. .	. .

इनगें से किसी भी बहुवचन शब्द मे 'हारू' अथवा 'ह्वारू' जोडा जा सकता है। यथा 'हम-ह्वार' (हमलोग)।

'कुछ भी' के लिए 'कछु' अथवा 'कुछो' 'अव्यय' है।

पुरुषवाचक सर्वनामो मे, बहुवचन का प्रयोग प्राय एकवचन के अर्थ मे होता है।

कर्तृ-विषयक सर्वनाम 'आप' अथवा 'आपु' है, सबध सूचक 'अपन', 'अपनु' अथवा 'अपनो'।

२ क्रिया-रूप क सहायक क्रिआएँ, तथा अस्तित्वसूचक क्रिआएँ

	वतमानकाल, मैं हूँ	
	एकवचन	बहुवचन
१	हूँ	हैं, हैं–गे
२.	है, है–गो	हो, हो–गे
३.	है, है–गो	हैं, हैं–गे

भूतकाल, मे था। 'थो' अथवा 'हतो', स्त्रीलिग 'थी' अथवा 'हती', बहुवचन, 'थे', अथवा 'हते', स्त्री 'थी' अथवा 'हती'। अथवा 'मैं रहो', आदि नीचे 'मारो' की तरह।

ख कर्तृवाच्य—

क्रियार्थक सज्ञा (Infinitive)—'मारन्', 'मारनु', 'मारनो', 'मारिबो' (विकृत 'मारिबे')।

वर्तमानकालिक कृदन्त—'मारत्' अथवा 'मारतु'।

भूतकालिक कृदन्त—'मारो',।

यौगिक कृदन्त—'मार–कें', अथवा 'मारि–कें'।

	वर्तमानकाल बोधक (Indicative) तथा सशयवाचक (Subjunctive)		भविष्यत् काल, मैं मारूँगा	
	एकवचन मैं मारता हूँ	बहुवचन मैं मारूं	एकवचन	बहुवचन
१.	मारों, मारूँ	मारें	मारिहों, मारिहों,मारिहूँ, मारोंगो	मारिहैं, मारेंगे
२.	मारे	मारो	मारिहै, मारेगो	मारिहो, मारोगे
३.	मारे	मारें	मारिहै, मारेगो	मारिहैं, मारेंगे

आज्ञावाचक,—एकवचन 'मार', बहुवचन 'मारो', आदरसूचक, 'मारियो', 'मारियें'। अन्य काल ब्रजभाखा के सदृश ही बनते है, पुलिग शब्द के अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' हो जाता है।

ग. अनियमित क्रियाएँ—

'होन' (होना)। भूतकालिक कृदन्त, 'भयो' अथवा 'भओ'। अन्य रूप नियमित है।

'देन' (देना) तथा 'लेन' (लेना)। भूतकालिक कृदन्त क्रमश 'दओ' तथा 'लओ' है। अन्य रूप नियमित है।

'जान', (जाना)। भूतकालिक कृदन्त 'गयो' अथवा 'गओ'।

'करन' (करना) तथा 'मरन' (मरना) प्राय नियमित होते है। भूतकालिक कृदन्त 'करो' तथा 'मरो' है।

घ. तथा च. ब्रजभाखा के सदृश ही कर्मवाच्य रूप बनते है। इस बोली के समान ही कनौजी भी अपने निश्चित वर्तमान रूप कभी-कभी राजस्थानी से उधार ले लेती है।

बुन्देली अथवा बुन्देलखण्डी

बोली का प्रदेश

जैसा कि नाम से ही पता चलता है, बुन्देलखण्ड प्रदेश की भाषा बुन्देलखण्डी है। 'बुन्देली' का अभिप्राय उस भाषा से है जो बुन्देलो द्वारा बोली जाती है। ये इस प्रदेश के प्रधान निवासी है। भारत के गज़ेटियर के अनुसार बुन्देलखण्ड वह प्रदेश है जो उत्तर में यमुना, उत्तर और पश्चिम मे चम्बल, दक्षिण मे मध्यप्रान्त के जबलपुर तथा सागर खण्ड, तथा दक्षिण और पूर्व में रीवा अथवा बघेलखण्ड और मिर्ज़ापुर की पहाडियो के मध्य स्थित है। राजनीतिक दृष्टि से इस क्षेत्र के अतर्गत ब्रिटिश ज़िले बाँदा, हमीरपुर, जालौन, झाँसी, मध्य भारत की ग्वालियर एजेन्सी का उतना भाग जिसमें ग्वालियर रियासत के देशीय ज़िले आते है, पूरी बुन्देलखण्ड एजेन्सी, तथा बघेलखण्ड एजेन्सी के पश्चिम की ओर का थोडा-सा भाग आता है। जिस क्षेत्र मे बुन्देली बोली जाती है वह उपर्युक्त परिभाषा के बिलकुल अनुरूप नही है। सर्वप्रथम बाँदा ज़िले मे जो बोलियाँ प्रयुक्त होती है वे बुन्देली नही है। वे पूर्वी हिन्दी की बघेली बोली के विकृत रूप है तथा उसी भाषा के साथ उनका विवरण दिया गया है।[1] चबल नदी से ग्वालियर रियासत की उत्तरी और पश्चिमी सीमा बनती है। उत्तर मे बुन्देली न केवल इस नदी तक प्रचलित है किन्तु उस पार आगरा, मैनपुरी तथा इटावा ज़िलो तक इसका विस्तार है, और प्रत्येक ज़िले के दक्षिणी भागो में भी यह बोली जाती है। पश्चिम में यह चबल तक नही फैली है। ग्वालियर के पश्चिमी भाग मे जो भाषाएँ प्रचलित है उनमे ब्रजभाखा तथा राजस्थानी के विभिन्न रूप आते है। दक्षिण में बुन्देलखण्ड साधारणत जानी जाने वाली सीमाओ से कही अधिक दूर तक विस्तृत है। सागर एव दमोह ज़िलो तथा भोपाल के पूर्वी भागो, जो सभी बुन्देलखण्ड एजेन्सी के समान विध्यपठार पर अवस्थित है, मे ही यह नही बोली जाती है वरन् नर्मदा की घाटी मे बसे नरसिंहपुर तथा होशगाबाद जिलो की भी स्थानीय भाषा है। आगे दक्षिण की ओर सतपुडा के पठार पर स्थित सिवनी ज़िले तक इसका क्षेत्र है। इसी पठार पर बालाघाट के लोधियो तथा छिदवाडा जिले के मध्य मे, यह विकृत रूप में बोली जाती है, यहाँ तक कि नागपुर की विस्तृत समभूमि मे भी, एक बडी सख्या मे लोग इस बोली का प्रयोग करते है और नागपुर ज़िले मे लोग मिश्रित बोली का प्रयोग करते सुने जाते है। यहाँ की अपनी बोली मराठी है। मोटे तौर पर हम

१–देखिए खण्ड ६, पृ० १४२ पर तथा आगे।

कह सकते है कि यह लगभग सत्तर लाख (सात मिलियन) लोगो द्वारा व्यवहृत होती है तथा उन्नीस हजार वर्गमील इसका क्षेत्र है।

भाषागत सीमाएँ

इसकी पूर्वी सीमा पर पूर्वी हिंदी की बघेली बोली प्रयुक्त होती है। उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम की ओर निकटत सवद्ध पश्चिमी हिन्दी की कनौजी और व्रजभाखा बोलियाँ हैं। हमीरपुर मे यमुना के दक्षिणी तट पर बघेली का तिरहारी रूप मिलता है, दक्षिण-पश्चिम की ओर राजस्थानी की विभिन्न बोलियाँ है जिनमे 'मालवी' सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। दक्षिण की ओर मराठी का क्षेत्र है। विना किसी जिले की सीमा रेखा के कुछ मिश्रित बोलियो के द्वारा यह पूर्वी हिन्दी, कनौजी, व्रजभाखा तथा राजस्थानी आदि मे धीरे-धीरे विलुप्त हो जाती है। इसका विलय मराठी मे नही होता है, यद्यपि कुछ थोड़ी-सी टूटी-फूटी वोलियाँ है जो इन दोनो भापाओ के यन्त्रवत् मिश्रण है।

विभिन्न बोलियाँ

वुन्देली में साधारणतया समरूपता ही मिलती है। जिस क्षेत्र मे यह वोली जाती है, उसके एक वडे भाग मे एक ही प्रकार का रूप प्रचलित है। इसकी दो-तीन उप-वोलियाँ भी वतलायी गयी है किन्तु यह भेद सर्वथा महत्त्वहीन स्थानीय विशेषताएँ है। तथापि वुन्देली क्षेत्र में उत्तर की ओर ध्यान देने योग्य भाषा के कुछ मध्यवर्ती रूप मिलते हैं, तथा दक्षिण की टूटी-फूटी वोलियाँ भी है। देशवासियो द्वारा स्वीकृत, प्रामाणिक वुन्देली के विभिन्न प्रकारो के नाम पँवारी, लोधान्ती अथवा राठोरा और खरोला है। ग्वालियर रियासत के उत्तर-पूर्व, तथा दतिया और उसके पडोसी स्थानो मे जहाँ पँवार राजपूत अधिक सख्या मे है, पँवारी वोली व्यवहृत होती है। हमीरपुर के राठ परगने तथा जालौन के समीपवर्ती भाग मे, जहाँ लोधी वहुसंख्या मे है, लोधान्ती अथवा राठोरा वोली जाती है। हमीरपुर जिले के केन्द्र तथा राठ परगनो से लगे हुए चरखारी रियासत का वावन चौरासी परगना, सरिया रियासत तथा जिगनी जागीर अवस्थित है। ये सभी राजनीतिक दृष्टि से, वुन्देलखण्ड एजेन्सी के अन्तर्गत आते है। इनमे भी वही वोली प्रयुक्त होती है। खटोला वुन्देली का वह रूप है जो बुन्देलखण्ड एजेन्सी के दक्षिण-पूर्व, तथा वुन्देलखण्ड के निकटवर्ती भाग अर्थात् पन्ना रियासत और उसके पडोस मे वोला जाता है। वोली का यह रूप मध्यप्रान्तस्थित दमोह से सलग्न जिले में भी मिलता है। पूर्व की ओर वनाफरी, कुण्डरी, तथा निभट्टा से मिश्रित वोलियाँ है जो क्रमश पूर्वी हिन्दी मे अतर्भुक्त हो जाती है। पश्चिम की ओर मिश्रित वोली भदौरी है जो व्रजभाखा मे क्रमश परिवर्तित हो जाती है। इनमे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वनाफरी है। यह हमीरपुर ज़िले के दक्षिण-पूर्व तथा वुन्देलखण्ड

एजेन्मी के उत्तर-मध्य तथा पूर्व मे वोली जाती है। यहाँ वनाफर राजपूतो की सख्या अविक है। इनके कृत्यो का कीर्तिगान करने वाला तथा इनकी भाषा मे रचित एक वीर चरित्र सग्रह पूरे उत्तरी भारत मे प्रसिद्ध है। एक स्थान से दूसरे स्थान की वनाफरी उप-वोली कुछ भिन्न है। हमीरपुर की वोली वघेली मुहावरो से इतनी युक्त है कि मुझे इसका विवरण उसी भाषा (खण्ड ६, पृ० १५५ पर और आगे) के अन्तर्गत देना पडा है। वुन्देलखण्ड एजेन्मी की वोली, जिसमें वघेली से मुक्तभाव से उधार-ग्रहण किया गया है, प्रमुख वुन्देली मे आती है और उस पर यहाँ विचार किया गया है।[1] केन नदी के दोनो तटो पर कुण्डरी वोली जाती है। यह नदी वाँदा ज़िले को हमीरपुर से अलग करती है। नदी के वाँदा की ओर वाले भाग मे जो कुण्डरी वोली जाती है, वह वघेली पर आधारित है और इसी भाषा के साथ इसका विवरण दिया गया है (खण्ड ६, पृ० १५२ पर और आगे)। हमीरपुर की वोली मिश्रित है किन्तु उसका आधार वुन्देली ही है और इसीलिए इसका अनुवर्ती पृष्ठो मे वर्णन किया गया है। हमीरपुर ज़िले के उत्तर की ओर एक सिरे से दूसरे सिरे तक यमुना के दक्षिणी तट पर लम्वा-पतला भू-भाग है, जहाँ वघेली पर आधारित एक मिश्रित वोली तिरहारी प्रचलित है। इसका विवरण (खण्ड ६, पृ० १३२ पर और आगे) दिया जा चुका है। तिरहारी जालौन ज़िले के अन्दर तक चली जाती है, जहाँ निभट्टा नामक वुन्देली के एक रूप के द्वारा यह क्रमश ज़िले की प्रामाणिक वुन्देली में घुल-मिल जाती है। भदावरी अथवा तोवँरगढी चवल के किनारो पर भदावर तथा तोवँरगढ मे प्रचलित है। यह नदी ग्वालियर रियासत को इटावा तथा आगरे से अलग करती है। नदी के उत्तर की ओर यह उस भाग मे वोली जाती है जो चम्वल के निकट इन दोनो ज़िलो और मैनपुरी का है। ग्वालियर मे यह सारे ज़िलो में फैली है। इसके पश्चिम तथा पूर्व में व्रजभाखा और राजस्थानी है, उत्तर की ओर पँवारी है (इसका वर्णन दिया जा चुका है) और आगे दक्षिण मे साधारण प्रामाणिक वुन्देली है। प्रामाणिक वुन्देली, जिसमें देशवासी पँवारी, लोधान्ती अथवा खटोला को नही रखते है, जालौन तथा हमीरपुर ज़िलो और वुन्देलखण्ड एजेन्सी के शेप भाग, झाँसी तथा सागर, तथा इनके पूर्व समीपवर्ती ग्वालियर और भोपाल के भागो मे तथा सिवनी, नरसिंहपुर और होशगावाद में वोली जाती है।

दक्षिण की टूटी-फूटी वोलियाँ उत्तर की मिश्रित वोलियो के समान नही हैं क्योकि ये दोनो अलग-अलग दो निकटवर्ती भाषाओ के वीच की कडियाँ नही है। प्रत्येक पक्ष में दो भाषाएँ तो है किन्तु हर युग्म की भाषाएँ परस्पर सम्वद्ध नही है अत. उनका एक

१ वनाफरी का पूर्ण विवरण आगे मिलेगा।

दूसरे मे विलोप नही हो पाता है। इसके स्थान पर टूटी-फूटी बोली मिलती है, जो दो प्रकार की भाषाओ का शुद्ध यन्त्रवत् मिश्रण है। भाषा-भाषी दोनो से ही परिचित हैं। अत वे कभी एक बोली के प्रयोगो का व्यवहार करते है और कभी दूसरी के। प्राय एक विशेष भाव को व्यक्त करने के लिए एक रूप एक बोली का व्यवहृत होता है तो अगले मे दुबारा उसी भाव को दूसरी बोली के प्रयोग के द्वारा द्योतित किया जाता है। इन टूटी-फूटी बोलियो के अन्तर्गत लोधी, कोष्टी, कुम्भारी तथा नागपुरी 'हिन्दी' है। यह प्रधानत मराठी से मिश्रित बुंदेली के तथा सामान्य हिंदोस्तानी से घुली-मिली मध्य छिन्दवाडा की बुन्देली के रूप हैं। लोधी बालाघाट मे बसी हुई लोधी जाति के सदस्यो द्वारा बोली जाती है (उत्तर की लोधान्ती बुन्देली से तुलनीय)। छिन्दवाडा, चाँदा तथा भडारा के कोष्टियो द्वारा कोष्टी प्रयुक्त होती है। छिन्दवाडा तथा बुल्डाना के कुम्भारो द्वारा कुम्भरी बोली जाती है। नागपुर जिले की हिन्दी नागपुरी 'हिन्दी' कहलाती हैं।

भाषा-भाषियो की संख्या

सन् १८९१ की जनगणना पर आधारित बुंदेली के विभिन्न रूपो के बोलने वालो की अनुमानित सख्याएँ निम्नलिखित हैं—

बोली का नाम	स्थान	बोलने वालो की सख्या
प्रामाणिक	झाँसी	६७९ ७००
	जालौन	३६०,१२९
	हमीरपुर	३८४,०००
	दक्षिण-पूर्वी ग्वालियर	२००,०००
	पूर्वी भोपाल	६७,०००
	ओरछा, आदि	३८८,४००
	सागर	५८२,५००
	नरसिंहपुर	३६३,०००
	सिवनी	१९५,०००
	होशगाबाद	३००,०००
	कुल योग, प्रामाणिक	३,५१९,७२९
पँवारी	उत्तर-पूर्वी ग्वालियर	१५०,०००
	दतिया, आदि	२०३,५००
	कुल योग, पँवारी	३५३,५००

वोली का नाम	स्थान	सख्या
लोधान्ती अथवा राठोरा	हमीरपुर	९८,०००
	हमीरपुर मे चरखारी, आदि	३९,५००
	जालौन	८,०००
	कुल योग, लोधान्ती अथवा राठोरा	१४५,५००
खटोला	पन्ना, आदि	५६९,२००
	दमोह	३२२,०००
	कुल योग, खटोला	८९१,२००
प्रामाणिक	वुन्देली के विभिन्न प्रकारो का कुल योग	४,९०९,९२९
उत्तर-पूर्व की मिश्रित वोलियाँ	ऊपर की सख्या	४,९०९,९२९
वनाफरी	उत्तर-पूर्वी वुन्देलखण्ड	२४५,४००
	पश्चिमी वघेलखण्ड	९०,०००
	(हमीरपुर, योगफल में इसके आँकडे नही है।)	५,०००
	वनाफरी, कुलयोग	३३५,४००
कुण्डरी	हमीरपुर	११,०००
निवट्टा	जालौन	१०,२००
	उत्तर की मिश्रित वोलियो का योग	३५६,६००
उत्तर-पश्चिम की मिश्रित वोली		
भदावरी अथवा तोवँरगढी	ग्वालियर	१,०००,०००
	आगरा	२५०,०००
	मैनपुरी	८,०००
	इटावा	५५,०००
	भदावरी, कुलयोग	१,३१३,०००
दक्षिण की टूटी-फूटी वोलियाँ—		
लोधी	वालाघाट	१८,६००
छिंदवाडा वुन्देली	छिंदवाटा	१४५,५००
कोष्टी वोलियाँ		१४,६९२
कुम्भार वोलियाँ		४,९८०
नागपुरी 'हिन्दी'	नागपुर	१०५,९००
	दक्षिण की टूटी-फूटी वोलियो का कुलयोग	१८९,६७२
	वुन्देली के विभिन्न रूपो का कुलयोग	६,८६९,२०१

साहित्य

बुन्देली मे प्रचुर साहित्य है। सर्वप्रथम आल्हा-ऊदल से सबंधित वीर चरित्र काव्य है जो अभी भी पूरे उत्तर भारत में गाया जाता है। यह बनाफरी बोली मे भाटों द्वारा सुरक्षित है। इन वीरो का समय बारहवीं शताब्दी (ई० पू०) का उत्तरार्ध है और उसी समय से इनका पराक्रम काव्य का विषय रहा है। कवि चन्द बरदाई ने, जो अनुश्रुति के अनुसार इनके समकालीन माने जाते हैं अपने प्रसिद्ध महाकाव्य के एक पूरे सर्ग मे महोबा रियासत से पृथ्वीराज के युद्धो का वर्णन किया है। ये वीर इसी रियासत के थे। सुव्यवस्थित बुन्देली साहित्य, जिस प्रकार भारत के विद्वानो को रुचिर लगता है, कम-से-कम अकबर के समय से प्रारभ होता है। वर्नाक्यूलर रीतिशास्त्र के जन्मदाता केशवदास ओरछा रियासत के निवासी और सम्राट् के निकट राजा इन्द्रजीत सिंह के राजदूतस्वरूप थे। यह सोलहवी शताब्दी के अन्तिम काल मे थे, तथा वर्तमान समय तक उनकी कृतियाँ पूरे हिन्दोस्तान मे स्वीकृत प्रामाणिक काव्यालोचना के रूप मे मान्य हैं। उनके बाद बुन्देलखण्ड मे अनेक रीतिशास्त्र रचयिता हुए हैं। यहाँ अनेक विशेषज्ञ हुए जिनकी रचनाएँ आलोचना-कला की दृष्टि से सर्वमान्य है। सभवत, ये दो सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं---बाँदा के पद्माकर भट्ट तथा पन्ना के पजनेस, ये दोनो उन्नीसवीं शती के पूर्वार्ध में थे। ये सभी यह तो बता सकते थे कि कविता कैसे लिखी जानी चाहिए, किन्तु इनमें से कोई भी स्वय उत्कृष्ट मौलिक कवि न था। बुन्देलखण्ड का साहित्यिक वर्ग विश्लेषण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, सृजन की दृष्टि से नही। उल्लेखनीय मौलिक कवियो में केवल प्राणनाथ तथा लाल कवि आते है, ये दोनो अठारहवीं शती के प्रथम चतुर्थांश मे पन्ना के छत्रसाल के दरबार में थे। प्राणनाथ धार्मिक सुधारक थे, जिन्होंने हिन्दू और मुसलमान धर्मों को मिलाने का प्रयत्न किया।

इन्होंने प्रचुर सख्या मे रचनाएँ की तथा विचित्र-सी भाषा मे लिखा जो कि उनके सिद्धान्त के समान ही भारत तथा इस्लाम का मिश्रण थी। उनकी भाषा की वैयाकरणिक रूपरेखा विशुद्ध रूप से वर्नाक्यूलर है तथा शब्दावली फारसी और अरबी से ली गयी है। लाल कवि ने 'छत्र-प्रकाश' लिखा, जिसमे उनके आश्रयदाता छत्रसाल तथा उनके पिता चम्पतराय के जीवन का विवरण है। भारतीयो के लिए एक भारतीय द्वारा रचित अल्पसख्यक मौलिक ऐतिहासिक कृतियो में से एक होने के कारण यह उल्लेखनीय है।

पुस्तक–सूची

लीच, मेजर आर०, सी० बी०—Notes on, and a short Vocabulary of the Hinduvee Dialect of Bundelkhand Journal

of the Asiatic Society of Bengal, Vol xii, 1843, pp. 1086, and ff. इसमे सक्षिप्त व्याकरण तथा पूर्ण शब्दावली है।

स्मिथ, वी० ए०,—Popular Songs of the Hamirpur District in Bundelkhand, N. W. P. Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol xiv, 1875, Pt I, pp. 389 and ff.

स्मिथ, वी० ए०,—Popular Songs of the Hamirpur District in Bundelkhand, N W. P. No. II ib, Vol xlv, 1876, Pt. I, pp. 279 and ff

श्री विंसेण्ट स्मिथ की कृपा से मुझे लोकप्रिय बुन्देली गीतो का हस्तलिखित सग्रह एव बोली के व्याकरण से सवलित टीकामाला प्राप्त हुई है। परवर्ती पृष्ठो मे इनका उपयोग किया गया है।

लिपि

हिन्दोस्तान मे जैसा कि अन्यत्र भी है, बुन्देली लिखने के लिए नागरी लिपि तथा दूसरी सजातीय कैथी लिपि का प्रयोग होता है।

शब्दावली

बुन्देली के शब्द-भंडार में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनका उल्लेख साधारण कोशो मे नही मिलता है। इनमे से कुछ उदाहरणों तथा शब्दो और वाक्यो की प्रामाणिक सूची मे मिलेगे। इनके अतिरिक्त मैं बुन्देलखण्ड गजेटियर से कुछ शब्द नीचे दे रहा हूँ —

बाबा, बडे बाबा	—	पिता का पिता
दाई	—	पिता की माँ
दादा, भाऊ, भैया, बापू	—	पिता
दीदी, अइया, माई	—	माता
दादू	—	चाचा
ककिही	—	चाची (दादू की पत्नी)
भैया, दाऊ, दादा, नाना	—	बडा भाई
भौजी, भौंजी	—	बडे भाई की पत्नी
लहुरी, गुट्ई	—	छोटे भाई की पत्नी
दुलहन, लुगाई, महरिया, बसही, जुरुआ, गोटानी	—	पत्नी

पुल्लिग तद्भव शब्द,[२] जिनका हिन्दोस्तानी मे 'आ' से अन्त होता है, बुन्देली मे प्राय 'ओ' से अन्त होते हैं। इस प्रकार, हिन्दोस्तानी, 'घोडा', किन्तु बुन्देली, 'घोरो' (घोडा)। मुझे सबधसूचक कुछ सज्ञा शब्द ही इसके अपवाद रूप मे मिले है, जैसे दद्दा (पिता), मोडा (पुत्र), कक्का (चाचा), तथा 'घुरवा' की तरह दीर्घ रूप।

स्त्रीलिग मे प्रामाणिक हिन्दोस्तानी 'इन्' की जगह प्राय 'नी' मिलता है जैसे 'तेलनी' (तेली की पत्नी), लेकिन हिन्दोस्तानी रूप 'तेलिन' है। यही स्थिति 'हुरकिनी' (गणिका) शब्द की है।

इसके सज्ञा-रूप हिन्दोस्तानी से बहुत कुछ मिलते है। 'ओ'-अत्य पुल्लिग तद्भव शब्दो का विकृत रूप एकवचन रूप तथा सामान्यत कर्ताकारक बहुवचन रूप प्राय. 'ए'–अत्य होता है। विकृत बहुवचन 'अन्' मे समाप्त होते है। इस प्रकार 'घोरो' (घोडा) के निम्नाकित रूप मिलते हैं—

	एकवचन	बहुवचन
सामान्य	घोरो	घोरे
विकृत	घोरे	घोरन्

अन्य पुल्लिग सज्ञा शब्द एक वचन, तथा कर्ता बहुवचन मे परिवर्तित नही होते हैं किन्तु 'अन्' जोडकर विकृत बहुवचन रूप बनते है। यह सामान्य नियम है, किन्तु 'आ' अन्त वाले कुछ सज्ञा शब्दो मे कर्त्ता बहुवचन रूप 'आँ' अथवा 'अन्' भी जोडकर बनते है यथा 'हिन्ना' (हिरन), कर्त्ता बहुवचन, 'हिन्नाँ', 'कुत्ता', कर्त्ता तथा विकृत बहुवचन 'कुत्तन्'। 'इया' मे होनेवाले स्त्रीलिग दीर्घ रूपो मे 'इयाँ' जोडकर कर्त्ता बहुवचन तथा 'इयन' जोडकर विकृत बहुवचन बनाते हैं। अन्य स्त्रीलिग सज्ञा शब्दो मे 'एँ'

परिवर्तनकारी। पूर्वी बोलियो जैसे बिहारी में एक ही संज्ञा के चारों रूप प्राय. मिलते है, किंतु जितनी जानकारी है उसके आधार पर अधिक पश्चिम की बोलियो में इस प्रकार के उदाहरणो में लिखित प्रमाण प्राप्त नहीं है। यद्यपि यह रूप ग्राम-निवासियो की बोलचाल में संभवतः रहते है। इन विभिन्न रूपों के उदाहरण मैं बिहारी से दे सकता हूँ–(weak) ह्रस्व रूप, 'घोर', (घोड़ा) : (strong) ह्रस्व रूप 'घोरा' (घोडा) दीर्घ रूप 'घोरवा', (घोड़ा) अतिरिक्त रूप, घोरौवा, (घोड़ा)।

२. तद्भव शब्द वह है, जो विकास की विधिवत् प्रक्रिया के अनुसार प्राचीन सस्कृत से, प्राकृत में होकर आधुनिक भारतीय-आर्य भाषाओ में आता है। तत्सम शब्द उसे कहते है जो बाद में शब्दावली की किसी वास्तविक अथवा काल्पनिक कमी को पूरा करने के लिए सीधे संस्कृत से लिया जाता है।

जोड़कर कर्ता वहुवचन वनाते है, अथवा यदि उनके अन्त मे 'ई' होता है तो 'ईं' जुडता है, तथा विकृत वहुवचन में 'अन्' अथवा 'इन्' जुटता हे। सभी स्त्रीलिंग सज्ञा शब्द एकवचन में अपरिवर्तित रहते है। नमूनो से लिये गये इन रूपों के उदाहरण निम्नलिखित है—

एकवचन		वहुवचन	
मूल	विकृत	मूल	विकृत
लोरो, छोटा	लोरो	लोरो	लोरोन्
दद्दा, पिता	दद्दा	दद्दा	दद्दन्
कु-करम्, वुरा कर्म	कु-करम्	कु-करम्	कु-करमन्
चाकर, नौकर	चाकर्	चाकर्	चाकरन्
साँड, वैल	साँड्	साँडन्	साँडन्
रहाइया, रहनेवाला	रहाइया	रहाइया	रहाइयन्
नुगरिआ, उँगली	नुगरिया	नुगरियाँ	नुगरियन्
हुरकिनी, गणिका	हुरकिनीं	हुरकिनीं	हुरकिनिन्
गतकी, अँगूठा	गतकी	गतकीं	गतकिन्

कभी-कभी हमे सामान्य हिन्दोस्तानी रूप भी मिल जाते है, जैसे 'वातें', 'हेतिओं–के–सग, (मित्रो के साथ), 'पाओं–में' (पैर मे)। 'घरे' (घर मे), 'भूखन्–के–मारे' (भूख के कारण) आदि रूप द्रष्टव्य है।

जैसा कि सामान्यत होता है, परसर्ग द्वारा कारक वनाते है। प्रमुख निम्नलिखित है। कर्त्ताकारक का चिन्ह 'ने' अथवा 'नें' है। कर्म तथा सम्प्रदान कारको के 'कों' अथवा 'खों', अपादान का 'से', 'सें', अथवा 'सो', अधिकरण का 'मै' अथवा 'में' है। 'लैं' अथवा 'लानें' 'लिए' के अर्थ मे आता है। सवधकारक का सामान्य परसर्ग 'कों' है, विकृत पुल्लिग, 'के', स्त्रीलिंग मूल तथा विकृत 'की'। विकृत सवधकारक रूप वनाने के लिए अन्त्याक्षर 'खो' भी स्पष्टत कभी-कभी आता है, जैसे 'ता-खो– पीछें', (उनके पीछे) मे।

एक उदाहरण मे ('नाच–के–वोल सुनो', उसने नाच की ध्वनि सुनी), मूल के स्थान पर विकृत सवधकारक प्रयुक्त हुआ है किन्तु इन शब्दो में लेखक की गलती हो सकती है, और सभावना भी इसी की है। 'के' अथवा 'सुनो' में से एक गलत होगा।

सवधकारक के परसर्गों के सदृश ही 'ओ' वाले तद्भव विशेषण वदलते है। पुल्लिग विकृत 'ए' में अन्त होते है, तथा उनके स्त्रीलिंग, मूल तथा विकृत 'ई' में। इस प्रकार, 'सवरो' (सव); विकृत पु० 'सवरे', स्त्री० 'सवरी'। उत्तम तथा मध्यम पुरुप सर्वनामो के रूप नीचे दिये गये है —

दीदी	—	बहन
बिटिया, बुईया, छोनी	—	पुत्री
लाला, दादू, छौना, बूआ	—	पुत्र
फुवा बुवा	—	माता की बहन
जीजा	—	बहन का पति
पाहुन, नात	—	जामाता
सार, सारो	—	पत्नी का भाई
सहो, राउत, महतो	—	श्वसुर
भानिज, भैने	—	बहन का पुत्र
गरइ, लोटिया	—	लोटा
गेड्वा, झारी, करोरा	—	टोंटीदार लोटा
थरिया, थार, टाठी	—	थाली
बटुवा	—	पानी रखने का पीतल का पात्र (हि० बटलोहा)
खोरा, खोरवा, खोरिया, बेलिया	—	प्याला (हि० कटोरा)
कोपरी	—	बड़ी पीतल की प्लेट (हि० परात)
चम्बू	—	पीतल का प्याला (हि० बेला)
कलसा	—	पीतल का जल-पात्र (हि० गगरी)
तमेहरा	—	ताँबे का जल-पात्र
करहिया	—	लोहे का एक पात्र
गँगल	—	मिट्टी का पात्र (हि० कारादार गगरा)
पनडव्वा	—	पान का डिव्बा
मनर्सी		(हि० सँड़सी)

व्याकरण

बुन्देली व्याकरण की निम्नलिखित रूपरेखा उदाहरणो को समझने के लिए पर्याप्त होगी।

उच्चारण—जब 'ए' तथा 'ओ' ह्रस्व किये जाते हैं तो वे क्रमश 'इ' तथा 'उ' हो जाते है। उदाहरण स्वरूप 'बेटी' (पुत्री) से 'बिटिया' तथा 'घोरो' (घोड़ा) से 'घुरवा' मिलते है, अधिक पूर्व की भाषाओ के समान 'बेटिया' तथा 'घोरवा' नहीं। बुन्देली में ह्रस्व 'ऐ' तथा 'ओ' स्वरो के अस्तित्व का प्रमाण मुझे नही मिला है। यह संभव है कि 'ऐ' 'कतेक' (कितने) जैसे शब्दो में प्रयुक्त होता हो। सयुक्त स्वर 'अइ'

'ए' के साथ तथा 'अउ' का 'ओ' के साथ साधारणतया भ्रम हो जाता है। उदाहरणों के आधार पर 'ए' तथा 'ओ' सर्वाधिक प्रचलित उच्चारण ज्ञात होते हैं यथा 'कइहौं' के स्थान पर 'केहौं' (मैं कहूँगा), 'जेहे' तथा 'जइहे' भी (तू जाएगा) तथा 'औंर' के लिए 'ओर' प्राप्त होते हैं। व्याकरण की इस रूपरेखा में जब दोनों प्रकार के उच्चारणों के प्रमाण मिलते हैं, तो मैंने क्रमश 'ए' तथा 'ओ' लिखा है क्योंकि यह तो विदित ही है कि जब ये अन्त्याक्षर के भाग होंगे तो 'अइ' तथा 'अउ' भी क्रमानुसार लिखे जा सकते हैं। अन्य स्वर भी अनियमित रूप से बदलते रहते हैं। अतएव 'बिरोबर' (बराबर) में 'अ' के स्थान पर 'इ' मिलता है तथा 'रायी', वह, स्त्री० (रही) में 'अ' दीर्घ हो जाता है। इसी प्रकार समुच्चयबोधक अव्यय 'कि' के अर्थ में 'कि' 'कीं' तथा 'के' आदि सभी का समान रूप से प्रयोग होता है।

व्यजनों में ('ड्') वर्ण की जगह प्राय 'र्' प्रयुक्त होता है जैसे 'परो' (वह गिरा), 'दौंर-के' (दौड कर) तथा 'घुरवा' (घोड़ा)। 'हकीगत' (सच्चाई) शब्द में 'क्' के स्थान पर 'ग्' प्रयुक्त हुआ है। मध्यवर्ती 'ह्' का निरंतर लोप इसकी सर्वाधिक प्रमुख विशेषता है जैसे 'कही' (उसने कहा) कि लिए 'कई' अथवा 'कयी', 'रहन्' (रहना) के लिए 'रन', 'कहावे–के–लाइक' (कहने योग्य) की जगह 'कुआवे–के–लाक', 'पहिरा देओ' (पहना दो) के स्थान पर 'पैरा देओ' प्रयोग मिलते हैं। जब 'ह्' के पहले दीर्घ 'आ' आता है तो आगे का 'अ' 'उ' में बदल जाता है, जैसे 'चाहत' (चाहना) के स्थान पर 'चाउत' तथा 'रहि–के' का रूप 'रइ–के' हो जाता है। इसी क्रिया के अन्य रूप 'रतीं–हैं', वे स्त्री० (रहना), तथा 'रओ–तो' (वह रहा था)। इसी सबध में, 'बहुत' (अधिक) के लिए 'भौत' रूप द्रष्टव्य हैं। प्रारभ में य्' नही मिलता है और उसके स्थान पर 'ज्' प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार प्रारंभिक 'व्' का स्थान 'ब्' ले लेता है। अत 'यह' के लिए 'जो' तथा 'वह' के लिए 'बो' मिलते हैं।

शब्द-रूप—सज्ञा के दीर्घ रूपों का प्रयोग सामान्यत लघुत्वार्थक अथवा अनादर-सूचक भाव को व्यक्त करने के लिए होता है। अधिकाश पुल्लिग दीर्घ रूपों का अन्त 'वा' से होता है तथा स्त्रीलिंग का 'या' मे। इस प्रकार, हमें दोनों ही रूप मिलते हैं—'घोरो' तथा अधिक प्रचलित रूप 'घुरवा' (घोडा), 'बेटी', तथा 'बिटिया' (पुत्री) भी। हमें कुछ अतिरिक्त रूप भी प्राय मिल जाते है, जैसे 'बिलइवा' (बिल्ली) तथा 'चिरइवा' (चिडिया) मे 'अइवा'।[1]

१. **सैद्धान्तिक दृष्टि से, प्रत्येक भारतीय-आर्य संज्ञा के तीन रूप हो सकते हैं—ह्रस्व, दीर्घ तथा अतिरिक्त। ह्रस्व रूप या तो परिवर्तनहीन (weak) हो सकते है या**

एकवचन		
कर्ताकारक	मे, मे, मैं	तूँ, तैं
अभिकर्ता	मैं—ने	तैं—ने
सबंध	मो—को, मेरो, मोरो, मोवो	तो-को, तेरो, तोरो, तोनो
विकृत	मोय, मोए, मो	तोय, तोए, तो
बहुवचन		
कर्ता	हम	तुम
सबंध	हम-को, हमारो, हमाओ	तुम-को, तुमारो, तुमाओ
विकृत	हम	तुम

वह (he), वह (that) के लिए 'वो' अथवा 'ऊँ' तथा वह (she) के लिए 'वा' प्रयुक्त होते हैं। दोनो का विकृत एकवचन 'वा', 'ऊ', 'ऊँ' अथवा 'ता' है। 'उसको' के लिए 'वे' अथवा 'वाए' है। कर्ता बहुवचन 'वे', तथा विकृत बहुवचन 'विन' अथवा 'उन' है। उदाहरणो द्वारा ये सभी रूप प्रमाणित होते है। अन्य रूपो के होने की सभावना है।

'यह' तथा 'कौन' दोनो के लिए ही 'जो' (स्त्री० 'जा') है, विकृत एकवचन 'जा', कर्त्ता बहुवचन 'जे'। विकृत बहुवचन का कोई रूप उदाहरणो मे नही मिलता है। 'यह' के लिए 'ए' भी है, जिसका विकृत बहुवचन 'इन' है। 'आप' आदरसूचक है, जिसका सम्प्रदान 'अपन-खो' है तथा 'अपना' के लिए 'अपनो' है। इन सभी सबंधसूचक शब्दो मे सामान्य रूप-परिवर्तन होते है जैसे 'मेरो' का स्त्रीलिंग 'मेरी' तथा 'अपनो' का 'अपनी' है।

'का', विकृत 'काये' का अर्थ 'क्या ?' है, 'कोऊ', विकृत 'काऊ' का अर्थ 'कोई भी'; 'कछू', कुछ भी, 'कतेक', 'कितेक' अथवा 'कै' का अर्थ 'कितने' है।

क्रिया-रूप

क—सहायक क्रियाएँ तथा अस्तित्वसूचक क्रियाएँ

वर्तमान काल, मैं हूँ			भूतकाल, मैं था			
एकवचन	बहुवचन		एकवचन		बहुवचन	
			पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
१ हों, आऊँ अथवा आंव	हैं,	आंय	हतो, तो	हती, ती	हते, ते	हतीं, तीं
२ है, आय	हो,	आव	हतो, तो	हती, ती	हते, ते	हतीं, तीं
३ है, आय	हैं,	आंय	हतो, तो	हती, ती	हते, ते	हतीं, तीं

अन्य रूप इस प्रकार हैं—"हहों", अथवा 'होऊँ—गो,' मै होऊँगा, 'हुए' (यह हो सकता है।), 'भओ'; स्त्रीलिंग 'भयी', पुल्लिंग बहुवचन 'भये', (वह हुआ); 'नैयाँ' (मै नही हूँ), 'नैंया' (वह नही है।) तथा इसी प्रकार अन्य रूप चलते है, 'भएँ ना चहिये' (होना नही चाहिए)।

ख—कर्तृवाच्य—'मारन', (मारना)। क्रियार्थक सज्ञा (Infinitive) तथा क्रियार्थक सज्ञा (Verbal Noun) 'मारन' तथा 'मारबो', विकृत 'मारबे', 'मारें' भी। वर्तमानकालिक कृदत, 'मारत'। भूतकालिक कृदन्त, 'मारो'।

	वर्तमानकालिक सशयवाचक क्रिया, 'मैं मारूँ'		भविष्यत्काल, 'मैं मारूँगा'	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
१	मारूँ	मारें	मारिहों	मारिहे
२	मारे	मारो	मारिहे	मारिहों
३	मारे	मारें	मारिहे	मारिहें

भविष्यत् में 'ई' की जगह 'अ' स्वर प्राय आता है, जैसे, 'मारहों'। वर्तमान सशयवाचक क्रिया में 'गो' जोडकर भविष्यत् का एक अन्य रूप भी बनाया जाता है। लिंग तथा वचन के साथ 'गो' में परिवर्तन होता है। उदाहरणार्थ—

	एकवचन		बहुवचन	
	पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
उत्तम पुरुष	मारूँ—गो	मारूँ—गी	मारें—गे	मारें—गी

इसी प्रकार अन्य पुरुषो मे भी रूप चलते हैं।

निश्चित् वर्तमान 'मारत-हों' अथवा 'मारत-आँव' (मैं मार रहा हूँ) सहायक क्रिया का प्रयोग प्राय नही होता है, क्योंकि अकेले वर्तमानकालिक कृदन्त ही सब पुरुषो तथा वचनो के लिए आता है।

अपूर्णकाल, 'मारत-हतो', अथवा 'मारत—तो' आदि, (मैं मार रहा था) सहायक क्रिया कर्त्ता के लिंग तथा वचन के अनुसार बदलती है।

आज्ञावाचक—वर्तमानकालिक सशयवाचक और यह एक ही हैं, केवल मध्यम पुरुष एक वचन 'मार' होता है।

भूतकालिक कृदन्त से रूपान्तरित काल—सकर्मक क्रियाओ में हिन्दोस्तानी के बिलकुल अनुरूप कर्मवाच्य में काल बनते हैं, कर्त्ताकारक में 'कर्ता' के साथ 'ने' रहता है, जैसे, 'मैं—ने मारो', (मैंने मारा); 'मैं—ने मारो—तो', (मैंने मारा था)।

अनियमितताएँ

जिन क्रियाओ की धातु 'आ'-अत्य होती है, उनके वर्तमानकालिक कृदत रूप प्राय. 'आत्' में वनते है, जैसे, 'जात', (जा रहा)। तथापि, कुछ के वीच मे 'उ' भी आ जाता है। जैसे 'चाउत' (चाहते हुए), 'आउत' (आते हुए)। इसी तरह 'राउत' भी है। 'देन' (देना) तथा 'लेन्' (लेना) से 'देत' तथा 'लेत' वनते है।

'करन्' (करना) क्रिया का भूतकालिक कृदन्त विधिवत् वनता है जैसे 'करो'।

'देन्' (देना) का भूतकालिक कृदन्त 'दओ' है; 'लेन्' (लेना) का 'लओ', तथा 'जान' (जाना) का 'गओ'। स्त्रीलिंग तथा वहुवचन रूप वनाने मे प्राय वीच मे 'य' जुडता है जैसे 'दयी', 'दये'। भूतकाल मे, 'कन्' (कहना) क्रिया सदा स्त्रीलिंग मे होती है क्योकि इसमें 'वात' विज्ञात होती है। इस प्रकार 'कयी', अथवा 'कई', (उसने कहा)। इस सवध मे 'वायी का' वाक्याश (शाब्दिक अर्थ 'क्या रहा ?') दृष्टव्य है, जिसका पूरक स्वरूप 'फलत.' अर्थ मे प्रयोग होता है।

इच्छार्थक रूप का एक उदाहरण है—'भरो चाउत–तो' (वह भरना चाह रहा था।) आरम्भसूचक समास का एक उदाहरण है—'रन लगो' (वह रहने लगा।)

यौगिक कृदन्त 'के' अथवा 'कें' मे समाप्त होते है। इस प्रकार, 'मार–के', अथवा 'मार-कें' (मार कर)।

नमूनो मे कर्तृकारक का प्रयोग, असावधानी के साथ हुआ है यथा अकर्मक क्रियाओं के साथ इसका प्रयोग मिलता है—'वा–ने वैठो', (वह वैठा); 'वा–ने लगो', (उसने आरभ किया)। 'वा–ने चाउत–तो' उदाहरण मे वर्तमानकालिक कृदन्त से वनाये गये काल के पहले तक इसका प्रयोग मिलता है।

उदाहरण

हिन्दोस्तानी

साहित्यिक हिन्दोस्तानी

प्रथम उदाहरण अपव्ययी पुत्र-कथा का दिवगत महामहोपाध्याय पडित सुधाकर द्विवेदी, एफ० ए० यू० लिखित शुद्ध ठेठ हिन्दोस्तानी मे भाषान्तर है। यह देवनागरी तथा फारसी दोनो ही लिपियो मे लिखी जा सकती है और सुपाठ्य भी है।

यद्यपि ठेठ हिन्दी मे एक-दो विदेशी शब्द मिलते है जैसे फारसी 'वखरा', अर्थात् भाग तथा सस्कृत 'पाप'। इस प्रकार के शब्द समाविष्ट कर लिये गये है क्योकि विदेशी होते हुए भी यह वोलचाल में निरन्तर प्रयुक्त होते हैं। इन्हे पूरी तरह अपना लिया गया है।

[सं० १.]

भारतीय-आर्य-परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (ठेठ प्रकार)

(महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी, एफ० ए० यू० १८९८)

देवनागरी लिपि

किसी मानुस के दो वेटे थे। उन में से लहुरे वेटे ने वाप से कहा हे वाप आप के धन में जो मेरा वखरा हो उसको मुझे दे दीजिए। तव उसने अपना धन उनमें वाँट दिया। वहुत दिन नहीं वीते कि लहुरा वेटा सव कुछ वटोर दूर देस चला गया और वहाँ लुचपन में दिन वितावते अपना धन उडा दिया। जव वह सव कुछ उडा चुका तव उस देस में अकाल पडा और वह कगाल हो गया। तव वह उस देस के किसी भलेमानुस के यहाँ जाकर रहने लगा जिसने उसको अपने खेत में सूअर चराने भेजा। और वह चाहता था कि मैं अपना पेट उन छीमियों से भरूँ जिन्हें सूअर खाते हैं पर कोई उसको कुछ नहीं देता था। तव उसको चेत हुआ और कहने लगा कि मेरे वाप के यहाँ इतनी अलेलह रोटी होती हैं कि कितने मजूरे पेट भर खाते हैं और वचाय भी रखते हैं और मैं भूखा मरता हूँ। मैं उठता हूँ और वाप के पास जाकर यही कहूँगा कि हे वाप

मैं ने भगवान के विमुख और आप के सामने पाप किया। मैं फिर आप का बेटा कहे जाने जोग नहीं। मुझको अपने मजूरों में से एक की नाईं रखिए। तब वह उठ कर अपने बाप के पास चला। पर वह दूर ही था कि उसके बाप ने उसको देख कर दाया की, और दौडकर उसके गले में लिपट गया और उसको चूमने लगा। बेटे ने कहा हे बाप मैंने भगवान के विमुख और आप के सामने पाप किया और आप का बेटा कहे जाने जोग नहीं। पर बाप ने अपने चाकरों में से एक से कहा कि सबसे अच्छा कपडा इसको पहिनावो और हाथ में अँगूठी और पावों में जूते। और चलो हम लोग खायें और खेलें। क्योंकि यह बेटा मरा ऐसा था फिर से जीया है हेराय गया था फिर से मिला है। तब वे सुख से खेलने लगे॥

उसका जेठरा बेटा खेत में था। जब वह आते हुए घर के निअर पहुँचा तब नाँचने बजाने का सुर सुना। उसने अपने चाकरों में से एक को बुला कर पूँछा कि यह क्या है। उसने उस से कहा कि आपका भाई आया है और आप के बाप ने जेवनार किया है क्योंकि उसको हरा भरा पाया है। इस पर उसने रिस किया और घर के भीतर जाना न चाहा। पर उसका बाप बाहर आकर उसको मनावने लगा। उसने बाप को जवाब दिया कि देखिए मैं इतने बरसों से आपकी टहल करता हूँ और आपके अदेस का टालना न किया और आपने मुझको कभीं एक मेमना भी न दिया कि मैं अपने मेलियों के सग विहरता। पर आपका यह बेटा जो पतुरियों के सग आप के धन को खा गया है जैसे ही आया तैसे ही आपने उसके लिए बढियाँ जेवनार किया है। बाप ने उससे कहा हे बेटा तूं सदा मेरे सग है और जो कुछ मेरा है सो सब तेरा है। पर हुलसना और हरखना पद हे क्योंकि यह तेरा भाई मरा ऐसा था फिर जीआ है हेराय गया था फिर मिला है।

मैं अब इशा अल्ला खाँ लिखित राजकुमार उदयभान और राजकुमारी केतकी की प्रसिद्ध प्रेम-कथा 'कहानी ठेठ हिन्दी में' का एक अश उद्धृत कर रहा हूँ। वह उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वार्ध मे लखनऊ में थे। नीचे दिया गया गद्यांश भूमिका है। इसमें लेखक ने बताया है कि उच्चवर्ग द्वारा प्रयुक्त भाषा मे रचना करना ही उनका उद्देश्य है, लखनऊ की उर्दू से यहाँ तात्पर्य है, किन्तु इनकी शब्दावली मे विदेशी शब्द बिलकुल छोड दिये गये हैं और हिन्दुई अर्थात् हिन्दुओ की बोली से ही पूर्ण रूप से सब शब्द लिये गये हैं। इस कार्य मे उन्हें पूरी सफलता मिली है। यह कृति हिन्दोस्तान के लोगो की साधारण बोलचाल मे प्रयुक्त होने वाले शब्दों का भडार है। इसके अनेक शब्द किसी भी शब्द-कोष मे नही मिलेंगे। दूसरी ओर, शैली के आदर्श की दृष्टि से यह रचना विलक्षण ही कही जा सकती है। इसकी शैली, लखनऊ मे प्रचलित फारसी-से

प्रभावित उर्दू की है, वास्तविक भारतीय भाषा की नही। क्रिया का प्रयोग प्राय वाक्य के मध्य मे हुआ है जैसे प्रथम वाक्याश में ही 'रगडता-हूँ'। इसके अतिरिक्त कविता के छन्द भी हिन्दी के न होकर फ़ारसी के है। जैसा कि दूसरे स्थान पर भी बताया गया है कि हिन्दू विद्वान् उर्दू और हिन्दी का अन्तर शब्द-समूह की दृष्टि से नही, वरन् भाषा सबधी विशेषता के अनुसार करते है—विशेष रूप से प्रयुक्त शब्दो के क्रम की दृष्टि से। अत, यद्यपि प्रारभ से अन्त तक, इशा अल्ला की कथा मे एक भी फारसी शब्द प्रयुक्त नही हुआ है, अधिकाश लोग इसे हिन्दी की कृति नही मानते है। उनके अनुसार यह उर्दू मे लिखी गयी है, किसी अन्य भाषा मे नही।

पूरी कृति बगाल की एशियाटिक सोसाइटी के ११वे और १४वें खडो मे छपी थी (जिसमें छपाई की अनेक भूलें थी)। पहला भाग श्री क्लिण्ट द्वारा अनूदित है और दूसरा श्री एम० स्लेटर द्वारा। भारत मे इसके अनेक सस्करण निकले है। इसका सन्तोपजनक मूल-पाठ अभी तक प्रकाशित नही हुआ है। मैंने श्री क्लिण्ट के अनुवाद को ही प्रमुख आधार बनाया है किन्तु अन्य सूचनाओ के अनुसार कुछ परिवर्तन अवश्य किये गये है।

[सं० २.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (ठेठ प्रकार)
(इशा अल्ला खाँ, १८००)

सिर झुका-कर नाक रगडता-हूँ उस अपने बनानेवाले-के सामने जिस-ने हम-सब-को बनाया और बात-की बात-मे वह सब कर दिखाया जिस-का भेद किसी-ने न पाया॥

आतियाँ जातियाँ जो साँसें हैं।
उस-के बिन ध्यान यह सब फाँसें हैं॥

यह कल-का पुतला जो अपने उस खिलाडी-की सुध रखे तो खटाई-में क्यों पडे और कडुआ कसैला क्यों हो। उस फल-की मिठाई चखे जो बडों-से बडाई अगिलों-ने चखी-है॥

देखने-को आँख दीं और सुनने-को यह कान दिए। नाक भी ऊँची सब-में कर दी। मूरतों-को जी दान दिए। मिट्टी-के बासन-को इतनी अकल कहाँ जो अपने कुम्हार-के करतब कुछ बता सके। सच है जो बनाया हुआ हो सो अपने बनानेवाले-को क्या सराहे और क्या कहे। यूँ जिस-का जी चाहे पडा बके। सिर-से लगा पाँव-तक जितने रूँगटे हैं—

जो सव-के सव वोल उठें और सराहा करें और इतने वरसों इसी ध्यान-में रहें जितनी सारी नदियों-में रेत और फूल कलियाँ खेत में-हैं—तो भी कुछ न हो सके ।।

इस सिर झुकाने-के साथे दिन रात जपता-हूँ उस दाता-के पहुँचे-हुए प्यारे-को—जिस-के लिए यूँ कहा-है—जो तू न होता मैं कुछ न वनाता । और उस-का चचेरा भाई—जिस-का व्याह उसी-के घर हुआ—उसी की सुरत मुझे लगी रही-है । मैं फूला । अपने आप-में नहीं समाता । और जितने उन-के लडके-वाले ह उन्हीं-के यहाँ परचाव है । और कोई हो—कुछ मेरे जी-को नहीं भाता । मुझे इस घराने-के छुट किसी ले-भाग-उचक-चोर-ठग-से क्या पडी । जीते मरते उन्हीं सभों-का आसरा और उन-के घराने-का रखता-हूँ तीसों घडी ।।

डौल डाल एक अनोखी वात का

एक दिन वैठे वैठे यह वात अपने ध्यान-में चढ-आई—कोई कहानी ऐसी कहिए जिसमे हिन्दुई छुट और किसी वोली-की पुट न मिले । तव जा-के मेरा जी फूल-की कली के रूप-से खिले । वाहिर-की वोल और गँवारी कुछ उस-के वीच न हो । अपने सुनने-वालों-में-से एक कोई वडे पढे लिखे-पुराने धुराने डाग—वड़े घाग—यह खटराग लाए—सिर हिला-कर—मुँह वना-कर—नाक भौं चढा-कर—आँखें पथरा-कर—लगे कहने—यह वात होती दिखाई नहीं देती । हिन्दुई-पन भी न निकले और भाखापन भी न ठुस जाय—जैसे भले लोग अच्छों-से अच्छे आपस-में वोलते-चालते हैं—ज्यों-का त्यों वही डौल रहे और छाँह किसी-के न पड़े । यह नही होने-का ।

मैं-ने उन-की ठडी साँस-की फाँस का ठोका खा-कर झुंझला-कर कहा—मैं कुछ ऐसा अनोखा वोला नहीं । जो राए-को परवत कर दिखाओं और झूठ सच वोल-के उँगलियाँ नचाओं और वे-सुरी वे-ठिकाने-की उलझी सुलझी वातें सजाओं । जो मुझसे न हो सकता तो भला यह वात मुँह से क्यों निकालता । जिस ढव-से होता इस वखेडे को टालता ।

इस कहानी-का कहने-वाला यहाँ आप-को जताता है—और जैसा कुछ लोग उसे पुकारते-हैं कह सुनाता-है । दहिना हाथ मुँह-पर फेर-कर आप-को जताता-हूँ । जो मेरे दाता-ने चाहा तो वह ताव-भाव और आव-जाव और कूद-फाँद और लिपट-चिपट दिखाओं । जो देखते-ही आप-के ध्यान-का घोडा—जो विजुली से भी वहुत चचल—उछलाहट-में हिरनों-के रूप-मे—अपने चौकड़ी भूल जाए ।

घोडे-पर अपने चढ-के आता-हूँ मैं ।
करतव जो हैं सो सव दिखाता-हूँ मैं ।

उस चाहने-वाले-ने जो चाहा तो अभी ।
कहता जो कुछ हूँ कर देखाता-हूँ मैं ॥
अब आव कान रख-के सन्मुख हो-के टुक इधर देखिए किस ढव-से बढ चलता-हूँ और अपने इन फूल-की पँखडी जैसे होंठों-से किस रूप-के फूल उगलता-हूँ ॥'

अगला उदाहरण पडित अयोध्या सिह उपाध्यायकृत लघु उपन्यास 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' से उद्धृत किया गया है । यह वास्तविक हिन्दोस्तानी भाषा का प्रशसनीय उदाहरण है जो फारसी अथवा सस्कृत के उधार लिये गये शब्दो से मुक्त है। इस करुण कथा का सम्बन्ध उत्तरी भारत के हिन्दू जीवन से है और जो व्यक्ति ऊपरी दोआब के लोगो द्वारा व्यवहृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है उसे यह पुस्तक अवश्य पढनी चाहिए। साथ ही जहाँ हिन्दोस्तानी का प्रयोग देश-भाषा के रूप मे ही हुआ है वहाँ सरलता से समझ में आ जाती है। मौलवियो की फारसी-बहुल उर्दू अथवा बनारस के पडितो की हिन्दी इन दोनो के ही बारे मे इतना कहना पर्याप्त है । यह देवनागरी तथा फारसी दोनो ही लिपियो मे प्रकाशित हुई हैं । मैं बहुत कुछ शाब्दिक अनुवाद भी जोड रहा हूँ । भारतीय बोली बराबर अपरिवर्तित रखी गयी है । पिछले उदाहरण मे फ़ारसी शैली के अनुरूप शब्दो का जो क्रम हमने देखा है वह इसमे नही मिलेगा ।

[सं० ३]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (ठेठ प्रकार)

(पडित अयोध्या सिंह उपाध्याय, १८९९)

एक ग्यारह बरस-की लडकी अपने घर-के पास-की फुलवारी-में खडी हुई किसी-की बाट देख-रही है। सूरज डूबने-पर है, बादल-में लाली छाई हुई-है, बयार जी-को ठडा करती हुई धीरे चल-रही-है । थोडी बेर-में सूरज डूबा, कुछ झुट-पुटा सा हो-गया, फुलवारी-की एक ओर-से कोई उसी ओर आता दीख पडा, जिस ओर वह लडकी खडी थी। कुछ बेर-में वह आ-कर उस लडकी-के पास खडा हो-गया, लडकी-ने देखकर कहा, देव-नदन अब तक कहाँ थे ? मैं बहुत बेर-से यहाँ खडी तुम-को अगोर रही-हूँ ।

देव-नदन चौदह पदरह बरस-का लडका है । उस-के सुडौल गोरे मुखडे, अच्छे हाथ पाँव, छरहरी डील, ऊँचे और चौडे माथे, लम्बी बाँहें, और जी लुभानेवाली बड़ी

बड़ी आँखों-के देखने-से जान पड़ता-है जयंत सरग छोड़कर धरती-पर उतरा है। वह लड़का उसी गाँव-में रहता-है जहाँ वह लड़की रहती-है, छोटेपन-से-ही दोनों दोनों-को चाहते आए-हैं। देव-नन्दन तीसरे चौथे जब छुट्टी पाता, इस लड़की-से आ-कर मिलता। वह लड़की भी बड़े चाव-से उस-से मिलती और अपनी मीठी मीठी बातों-से उस-के जी-को लुभाती। लड़की जानती-थी, आज देव-नन्दन आवेगा, इसी-से पहले-से उस-की बाट देख रही-थी। वह आया भी, पर कुछ अबेर कर-के। इसीलिए लड़की-ने उस-से पूछा, 'देवनन्दन अब तक तुम कहाँ थे?'

लखनऊ की साहित्यिक उर्दू

अगला उदाहरण लखनऊ की फारसी से प्रभावित साहित्यिक उर्दू का है। यह पहले वाक्य में ही स्पष्ट हो जाता है कि देशी शब्दों के स्थान पर फारसी शब्दों को मान्यता मिली है।

साथ ही यह भी देखा जा सकता है कि शब्दों के फारसी क्रम के अनुसार क्रिया को वाक्य के मध्य में रखा गया है अन्त में नहीं और कर्ता को कर्म के बाद। 'चला आया बाप-के पास,' जैसे वाक्य हिन्दी अथवा किसी भी अन्य शुद्ध भारतीय-आर्य भाषा में नहीं लिखे जायेंगे। वास्तविक भारतीय क्रम 'बाप-के पास चला आया' होगा। इसी प्रकार 'एक नौकर-को उस-ने पूछा' वाक्यांश में शब्दों का क्रम निश्चय ही भारतीय नहीं है। भारतीय क्रम 'उस-ने एक नौकर-को (अथवा-से) पूछा' होगा, कर्ता कर्म के पहले प्रयुक्त होगा।

[सं० ४]

भारतीय-आर्य परिवार — **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (प्रामाणिक उर्दू प्रकार) — **ज़िला लखनऊ**

एक शख्स-के दो बेटे थे। उन-में-से छोटा बाप-से कहने लगा, 'अब्बा जान, जायदाद-में हमारा जो-कुछ हिस्सा है हम-को दे दी-जिए।' चुनांचे उस-ने अपना असासा दोनों को तकसीम कर-दिया। और चन्द ही रोज़ बाद छोटा बेटा सब माल इकट्ठा कर-के बहुत दूर-के मुल्क-में चला-गया और वहाँ सारी दौलत शोहदपन-में उड़ा-दी। जब सब उठ-गया तो उस मुल्क-में क़हत-ए-अज़ीम पड़ा और वोह मुहताज हो-चला। और उस-ने उस मुल्क-के एक रईस-के हाँ जा-कर नौकरी कर-ली। उस-ने इसे अपने खेतों-में सुअरें चराने-के लिए भेज-दिया। वह, तो, बड़ी आरज़ू-के साथ

उन छिलकों-से भी पेट भर-लेता जो सुअरें खाती-थीं, मगर वोह भी किसी-ने उस-को ना दी। अब उस-की आँखें खुलीं। उस-ने कहा कि, 'बहुतेरे मजदूर तो मेरे बाप-के यहाँ पेट भर खाना पाएँ, बल्कि बचा भी रखें, और मैं भूखों मरूँ। उठूँ और अब्बा-के पास जाऊँ और उन-से कहूँ, "अब्बा जान, मैं खुदा-का और आप-के हुजूर-में गुनहगार हूँ, और अब इस लायक नहीं कि आप-का बेटा कहलाऊँ। मुझे अपने मजदूरों-में रख-लीजिए।" पस वोह उठा और चला-आया बाप-के पास। हनोज़ फासिले-ही-से था कि बाप-ने देख-लिया और रहम खा-कर दौडा, गले-से लगाया, और पियार किया। और बेटे-ने उस-से अर्ज किया, 'अब्बा जान, मैं खुदा-के हुजूर और आपकी नजर—में गुनह-गार हूँ, और अब इस लायक नहीं कि आप-का बेटा कहलाऊँ।' मगर बाप-ने अपने नौकरों-को हुक्म दिया कि, "उम्दा-से उम्दा पोशाक लाओ और इन-को पहनाओ, अँगूठी हाथ-में और जूता पाओं-मे पिन्हाओ, और सब लोग दावतें खाकर खुशियाँ मनाएँ। मेरा यह फरज़न्द मर-कर, फिर जिया, और गुम होकर, फिर मिला।" चुनाँचे वह सब लोग खुशियाँ मनाने लगे।

उस वक्त उस-का बडा बेटा खेत-पर था। जब वोह पलट-कर घर के करीब पहुँचा तो उस-ने गाने और नाच की आवाज़ सुनी। एक नौकर-को उस-ने बुला-कर पूछा कि, 'येह सब किस बात-पर हो-रहा-है?' उस-ने उस-से कहा, 'आप-के भाई आए-हैं और उन-के सही-सलामत वापस आने-पर आप-के वालिद-ने जश्न किया-है।' वोह बहुत बिगडा, घर-के अन्दर-ही न जाता था। इस-पर उस-का बाप बाहर निकल आया और मनाने लगा। उस-ने बाप-से कहा कि, 'देखिए, इतने बरसों-से मैं आपकी खिदमत करता-हूँ और किसी वक्त आप-के हुक्म-से सरताबी नहीं की, उस-पर भी आप-ने कभी मुझे बकरी-का एक बच्चा तक न दिया कि अबने दोस्तों-के साथ खुशी मनाता। मगर जूँ-हीं आप-का येह बेटा आया जिस-ने आप-का सारा माल कस्बियों में गँवा दिया, तो आप-ने उन-की खातिर-से जश्न किया।' उस-ने उस-से कहा 'बेटा, तुम हमेशा मेरे पास हो, जो कुछ मेरा है, वोह तुम्हारा है। मुनासिब येही था कि हम-लोग खुशियाँ मनाएँ और मसरूर हो, क्यों-कि तुम्हारा भाई मर-के, ज़िन्दा हुआ-है, और गुम हो-के, फिर मिला- है।

लखनऊ की कस्बाती उर्दू

पिछले उदाहरण से लखनऊ की उत्कृष्ट साहित्यिक उर्दू प्रर प्रकाश पड़ता है। अब हम शहर मे बोली जानेवाली साधारण उर्दू के उदाहरण दे रहे हैं। इसे 'कस्बाती' कहते हैं। इस शब्द का उद्भव 'कस्बात', 'कस्बे' का बहुवचन, शहर का चौथाई, से हुआ है।

साहित्यिक वोली के समान यह फारसी-प्रधान नहीं है, किन्तु शब्दो का क्रम वही है जो उर्दू ने फारसी से ग्रहण किया है । यहाँ 'जानिव दखिन' लिखा गया है, जिसका भारतीय क्रम 'दखिन जानिव' होगा । इसी प्रकार 'दरया-ए-सई-के किनारे' के स्थान पर 'किनारे दरया-ए-सई-के' मिलता है ।

मैं इस प्रकार की उर्दू के दो उदाहरण दे रहा हूँ । पहला उदाहरण अपव्ययर पुत्रकथा का थोडा-सा अश है, इसका केवल लिप्यन्तर दे रहा हूँ। यहाँ इसे देने का उद्देश्य यही है कि साहित्यिक वोली से इसकी तुलना की जा सके। दूसरा निगोहाँ के भौंरेसर मन्दिर से सवधित एक लोक-कथा है।

[सं० ५]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (लखनऊ की कस्वाती उर्दू)

उदाहरण १

एक शख्स-के दो लडके थे । उन-मेँ-से छोटे-ने अपने वाप-से कहा कि, 'ऐ वाप, जाएदाद-मेँ-से जो मेरा हक्क होता-हो मुझे दे-दीजिये ।' तव उस-ने उन-को अपनी जाएदाद तक्सीम कर दी । और थोडे रोज के वाद छोटा लडका सव कुछ माल जमा कर-के एक दूर-के मुल्क-को रवाना हुआ, और वहाँ-पर अपना माल ऐयाशी-मेँ उडा-दिया। और जव सव खर्च कर-डाला, तव उस मुल्क-में वडा कहत पड़ा और वोह खुद मोहताज होने लगा ।

[सं० ६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (लखनऊ की कस्वाती उर्दू)

उदाहरण २

कस्वा निगोहाँ की जानिव दखिन एक मन्दिर महादेवो-जी-का है, जिस-को भौंरेसर कहते हैं, और किनारे दर्या-ए सई-के वाके है । और वहाँ पर हर दु-शम्वअ-को मेला होता-है, और अक्सर लोग हर रोज़ दर्शन-को विला नागा जाया-करते-हैं, और जो मक्सद-ए दिली रख्ते-हैं वोह पूरा होता-है ।

सुन्ने-में आया-है कि एक वक्त-में औरँगज़ेब बादशाह भी उन-के मन्दिर-पर तशरीफ लाए-थे। और उन-की येह मन्शा थी कि इस मन्दिर-को खुद्वा-कर मूरत-को निकल्वा-लेवें और सवा मज़दूर उस मूरत-के निकाल्ने-को मुस्तद्द हुए, लेकिन मूरत-की इन्तिहा न मालूम हुई। तब बादशाह्-ने गुस्से-में आ-कर इजाजत दी कि, 'इस मूरत-को तोड-डालो।' तब मज़दूरो-ने तोडना शुरू किया, और दो एक ज़र्ब मूरत-में लगाई, बल्कि, कुछ शिकस्त भी हो-गई जिसका निशान आज-तक भी मौजूद है, और कद्र-ए खून भी मरत-से नुमूद हुआ, लेकिन ऐसी कुद्रत मूरत-की जाहिर हुई, और उसी मूरत-के नीचे-से हज़ार्हा भौंरे निकल-पडे, और सब फौज-ए बादशाह्-की भौंरों-से परेशान हुई और येह खबर बादशाह्-को भी मालूम हुई। तब बादशाह्-ने हुक्म दिया कि, 'अच्छा, इस मूरत-का नाम आज-से भौंरेसर हुआ, और जिस तरह्-पर थी उसी तरह्-से बन्द कर-दो,' और खुद बादशाह ने- मूरत मज्कूर बन्द कराने का इन्तिज़ाम कर-दिया।

अब चन्द रोज़-से इलावा दर्शन-के बहुत-से दूकान्दार लोग वहाँ दूकानें लगाते-हैं। इलावा मामूली चीज़ों-के, काश्तकारी की चीजें, जो देहात-में बहुत जियादा कर-के ज़रूरत होती-हैं, वहाँ-पर मिल सक्ती- हैं।

लखनऊ की बेगमाती उर्दू

लखनऊ नगर की भद्र महिलाओ द्वारा व्यवहृत उर्दू 'बेगमाती' के नाम से जानी जाती है। इसके बारे मे कहा जाता है कि यह हिन्दी सम्मिश्रण से सर्वथा मुक्त है, किन्तु जो उदाहरण मुझे मिले हैं उनसे यह बात सिद्ध नही होती है।

यहाँ दो उदाहरण दिये गये हैं। उर्दू के अन्य रूपो से तुलना के हेतु प्रथम उदाहरण दिया गया है जो अपव्ययी पुत्र-कथा का एक अश है। दूसरा लखनऊ की एक मुसलमान महिला का अपनी माँ को लिखा गया एक पत्र है। इस बोली का यह एक अवलोकनीय उदाहरण है जो अनूठे मुहावरो और सजीव शब्दावली से युक्त है। पाण्डुलिपि की लिखावट जल्दी में लिखी गयी साधारण टूटी-फूटी उर्दू मे है।

यह ध्यान देने की बात है कि ह्रस्व 'अ'-अत्य फारसी और अरबी शब्दो के विकृत कारको के लिए रूप नही बनते हैं जो व्याकरण के अनुसार बनने चाहिए। उदाहरणस्वरूप 'खानम साहिबा ('-बे' नही)-के', 'छअ महीना ('-ने' नही)-का बच्चा'। लिखने में इस तरह की अशुद्धियाँ प्राय हो जाती हैं किन्तु इसका प्रभाव उच्चारण पर नही पडता है। इन विकृत रूपो का उच्चारण 'ए' ही किया जाता है। 'साहिब-के' का उच्चारण 'साहिबे-के' होता है और इसी प्रकार ऐसे अन्य सभी रूप पढे जाते हैं।

[सं० ७]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (लखनऊ की बेगमाती उर्दू)

उदाहरण १

एक आदमी-के दो बेटे थे। उन-में-से छोटा बाप-से-बोला, 'अब्बा-जान, माल-असबाब-में जितना हमारा हिस्सअ है हम-को दे-दीजिये।' और उस-ने अपनी दौलत दोनों-को बाँट-दी। थोडे दिनों बाद छोटा सब जमा-जथा समेट-कर बहुत दूर किसी मुल्क-को निकल-गया। वहाँ-सब शोहदे-पन-में उडा बैठा। जब सब उठ-उठा-गया तो उस मुल्क-में बहुत बडा कहत पडा और येह मोहताज हो-चला।

[सं० ८.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (लखनऊ की बेगमाती उर्दू)

उदाहरण २

खत बेटी-की तरफ-से माँ-को।

अम्मी जान, खुदा करे आप सलामत रहें। बहिन छम्मन साहिब आज लखनऊ-में दाखिल हुईं। उन-से आप-की सब खैर-ओ सलाह मालूम हुई। बडे मामूँ-का जी आए-दिन (हमेशा) मान्दा रहता-है। लखनऊ-में बहुत दवा-दर्मन की, मगर कुछ फाइदा नहीं हुआ। कल्ह अगर ऊपर-वाला हो-गया, तो जुम-रात-को वोह ज़रूर-ज़रूर इलाज करने फैज़ाबाद सिधारेंगे।

आज-कल्ह यहाँ चोरों-का बडा नरगअ है। पडोस-में खानम साहिब-के यहाँ कल्ह दिन-दहाड़े कई चोर घुस-आए। बडा गुल-गपाडा मचा। सिपाही निगोडे, गँवार-के लठ, समझे ना बूझे, हुल्लड सुनते-ही हमारे मकान-में दरॉन चले-आए। वोह तो कहिये, बडी खैरियत गुजरी। आदमी ड्योढी-पर मौजूद था। उस-ने रोका थामा। नहीं तो सब-का सामना हो-जाता। उन-में-से दो चोर पकडे भी गए। मुओं-ने हाकिम-के सामने उल्टा छुद्दा रखा कि, 'खानम साहिबअ-के बेटे-ने मकान अकवाने-के-बहाने-से घर-में बुलाया। दो पहर बन्द रखा, पचास रुपैए छीन-लिए, उल्टा "चोर-चोर" कर-के गुल मचा-दिया।

नज़ीर और उन-की बीवी-में रोज़मर्रा झझट हुआ-करती-है । नज़ीर-को तो आप जानिए,—एक नाक-चढा । बीवी भी मिज़ाजदार, ज़रा-ज़रा-सी वात-पर 'तू तू, मैं मैं' होने लगती है । लाख समझाया, 'वहिन, कच्चा साथ है । खुदा रक्खे । सियानी लड़की वियाहने लाइक पहलू-से लगी वैठी-है । उस-के सामने इस वक-वक झक-झक दिन रात-के दाँत किल-किल-से क्या फाइदा । मगर ऐसी अक्लों-पर खुदा की मार । समझाने-में वात-के वतगड वढते-हैं । कौन दख़ल-दे ? उल्टा नक्कू वने ।

औलाद अली-को देखिए । ना कोई वात ना चीत, वेकार वेकार भी, माँ-से लड-भिड-कर दवियाल चला-गया ।

वेगम जान-का छत्र महीना-का पाला-पोसा वच्चा परसो जाता-रहा । वेचारी एक आँख दवाती-है, लाख आँसू गिरते हैं । अभी मियाँ-को मरे पूरे चार महीना भी नही हुए-थे कि येह असमान फट-पडा । गरीव-की रही-सही आस, भी टूट गई ।

दिल्ली की प्रामाणिक उर्दू

दिल्ली की उर्दू फारसी से उतनी प्रभावित नही है जितनी लखनऊ की, और इसीलिए पूरे भारत में समझी जानेवाली जन-भाषा की आवश्यकताओ को यह लगभग पूरा करती है । निम्नलिखित उदामरण से यह वात स्पष्ट हो जायगी । यह भी पता चलेगा कि इसकी शब्दावली प्राय सरल है और शब्दो का क्रम भारतीय है, फारसी नही । दिल्ली की उर्दू के कन्य उदाहरण के लिए, उसी शहर में तैयार की गयी प्रामाणिक शब्दो और वाक्यो की सूची देखी जा सकती है ।

हेनरी मार्टिन ने सन् १८०६–१८१० में ब्रिटिश और विदेशी वाइविल सोसाइटी के लिए नये टेस्टामेण्ट का उर्दू भाषान्तर किया था । इसका सशोवन तीन वार हो चुका है। डॉ० वेटब्रेख्ट की अध्यक्षता मे एक समिति ने सन् १८९३–१८९९ मे इसका तीसरा और अन्तिम सशोवन किया था । अपव्ययी पुत्र-कथा का निम्न उदाहरण इसी से लिया गया है।

वाइविल सोसाइटी ने यह भाषान्तर दो रूपो में प्रकाशित किया है—एक फारसी लिपि में, और दूसरा रोमन लिपि मे ।

[सं० ९]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (प्रामाणिक उर्दू)

(ब्रिटिश और विदेशी वाइविल सोसाइटी, १९००)

एक शख़्स के दो वेटे थे । उन में से छोटे ने वाप से कहा, कि ऐ वाप माल का जो हिस्सा मुझ को पहुँचता है, मुझे दे । उसने अपना माल मता उन्हें वाँट दी । और थोडे दिन

वाद छोटा वेटा अपना सव कुछ जमा करके, दूर के मुल्क को रवाना हुआ, और वहाँ अपना माल वदचलनी मे उडा दिया। और जव सव खर्च कर चुका, तो उस मुल्क मे सख्त काल पडा, और वह मोहताज होने लगा। फिर उस मुल्क के एक वाशिन्दे के यहाँ जा पडा, उसने उसको अपने खेतो मे सुअर चराने भेजा। और उसे आरज़ू थी कि जो फलियाँ सुअर खाते थे, उन से अपना पेट भरे; मगर कोई उसे ना देता था। फिर उसने होश मे आकर कहा, कि मेरे वाप के कितने ही मज़दूरो को रोटी इफरात से मिलती है, और मैं यहाँ भूखा मर रहा हूँ ! मैं उठकर अपने वाप के पास जाऊँगा, और उस से कहूँगा, कि ऐ वाप, मैं आसमान का और तेरी नज़र में गुनहगार हूँ। अव इस लायक नहीं रहा, कि फिर तेरा वेटा कहलाऊँ; मुझे अपने मज़दूर जैसा ही कर लें। वस, वह उठकर अपने वाप की तरफ रवाना हुआ। वह अभी दूर ही था, कि उसे देखकर उसके वाप को तर्स आया, और दौडकर उसको गले लगा लिया, और वोसे लिए। वेटे ने उस-से कहा, कि ऐ वाप, मैं आसमान का और तेरी नजर मे गुनहगार हूँ अव इस लायक नही रहा, कि फिर तेरा वेटा कहलाऊँ। वाप ने अपने नौकरो से कहा, कि अच्छे से अच्छा जामा जल्द निकालकर उसे पहनाओ, और उसके हाथ मे अँगूठी, और पावों में जूती पहनाओ। और पाले हुए वछड़े को लाकर ज़व्ह करो, ताकि हम खाकर खुशी मनाएँ; क्योकि मेरा यह वेटा मुर्दा था अव ज़िन्दा हुआ; खो गया था, अव मिला है। वस, वह खुशी मनाने लगे।

लेकिन उसका वडा वेटा खेत में था; जव वह आकर घर के नज़दीक पहुँचा, तो गाने वजाने और नाचने की आवाज़ सुनी, और एक नौकर को वुलाकर दरयाफ्त करने लगा, कि यह क्या हो रहा है ? उसने उससे कहा, कि तेरा भाई आ गया है, और तेरे वाप ने पाला हुआ वछडा ज़व्ह कराया है, इस लिए कि उसे भला चगा पाया। वह गुस्से हुआ, और अन्दर जाना ना चाहा, मगर उसका वाप वाहर जाके उसे मनाने लगा। उसने अपने वाप से जवाव मे कहा, कि देख, इतने वरस से मैं तेरी ख़िदमद करता हूँ, और कभी तेरी हुक्म-उदूली नही की, मगर मुझे तू ने कभी एक वकरी का वच्चा भी न दिया, कि अपने दोस्तो के साथ खुशी मनाता लेकिन जव तेरा यह वेटा आया, जिसने तेरा माल मता कस्वियों मे उडा दी, तो उसके लिए तूने पाला हुआ वछडा ज़व्ह कराया। उसने उससे कहा, वेटा, तू तो हमेशा मेरे पास है, और जो कुछ मेरा है, वह तेरा ही है, लेकिन खुशी मनानी और शादमान होना मुनासिव था, क्यूँकि तेरा यह भाई मुर्दा था, अव ज़िन्दा हुआ, खो गया था, अव मिला है।'

दिल्ली की आधुनिक उर्दू

पिछले तीस या चालीस वर्षो मे दिल्ली मे लेखको का एक वर्ग वन गया है जिसने शैली से फारसी के अतिशय प्रभाव को हटाने की आवश्यकता की ओर ध्यान दिया। अब तक इस प्रकार की शैली का प्रचलन था और लखनऊ में अभी तक है।

इनमे सर्वाधिक लब्ध-प्रतिष्ठ लेखक मौलवी नज़ीर अहमद है। इनके दो उपन्यास 'दुल्हिन का दर्पण' और 'नसू का पश्चात्ताप' इगलैण्ड मे प्रकाशित होने के लिए तैयार किये गये। ये दोनो उर्दू भाषा का परिचय प्राप्त करने की दृष्टि से ही नही, वरन् विषय-वस्तु के कारण भी पठनीय है। ये मध्यवर्ग के सभ्रान्त भारतीय मुसलमानो के घरेलू जीवन के सुन्दर चित्र है। कहानियाँ नितान्त रुचिकर और मनोरजक है और स्थान-स्थान पर सुन्दर विनोद से युक्त है। ग्रन्थ-सूची में इनके लेखक के नाम के अन्तर्गत इन कृतियो के सर्वोत्तम सस्करणो का उल्लेख मिलेगा। जिस वर्ग के लेखको मे इनकी गणना होती है उसके बारे मे यदि और अधिक जानकारी प्राप्त करनी हो तो पाठक को ग्रन्थ-सूची के प्रथम भाग मे उल्लिखित शेख अब्दुल कादिर रचित 'उर्दू साहित्य का नया वर्ग' देखना चाहिए।

नज़ीर अहमद की शैली का नमूना दिखाने के लिए मै 'दुल्हिन का दर्पण' से एक अश यहाँ दे रहा हूँ। श्री जी० ई० वॉर्ड्स के सस्करण (लदन, १२९९) से यह पाठ लिया गया है।[1]

चुना हुआ अश एक बे-सिर पैर की कहानी है जिसमे नीतिप्रद उक्तियो की भरमार है। यह एक धूर्त बुढिया द्वारा भोली भाली नायिका को सुनायी गयी है जो छल से उसकी विश्वासपात्र बनती है। कहानी का सबध दो चमत्कारिक लोगो से है। बुढिया इन्हे इस लडकी को देती है जिसका विवाह एक वर्ष पहले ही हुआ है। इन लोगो द्वारा पति का प्रेम और तिरस्कृत वन्ध्या पत्नियो को सन्तान प्राप्त होने का आश्वासन देती है। जिन पाठको को आगे की कथा जानने की उत्सुकता हो वे मूल रचना पढ सकते है। यहाँ इतना कहना यथेष्ट है कि वधू का विश्वास प्राप्त करने के बाद वह बुढिया उसके सारे आभूषण लेकर भाग जाती है।

१ इन सूचनाओ के लिए मै 'दुल्हिन का दर्पण' के सपादक श्री वार्ड का आभारी हूँ। भारत की जनभाषा अथवा उसके साहित्य में रुचि लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह पुस्तक पढनी चाहिए।

यद्यपि यह उपन्यास एक मुसलमान द्वारा सहधर्मावलम्बियो के लिए लिखा गया है और उर्दू मे है, हिन्दी मे नही, फिर भी अरबी और फारसी शब्दावली से सर्वथा मुक्त है। लखनऊ की उर्दू के प्राय सभी शब्द इन भाषाओं से उद्‌भूत होते है। यहाँ पैतालिस प्रतिशत शब्दावली भारतीय है, लगभग बीस प्रतिशत फारसी, और चौतीस प्रतिशत से कम अरबी है। शेष भाग अन्य भाषाओ जैसे तुर्की, अंग्रेजी, तथा पुर्तगाली आदि से आया है।

[स० १०.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (दिल्ली की आधुनिक उर्दू)

(मौलवी नजीर अहमद, Circa १८७०)

मैं जब हज्ज-को गई-थी तो उसी जहाज में भोपाल-की एक बेगम भी सवार थी,—शायद तुम-ने उन-का नाम भी सुना-हो, बलकीस जहानी बेगम,—सब-कुछ खुदा-ने उन-को दे रखा-था, दौलत-की कुछ इन्तिहा ना थी; नौकर-चाकर, लौंडी-गुलाम, पालकी-नालकी, सब-ही-कुछ था, एक तो औलाद-की तरफ-से मगमूम रहा-करती-थीं, कोई बच्चा ना था, दूसरे नवाब-साहिब-को उन-की तरफ मुतलक इल्तिफात ना था, और शायद औलाद ना होने-के सबब मुहब्बत ना करते-हों, वर्ना बेगम सूरत-शक्ल-मे 'चदे आफताब, चदे महताब,'—और इस हुस्न-ओ-दौलत-पर मिजाज ऐसा सादा, कि हम-जैसे नाचीजों-को बराबर बिठाना और बात पूछना! बेगम-को फकीरों-से पहले दरजे-का एतकाद था। एक दफा सुना कि तीन कोस-पर कोई कामिल वारिद है, अँधेरी रात-में अपने घर-से पियादा-पा उन-के पास गईं, और पहर-भर तक हाथ बाँधे खडी रहीं। फकीरों-के नाम-के कुर्बान जाइए! एक मरतबा जो शाह-साहिब-ने आँख उठाकर-कर देखा, फरमाया, 'जा माई, इसी रात-को हुक्म मिलेगा।' बेगम-को ख्वाब-में बिसारत हुई कि 'हज्ज-को जा, और मुराद-का मोती समुन्दर-से निकाल-ला।' सुबह उठ हज्ज-की तैय्यारियाँ होने लगीं। पाँसौ मिस्कीन बेगम ने-आप किराया दे-कर जहाज़-पर सवार कराए, उन-में-से एक मैं भी थी। हर वक्त का पास रहना—बेगम-साहिब (इलाही! दोनो जहान-में सुर्खरू!) मुझ-पर बहुत मिहरबानी करने लगीं, और सहेली कहा-करती-थीं। दस दिन तक बराबर जहाज़

पानी-में चला-गया; ग्यारहवें दिन वीच समुन्दर-में एक पहाड नजर आया। नाखुदा-ने कहा, 'कोह-ए हब्श यही है, और एक वड़ा कामिल फकीर इस-पर रहता -है, जो गया, वामुराद आया।' वेगम-साहिव-ने नाखुदा-से कहा, 'किसी तरह मुझ-को उस पहाड-पर पहुँचाओ।'. नाखुदा-ने कहा, "हुजूर, जहाज़ तो पहाड तक नहीं पहुँच सकता, अलवत्ता अगर आप इरशाद करें, तो जहाज़ को लगर कर-दें, और आप-को एक किश्ती-में विठा-कर ले चलें।' वेगम-ने कहा, 'खैर, यही सही।' पाँच औरतें वेगम-के साथ कोह-ए हब्श-पर गई-थीं— एक मैं, और चार और। पहाड-पर पहुँचे तो अजीव तरह की खुशवू महक रही थी। चलते-चलते शाह-साहिव तक पहुँचे। हू-का मकाम था, ना आदमी ना आदमजाद, तन-ए-तनहा शाह-साहिव एक घर में रहते-थे, कैसी नूरानी शक्ल! जैसे फरिश्ता! हम सव-को देख-कर दुआ दी, वेगम को वारह लौंगें दीं, और कुछ पढ़-कर दम कर दिया। मुझ-से कहा, 'चली-जा, आगरे और दिल्ली-में लोगों के काम वनाया-कर।' वेटी, उन वारह लौंगों-में-की दो लौंगें यह हैं। हज्ज कर-के जो लौटे, तो नवाव,— या तो वेगम-की वात पूछते-न-थे,—या यह नौवत हुई, कि एक महीने आगे-से वम्वई-में आ-कर वेगम-के लेने-को पडे - थे। ज्यों-ही वेगम-ने जहाज़-से पाँव उतारा, नवाव-ने अपना सर वेगम-के कदमों-पर रख-दिया, और रो-रो-कर खता मुआफ कराई। छग्र वरस मैं भोपाल-में हज्ज-से आ-कर ठहरी। फकीर-की दुआ-की वरकत-से लगातार ऊपर-तले अल्लाह रक्खे! चार वेटे वेगम-के, मेरे रहने तक, हो- चुके-थे। फिर मुझको अपना देस याद आया, वेगम से इजाज़त माँगी, वहुत-सा रोका, मैं-ने कहा, 'शाह साहिव-ने मुझ-को दिल्ली-आगरे-की खिदमत सुपुर्द की- है, मुझ-को वहाँ जाना ज़रूर है, यह सुन-कर वेगम-ने चार नाचार मुझ-को रुखसत किया।'

उर्दू काव्य

प्राचीन उर्दू काव्य (जैसा कि अन्य स्थान पर यह वताया गया है कि प्रामाणिक हिन्दी का कोई प्राचीन काव्यसाहित्य नहीं है) के उदाहरण के लिए मैं प्रसिद्ध शायर मीर तकी कृत 'तनवीहु'ल-जुहहाल' का एक अंश दे रहा हूँ। शायर का जन्म आगरे में हुआ था, और दिल्ली में सिराजुद्दीन खान (आरज़ू) से शिक्षा प्राप्त की थी। सन् १७८२ तक वे वहाँ रहे तत्पश्चात् लखनऊ आ गये जहाँ सन् १८१० मे काफी वडी आयु में इनका निधन हुआ। देश के मान्य विद्वानो द्वारा मीर और रफीउस्सौदा उर्दू के दो सर्वोत्तम शायर माने जाते हैं। गार्सा द तासी लिखित इस कविता की सुन्दर टीका, 'Conseils aux mauvais poetes' शीर्षक के अन्तर्गत 'जर्नल एशियाटिक'

(सन् १८२५, भाग ७, पृष्ठ ३०० और आगे) में छपी थी। पालेरमो ने इस टीका का इतालवी भाषा मे अनुवाद दिया जो सन् १८९१ मे पेलरमो में छपा था। इसका शीर्षक 'Consigli ai Cattivi poeti' था। श्री जे विन्सन ने 'Revue de Linguistique' भाग २४ (सन् १८९१, पृ० १०१ और आगे), मे 'Satire Contre les Ignorants' शीर्षक के अन्तर्गत इसका अधिक शाब्दिक अनुवाद छपवाया।

मीर तकी की कृतियाँ भारत मे प्रकाशित हुई है। अपनी 'मुतखबात-ए हिन्दी' मे शेक्सपियर ने इस कविता के मूल पाठ का यत्नपूर्वक सपादन किया। श्री विन्सन की 'Manuel de la Langue hindoustani' में यह मूलपाठ दुवारा दिया गया है। जो अश यहाँ दिया गया है वह शेक्सपियर के मूलपाठ पर आधारित है, छद के कारण कुछ सशोधन अवश्य दिये गये है। इस कविता के, जो अनेक स्थानो पर क्लिष्ट है, अनुवाद कार्य मे श्री जी रे वॉर्ड की सहायता के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। इस कविता की भाषा प्रामाणिक व्याकरण की भाषा से कई स्थलो मे नही मिलती है और इसकी चर्चा हम यहाँ कर सकते है। 'वरगुज़ीदा-न्ने' (पद २८) में विकृत रूप का अन्त 'अ' में होता है 'ए' मे नही। यह केवल अक्षर-विन्यास की ही वात हो सकती है क्योकि अधिकाश विद्वान् ऐसे स्थलो मे अन्त मे 'अ' लिखते है किन्तु पढते 'ए' ही है। पद २८ में 'समझा' का प्रयोग अकर्मक क्रिया की तरह हुआ है। लखनऊ मे अभी भी इस प्रकार के प्रयोग का प्रचलन है और इसका उदाहरण उपर्युक्त पद मे मिल जाता है। पद १३ में 'दे-है' मिलता है जो ऊपरी दोआब में 'देता-है' का वोलीगत रूप है। पद २५ मे 'रुखसत' पुल्लिग क्रिया के साथ अन्वित हुआ है। पद १४ मे 'मुझ-को के स्थान पर 'मुज-को' होना चाहिए।

[सं० ११]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (उर्दू काव्य)

(मीर मुहम्मद तकी)

कहानी

शाइक - ए - फन था वज़ीर - ए - इस्फहान,
एक दिन आया हिलाली उस - के याँ।

हाजिबाँ - ए - दर - से हो आगाह - ए - कार,
की इमारत ता उसे दें घर- में बार ।
इज्जत - ओ - ताज़ीम की हद्द - से ज़ियाद,
पास ले, मसनद - पज बैठा, शाद शाद ।
उन - ने खैंची उस - की मिन्नाई बहुत,
बैठे बैठे रात जब आई बहुत ।

(५) शेर - की तकरीब ला - कर दरम्याँ,
करने लागा शाइरी - का इम्तिहाँ ।
शेर - ख्वानी की, पटा सो था गलत,
सुनते - ही भड़का वोह शोले - की नमत ।
गुस्से हो बोला कि, 'हाँ, फर्राश - ओ - चूब,
खैंच - ला मैदाँ - में की शल्लाक खूब ।
इस - क़दर मारा कि बे- थम हो - गया,
सूज दस्त - ओ - पा हर - इक थम हो - गया ।
'खैंच - कर टलवा - दिया दरबार - में,'
येह खबर पहुँची जो हर बाज़ार - में,

(१०) वारिस उस - के ले - गये आ रात - को,
जब ब - खुद आया तो पाया बात - को ।
यानि, 'दस्तूर - ए - जमाँ दुश्मन न था,
या वोह कुछ ना - आश्ना - ए - फन न था ।
ग़ालिबन पाया ग़लत अशआर - को,
खुश न आया उस करम - किरदार - को ।
वर्ना शेवा उस - का है लुत्फ - ओ - करम,
जायज़े - में दे - है दीनार - ओ - दिरम ।
मुज - को क्यूँ शल्लाक करता इतनी शब ?
काहे - को बदनाम होता बेसबब ?

(१५) पस, मुझे ही तरबियत अपनी ज़रूर,
जा - के बैठूं इक सर - आमद - के हुज़ूर ।
सोहबत अक्सर रक्खूं उस उस्ताद - से,
शायद उस - की दौलत - ए - इरशाद - से ।

पहुँचे इक स्तवे-को मेरी कौल-ओ-काल,
हो मुझे इस फन-में इक-गूना कमाल।'
उठ-के आया मौलवी जामी कने,
मश्क की यक-च द विन नामी कने।
जव हुआ कुछ शेर-का रतवा वुलन्द,
और मौलाना लगे करने पसन्द,

(२०) फिर गया इक दिन दर-ए-दस्तूर-पर।
हाजिव-ए-दरगाह-ने की जा खवर।
कि, 'ए अमीर, उस रोज़-का शल्लाक-ख्वार,
आज दर ऊपर है, फिर ख्वाहाने-ए-वार।'
की इशारत, 'सद्द-ए-रह कोई न हो,
कस्द है वर-खुर्द-का तो आने दो।
सामने आया तो की नीची नज़र।
धूप-में जलता-रहा तो इक पहर।
वाद अज़ आँ ईमा-ए-अवरू की कि, 'हाँ,'
सहन-ही-में-से हुआ वोह मव-ख्वाँ।

(२५) फिर वहीं-से दे सिला रुखसत किया,
इक मुसाहिव-ने जिगर कर-कर कहा,
'अगली सोहवत-की थी इज्जत इस-कदर,
सो हुई शल्लाक हद-से वेश्तर।
अभी उस-को जायज़ा दे-कर गिराँ,
तू-ने फरमाया मुरख्खस वाँ-से वाँ।
मैं न समझा यह कि वोह क्या था ये क्या,'
दर जवाव उस वर-गुज़ीदा-ने कहा,
'ऐसी-ही होती-हैं तज़हीक-ए-सलफ?
दस्त हो तो उन-कि तईं करिए तलफ।

(३०) इस-कदर उस-का तनव्वोह था जरूर,
ता-कि पहुँचे यह खवर नज़दीक-ओ-दूर।
जो सुने, सो खुद-सरी-से वाज़-आय,
तरवियत होने-को उस्तादों-की जाय।

वर-ना करता पूच-गोई हर दवग,
रफ़्ता-रफ्ता शायरी हो जाती नन्ग ।
तव जो में शल्लाक की यह खाम था ।
अब जो आया लायक-ए-इनआम था ।
किस्सा कोता । थे मुमय्यिज़ दरम्याँ,
नग है किर्म-ए मजाविल-पर भी याँ ।

(३५) वे-तमीज़ी-से है रायज अवतरी,
जिस-को देखो खुद-नुमाई खुद-सरी ।
ने वयाँ-का है सलीका ने जवाँ,
इस-पा है हर-एक सहवान-ए-वयाँ ।
वस कलम ! वक्त-ए-ज़वाँ-वाज़ी नहीं,
चुप कि दौरान ए-सुखन-साज़ी नही ।
कौन हर्फ-ए-खूव-को करता-है गोश ?
वात-की फहमीद-का है किस-को होश ?
वे-तमीज़ो-से भरा है सव जहाँ,
है दिमाग-ए-हर्फ हम-को भी कहाँ ?

आधुनिक उर्दू काव्य

उर्दू काव्य के एक अन्य उदाहरण के रूप मे अव मैं शमसुल उलमा मौलवी सैयद अलताफ हुसैन अन्सारी पानीपती, जो हाली के नाम से प्राय. जाने जाते हैं की कुछ पक्तियाँ दे रहा हूँ । दिल्ली के लेखको के जिस नये वर्ग मे नजीर अहमद का स्थान है उसी में इनकी भी गणना होती है । हाली को काव्य-क्षेत्र में विशेष ख्याति मिली है जैसी कि नज़ीर अहमद को गद्य-क्षेत्र में । काव्य मे अतिशयोक्ति के आधिक्य का उन्मूलन और सहज भावाभिव्यक्ति इनका ध्येय है। 'कविता' को सबोधित हाली की पक्तियो मे शैली-सारल्य पर वल दिया गया है। इन पक्तियो को पढने से पता चलता है कि अनेक फारसी शव्दो के प्रयुक्त होने पर भी इनकी शैली मे सरलता के साथ-साथ विचार और अभिव्यक्ति की प्राजलता भी है। यह पाठ, श्री जी०ई० वॉर्ड के सस्करण 'हाली के चतुष्पद' से उद्धृत है और इसके लिए उन्होने कृपापूर्वक अनुमति दे दी है।

[सं० १२]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (आधुनिक उर्दू काव्य)

(हाली)

अय शेर दिल-फ़रेब न हो तू, तो गम नहीं,
पर तुझ-पञ्च हैफ है, जो न हो दिल-गुदाज तू।
सनअत-पञ हो फ़िरेफ्ता आलम अगर तमाम,
हाँ, सादगी-से आइयो अपनी न बाज़ तू।
जौहर है रास्ती-का अगर तेरी ज़ात-में,
तहसीन-ए-रोजगार-से है बेनियाज़ तू।
हुस्न अपना गर दिखा नहीं सकता जहान-को,
आपे-को देख-और कर अपने-पञ्च नाज़ तू।

५ तू-ने किया-है वहर-ए-हकीकत-को मौज-खेज़;
धोके-का गर्क कर-के, रहेगा जहाज़ तू।
वो दिन गए, कि झूट था ईमान-ए-शायरी,
क्विला हो अब उधर, तो न कीजो नमाज़ तू।
अहल-ए नज़र-की आँख-में रहना है गर अज़ीज़,
जो बे-बसर हैं, उनसे न रख साज़-बाज़ तू।
नाक ऊपरी दवा-मे तेरी गर चढाएँ लोग,
मअजूर जान उन-को-जो हो चारा-साज़ तू।
चुप-चाप अपने सच-से किये-जा दिलों-मे घर;
ऊँचा अभी न कर अलम-ए इम्तियाज़ तू।

१० जो ना-बलद हैं उन-को बता चोर बन-के राह;
गर चाहता-है खिज्र-की उम्र-ए-दराज़ तू।
इज्ज़त-का भद मुल्क-की खिदमत-मे है छिपा,
महमूद जान आप-को गर है अयाज़ तू।
अय शेर-राह-ए-रास्त-पञ्च तू जब कि पड-लिया,
अब राह-के न देख निशेब-ओ-फराज़ तू।

करनी है फतह गर नयी दुनिया तो ले - निकल
बेड़ों - का साथ छोड - कर, अपना जहाज तू ।
होती - है सच की कद्र - पञ बे - कद्रियो के वाद,
इसके खिलाफ हो, तो समझ उस - को शाज़ तू ।
१५. जो कद्र - दाँ हो अपना, उसे मुगतनम समझ,
हाली - को तुझ - पञ नाज है, - कर उस - पञ नाज़ तू ।

वनारस की उत्कृष्ट साहित्यिक हिन्दी

अपव्ययी पुत्र-कथा का निम्नलिखित भाषान्तर वनारस मे प्रचलित सस्कृत-प्रधान साहित्यिक हिन्दी मे डा० श्यामसुन्दर दास द्वारा लिखा गया है। इसमे सस्कृत शव्दो का आधिक्य है। पहले वाक्य में ही दो सस्कृत शव्द प्रयुक्त हुए है–'मनुष्य' और 'पुत्र'।

[स० १३.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (हिन्दी प्रकार) (वनारस)

(वावू श्यामसुन्दर दास, १८९९)

किसी मनुष्य के दो पुत्र थे। उन-मेँ-से छुटके-ने पिता-से कहा कि हे पिता अपनी सपत्ति-मेँ-से जो मेरा अश हो सो मुझे दीजिए। तव उस-ने उन-को अपनी सपत्ति वाँट दी। कुछ दिन वीते छुटका पुत्र सव कुछ इकट्ठा कर-के दूर देश चला गया और वहाँ लुचपन-में दिन विताते-हुए उस-ने अपनी सपत्ति उडा-दी। जव वह सव कुछ उडा चुका तव उस देश-में वडा अकाल पडा और वह कगाल हो-गया। और वह जा-के-उस देश-के निवासियों-में- से एक-के यहाँ रहने लगा। जिस-ने उसे अपने खेतो-में सूअर चराने-पर रक्खा। और वह उन भोथो-से जिन्हें सूअर खाते-थे अपना पेट भरना चाहता-था क्योकि उस-को कोई कुछ नही देता-था। तव उसे चेत हुआ और उस-ने कहा कि मेरे पिता-के यहाँ कितने मजूरों-के-खाने-पर भी वहुत रोटियाँ वची रहती-हैं और मैं भूख-से मरता-हूँ। मेै मैं उठ-के अपने पिता-के पास जाऊँगा और उन-से कहूँगा कि हे पिता मैं-ने स्वर्ग-दैव-से विरुद्ध और आप-के सामने पाप किया- है। इस-लिए मैं फिर आप-का पुत्र कहाने-के योग्य नहीं हूँ। मुझे अपने मजूरों-में-से एक-के समान समझिए। तव वह उठ-के अपने पिता-के पास चला। पर दूर-ही-से उस-के पिता-ने उसे देख-के दया की और

दौड़-के उस-के गले-में लिपट-के उसे चूमा। पुत्र-ने उस-से कहा कि हे पिता मैं-ने स्वर्ग-दैव-से विरुद्ध और आप-के सामने पाप किया-है। इस-से अब आप-का पुत्र कहाने-के योग्य नहीं हूँ। परतु पिता-ने अपने दासों से कहा कि सब-से उत्तम वस्त्र निकाल-के इसे पहिराओ और इस-के हाथ-में अँगूठी और पावों-में जूते पहिराओ। और हम-लोग मिल-कर खावें और आनन्द करें क्योंकि यह मेरा पुत्र मर-गया-था फिर जीआ है खो-गया-था फिर मिला-है। तब वे आनन्द करने लगे।

उस-का जेठा पुत्र खेत-में था। और जब वह आते-हुए घर-के निकट पहुँचा तब उस-ने बाजा और नाच-का शब्द सुना। और उस-ने अपने सेवकों-में-से एक को अपने पास बुला-के पूछा कि यह क्या है। उस-ने उस-से कहा कि आप-का भाई आया है सो आप-के पिता-ने उत्तम भोज दिया-है इस-लिए कि उसे भला चगा पाया-है। यह सुन उस-ने क्रोध किया और लौटना चाहा। इस-पर उस-का पिता बाहर आ उसे मनाने लगा। उस-ने पिता-को उत्तर दिया कि देखिए मैं इतने बरसों-से आप-की सेवा करता-हूँ औ कभी मैं-ने आप-की आज्ञा-का उल्लघन नहीं किया। और आप-ने मुझे कभी एक मेमना भी न दिया जिस-से अपने मित्रों-के सग में आनन्द करता। परन्तु आपका यह पुत्र जिस-ने वेश्याओं-के सँग आप-की सपत्ति उड़ा-दी-है ज्यों-ही आया त्यों-ही आप-ने उस-के लिए उत्तम भोजन बनवाया-है। पिता-ने उस-से कहा कि हे पुत्र तू सदा मेरे सग है। इस-लिए जो कुछ मेरा है सो सब तेरा है। परन्तु आज तुझे आनन्द करना और हर्षित होना उचित था क्योंकि यह तेरा भाई मर-गया-था फिर जीया है खो-गया-था फिर मिला है॥

उत्कृष्ट हिन्दी के एक अन्य उदाहरण के रूप में ब्रिटिश और विदेशी बाइबिल सोसाइटी के तत्त्वावधान में प्रकाशित इस कथा का प्रामाणिक हिन्दी रूपान्तर दे रहा हूँ। पिछले रूपान्तर से यह बहुत अधिक मिलता है।

[सं० १४.]

भारतीय-आर्य परिवार　　**केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (प्रामाणिक हिन्दी)
(उत्तर भारत बाइबिल सोसाइटी, १८९८)

किसी मनुष्य के दो पुत्र थे। उनमें से छुटके ने पिता से कहा हे पिता सम्पत्ति में से जो मेरा अंश होय सो मुझे दीजिए। तब उसने उनको अपनी सम्पत्ति बाँट दिई। बहुत दिन नहीं बीते कि छुटका पुत्र सब कुछ एकट्ठा करके दूर देश चला गया और वहाँ

लुचपन मे दिन बिताते हुए अपनी सम्पत्ति उडा दिई। जब वह सब कुछ उडा चुका, तब उस देश मे बडा अकाल पडा और वह कगाल हो गया। और वह जाके उस देश के निवासियो मे से एक के यहाँ रहने लगा जिसने उसे अपने खेतो मे सूअर चराने को भेजा। और वह उन छीमियो से जिन्हे सूअर खाते थे अपना पेट भरने चाहता था और कोई नही उसको कुछ देता था। तब उसे चेत हुआ और उसने कहा मेरे पिता के कितने मजूरो को भोजन से अधिक रोटी होती है और मै भूख से मरता हूँ। मै उठके अपने पिता पास जाऊँगा और उससे कहूँगा हे पिता मैने स्वर्ग के विरुद्ध और आपके साम्ने पाप किया है। मैं फिर आपका पुत्र कहावने के योग्य नही हूँ मुझे अपने मजूरो मे से एक के समान कीजिए। तब वह उठके अपने पिता पास चला पर वह दूर ही था कि उसके पिता ने उसे देख के दया किई और दौड के उसके गले मे लिपट के उसे चूमा। पुत्र ने उससे कहा हे पिता, मैने स्वर्ग के विरुद्ध और आपके साम्ने पाप किया है और फिर आपका पुत्र कहावने के योग्य नही हूँ। परन्तु पिता ने अपने दासो से कहा सबसे उत्तम वस्त्र निकाल के उसे पहिनाओ और उसके हाथ मे अँगूठी और पाँवो मे जूते पहिनाओ। और मोटा बछडू लाके मारो और हम खावे और आनन्द करे। क्योकि यह मेरा पुत्र मूआ था फिर जिआ है खो गया था फिर मिला है। तब वे आनन्द करने लगे ॥

उसका जेठा पुत्र खेत मे था और जब वह आते हुए घर के निकट पहुँचा तब बाजा और नाच का शब्द सुना। और उसने अपने सेवको मे से एक को अपने पास बुला के पूछा यह क्या है। उसने उससे कहा आपका भाई आया है और आपके पिता ने मोटा बछडू मारा है इसलिए कि उसे भला चगा पाया है। परन्तु उसने क्रोध किया और भीतर जाने न चाहा। इसलिए उसका पिता बाहर आ उसे मनाने लगा। उसने पिता को उत्तर दिया कि देखिए मै इतने बरसो से आपकी सेवा करता हूँ और कभी आपकी आज्ञा को उल्लघन न किया और आपने मुझे कभी एक मेम्ना भी न दिया कि मै अपने मित्रो के सग आनन्द करता। परन्तु आपका यह पुत्र जो वेश्याओ के सग आपकी सम्पत्ति खा गया है ज्योही आया त्योही आपने उसके लिए मोटा बछडू मारा है। पिता ने उससे कहा हे पुत्र तू सदा मेरे सग है और जो कुछ मेरा है सो सब तेरा है। परन्तु आनन्द करना और हर्षित होना उचित था क्योकि यह तेरा भाई मूआ था फिर जीआ है खो गया था फिर मिला है ॥

संयुक्त प्रान्त, पजाब, मध्य प्रान्त, राजपूताना और मध्य भारत की हिन्दोस्तानी

आगरा और अवध में बोली जानेवाली हिन्दोस्तानी के और उदाहरण देने की अब आवश्यकता नही है। लखनऊ मे व्यवहृत भाषा के यथेष्ट उदाहरण दिये जा चुके है।

शेप प्रान्तो में, जहाँ की स्थानीय भाषा हिन्दोस्तानी नही है, उच्चवर्गीय मुसलमान, देशी ईसाई और पढे लिखे हिन्दू सामान्य भापा के रूप मे इसका प्रयोग करते हैं और इस रूप मे इसका प्रचलन प्राय वडे-वडे नगरो मे है। यही स्थिति पजाव, मध्य प्रान्त, राजपूताना और मध्य भारत की है।

पूर्वी भारत की हिन्दोस्तानी

हिन्दोस्तानी आसाम, वगाल, विहार और उडीसा मे भी वोली जाती है। आसाम मे केवल बाहर से आये हुए लोगो द्वारा इसका व्यवहार होता है। विहार मे सयुक्त प्रान्त के समान इसका प्रचलन है किन्तु कुछ कम मात्रा मे। मध्यवर्गीय मुसलमान इसकी जगह अवधी का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र मे तीन भाषाएँ व्यवहृत होती हैं— जनसाधारण द्वारा विहारी, गाँव के मध्यवर्गीय मुसलमानो द्वारा अवधी और वडे-वडे नगरो तथा उच्चवर्गीय मुसलमानो मे हिन्दोस्तानी का प्रयोग होता है। विहार मे हम जैसे-जैसे पूर्व की ओर जाते है अवधी का तिरोभाव हो जाता है। वगाल के अधिकाश मुसलमान वगाली वोलते है जिसमें फारसी और अरवी शब्दो का मिश्रण होता है किन्तु उच्चवर्गीय मुसलमान (इनके विवाह-सवध वहुत वार उत्तरी भारत में होते है) उर्दू वोलते है जो प्राय उत्कृष्ट कोटि की होती है। पश्चिमी वगाल में हिन्दोस्तानी का अधिक प्रचार है और वीरभूमि मे मुसलमान अधिकतर यही वोलते हैं। वास्तव मे पश्चिमी वगाल और उडीसा के मुसलमानो ने हिन्दोस्तानी भाषा को इतना अधिक अपनाया है कि जव कभी कोई परिवार मुसलमान धर्म ग्रहण करता है तो वह अपनी भाषा भी वदल देता है। उदाहरणस्वरूप वलसोर का गरपादा भुइया परिवार पहले हिन्दू था किंतु मुसलमान होने के वाद इन्होने अपनी देशी भाषा उडिया छोड दी और स्व-धर्मावलम्वियो द्वारा व्यवहृत हिन्दोस्तानी को अपना लिया।

उडीसा में यद्यपि जनसख्या का अत्यधिक छोटा भाग मुसलमानो का है किन्तु उन्होने अपने घरेलू जीवन की भाषा के रूप मे व्याकरणसम्मत न होते हुए भी वहुत कुछ शुद्ध उर्दू सुरक्षित रखी है।

वगाल के उच्चवर्गीय मुसलमान हिन्दोस्तानी लिखने के लिए फारसी लिपि का प्रयोग करते है। निम्न-वर्ग के पढे-लिखे लोगो मे प्राय वगाली अथवा नागरी लिपि प्रचलित है। विशेप रूप से, पूर्वी वगाल के मुसलमानो मे सामान्यत नागरी का ही व्यवहार होता है। वगाली हिन्दोस्तानी के उदाहरण के लिए मैं अपव्ययी पुत्र का एक अश दे रहा हूँ। इसमे वीरभूमि के मुसलमानो की भाषा पर प्रकाश पडता है। यह नागरी लिपि मे प्राप्त हुई थी। केवल इसकी वर्तनी के सवध मे ही कुछ कहा जा सकता है। अपने

चारो ओर वगला के प्रभाव के कारण वे लिखे गए ह्रस्व 'अ' का उच्चारण 'ऑ' की तरह करते हैं। अत. जव वे वगला या नागरी लिपि मे हिन्दोस्तानी लिखना चाहते हैं तो हिन्दोस्तानी ह्रस्व 'अ' को 'अ' की तरह नही लिखते हैं और कोई दूसरा वेहतर ढग न होने से 'आ' लिखते हैं। इस प्रकार वे 'हम' को 'हाम' लिखते हैं। कभी-कभी इस हिन्दोस्तानी 'अ' के स्थान पर 'ऍ' प्रयुक्त होता है जैसे 'लॅडका' मे। यदि वे 'हम' लिखेगे तो उनका उच्चारण 'हॉम' करेगे। इसके अतिरिक्त अन्य दृष्टियो से वीरभूमि हिन्दोस्तानी अथवा मुसलमानी (उस स्थान के लोग उसे इसी नाम से पुकारते हैं) शुद्ध नही है। वचन और लिंग की ओर विल्कुल ध्यान नही दिया गया है। मूल मे जहाँ कही ह्रस्व 'अ' लिखा गया है लिप्यन्तरित करने मे मैंने 'ऑ' दिया है। वगाली से आये हुए शब्दो मे ही ऐसा किया गया है जैसे विषय के लिए 'विषॉय' अर्थात् जायदाद। वगाली प्रभाव का दूसरा उदाहरण 'गया' के स्थान पर 'गिया' का प्रयोग है। जैसा कि हम देखेगे कि, मद्रास मे भी, कर्त्ता कारक में 'ने' का प्रयोग नही होता है।

[सं० १५.]

भारतीय-आर्य परिवार — केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी वीरभूमि मुसलमानी — जिला वीरभूमि

एक आद्मी का दो लॅडका रहा। उस लोक—के वीच—में छोटा लॅडका आपना वाप—को वोला, वाप—जी, विसॉय—का जो भाग हाम—को मिलेगा ओ भाग हाम—को देओ। ओ उस लोक—को विसॉय भाग—कर—दिया। थोडा दिन वाद छोटा वेटा मव कुछ विसॉय एक जायगा कर—के दूर देश चला गिया अर उस जायगा—में सो आपना खाराप खियाल—में विसॉय—को उडा दिया।

उडीसा की हिन्दोस्तानी फारसी लिपि में नही लिखी जाती है। कुछ थोड़े-से पढे-लिखे मुसलमान उडिया लिपि मे लिखते हैं। उदाहरण के लिए मैं अपव्ययी पुत्र कथा का एक भाग दे रहा हूँ। वीरभूमि मुसलमानी के ममान ही यह भी व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है। कर्त्ता कारक में 'ने' का प्रयोग नही हुआ है और लिंग तथा वचन की ओर भी कोई ध्यान नही दिया गया है। कर्म और सम्प्रदान कारक के प्रत्यय 'को' के स्थान पर प्रयुक्त उड़िया (दक्खिनी हिन्दोस्तानी भी) रूप 'कु' भी दृष्टव्य हैं।

[सं० १६.]

भारतीय–आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (उड़ीसा के मुसलमानो की) ज़िला कटक

एक आदमी–का दो लडका था। और ओ लोग–के विच–से छोटा वावा–कु कहा, 'वावा, हमारा जो हिसा होता है ओ हम–कु दो।' और ओ ओ लोग–के विच–मे उस–का दौलत वाँट दिया। और थोडे रोज़–के वाद छोटा लडका सव एकट्ठे किआ और परदेस–कु गया, और उहाँ–पर उस–का सव दौलत फयेल–वाजी–में लोक्सान कर दिया।

गुजरात की हिन्दोस्तानी

गुजरात के मुसलमानो द्वारा वोली जाने वाली हिन्दोस्तानी काफी शुद्ध है—वगाल और उडीसा से वहुत अच्छी है। चारो ओर के हिन्दुओ द्वारा प्रयुक्त गुजराती से स्वभावत वहुत-कुछ प्रभावित है। यह प्रभाव मुख्यत. शव्दावली मे दिखायी पडता है। साधारणत शव्दावली अरवी और फारसी शव्दो से स्पष्टत मुक्त है और यदि ऐसे शव्द कही आते हैं तो उनके रूप प्राय. विचित्र ढग से विगाडे गये हैं। दूसरी ओर कुछ गुजराती शव्द ले लिये गये हैं विशेष रूप से अधिक प्रचलित 'ने' अथवा 'अने'। साधारणत व्याकरण के नियमो का पालन हुआ है। लिखने मे कभी फारसी लिपि का प्रयोग होता है और कभी गुजराती का।

पहला उदाहरण फारसी लिपि मे है। "उत्तर, मध्य और दक्षिण गुजरात के मुसलमानो द्वारा प्रयुक्त उर्दू की गुजराती वोली" के नमूने के लिए यह ववई के आयात-कर के कलेक्टर ने भेजा था। इसकी निम्नलिखित विशेपताओ की ओर ध्यान देना चाहिए।

'एक' के लिए 'ऐक' प्रयुक्त हुआ है। अरवी शव्द 'फजूल' 'फडूल' हो गया है और 'सफर' के स्थान पर 'सफ्र' है। दक्खिनी रूप 'अपस' का अप्रधान कारक 'अपस–के' की तरह प्रयोग हुआ है। प्रामाणिक उर्दू मे 'आपस' (प्रथमाक्षर दीर्घ 'आ') का प्रयोग केवल वहुवचन मे होता है।

'ने' (और) 'भेगना' (इकट्ठा करना), 'पाड–देना' (पूरी तरह से वनाना) आदि गुजराती रूप है।

हिन्दोस्तान की स्थानीय बोलियो में प्रचलित कुछ रूप प्रामाणिक उर्दू में नहीं मिलते हैं किन्तु ये गुजरात मे चल रहे हैं। जैसे 'उनों–में,' (उनमे), 'कया' (कह्या के लिए), और 'सफरों' (यात्रा मे)।

[सं० १७] भारतीय–आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (गुजरात प्रकार)

एक आदमी–के दो बेटे थे। ने उनों–में–के छोटे–ने कया, 'बावा, मुझे मेरे भाग–का माल दे–दे।' तिस–पर बाप–ने अपस–के संसार–के उनों–में भाग पाड–दिया। ने घने दीवस ना निकले—थे कि छोटे छोकरे–ने सब भेगा किया, ने कोई दूर देस–की सफरों गया, ने वाँ अपस–का धन फडूलियों–में उडा–दिया।

निम्नलिखित लघु कथा सूरत से ली गयी है। पिछले उदाहरण से यह कहीं अधिक फारसी-बहुल है। लेखक ने अपना नाम 'काज़ी' लिखा है। अनियमितता केवल गुजरात मे प्रचलित 'और' की जगह 'ओर' तथा 'हैं' की जगह 'हे' उच्चारणो में ही है।

[सं० १८]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (गुजरात प्रकार) जिला सूरत

कहानी

एक शख्स ने अरज़ी किसी हाकिम–के नाम लिखी, और उस–में कुछ का कुछ लिख–गया, और जवाब उस–का तलब हुआ। बारे फज्ल–ए खुदा–से हाकिम–ए मुन्सिफ–की राय–में वोह कसूर–मन्द असदन साबित न हुआ, और मुआफ कर–दिया–गया। तो उस–को उस–के बाप–ने जवाब लिखा, 'ऐ मेरे प्यारे फ़र्ज़न्द, इसान–को चाहिए कि आँख खोल–कर, और बहुत देख-भाल–कर काम किया–करे, कि गफलत–से इतना धोखा न खाये, कि जिस–से आप दु ख उठाये। इस पर यह नकल,—एक शख्स–ने किसी तबीब–से कहा कि, "मेरा पेट दुखता–है।" तबीब–ने पूछा कि, "आज क्या खाया था?" कहा कि, "जली रोटी।" कहा गया कि तबीब–ने उसे सुरमा दिया, और कहा कि, "आँख–का इलाज पहले करना चाहिए, किस–वास्ते कि आँख अच्छी होती, तो

जली रोटी न खाता।" हासिल यह कि सरकार–का काम वहुत होशियारी और खवरदारी-से कीजिए। और गफलत न कीजिए। '

अगला उदाहरण अपव्ययी पुत्र-कथा का एक अग है जो महिकन्थ पॉलिटिकल एजेंसी से प्राप्त हुआ है। यह गुजराती लिपि मे लिखा गया है। सामान्य शैली की दृष्टि से यह ववई से प्राप्त उदाहरण से मिलता है। यह फारसी से अधिक प्रभावित नही है और इसमे गुजराती भाषा के कुछ रूप प्रयुक्त हुए है। जैसे गुजरात मे अन्यत्र सयुक्त स्वर 'औ' 'ओ' हो जाता है। उदाहरण स्वरूप 'और' तथा 'दौलत'। सर्वनामो के वचनो के प्रयोग मे नियमितता का वहुत कुछ अभाव है जैसे 'उन-में–के' की जगह 'उन-में-के' का प्रयोग। स्वर 'ओ' कभी-कभी 'उ' हो जाता है जैसा कि भारत के ऊपरी भाग की वोलियो में भी हो जाता है। इस प्रकार सम्प्रदान और कर्मकारक का चिन्ह 'कुँ' है, 'को' नही तथा सज्ञाओ के अप्रधान वहुवचन के रूपो के अन्त मे 'उँ' आता है 'ओं' नही। प्रथम पुरुष सर्वनाम का अप्रधान एकवचन 'मुज' है 'मुझ' नही, यह भी भारत के ऊपरी भाग की वोली का रूप है। कभी-कभी गुजराती शब्द प्रयुक्त होते हैं जैसे 'छेटे' (दूर) तथा 'भेगना' (एकत्र करना)।

[सं० १९]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (गुजरात प्रकार) महिकन्थ एजेंसी

एक आदमी–के दो वेटे थे। और उस–में–के छोटे–ने वाप–कूं कहा के, 'वापु मिलकत–का मेरा हिस्सा मुझ-को दे।' और उस–ने उन–कूं दौलत वेंहेच दी। और थोड़े दिन पीछे, छोटा वेटा, सव भेगी कर-कर छेटे मुलक–मे गया, और वाँ मौज–मजे–में अपनी दौलत उडा दी। और उस–ने सव खरच–डाले, पीछे उस देश–में वडा दुकाल पडा, और उस–कुँ तगाई पडने लगी। और वो जा-कर उस मुलक–के रहनेवालुं–में–से एक–के वहाँ रहा, और उस–ने उस–कुँ अपनें खेतर–में भूंडूं–कुँ चराने वास्ते भेजा। और जो फोतरां भूंड खाते–थे, उन–में–सें अपना पेट भरने–कुँ उस–का दिल था, और उस–कुँ किसी–नें दिया नही।

कच्छ की हिन्दोस्तानी

कच्छ मे बोली जाने वाली हिन्दोस्तानी पिछले उदाहरणो से अधिक विकृत है। यह गुजराती से भरी है और इसकी अपनी कुछ स्थानीय विशेषताएं है। उदाहरण के लिए एक लघु लोक-कथा दे रहा हूं। अनियमितताओ का पूरा व्यौरा देने की आवश्यकता

नही है, किन्तु कुछ प्रमुख विचारणीय बाते नीचे दी गयी है। निम्नलिखित कुछ रूप प्राचीन बोली के रोचक अवशेष है जो अन्यत्र हिन्दोस्तानी की सामान्य श्रेणी में परिनिष्ठित कर लिये गये हैं। जैसे, विशेष रूप से, प्रथम पुरुष सर्वनाम के कर्त्ताकारक के लिए 'हूँ' का प्रयोग, जबकि कर्त्ता के लिए 'मैं' निश्चित है। प्रामाणिक हिन्दोस्तानी में 'हूँ' का अब प्रयोग नही होता है और कर्त्ता के लिए 'मैं' व्यवहृत होता है यद्यपि उत्पत्ति के विचार से यह करण कारक है।

यहाँ गुजरात में प्रचलित परिवर्तित रूप जैसे 'एसा' मे 'ऐ' की जगह 'ए' तथा 'है' के लिए 'हे', और 'में' हैं। जब धातु के अन्त मे 'ह्' आता है तो क्रियाओ का प्राय लघु-करण हो जाता है। भारत के ऊपरी भाग की बोलियो मे भी यह पाया जाता है। इसके कुछ उदाहरण 'रैयाँ', 'कया' तथा 'केता हे' है।

स्त्रीलिंग सज्ञाओ मे कर्त्ता बहुवचन 'आँ' मिलता है जैसे 'आँखाँ', 'चीजाँ'। बहुवचन में स्त्रीलिंग सज्ञाओ के विशेषणो का अन्त भी 'आँ' से होता है जैसे 'रैयाँ' 'साजियाँ', ('आँखाँ' के साथ)। कभी-कभी नपुसक लिंग विशेषण भी मिल जाते हैं जैसे देणाँ (पुल्लिग) देणी (स्त्रीलिंग), देणाँ (नपुसक लिंग)।

अप्रधान बहुवचन का अन्त 'ऊँ' से होता है, इसलिए 'को' के लिए भी 'कूँ' प्रयुक्त होता है। अत 'वैद्य-कूँ', 'आँखूँ-माँ'।

सर्वनामो में 'हूँ' 'मैं' है जिसका कर्त्ता 'मेरे' अथवा 'मैं' है। 'तिजे' का अर्थ 'तुझे' है। गुजराती 'पोतूँ' का प्रयोग 'अपने' के अर्थ मे होता है। 'और' के लिए गुजराती शब्द 'अने' है।

[सं० २०.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (गुजरात प्रकार) **जिला कच्छ**

एक डोसी–की आँखाँ रैयाँ। तवाँ तिस–नें साजी करणे सारु एक वैद्य–कूँ बुलाया; अनें साखसी रखनें ऐसा वडाड किया के, 'जो तूँ मेरी आँखाँ साजियाँ करेगा तो मेरे तिजे चाकरी देणी; पण आँख साजी न होय तो काँईं तिजे देणाँ नँईं।' ऐसा करार करनें पिछें ते वैद्य वखते—वखत आवे तिस–की आँखूँ–माँ पोटूँ–की दवा लगाता, अनें जवाँ-जवाँ आवता तवाँ-तवाँ काँडँ–के–काँडँ ले जाता। ड्यूँ करते थोडे-थोडे करनें तिस–की बधी मिलकत चुरा–लीती। अनें जवाँ तिस–का जिता था तिता बवे तिस–के हाथ–माँ आव्या, तवाँ तिस–नें तिस–की आँखाँ साजिआँ कीतिआँ, अनें करार प्रमाँणें पैसे माँगे।

डोसी जवाँ देखती हुई, तवाँ घर–माँ पोटूं–की काँइँ चीज देखी नँईं। वास्ते इस–कूं काँइँ दिया नँईं। वैव हणो-हण करनेँ लगा त-पण डोसी–नेँ काँइँ उसे वाध न दिया। तिस–ऊपर–थी ते तिस–कूं धरवार माँ बोला गया।

डोसी–नेँ धरवार–माँ कयाके, 'ई माँणस जे केता हे, ते साची वात हे, कारण के जो मेरी आख साजी होय तो तिस–कूं पैसा दऊँ, पण अन्वी–ज रहूँ तो काँइँ न दऊँ, ऐसा करार था। हवे ओ केता हे के, ई साजी हो–रही–हे, पण हूँ साँमेँ, केती–हूँ के, हूँ तो अन्वी–ज हूँ। कारण के जवाँ मैं मोरी आँख खोई तवाँ हूँ घर–में घणीं तरीहँ–की चीजाँ अनेँ सारा सारा सामान देखती। पण हवे ई साँ खानेँ केता–हे के, इस–का अन्धापा गया हे, पण हूँ घर–में एक चीज देखती–नँइँ हूँ।'

दक्खिनी

ववई की दक्खिनी

ववई प्रेसीडेन्सी की दक्खिनी का अगला उदाहरण अपव्ययी-पुत्र-कथा के रूपान्तर का प्रथम अर्व-भाग है जो कलक्टर, आयात-कर विभाग, ववई के कार्यालय में तैयार की गयी है। इससे दकन के मुसलमानो की वोली पर प्रकाश पडता है।

जैसा ऊपर कहा जा चुका है, ववई की दक्खिनी मे सकर्मक क्रियाओ के भूतकालिक रूपो के पहले कर्ताकारक का प्रयोग छोडा नही गया है। प्रस्तुत उदाहरण मे तो यह प्रचलन प्रामाणिक हिंदोस्तानी से भी अधिक है।

उदाहरण के लिए 'वोलना' क्रिया का प्रयोग वरावर सकर्मक किया के रूप मे हुआ है जवकि प्रामाणिक वोली में यह हमेशा अकर्मक क्रिया होती है। इसके अतिरिक्त, कभी-कभी कर्त्ताकारक भूतकालिक अकर्मक क्रिया के साथ प्रयुक्त हुआ है, भारत के ऊपरी भाग की पश्चिमी हिन्दी की कुछ वोलियो में भी इस प्रकार के प्रयोग होते हैं। अत 'छोकरे-ने-गया', लडका गया का शाब्दिक अर्थ 'लडके के द्वारा वह गया' होगा। कुछ ऐसे उदाहरण भी है जहाँ मराठी का प्रभाव दिखायी पडता है। उदाहरण के लिए 'आपन' का प्रयोग उसके वास्तविक अर्थ 'अपना' के लिए भी हुआ है और सवोवित व्यक्ति को सम्मिलित करके 'हम' के अर्थ मे भी हुआ है। इसी तरह 'माजे' तथा मझे, (मुझे,) यह दोनो रूप भी उसी प्रभाव के कारण प्रयोग में आये हैं। 'मैं मेरे वाप–कदन जाऊँ', मे 'मेरे' का प्रामाणिक रूप 'अपने' होगा। यह गुजराती का प्रभाव ज्ञात होता है। 'और' के लिए 'अने' तथा 'ने' भी गुजराती है। वाक्य के प्रारभ में 'और' के अर्थ में 'भी' का प्रयोग भी अनियमित है। पश्चिमी हिन्दी और राजस्थानी की वोलियो मे 'और' की जगह 'हौर' का प्रचलन है।

दक्खिनी के कुछ विशिष्ट प्रयोग 'जिवर',—'कब' और 'कहाँ' के अर्थ में, 'वह' के लिए 'वू', 'किसी ने' की जगह 'कोई–ने', और 'था' के लिए 'अथा' हैं। अरबी और फ़ारसी के शब्दों की वर्तनी अनेक स्थानों पर ठीक नहीं है।

[सं० २१.]
भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (बंबई देकन की दक्खिनी) बंबई

एक आदमी के दो बेटे थे। उन-में-से छोटे छोडे–ने बोला, 'बावा, मेरे भाग–का माल माजे दे।' हौर उस-ने उन-में भाग पाड दिया। बोहुत दिन नही गये–थे, कि उस-के पीछे छोटे छोकरे–ने सब भडोला जम कर-कर कोई दूर गाँव–कू गया, भी उधर जा-कर सब माल हुल्लडपने–में बिगाड–डाला। तब उस मुलुक–में भारी दूकाल पडा, अने उस–कू तगी होने लगी। अने उस–ने जा–कर उस–गाँव वाले कोई आदमी की नौकरी पकडी। अने उन-ने उस–कू खेत में डुक्कर चराने–कू भेजा। जिवर वोह डुक्कर खाने-के कोडे–कू भी खाने–कू राजी अथा, पन वू भी उस–कू कोई-ने दिया नही। जिवर वोह अपने बुध–में आया, तद बोला, 'मेरे बाप-कने कितने मुलकारी हैं कि उन-कू इतना खाना मिलता–है कि खाकर बचे, ने मैं–भूख से मरता हूँ। मैं उठूं, ने मेरे बाप-कदन जाऊँ, ने उसे बोलूं कि, "अरे बाप, मैं–ने तेरे सामने पाप किया, सो तेरा बेटा बुलवानें–का मझे मूं नहीं है, मुझे एक मुलकारी समझ।" सो वोह उठा, और अपने बाप पास आया। पन जब वोह थोडे दूर अया कि उस–के बाप–ने उस–कू देखा, अने उसे प्यार आया। सो वोह भाग–कर उसे गले लगाया, ने मुबका लिया। अने बेटे–ने अपने बाप–कू बोला, 'बावा,, मैं–ने अल्लाह–के सामने अने तेरे सामने गूना किया, सो मैं तेरा बेटा बुलवाने–का सजावार नही।' पन बाप–नें अपने नौकरों–कू बोला कि, 'चौखोट वस्तर लाओ, ने इन–को पिनाओ, भी हाँथ–मैं छल्ला पिनाओ, ने पाँव–मे जूता पिनाओ। अने चलो, आपन खावें, ने खुशयाँ मनाएँ, क्यूँ–कि यह मेरा बेटा मरा था, सो फिर जीता हुआ, वोह गमा था, सो मिला।' सो वोह चमन करने लगे।

बबई की दक्खिनी का निम्नलिखित उदाहरण उत्तरी कनरा जिले से प्राप्त हुआ है। यह दक्खिनी हिंदोस्तानी अथवा मुसलमानी की पीछे दी गयी व्याकरणिक रूपरेखा से बहुत मिलता-जुलता है यद्यपि बबई नगर के नमूने की अपेक्षा यह प्रामाणिक उर्दू से अधिक भिन्न है। यहाँ कर्ता-कारक–चिन्ह 'ने' का बराबर प्रयोग होता है किंतु क्रिया मद्रास के प्रचलन के अनुसार कर्म की अपेक्षा कर्ता के लिंग, वचन एव पुरुष के अनुरूप होती

हैं। अकर्मक क्रियाओं के साथ भी कर्ताकारक का व्यवहार होता है यथा 'मैं—ने लाया—ऊँ', 'भाट—ने दो हण्डियाँ लाया', 'लोकाँ—ने खाना देने लगे' आदि।

उच्चारण की दृष्टि से 'स्' के 'श्' में परिवर्तन की प्रवृत्ति उल्लेखनीय है जैसे 'उशे' (उसे), 'पैशे' (पैसे), 'शिकाया' (सिखाया)। अंतिम उदाहरण में 'ख्' का महाप्राणत्व भी विलुप्त हो गया है। इसके साथ 'लाया—ऊँ', 'लेता—एँ' तथा 'मिलता—एँ' जैसे प्रयोगो मे सहायक क्रिया के प्रारंभिक 'ह्' का विलोप तुलनीय है। अरबी से ग्रहीत शब्द कभी-कभी परिवर्तित हो जाते हैं यथा 'शौखी' (शौकी), 'वखत' (वक्त)। 'लेजा-को' (लेजा-कर) एवं 'वज़ार' (बाज़ार) सदृश बलाघातहीन अक्षरो मे दीर्घ स्वरो के ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। यही स्थिति 'सरीखा' के लिए प्रयुक्त 'सर्का' की है। 'दालना' (रखना) मे मूर्धन्य 'ड्' दत्य हो गया है। यह सब परिवर्तन दक्खिनी की सामान्य विशेषताएँ हैं।

'था' के पर्याय 'अथा' एवं एकवचन के लिए बहुवचन का नियमित व्यवहार भी उल्लेखनीय है जैसे 'उस' के स्थान पर 'उन' तथा 'है' (वह है।) के लिए 'हैं' (वे हैं)। 'बोलना' क्रिया का प्रयोग सदैव सकर्मक रूप में होता है यथा 'भाट-ने बोल्या'। कहने तथा पूछने से संबंधित क्रियाएँ संबोधित व्यक्ति को अपादान की अपेक्षा कर्म मे रख देती है उदाहरणार्थ 'भाट—को पूछ्या' (उसने भाट से पूछा)। एक अन्य विशेषता कथा के किसी भी पात्र के प्रत्येक कथन के पश्चात् 'बोल—को बोल्या' अंश का जोडा जाना है।

मराठी से उधार-ग्रहण के भी कुछ उदाहरण मिलते हैं, 'वैसा—च्' (उस ढँग से भी) मे बलसूचक 'च्' तथा 'तोता' का 'रावाँ' पर्याय उल्लेखनीय है।

नमूने के लिए प्रस्तुत लोक-कथा मूल लिपिकार द्वारा अधूरी छोड दी गयी है।

[सं० २२.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (बंबई की दक्खिनी) **जिला उत्तरी कनरा**

'एक गाँव-में एक भट अथा। वोह जोगार—का वडा शौखी अथा। उस जोगार—के खेल—में अपनी सब घर-दार हार्या, और भीक माँगने को निकल्या। तब उस-के ज़ात—वाले लोकाँ—ने अपने दिल—में समजे कि, 'इन्हें भीक माँग लग्या, तो इकादे वखत दूसरे ज़ात—में भी जायँगा।' इस—वास्ते इस—के जात—के लोकाँ—ने हर रोज़ एक शेर चावल-का खाना पका—को देने लगे। यो भट हर रोज़ जा—को वोह खाना ले—को आता—था। एक दिन एक कुनबी एक जंगली रावें—को वेचने—को लाया। तौ वोह रावाँ उम्र—में वडा अथा, इस वास्ते कौन उशे लिया नई, की बोले तो वोह बात शीके सरका ने—था।'

'तौं वोह कुनवी फिर–को घर–को जाता–था, उस वखत–में वोह खाना लाता–था। सो भट–को वोह कुनवी मिल्या। तौ उस कुनवी–ने उस भट–को पूछ्या कि, 'यो रावां तू लेता—एँ, क्या ?' तौं उस भट–ने वोल्या कि, 'होई' मैं लेऊँगा, लेकिन मेरे–कने कुछ पैंशे नई, मेरे–कने जरा खाना हैं, इस–में–सो अदा खाना मैं तुजे देऊँगा।' तौ वोह कुनवी भूक्का अथा, इस–वास्ते उस कुनवी–ने उस वात–को कवूल कर–को रावाँ दिया। तौं उस भट–ने वोह रावाँ ले–को अपने घर–को आया, और उस खाने–में–का जरा खाना रावें–को डाल–को, वाकी खाना अपे खाया। जरा वखत हुए वादो वोह रावाँ भट–कने वात करने लग्या। तौं भट अपने दिल में वडा खुश हुआ, और रावें–को पूछ्या कि, 'तू क्या वोलता—एँ ?' तौं उस रावें–ने वोल्या कि, 'अरे भट, तुझे दिन-दरोज़ कितना खाना मिलता–एँ ?' भट–ने वोल्या, 'मुजे एक शेर–का मिलता–एँ।' तौ उस रावें–ने भट–को शिकाया कि, 'अभी तू उस लोकाँ–को वोल कि, "मजे इत्ता खानाँ–को चावल देओ, वोल–को वोल।' वैसा–च उस भट–ने जा–को उस लोकाँ–को वोल्या। तौं उस लोकाँ–ने उस–की वात क़वूल करी और उशे एक शेर चावल जरी लकडी ओर जरी दाल देने लगे। तौ उन्हें एक दिन वोह सारा ले–को अपने रावें–कने आया, और रावें–को वोल्या कि, 'तू–ने वोले सरका मैं–ने चावल लाया –ऊँ।' तौ वोह रावें ने वोल्या कि, इस–में–के अदे चावल वजार–में ले–जा–को वेच, तौं तुजे पाँच पैंशे मिलेंगे, तौ उस–में–सो तू एक वडी हडी और एक नन्ही हडी ले–को आओ, वोल–को वोल्या। तौं उस भट–ने वोह चावल वेच–को दो हण्डियाँ लाया, और रावें–के सामने रख्या। तौ रावें–ने वोल्या कि, 'उस वडी हंण्डी–में खाना पका और नन्ही–में दाले।' तौ उस भट–ने पकाया।'

दक्खिनी का अगला उदाहरण गोआ के उत्तर मे स्थित सावतवाडी राज्य का है। इसकी भाषा मद्रास की दक्खिनी के समान है; केवल एक महत्त्वपूर्ण अपवाद 'था' के पर्याय 'हता' का व्यवहार है। यह शब्द गुजरात, व्रज एव बुदेलखड में इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है। यहाँ यह सभवत. १० वी शताब्दी से सुरक्षित है जब रत्नगिरि तथा निकटवर्ती प्रदेश के शासक यादव थे। इस जाति का प्रमुख क्षेत्र व्रज है।

दक्खिनी के इस रूप की मुख्य विशेपताएँ इस प्रकार हैं —

उधार-ग्रहण में अरवी शब्दो में परिवर्तन हो जाता है यथा 'गरीव' (ग़रीव)', 'खातर' (खातिर)। अनियमित उच्चारणस्वरूप 'नमूँना' (माँगना) भी दृष्टव्य है। 'होर' (और) भारत के ऊपरी भाग का उपभाषीय रूप है। 'आछ्ना' शब्द 'होना' अर्थ का द्योतक है।

कर्ताकारक का चिह्न 'नी' है। संप्रदान के लिए 'के-नी' का व्यवहार होता है जैसे 'उस–के–नी' (उसको)। इससे सामान्य दक्खिनी रूप 'कने' का उद्गम स्पष्ट होता है।

जैसा कि कहा जा चुका है, 'हता' 'था' का पर्याय है। इसके अतिरिक्त 'लग्या–ता' (हुआ था) मे 'ता' भी मिलता है। यह भी बुदेली का ही रूप है। व्यवहार मे सहायक

क्रिया के वर्तमानकालिक रूप का महाप्राणत्त्व विलुप्त हो जाता है यथा 'आता-ओं' (आता हूँ।), 'न्हाट्त-ऍं' (तू भाग रहा है।) ।

कर्ताकारक का व्यवहार मद्रास के ढग से होता है अर्थात् क्रिया वचन एव लिग की दृष्टि से कर्ताकारक की सज्ञा के अनुरूप होती है, कर्म के नही। यह कारक-चिन्ह अकर्मक क्रियाओं के पूर्व भी प्रयुक्त होता है। इसके व्यवहार के कतिपय उदाहरण यह है, 'उन-नी बोल्या' (वह बोला।), 'उन-नी' बोली' (वह बोली।)', 'किनी मिलेले माल--को चाडी कर्या' (किसी ने मेरे गडे हुए धन का ढिंढोरा पीट दिया।), 'उन-नी मुण्डी हलाया' (उसने सिर हिलाया), 'उन-नी दिल में--लाया' (उसने सोचा।) ।

गुजराती का भूतकालिक कृदत 'एला' सामान्य है यथा 'भरेला तप्ला' (भरा वर्तन), 'मिलेला माल' (गंडा धन), 'दिएला तप्ला' (दिया हुआ वर्तन) ।

[सं० २३]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (बंबई की दक्खिनी) **सावंतवाडी राज्य**

एक गरीब बुड्डी सूत कातनेवाली हती। उस--का एक वेटा हता, उस--के--नी सूतक्याँ दो गुण्ड्याँ विकाने--के खातर उन--नी दिई। ओ जाते-जाते वाड़ी--के ऊपर एक सल्डा हता। उन--नी आदमी--कू देखते बरोबर डर--को मुण्डी हलाया। उन--नी बोल्या, 'मामू, तुम--ना होना तो यो लेओ।' दोनों गुण्ड्याँ बाडी--के उपर रख्याँ हौर घर-कू आया। माँ--नी पूछी, 'पैसे लाया क्या ?' 'मामू--नी मूंगे सो उसे दोनों दिया।' वजत उन--नी आपे कात--को बाजार--में ले--को गई। उकडे चावल लाई। थोडे दिन हुए। उन--नी बोल्या, 'मामूं--केनी--सू पैसे ले--को आता--ओं।' उन--नी बोली, 'चखोट,जा।' उस--के जिव--में खर्याँ--के मामूं--केनी--सू पैसे लानारा। व्हाँ--सू ओ गया। वाडी--के ऊपर एक मोटा सल्डा इसे देख्ते--के--बरोबर डर--को न्हाट्ने लग्या। 'मामू, न्हाट्त--ऍं कां ? पैसे देओ उस दिन--के, नइँ--तो सेप्डी--कू पकड--को अदलाऊँगा।' वजत वोह दौड्या; सन्गात ओ भी दौड्या। एक तप्ला रूपयाँ--सू भरेला जन्गल--में नजीक हता। उस--के ऊपर--सू सल्डा गया। उन--नी मामूं--का माल बोल--को भरेली परात उठा--को लाया। मारग--में उन--नी दिल--में लाया, 'यो रूपए पोले आछेंगे।' उन--नी सिर--को--

सूँ रूपए सारे ओत्या। तालु–के–ऊपर दो रुपए रह्ये घडे, बाकी सारे पोले। दो रुपए ले–को मा–केनी ला–को दिया। 'मामूँ–नी दिएले तप्ले–में–सू दो घटे, बाकी सारे पोले।' मा–नी वोली, 'चल, दीखा।' मा–नी जा–को सारे भर–को ले–को आई, होर घेंऊँ ओ गुड़ ला–को उस–के गुलगुले करी। गुलगुले कर–को घिऊ–में तली, होर पिछाडी–में चारो वाजू उडाई। वेटे–कू वोली, 'गुलगुल्याँ–का निऊँ लग्याँई, चुन–को ला–को खा।' ओ चुन–को खाते रह्या। थोडे दिन–मू किनी सरकार–में मिलेले माल–की चाडी कर्या। पोलिस तपास–में लिखा हुआ। दुसरा लिखा कोरट–में हुआ। वुड्डी–नी वोली, 'में–नी दिएली जवानी पोलिस–के डर–मूँ दी। खरा पूछे तो मजे कुछ मालूम नहीं। वेटे–कू पूछो।' वेटे–नी वोल्या, 'गुलगुल्याँ–का निऊँ लग्या–ता, तारीक, म्हैना, साल, दिन, मजे मालूम नईं, उस निऊँ–में मजे सारा माल मिल्या।' पूरावा मुद्दे–सीर उस–के–पर हुआ नईं। गुलगुल्याँ–का निऊँ कदी लग्या नईं। दिएली जवानी पोलिस–के डर–सू। विना पूरावे–के कोरट–की खात्री हुई नईं। 'छोरा अन्जान', वोल–को, 'कुछ–भी वोल्ता नईं, सवव खात्री होती नईं।'

मद्रास की दक्खिनी

वैसे भाषा-सर्वेक्षण की सीमा में मद्रास प्रेसीडेंसी अथवा हैदरावाद तथा मैसूर के निकटवर्ती राज्य नही आते लेकिन विषय की सपूर्णता के लिए मद्रास की दक्खिनी के उदाहरणस्वरूप अपव्ययी पुत्र-कथा का एक रूपातर प्रस्तुत है। इससे स्पष्ट हो जायेगा कि इसकी भाषा पूर्ववर्ती व्याकरणिक रूपरेखा की अनुवर्ती है। यहाँ करण कारक कही नही आता और कहने एव पूछने से सवधित क्रियाएँ सवोधित व्यक्ति को अपादान की अपेक्षा कर्म में रख देती हैं। यह दृष्टव्य है कि निकटवर्ती द्रविड भाषाओ के प्रभाव के कारण सवधवाचक सर्वनाम का यथासभव वहिष्कार किया जाता है।

[स० २४]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

हिन्दोस्तानी (मद्रास की दक्खिनी)

(सहायक वाइबिल सोसाइटी, मद्रास, सन् १८९४)

किसी आदमी–के दो वेटे थे। और उन–में–से छोटा वाप–कू कहा, 'ऐ वाप, मुझे पहुन्चता—है सो माल-का हिस्सा मुझे दे।' और वोह अप्नी ज़िन्दगानी उन-कू वाँट–दिया।

और वहुत दिन नही गुज़्रे कि छोटा वेटा सव कुछ जम कर-के एक दूर–के मुल्क–का सफर किया, और वहाँ अप्ना माल वदमाशी–में उडाया। और सव खर्च कर चुका, सो वक्त उम मुल्क–में वडा कहत पडा, और वोह मुहताज होने लगा। और वोह उस मुल्क–के एक वाशिन्दे–से जा मिला, और वोह उसे अप्ने खेतों–में सूअर चराने भेजा। और उसे आरज़ू थी कि सूअर खाते–थे सो छिल्को–से अप्ने तईं सेर करे, और कोई उस–कू न देता–था। तव होश–में आ–कर कहा, 'मेरे वाप–के कित्ने मज़्दूरों–कू वहुत-सी रोटी है, और मे यहाँ भूख–से मरता–हूँ। मैं उठ–कर अप्ने वाप–के पास जाऊँगा, और उसे कहूँगा', 'ऐ वाप, मैं आस्मान–के खिलाफ और तेरे हुजूर गुनाह किया–हूँ, अव–से मैं तेरा वेटा कह्लाने–के लाइक नहीं हूँ, मुझे अप्ने मज़्दूरो–में–से एक–की मानिन्द वना।' और उठ-कर अप्ने वाप–के पास चला, और अभी दूर था कि उस–का वाप उसे देखा, और रह्म किया, और दौड–कर उस–कू गले लगाया, और वोसा दिया। फिर वेटा उसे कहा, 'ऐ वाप, मैं अस्मान–के खिलाफ और तेरे हुजूर गुनाह किया–हूँ, अव–से तेरा वेटा कह्लाने–के लाइक नही हूँ।' पर वाप अप्ने नौकरों–कू कहा, 'अच्छे-से-अच्छा जामा जल्दी वाहिर लाओ, और इसे पह्नाओ, और उस–के हाथ–में अँगूठी और पाओं–में जूती दो, और पले हुए वछडे–कू ला-कर ज़व्ह करो; कि हम खावें और खूशी मनावें, इसलिए कि येह मेरा वेटा मर–गया–था, और फिर जिया–है, गुम हुआ था और मिला है।' और वोह खूशी कर्ना शुरू किए।

और उस-का वडा वेटा खेत–में था। और जव आ-कर घर-के नज़दीक पहुन्चा, राग और नाच–की अवाज़ सुना। और छोक्रों–में–से एक-कू पास वुला–कर, 'येह क्या है ?' पूछा। वोह उसे कहा कि, 'तेरा भाई आया है, और तेरा वाप उसे सही सलामत पाने–से पला–हुआ वछडा ज़व्ह किया है।' तव वोह खफा हुआ, और अन्दर जाने न चाहा तव उस-का वाप वाहिर आ-कर उसे मनाया। पर वोह जवाव में अप्ने वाप-कू कहा, 'देख, इत्ने वरसों-से तेरी खिद्मत कर्ता-हूँ और कभी तेरा हुक्म-उदूल न किया, और तू कभी मुझे अप्ने दोस्तों-के साथ खूशी मनाने-के लिए एक वक्री-के वच्चे-कू न दिया। पर जव तेरा येह वेटा, जो तेरी ज़िन्दगानी–कू कस्वियों–के साथ खा गया, सो आया, तो उस–के लिए पले हुए वछडे–कू जव्ह किया।' और वोह उस–कू कहा कि, 'ऐ लडके, तू हमेशा मेरे पास है, और सव कुछ मेरा है, सो तेरा है। पर तेरा येह भाई मर गया था, अव जिया–है, और गुम हुआ था, मिला है, सो खूश ओ खुर्रम होना लाज़िम था।'

मद्रास की दक्खिनी का एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है। इसकी भाषा पूर्ववर्ती व्याकरणिक रूपरेखा के ही अनुरूप है।

[सं० २५]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

हिंदोस्तानी (मद्रास की दक्खिनी)

(शेक्सपियरकृत व्याकरण से, सन् १८४३)

वोल-गए-हैं कि एक धोवी किमी नद्दी-के कड्के अप्ने धन्दे-में सडक था, हौर हर दिन एक वघोले-कू देखता कि वोह ढौ-के किनारे-पो वैठता हौर चीकड-मैं-के कीडे चुन-कर खाता हौर उस-पो-च सब्र कर-को चुप रह्ता हौर वहाँ-सूँ अप्ने घूंस्ले-कू उढ-कर चले-जाता। एक दिन एक वाशग्र अन्वित आ-निकल्या, हौर एक कट्टे तीतर-कू शिकार मार-कर थोडा खाया हौर वाकी-का छोड-दे-कर चल-निकल्या। वघोला येह् देख-ले-कर अप्ने-में अपे चिन्ता कर-लिया कि येह् पन्छी इत्ला छोटा अद्द्-कर ऐसे वडे-वडे जानवराँ शिकार मार्ता-है। मैं इत्ला मोटा अद्द्-कर ऐसा नजिस चारअ खाता-हूँ। सो येह् मेरी कम्वख्ती हौर हल्की पाएरी-का काम है। मैं भी की ऐसा वडपना नैं जगाता-हूँ? अव-सूं मैं ऐसे कीडे नैं खाऊँगा, हौर एक दफे-का आस्मान-पो पखोटा मारूँगा।

नजम

'जो कि वुवाँ घन-के उपर जावेंगे,
अव्र-में फिर काहे-कु वोह् आवेंगे?
ज़िन्दअ दिलाँ हैं सो गगन-पर चढें,
वल-सूँ अपन दिल-के ओ य्हाँ-सूँ उढें।'

येह् समझ-ले-को उने कीडे खाना छोड-दिया, हौर तीतर कवूतर-के शिकार-पो जप्ने लग्या। धोवी वाशअ-का भी तमाशा देख्या-था हौर वघोलअ कीडे खाना छोड-दे-कर कवूतर-के कुधन झाँस्ता-है, मो येह् भी देख-ले-को दन्ग हो-गया, हौर तमाशा देख्ने लग्या। यकायक कवूतर वहाँ आ-निकल्या हौर वघोलअ उढ-कर उस कवूतर-पो झाँस्या। कवूतर पानी-के कुधन ढुक-कर हौर उसे चोंदी दे-कर उस-के आगू-सूँ पट्टा तुडाया। वघोला उम-पो टुट कर पानी-के कडके-पो गिर्या, हौर उस-के पराँ चीकड-में लोट-पोट हो-गए। धोवी आ-कर उसे पकड-लिया, हौर घर कुधन चल-दिया। वाट-में उस-का एक दोस्त मिल-को पूछ्या कि 'क्या है?' धोवी वोल्या, 'येह् वघोला है। वाशअ-का काम कर्ने गए लागूँ अपे-च् सपड-पड्या।'

वरार की दक्खिनी

वरार की दक्खिनी किमी भी प्रकार मद्रास की दक्खिनी से भिन्न नही है। अतः इसका उदाहरण देना अनावश्यक होगा। यही स्थिति सतपुडा के दक्षिण में स्थित, वरार

तथा हैदरावाद को जोडने वाले मध्य प्रांतो के ज़िलो मे प्रचलित दक्खिनी की है। यद्यपि कोई पूर्ण निश्चित विभाजक-रेखा नही खीची जा सकती लेकिन फिर भी सतपुडा पर्वत-श्रेणी एव संवद्ध पहाडी क्षेत्र को प्रामाणिक हिंदोस्तानी और दक्खिनी के वीच की सीमा समझा जा सकता है।

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी

ऊपरी दोआव तथा पश्चिमी रुहेलखड की वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का यह विवरण सलग्न उदाहरणो पर आधारित है। इसकी कई विशेपताएँ गुजरात की हिंदोस्तानी एव दक्खिनी मे भी मिलती है।

उच्चारण—स्वर—यहाँ 'ऐ' तथा 'औ' की अपेक्षा क्रमश 'ए' एव 'ओ' के व्यवहार को प्राथमिकता देने की प्रवल प्रवृत्ति है जैसे 'पेर' (पैर), 'हे' (है), 'हें' (हैं), 'ओर' (और), 'लोण्डा' (लौण्डा) और 'दोड' (दौड)। 'ओर' (और) कभी दुर्वल होकर 'अर' तथा कभी महाप्राण होकर 'हर' हो जाता है। सहारनपुर एव देहरादून में यह 'होर' मे परिणत हो जाता है। इसी प्रकार 'वैठ' 'वट्ठ' हो जाता है और मेरठ के दूसरे उदाहरण मे इसका रूप 'वट्ट' हो गया है। यहाँ स्वर परस्पर परिवर्तनशील भी है यथा 'कहा' एव 'केहा' के साथ 'कुहाणा' (कहलाना) भी मिलता है।' 'सकारी' (शिकारी) तथा 'मठाई' (मिठाई) जैसे वलाघातहीन अक्षरो मे 'इ' वर्ण 'अ' मे परिवर्तित हो गया है। 'इकट्ठा' के लिए प्रयुक्त 'कट्ठा' शब्द मे प्रारभिक वलाघातहीन 'इ' विलुप्त हो गयी है। 'अक' (कि) मे 'इ' 'अ' हो गयी है। 'यादमी' में 'य्' शब्द के प्रारभ मे जुड गया है।

व्यंजन—मूर्वन्य वर्णो को प्राथमिकता देने की प्रवृत्ति से पजावी का प्रभाव स्पष्ट हो जाता है। दत्य 'न्' एव 'ल्' मध्यवर्ती और अतिम होने पर वहुवा क्रमश मूर्वन्य 'ण' तथा 'ळ्' मे परिवर्तित हो जाता है। अतिम वर्ण प्रामाणिक हिंदी एव अधिकाश पूर्वी वोलियो मे प्रयुक्त नही होता लेकिन राजस्थानी, पजावी एव गुजराती मे सामान्य है। ऊपरी दोआव से प्राप्त नमूनो में इसे 'ळ्' के नीचे एक विंदु रख कर (ल) द्योतित किया गया है किंतु इनके मुद्रण मे मैंने 'ळ्' लिखने की साधारण प्रथा ही अपनायी है। मूर्वन्य 'ण्' के व्यवहार के उदाहरणार्थ 'माणस्' (मानुस), 'ऊपणा' (अपना), 'खोवण' (खोना) तथा 'सुणणा' (सुनना) उल्लेख्य है। 'निकल' के लिए व्यवहृत 'लिकड' मे प्रारभिक 'न्' दत्य 'ल्' में और 'ल्' मूर्धन्य 'ड्' मे परिवर्तित हो गया है। 'जँगळी', 'कोळ' (वक्ष), 'वळद' (वैल) तथा 'वाळ' मे 'ळ्' का प्रयोग हुआ है। अगर उदाहरणो के अक्षर-विन्यास को सही माना जाय तो 'ल्' का 'ळ्' मे परिवर्तन 'न्' के 'ण्' मे परिवर्तन के समान नियमित नही है। जहाँ मूर्वन्य वर्ण होना चाहिए, वहाँ प्राय दत्य 'ल्' मिल जाता है

यथा 'मिलैं-गी' के लिए 'मिलैं-गी', 'चळा' के स्थान पर 'चला'। सभवत इसका कारण लिपिकार की असावधानी है।

प्रामाणिक हिंदी में तथा पूर्व की ओर मध्यवर्ती 'ड्' अथवा 'ढ्' नियमपूर्वक 'ड़' या 'ढ़' रूप में उच्चरित होता है यथा 'वडा', 'वडा' नहीं। ऊपरी दोआब मे 'ड्'–ध्वनि प्राय. सुरक्षित रहती है जैसे 'गाडी' अथवा 'गड्डी' (गाडी), 'वडा' (वडा), 'चढ्णा' (चढना) आदि। 'घोड़ा' तथा 'चिडया' जैसे शब्दो मे 'ड़' का प्रयोग दृष्टिगत होता है किंतु यह लेखन की भूलें भी हो सकती हैं। यहाँ 'ड्' (अथवा 'ढ्') ध्वनि को निश्चय ही प्राथमिकता दी जाती है।

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी की एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति बलाघातयुक्त दीर्घ स्वर के पश्चात् व्यंजन के द्वित्वीकरण की है। इस स्थिति मे पूर्ववर्ती दीर्घस्वर सामान्यत ह्रस्व हो जाता है अर्थात् 'ई', 'ऊ', 'ए' (दीर्घ) तथा 'ओ' (दी०) क्रमश 'इ', 'उ', 'ए' (ह्र०) एव 'ओ' (ह्र०) मे परिवर्तित हो जाते हैं। यह प्रवृत्ति इतनी प्रवल है कि दीर्घ स्वर के पश्चात् वर्तमानकालिक कृदत के अत्य के 'त्' का भी द्वित्व हो जाता है। इस प्रवृत्ति के उदाहरण-स्वरूप 'वाप्पू', 'वास्सन्ह' (वर्तन), 'गाड्डी' (गाटी), 'पात्ता' (पाना, 'पाणा' का वर्तमानकालिक कृदत), 'जात्ता' (जाना), 'भूक्खा', 'वेट्टा', 'खेत्तों-मैं', 'देक्खा', 'भेज्जा' (भेजा)', 'रोट्टी', 'छोट्टा', 'लोग्गों-पे' (पहला 'ओ' ह्र०, दूसरा दी०, लोगो पर) तथा 'होत्ता' (होता) उल्लेखनीय है।

शब्द–रूप—सज्ञा—यहाँ दुर्वल सज्ञाओ का 'आँ' अथवा 'ऊँ'–अत्य विकृत एकवचन रूप है यथा 'घराँ-मैं', 'घरूँ-पड रहा' (वह घर मे रुक गया।) और 'घरो (घर को)। विकृत वहुवचन कभी-कभी 'ऊँ' से समाप्त होता है जैसे 'मरदूँ–का' (पुरुषो का), 'वेट्यूँ-का' (पुत्रियो का), 'चोक्खे यादम्यूँ-का' (भले पुरुषो का)। एक उदाहरण 'छोलकाँ–नें' (छिलके; मुजफ्फरनगर) मे दक्खिनी के समान 'आँ'-अत्य विकृत वहुवचन मिलता है। 'ई' वाली स्त्रीलिंग सज्ञाओ का कर्ताकारक वहुवचन 'ईं' से समाप्त होता है यथा 'वेट्टीं' (पुत्रियाँ)।

करण कारक का चिन्ह 'ने' अथवा 'नें' है। कर्म-सप्रदान के लिए 'के', 'कूँ' अथवा 'को', 'नूँ' (एक पजावी रूप) तथा 'ने' मिलते हैं जैसे 'वाप' के' ([मेरे] पिता के [एक पुत्र हुआ।]), 'वीरवल – 'कूँ', 'वाप्पू नूँ', 'छोलकाँ–ने सूर खाँ-हैं' (सुअर छिलके खा रहे हैं।), 'वन्दर-ने उस-ने देख –लिया' (वन्दर ने उसे देख लिया।), 'मठाई–ने छोड–दे' (वह मिठाई छोड दे)। यहाँ अधिकरण के लिए 'पे' एव 'प' और अपादान के लिए 'सेत्ती' का व्यवहार होता है। 'वेट्टे–ने चला-गिया' (पुत्र चला गया; मुजफ्फरनगर) उदाहरण में करण कारक अकर्मक क्रियासहित दृष्टिगत होता है।

सर्वनाम—उत्तम तथा मध्यम पुरुषों के सर्वनाम कुछ अनियमित है। उनके मुख्य रूप निम्नलिखित है —

	मैं	तू
एक० कर्ता०	मैं	तू
करण	मैं	तैं
विकृत	मझ, मुझ	तझ, तुझ
कर्म-संप्रदान	मझे, मुझे	तझे, तुझे
सवधवाचक	मेरा	तेरा
वहु० कर्ता०	हम	तम
करण	हम-ने	तम-ने
विकृत	हम	तम
कर्म-सप्रदान	हमें	तमें
सवधवाचक	हमारा, म्हारा	तुम्हारा, थारा

यह मर्वनाम एकवचन मे करण कारक-चिन्ह 'ने' का व्यवहार नही करते यथा 'मैं' ('मैं-ने' नही) भेज–दिया–था', 'तैं या चीज किस-के–तैं लई ?'

सकेतवाचक सर्वनामो का कर्तृ कारक मे स्त्रीलिग रूप होता है। यह इस प्रकार है—

कर्ता० पु०	कर्ता० स्त्री०
यू, यह	या
ओ (ह्र०), ओ (दी०), ओह (ह्र'ओ')वा	

यह प्रामाणिक हिंदी के समान ही है। केवल एक अपवाद 'ओ' का कर्तृकारक वहुवचन 'वें' है।

दूसरे सर्वनामीय रूप यह है, 'अपणा' (अपना), 'जो,' 'जोण' (जिस); 'कोण', 'के' (कौन ?), 'के' (क्या ?) (अस्तित्वसूचक तथा विशेषण दोनो); 'कैं' (कितने), 'को' (कोई, वि० 'किसी'), 'जोण-सा,' 'जो-कुच्छ,' 'असा' (ऐसा); 'इव' (अव) और 'इभी', 'इव-जाँ' (अव भी)। पश्चिमी हिंदी की अन्य वोलियो के समान 'जिव' शब्द 'जव' एव 'तव' दोनो अर्थो को व्यक्त करता है, 'जिव-जाँ' (जिन पर), 'व्हाँ', 'व्हाँ-सी' (वहाँ), 'जाँ' (कहाँ)।

क्रिया-रूप—अस्तित्वमूचक किया—

	वर्तमान	
एक०		वहु०
१ हूँ		हें
२ हे		हो
३ हे		हें

भूतकालिक रूप 'था' आदि हैं।

कर्त्तृ-वाच्य—वह काल जो प्रामाणिक हिंदी मे मुख्यत. वर्तमान सशयबोधक के रूप में प्रयुक्त होता है, यहाँ प्राय. वर्तमानकालबोधक का अपना मूल अर्थ व्यक्त करता है यथा 'मैं मारूँ'।

निश्चित वर्तमान की रचना इस सामान्य वर्तमान (वर्तमानकालिक कृदत नही) को अस्तित्वसूचक क्रिया के वर्तमानकालिक रूप से जोड कर की जाती है जैसे—

	एक०	बहु०
१	मारूँ-हूँ	मारें-हैं
२	मारे-है	मारो-हो
३	मारे-है	मारें-हैं

कभी-कभी वर्तमानकालिक कृदत बोली के साहित्यिक रूप के समान व्यवहृत होता है यथा 'होत्ता-है' (वह हो रहा है) 'जात्ते-हैं' (वह जा रहे हैं)।

असपूर्ण काल कभी-कभी निश्चित वर्तमान के ही समान अस्तित्वसूचक क्रिया के भूतकाल को वर्तमान के लिए स्थानातरित करके बनाया जाता है, उदाहरणार्थ 'मैं मारूँ-था' अथवा 'मैं मारता था'। वैसे सामान्यत इस काल की रचना राजस्थानी और कभी-कभी व्रजभाखा की भाँति 'ए'-अत्य विकृत क्रियार्थक सज्ञा को अस्तित्वसूचक क्रिया के भूतकालिक रूप के साथ सयुक्त करके होती है। यह रूप बिहारी की मगही' बोली में भी मिलता है जैसे 'मारे-था' (मैं, तू या वह मार रहा था), 'मारे थे' (हम, तुम या वे मार रहे थे)।

दीर्घ स्वरात धातुओ वाली क्रियाएँ वर्तमान एव भविष्य मे सकुचित हो जाती हैं यथा 'खाँ-हैं' (खाएँ-हैं), 'जाउँगा' (जाऊँगा), 'खागा' (खाएगा) और 'खाँगे'।

क्रियार्थक सज्ञा 'णा' (विकृत 'णे') अथवा 'ण्' (वि० रू० समान) अत्य होती है उदाहरणार्थ 'खाणा' (खाना), सप्रदान 'खाणे-को' (खाने के लिए) 'खोवण' (खोना; 'ओ' के बाद जोडा गया 'व्' दृष्टव्य है।), 'पडण' (गिरना) 'भरण-को' (भरने के लिए)।

'करणा' क्रिया का भूतकालिक कृदत 'करा' अथवा 'किया' है जैसे 'करा-है' अथवा 'किया-है' ([मैंने] किया है, एक०)। 'जाणा' (जाना) के दो रूप 'गया' तथा पजाबी 'गिया' मिलते हैं। 'धराना' (रखना) के लिए भूतकालिक रूप 'धर्-याया' का व्यवहार अनियमित है।

एक स्थान पर ' यह ठीक है' भाव के द्योतन के लिए 'चहाइये' शब्द मिलता है। 'मठाई काढणी चाही' वाक्य मे इच्छार्थक क्रिया के प्रयोग का निर्देशात्मक निदर्शन दृष्टिगत होता है।

मेरठ से प्राप्त दूसरे उदाहरण मे एक अनियमित यौगिक कृदत 'ॐ' आया है जो राजस्थानी से ग्रहीत किया गया है । यह ' वट्ठूं (वैठा हुआ) के लिए प्रयुक्त 'वट्ठूं' मे है।

'कुहाणा' (कहलाने योग्य होना) मे सभाव्य कर्मवाच्य का उदाहरण मिलता है।

'नहीं' सामान्य नकारात्मक है। 'ने' तथा 'नी' का व्यवहार भी होता है। 'नी' का प्रयोग कदाचित् उत्तम पुरुप के साथ होता है यथा 'मैं' नी चला' (मै नही गया।) और 'ने' का अन्यपुरुष के साथ जैसे 'उसे को ने देता' (उसे कोई नही देता।)।

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी के प्रारभिक उदाहरण मेरठ ज़िले के है।

[सं० १.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी **(ज़िला मेरठ)**

उदाहरण १

(श्री जी० आर० डम्पियर, आइ० सी० एस०, १८९९)

एक आदमी-के दो लोन्डे थे। उन-में-तें छोटे-नें अपणे वाप-सेत्ती कहा ओ वाप तेरे मरे पिच्छे जो कुछ वन धरती मझें मिलेंगी वा इभी दे-दे। वाप-नें दोनों लोन्डों-को अपणी माया वाँट-दी। थोरे दिन पीछे छोटा भाई अपणा सारा माल ले-के परदेस-में चला-गया ओर वहाँ वदमास्सी-में अपणा नावा खोवण लगा। जिव सारा घन सपड-गया तो उस देस-में वहोत ठाडा काळ पड़ण लगा। तो ओ गरीव हो-गया। फिर उन-नें उस देस-के एक माणस-सेत्ती जा-कर नोकरी माँगी। तो उस माणस-नें उसें जगळ-में अपणे सूर चुगावण-की खात्तर भेजा। फिर उसें इतनी भूक लगी की जो घास पात सूर खाँ-थे उन-हीं-तें अपणा पेट भरण-को तयार था। ओर किसी माणस-नें उसें खाणे-को नहीं दिया। जिव उसें कुछ सोद्धी आई तो उस-नें अपणे मन-में कहा मेरे वाप-के घोरे वहोत नोकर हें ओर वहाँ कुछ घाटा नहीं हे ओर में इस देस-में भुक्खा मरूं-हूँ। में अव उठ-के अपणे वाप-के घोरे जाऊँ ओर उसें कहूँगा की ओ वाप में खुदा-के ओर तेरे रुवरू पाप करा-हे। अव में असा नही रहा की तेरा वेटा कुहाया जाऊँ। मझें अपणा नोकर कर-लो। ओ उठ-के अपणे वाप-के घोरे गया। जिव ओ

अपणे वाप-के घर-तें दूर रहा-था तव उस-के वाप-नें उसें देखा ओर दया भी आ-गई। दोड-के उस-की कोळी भर-लो ओर पुचकारा ओर उस-का चुम्भा लिया। तो लोन्डे-नें कहा ओ वाप में खुदा-के रूवरू ओर तेरे रूवरू पाप किया-हे। में अव असा नहीं रहा जो तेरा वेटा कुहाया जाऊँ। फिर वाप-ने अपणे नोकरों-से कहा की सारों-में अच्छे लत्ते इस लडके-को परहाओ और उस-की अँगली-में गुन्ट्टी ओर पेर-मे जुत्ता परहाओ ओर एक ठाडा वहडा ला-के काटो। हम खाँगे ओर खुसी मनावें। यू मेरा लोन्डा मर-गया-था ओर अव जी-गया। ओर खोया-गया- था ओर अव मिल-गया-हे। ओर आपस-में खुसी करण लगे॥

ओर वडा भाई जगळ-में था। जव जगळ-तें घर-के धोरे आया तो उन-नें नाचण गावण-की वाज सुणी। फिर उन-नें एक नोकर-को वुला-कर पुंच्छा की या के वात हे। नोंकर-नें उसें कहा की तेरा भाई घरों आया-हे और तेरा भाई जीता हुआ चला-आया। उस-की खुसी-में तेरे वाप-नें वहडा काटा-हे। इतनी वात सुण-के वडा भाई छोह-में आ-के घरों-मे नहीं गया। फिर उस-के वाप-नें वहार आ-के उसें कहा तू भीतर चल। फिर उन-नें वाप-को जुवाव दिया की में घणें दिनों-से तेरी टहल करूँ ओर कदी तेरे हुक्म विना कोई काम नहीं करा। तो फिर भी इव-लो मझें एक वकरी-का वच्चा भी नहीं दिया जिसे में काट-के अपणे यारों-का नोंत्ता दूं। पर जिव यू तेरा लोन्टा आया जिन-नें तेरा धन कचन्यों-में खो दिया तो इस-की खात्तर ठाडा वहडा मार-दिया। फिर वाप-नें वडे भाई-तें कहा की अर लोन्डे तू धुर-तें मेरे धोरे रहा-हे ओर जो मेरा हे सो -ही तेरा है। फिर न्यों चहाइये की हम मिल-के गादो करें। तेरा भाई मरा-हुआ जी-गया। ओर खोया-गया-था ओर अव मिला-हे॥

[सं० २.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी **(जिला मेरठ)**

उदाहरण २.

लोकगीत

(श्रीराम ब्राह्मण)

क्यों धक्के खाता फिरे भरम-के टट्टू।
जो लिखा करम-का मिल-जागा घर वट्टू॥
क्यों सिर-पे जटा वांव-के वांध लइ चुन्ड्या।
यहाँ सें फडो मुन्ड मुंडा-के मर-गय मुन्ड्या॥

क्यों दिया काख-में तुम्बी कुत्तक कुन्ड्या ।
क्यों मुह-के चाळ लपेट वण-गय डुन्ड्या ॥
दिल साफ नही तो तुम हो नीखट्टू ।
जो लिखा करम-का मिल-जागा घर वट्टूं ॥
क्यों भसम रमावे क्यों ओढे म्रिग-छाला ।
क्यों पहर कठ-में फिरे काठ-की माला ॥
क्यों फुंक-फुंक-के किया आग-माँह तन काला ।
प्रभु-से मिलणे-का हे एक पथ नीराला ॥
गफलत-का परदा खोल-दे काणे मट्टू ।
जो लिखा करम-का मिल-जागा घर वट्टूं ॥
क्यों ऊँची आवाज-से जा-के अलख जगावे ।
ओ सोवे तो फिर कोण जगाणे पावे ॥
तू वजा-के चिमटा किस-कु घोर सुनावे ।
ओ घट-घट-की सुनता-हे वेद न्यों ही गावे ॥
माँगण-की तर्यां माँग उतणी-के मट्टू ।
जो लिखा करम-का मिल-जागा घर बट्टूं ॥
जो पावेगा सो घर वेठे-ही पावेगा ।
वण-वण-के भटके-से कुछ हाथ नहीं आवेगा ॥
जो मत-की मिहनत कर-कर-के खावेगा ।
उस-के वेडे-को अलख पार लँघावेगा ॥
कहे सिस-राम मेरे लगा ग्यान-का चट्टू ।
जो लिखा करम-का मिल-जागा घर बट्टूं ॥

[सं० ३.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी (जिला मरठ)

उदाहरण ३

लोककथा

(श्री जी० आर० डम्पियर, आई० सी० एस०, १८९९)

एक दिन अकवर वादसा-नें वीरवल-तें पुच्छा ओ वीरवल तू हमें वळद-का दूध ला-दे ओर नहीं तेंरी खाल कढवाई जागी । वीरवल-कूं वहोत रज हुआ ओर हुन्तर

आण-के अपने घरूँ पड–रहा । वीरवल–की लोन्डी–नें अपणे मन-में कहा की आज तो मेरा वाप वहोत सोच-में पडा–हे । आज के जाणे इस-का के ढव हुआ । जिव उन-नें अपणे वाप-कूँ पुच्छा अरे वाप तेरा के ढव हे । वीरवल-नें कहा की वेटी कुछ ना हे । फेर लोन्डी-नें पुच्छा की पिता अपणे मन-का भेद वताणा चाहिये । जिव उन-नें कहा की वादसा-नें कहा की के–तो वळद–का दूव ला–दे नही तझें, कोल्हू–में पिळवाऊँगा । मेरे-तें कुछ नहीं कहा गया ओर हाम्मी भर–के आया हूँ ओर कुछ राह नहीं पात्ता । लोन्डी-नें कहा की पिताजी या तो कुछ-भी वात नाँ हे । तुम वेफिकर रहो । वीरवल उठ खडा हुआ ॥

खेर जिव तडका हुआ तो उस लोन्डी-नें के काम करा की अपणा सव सिग़ार करा ओर वहोत अच्छी पुसाक पहर–के ओर कुछ कपडे हाथ–में ले–के वादसा-के किले-के आगे-कूँ लिकड जमना–पर गई । वादसा किले–पे चढ-के जमना-की सेल कर-रहे-थे । अकवर–नें देखा की वीरवल-की लोन्डी लत्ते घो-रही-हे । वादसा-नें लोन्डी-तें पुच्छा की ए लोन्डी आज क्यों तडके–ही-तडक लत्ते घोवण आई–हे । जिव उस लोन्डी-नें कहा की वादसा आज मेरे वाप-के लडका हुआ–हे । वादसा–ने छोह-मे आ-के कहा की अरी लोन्डी भला कहीं मरदूं-के भी लोन्डे होते सुणे हें । लोन्डी नें-कहा की वादसा भला कहीं वळद–के भी दूव होता सुणा-हे । जिव वादसा-कूँ कुछ वोल नहीं आया ओर लोन्डी-कूँ कह-दिया की तडके-ही-तडक वीरवल-कूँ कचहडी-में भेज-दे ॥

वीरवल तडके-ही कचहडी-में गया । वादसा-नें पुच्छा की वीरवल लाया वळद-का दूघ । वीरवल- नें कहा की वादसा सलामत में तो कल तडके-ही लोन्डी-के हाथ भेज दिया-था । वादसा-कूँ कुछ वोल न आया ।

ज़िला मुज़फ्फरनगर मे प्रचलित वोली मेरठ के समान है । यह नीचे दिये गये उदाहरणो से स्पष्ट हो जायगा । इनमे से एक अपव्ययी पुत्र-कथा का अश है और दूसरा एक लोककथा ।

[सं० ४.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (जिला मुजफ्फ़रनगर)

उदाहरण १

एक यादमी-के दो वेट्टे थे । उन-में-ते छोट्टे-ने वाप्पू-ते कहा अक वाप्पू जोण-सा हिस्सा माल-में-ते मेरे वांटे आवे-हे ओह मुझे दे । जिव उस-ने माल उन्हें वांट दिया छोट्टे वेट्टे-ने थोडे दिन पाच्छे सव कट्ठा कर-के दूर मुलक-में चला गया ओर व्हाँ-सी

अपणा माल लुचपने-में खो-दिया। जिव जां ओह सारा खरच-में आ-लिया जिव उस मुलक-में काल पड-गिया ओर ओह मुनका हो-गिया। जिव-जां उस मुलक-में एक साहूकार-के जा लगा। उस-ने अपणे खेत्तों में सूर चुगावण भेज्जा। उसे यह चाहणा थी अक जोण-सी छोलकाँ-ने सूर खाँ-हैं उन-ते अपणा पेट भर-लूं। वें भी उसे कां ने देना। जिब सोची-में आ-के केहा अक मेरे वाप्पू-के कितने नौकरो-कूं रोट्टी मिलें-हैं अर में भुक्का मरूं। में उठ-के अपणे वाप्पू धोरे जाउँगा अर उस-से कहूँगा हे वाप्पू में अनमान की अर तेरे हजूर-की वडी खता करी। इव में इस जोगा नहीं रहा अक तेरा वेट्टा कुहाऊं। मुझे अपणे नौकरों-में-ते एक-की ढाल वना ॥

[सं० ५]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (जिला मुजफ्फरनगर)

उदाहरण २

लोककथा

एक सकारी छोट्टे मुंह-के वास्सन्ह-में थोडी मठाई घाल-के जगल-में वोतला-वोतला वरमाया। एक वन्दर-ने उस-ने देख-लिया। धोरे गया। मठाई देक्खी। जिभी वास्सन्ह-में हाथ दे-दिया ओर मुट्ठी भर-के मठाई काढणी चाही। इव जां लिकड़े तो किस ढाल लिकडे। न-तो वर्तन का मुंह चौड़ा होत्ता-हे ओर न ओह मुट्ठी खोलता-हे। न तो ओह लोभ-ते हटता न-तूं उसे अकल रस्ता वताती अक मठाई-ने छोड़-दे ओर अपणी जान वचाने। होत्ते-होत्ते यह हुआ अक सकारी आ-गया हर वन्दर पकड़-लिया। नेठम याही हाल उन लोग्गों-पे हे जो माल-के लोभ-में पड-जात्ते-हें। अखीर-में उन्हें वडा सकारी मौत गिरफदार कर-के ले-जात्ता-हें ॥

सहारनपुर की वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का नमूना देना अनावश्यक है। वह पूर्ववर्ती उदाहरणो की वोली के ही समान है। इसकी उल्लेखनीय विशेषताएँ दो है 'ओर' के लिए 'होर' का प्रचलन तथा द्वित्व व्यजनो का अपेक्षाकृत कम व्यवहार।

देहरादून जिले में दून विशेष की वोली की भी यही स्थिति है। जौनसार-वावर मे पश्चिमी पहाड़ी की एक विल्कुल भिन्न वोली जौनसारी का प्रयोग होता है। इन दो जिलो मे वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी वोलने वालो की सख्या निम्नलिखित है—

सहारनपुर,	९७० ०००
देहरादून	९०,०००

पश्चिमी रुहेलखड

गगा पार ऊपरी दोआव के पूर्व की ओर रुहेलखड स्थित है। पूर्वी रुहेलखड की वोली व्रजभाखा है और उस पर आगे विचार किया जाएगा। पश्चिमी रुहेलखड के अन्तर्गत रामपुर की रियासत तथा मुरादावाद एव विजनौर के ज़िले आते हैं। यहाँ की वोली हिन्दोस्तानी है तथा ऊपरी दोआवा की वोली से भी अधिक उसके साहित्यिक रूप के निकट है। वास्तव में भिन्नता केवल उच्चारण के कुछ विवृत होने की ही है जिससे अत्य 'ओ' 'औ' तथा अन्त्य 'ए', 'ऐ' मे परिवर्तित हो जाता है। कर्म-सप्रदान के चिन्ह-स्वरूप 'को' की अपेक्षा कभी-कभी 'कू' का प्रयोग तथा अपादान के लिए 'ओ' का व्यवहार भी द्रष्टव्य है जैसे 'भूखो' (भूख से)। वैसे पश्चिमी रुहेलखड की वोली साहित्यिक हिन्दोस्तानी से भिन्न नही है। विजनौर से लिये गये अपव्ययी पुत्रकथा के निम्नलिखित अश से यह वात स्पष्ट हो जाएगी।

[सं० ६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (जिला विजनौर)

एक आदमी-के दो वेटे थे। उन-में-से छोटे-ने वाप-से कहा कि जो कुछ मेरे हिस्से-की चीज है मुझे वाँट दे। तव उस-ने उस-के हिस्से-का माल वाँट-दिया। थोडे दिन वाद छोटा वेटा सव माल-कूं लेकर परदेस-को चला गया और वहाँ सव माल कुचाल-में खो-दिया और उस-के पास कुछ नहीं रहा। उस मुल्क-में भारी काल पडा और वुह कगाल होने लगा। तव उस देस-के एक अमीर-के पास चला गया। उस-ने अपने खेतों-में सुवर चराने भेज-दिया। और वुह उन छिलकों-से जो सुवर खा-कर छोड-देते अपना पेट भरता और कोई आदमी उसै कुछ नहीं देता। फिर जव उस-को सुध आई तव उस-ने सोचा कि मेरे वाप-के वहुत-से मिहन्तयों-को खाने-को है और वुह वच रहता-है और मैं भूखों मरता-हूँ। मैं अपने वाप-के धोरे जाऊँगा॥

अम्वाला

पश्चिमी हिन्दी और पजावी की विभाजक रेखा अम्वाला ज़िले के मध्य मे है। ज़िले के पश्चिम मे रुपर और खरर तहसीलो में पजावी वोली जाती है और शेप भाग मे पश्चिमी हिन्दी। घग्घर नदी को इन दोनो भापाओ की सीमा माना जा सकता है।

यमुना नदी अम्वाला के पूर्वी भाग को सहारनपुर से अलग करती है, और प्रथम ज़िले के पश्चिमी हिन्दी क्षेत्र की भापा ऊपरी दोआव की हिन्दोस्तानी वोली से वहुत थोडी

ही भिन्न है। जैसे-जैसे हम पश्चिम की ओर जाते हैं स्वाभाविक रूप में पजावी प्रभाव अधिक मिलता है, और अन्य लोगों से निम्न जातियों की वोली पर उन भाषा का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है।

उदाहरणार्थ, घघ्घर के निकट डेरा वसी के आसपास वोली जाने वाली भाषा मे, जिसे वहाँ के लोग 'पहाड-तली' अर्थात् पहाडियो के नीचे भाग की वोली कहते हैं, पजावी प्रयोग, जैसे 'उस-दा' (उसका) तक मिलते है। तथापि वास्तव मे यह हिन्दोस्तानी ही हैं। इसी प्रकार जिले के विल्कुल पूर्व मे कल्सिया राज्य के अन्तर्गत चच्छरौली की एक लोक-कथा मे पजावी रूप 'लग्गिया' (उसने प्रारभ किया) मिलता है यद्यपि यह सहारनपुर के अत्यधिक निकट हैं। इसका कारण यह है कि यह रूपान्तर एक चमार घसियारे की वोली मे है।

अम्वाला के हिन्दी क्षेत्र की हिन्दोस्तानी वोली सामान्यत पजावी प्रभाव से मुक्त है। मै जो दो उदाहरण दे रहा हूँ उनसे यह तथ्य स्पष्ट हो जायेगा। प्रथम अपव्ययी पुत्र-कथा का एक अश है और द्वितीय एक अभियुक्त द्वारा कचहरी मे दिया गया वयान हैं। इसके अतिरिक्त वह लोक-कथा भी दे रहा हूँ जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है। चच्छरौली मे एक चमार ने मुझे यह सुनाई थी।

अम्वाला जिले मे कल्सिया राज्य के दो भाग भी सम्मिलित हैं। अत तीनो क्षेत्रों के हिन्दोस्तानी वोलने वालो की सख्या पर एक साथ विचार करना सुविधाजनक होगा। अम्वाला नगर के निकट स्थित, पटियाला राज्य के निजामत पजौर के कुछ निवासी भी इस वोली का प्रयोग करते हैं और इनको भी हमें जोडना पडेगा। इस वोली का प्रयोग करने वालो की सख्या इस प्रकार है—

अम्वाला खास	५०६,५००
कल्सिया (चच्छरौली)	४०,२३३
कल्सिया (डेरा वसी के निकट)	१८,९३३
पटियाला (पजौर)	१३६,५००
अम्वाला का पूर्णांक	७०२,१६६

ये उदाहरण अम्वाला की सामान्य वोली पर प्रकाश डालते हैं और 'किहा', 'वाँटना' की जगह 'वाँडना', तथा सम्प्रदान-वोधक 'नूँ' या 'नों' आदि शव्दो के प्रयोग में पजावी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अन्य स्थानीय रूपो मे 'और' अथवा 'होर' तथा 'पुचकारा' के स्थान पर 'पचकारा', 'माँ', 'मैनूँ' और विकृत वहुवचन के लिए 'ओ' की जगह 'आँ' का प्रयोग, जैसे 'दोनाँ-नूँ' आदि की ओर हमारा ध्यान जाता है। इसी प्रकार के अन्य अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं।

[सं० ७.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (जिला अम्वाला)

उदाहरण १

एक आदमी-के दो छोकरे थे। उन-माँ-ते छोटे छोकरे-ने अपने वाप-ते किहा कि मन-नूँ जो हिस्सा घर-माँ-ते आवे-हे ओह मेरा मन-नूँ वाँड-दे। तो वाप-ने दोनाँ-नूँ वाँड-दिया। थोरे दिनाँ पिच्छे ओह छोकरा ढेर सारा जमा करके परदेस चला-गया। वहाँ उन-ने अपना सारा रुपया लचपन्याँ-माँ खो-खिँडा-दिया। ओर जव सारा रुपया वरोवर हो-लिया वहाँ काल पड गया। तो फेर वहाँ तग होन लगा। ओर एक तकडे-से जिमींदार-के नोकर जा लगा। उस जिमींदार-ने उस-नों अपने खेताँ-माँ सूँवर चगाने भेजा। उस-के जी-माँ यूँ आई कि जिन छोलकाँ-नों सूँवर खायेँ-हैँ उन-से अपना पेट भर-लूँ। पर उसे कोई नहीँ दे-था। तो फेर उस-नों अकल आई कि मेरे वाप-के कितने-ही नोकर रोटी खायेँ-हैँ होर मैँ भूका मरुँ-हूँ। अव मैँ अपने वाप-के-पास जाऊँगा ओर उस-नोँ कहूँगा कि मेरे-ते रव-का ओर तेरा कसूर हुआ-हे ओर अव मैँ इस लायक नही हूँ कि तेरा वेटा कुहाऊँ। मन-नूँ भी अपने नोकरोँ-माँ नोकर कर-के राख-ले। फर ओह वहाँ-ते अपने वाप ओडी चला। होर ओह अजोँ दूर था कि उसे देख-के उस-के वाप-ने तरस आया। दोड-के झफी-पाली ओर उसे पचकारा ॥

[सं० ८]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (जिला अम्वाला)

उदाहरण २

मुसम्मात महतावी मेरी घर-वाली-नूँ ताप चोथ्या दो साल-से आता-था। गात-माँ सत्या नही रही -थी। फेर एक दिन मुसम्मात महतावी घर गशी खा-कर गिर-पडी। उस-के गिर-कर चोट लग-गई। हत्था चक्की-का ओर लकडियाँ वहाँ पडी थी। मैँ-ने मारी नहीँ हे। मेरे घर-की ओरत-हे। फेर नानक-ने कदावत-से थाने-माँ लिखा-दिया कि लेखू ओर हमारी चाची आपस-में घर-में वोल रहे-है। फेर मेरी ओरत-नूँ थाने-माँ वुला-लिया। मेरी ओरत-ने कह-दिया कि मन-नूँ मारा नहीँ ओर ना छेता-हे। यह मालिक हे मैँ ओरत हूँ। फेर हमारा थानेदार साहव-ने चलान कर-दिया॥

अगला उदाहरण अम्वाला जिले की निम्न जातियो द्वारा प्रयुक्त वोली का है। चच्छरौली के एक चमार ने यह लोक-कथा सुनायी थी। सना के स्थान पर विकृत सवंवकारक मे किस प्रकार सवंधवाचक प्रत्यय जोडा गया है इस ओर व्यान देना चाहिए। उदाहरणार्थ 'चमार-के-ने'। इस वोली मे प्राय महाप्राण का लोप मिलता है जैसे 'भी' की जगह 'वी', 'मुझे' के लिए 'मुजे', 'था' के लिए 'ता'। कर्ता कारक की विभक्ति 'नइ, ने' अथवा 'नाँ' है। 'उनके द्वारा' के लिए 'उन-नइ' या 'अन-नइ' दोनो का प्रयोग होता है। 'यूँ' अथवा 'जूँ' दोनो का अर्थ 'यो', 'ऐसा' है। 'पान' 'पाँच' का अर्थ देता है। वर्तमानकालिक कृदंत जैसे 'जान दा' (जानते हुए), भूतकालिक कृदत 'इया' जैसे 'लग्गिया' (आरम्भ किया), 'देक्खिया' (देखा); तथा 'नाल' (साथ) आदि परसर्गो के प्रयोगो मे पजाबी प्रभाव दिखाई देता है।

[सं० ९.]

भारतीय-आर्य परिवार — केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी — (जिला अम्वाला)

उदाहरण ३

(निम्न जातियो की वोली)

इक्क चमार-के-ने अपनी माँ-नूँ किहा अके मैं अपनी वय्यर-नूँ लियाऊँ। वई मुजे पान सेर खिल्लाँ दे-दे। वस उन-माँ-ते गाओने ते। गाडी जा-के देखिआ वाल-माँ डावन लग्गिआ। खिल्लाँ उड-गईं गाओने रह-गए। वस ओह यूँ कहदा चलिया गिया अके आवें जाएँ। चिडियाँ-माराँ-ने छेत दिया अके म्हारी चिडियाँ डाए-दीं। वस उनें पूछन लग्गिआ भई किक्कर कहूँ। उन-नैं किहा कि लै-लै-जाओ अर घर-घर-जाओ। वस माहव गाडी मर-गिया-था मुरदा। अन-नै छेतिआ कि तू वे-सगन वोलिआ। ऐसी कहो ऐसी कहीं ना होए। वस ओह जूँ वी कहँदा चलिआ गिया। वई ऐसी कहीं ना होई। वाह उन-नों विआह-वालियाँ-ने छेत-दिया अके यूँ कहो वई ऐसी वोंह कहीं हो। अग्गे गाँव-माँ लग रही-ती आग। उन-नाँ छेत दिया कि म्हारे लग-रही आग तू कहे ऐसी सब कहीं हो। ओह अपने गाँव-माँ चलिआ-गिआ अपनी साम पास। वस साँझ-नूँ उसे रताँदा होइ गिया। रोटी-पर वुलाया रोटी खाने-नूँ। सास चुपकी चुपकी लग्गी उस-पा रोटी पावन। उन-ने उठाइ-के थाली मारी अपनी सास-के माथे-नाल वई कुत्ता लग गिया नाल। रात होई ओह पसाव करन गिआ। अपने-के वहाने अपनी सास-के माँजे-पर चढ-गिया। ओह वोली कौन है। कहन लग्गिआ तेरी चोट लग्गी रात। मैं देखन आया। ना वेट्टे मेरे नाहीं लग्गी। वस ओह कहन लग्गिआ जूँ-तान नाहीं मैं जादा। मेरे माँजे-पर छोडि-आ तो जानागा। छोड-आई॥

वाँगरू, जाटू अथवा हरियानी

यमुना के पश्चिम की ओर दिल्ली के उत्तर तथा पश्चिम के क्षेत्र और दक्षिण-पूर्वी पजाव मे यह वोली प्रयुक्त होती है। भूमिका मे इसके क्षेत्र के सवध मे विशेष रूप से वताया गया है। ऊपरी दोआव की यह स्थानीय हिन्दोस्तानी है जिसमे पंजावी और राजस्थानी का अधिक मिश्रण है। आगे वर्णित करनाल की वाँगरू मे इसकी विशेपताओ का पूरा विवरण मिलेगा। पजावी और राजस्थानी के अनुकरण पर (दक्खिनी हिन्दोस्तानी के समान) अन्त मे इसकी प्रमुख विशिष्टता है 'ओ' के स्थान पर 'आँ', तथा राजस्थानी सहायक क्रिया 'सूँ' (मैं हूँ) का प्रयोग।

करनाल तथा पटियाला (निखन) की वाँगरू

करनाल तथा पटियाला मे निखन के आस-पास के स्थान की वाँगरू यमुना के उस पार स्थित मुज़फ्फरनगर की स्थानीय हिन्दोस्तानी से अनेक रूपो में मिलती है। इसके साथ ही, पूर्वी पजाव की मिश्रित वोलियो की सभी प्रमुख विशेषताएँ भी मिलती हैं। इस अन्तिम विशेषता के फलस्वरूप ही अम्वाला की वोली विल्कुल अलग हो जाती है। अम्वाला की वोली ऊपरी दोआव की वोली के समान है किन्तु इसने पजावी से विभिन्न प्रकार की विशेपताओ को भी ग्रहण किया है। अम्वाला के उदाहरणो मे शायद ही कोई ऐसे लक्षण मिलेंगे जो मुज़फ्फरनगर की वोली से वाँगरू को अलग करते है जैसे 'मैं हूँ' के लिए 'सूँ' का प्रयोग। मुझे केवल एक ही पुस्तक देखने को मिली है जिसमें वाँगरु के वारे में वताया गया है—यह श्री ई० जोज़ेफ, आई० सी० एस० रचित 'Jatu, being some grammatical notes and a glossary of the language of the Rohtak Jats' है जो सर्वप्रथम वगाल की एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल (खड ६, १९१०, पृ०६९३ पर और आगे) में निकली थी। प्रस्तुत विवरण मे मैंने इसका पूरा उपयोग किया है। नीचे वाँगरू की उन प्रमुख विशेषताओ का वर्णन किया गया है जो उदाहरणो में मिलती है।

उच्चारण—स्वर-क्रम विलकुल निश्चित नही है। इस प्रकार 'कहाऊँ' की जगह 'कोहाऊँ', 'रहा' के लिए 'रेहया', 'जवाव' के लिए 'जुवाव' और 'वहुत' के लिए 'वोहत' का प्रयोग होता है। स्वर 'ए' तथा सयुक्त स्वर 'अइ' एक दूसरे के स्थान पर खूव प्रयुक्त होते हैं। अत, करण और सम्प्रदान कारक की विभक्ति 'ने' की जगह प्राय 'नइ' लिखा

जाता है तथा सम्प्रदान और अपादान की विभक्ति 'ते' और 'तह' दोनों है। इसी तरह, सम्बन्ध कारक के अप्रधान रूप की विभक्ति 'के' तथा 'कइ' दोनों है। ऊपरी दोआब के समान ही मूर्धन्य 'ण्' और 'ळ्' का प्रयोग होता है जैसे, 'अपणा', 'होगा', 'काळ', 'चळण'। 'ल्' दोहरा होने पर मूर्धन्य होने से बच जाता है जैसे 'चाल्लणा'—'चाळ्ळणा' नहीं, 'घाल्लणा—'घाळ्ळणा' नहीं। 'ट्' की ध्वनि के स्थान पर 'ड्' की ध्वनि के प्रयोग की ओर झुकाव मिलता है जैसे 'वडा' के स्थान पर 'बडा' का प्रयोग। उदाहरणों में 'ड़्' का प्रयोग कहीं कहीं हुआ है जैसे 'पडा', 'नेडे'। और श्री जोज़ेफ ने एक उदाहरण दिया है जिसमें 'ड्' 'ल्' में परिवर्तित हो गया है—'खडा' के स्थान पर 'खला'। ऊपरी दोआब के समान ही मध्यवर्ती व्यंजनों को दोहरा करने तथा पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर को ह्रस्व करने की प्रवृत्ति मिलती है। यदि पूर्ववर्ती स्वर 'आ' है तो लिखते समय ह्रस्व नहीं किया जाता है किन्तु उच्चारण ह्रस्व होता है। इस दोहरे व्यंजन के उदाहरण हैं—'चाल्लया', 'घाल्लया', 'लाग्गे', 'राज्जी', 'भित्तर' 'भुक्का', 'काल्ल' (कल); लेकिन 'काल' (समय) में दीर्घ 'आ' का प्रयोग होता है।

शब्द—रूप

साधारण हिन्दोस्तानी के समान ही संज्ञा शब्दों में विभक्तियाँ जोडी जाती है, केवल अप्रधान बहुवचन के अन्त मे 'ओं' के स्थान पर 'आँ' आता है। ऊपरी दोआब के वर्णन में इसके कुछ इक्के-दुक्के उदाहरण दिये गये है, अम्बाला मे भी कुछ और थोडे से है। दक्खिनी हिन्दोस्तानी, पंजाबी, तथा राजस्थानी के समान यहाँ यह नियम ही है।

एकवचन		बहुवचन	
कर्तृ कारक	अप्रधान कारक	कर्तृ कारक	अप्रधान कारक
घोडा	घोडे	घोडे	घोडाँ
वाब्बू	वाब्बू	वाब्बू	वाब्बुआँ
दिन	दिन	दिन	दिनाँ
खेत	खेत	खेत	खेताँ
माणस	माणस	माणस	माणसाँ
वरस	वरस	वरस	वरसाँ
छोरी	छोरी	छोरयाँ	छोरयाँ
वय्यर	वय्यर	वय्यराँ	वय्यराँ

यह द्रष्टव्य है कि स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द अनियमित है।

परसर्गों का प्रयोग अनिश्चित-सा है। अनेक दृष्टान्तो मे, एक ही परसर्ग कई कारको मे प्रयुक्त हुआ है। सामान्य हिन्दोस्तानी के समान ही संबंधकारक में 'का' लगता है।

उत्तर पुल्लिंग अप्रधान कारक 'नैं' अथवा 'नइ' है। 'नैं' अथवा 'नइ' कर्त्ताकारक के लिए ही नहीं आता वरन् सम्प्रदान कारक और कर्मकारक में भी आता है, यह हिन्दोस्तानी 'को' के स्थान पर है। उदाहरणार्थ 'घर्-बेल-नैं', दिदेन गो। 'नैं', 'नें' अथवा 'नइ' हिन्दोस्तानी के मूल वास्तविक रूप में अपादान कारक का चिह्न है किन्तु सम्प्रदान कारक तथा कर्मकारक में भी आता है जैसे 'मैं-ने छोरे-नी मार्या'। 'में' अथवा 'मैं' दोनों 'में' के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। अपादान कारक की विभक्ति 'तानी-नीं' है। 'तीं', 'तें' अथवा 'तई' के सार्थक प्रयोग का अच्छा उदाहरण यह है—'उन पीपल-ती उस-ती ...-नों'। करण कारक में 'लिते' का प्रयोग मिलता है जैसे 'जिवरियां-लिते' (जेवरी [रस्सी] से)।

सर्वनामों में अनेक विशिष्ट रूप मिलते हैं। उत्तम तथा मध्यमपुरुष के रूप ये हैं—

	मैं	तू
एकवचन कर्त्ताकारक	मैं	तै, तूं, तउं
सम्बन्ध	मेरा, मरा	तेरा, तरा
अभिकर्ता	मैं-ने, मने, मनइ	तउ-ने, तने, तनइ
सम्प्रदान कारक	मने, मनइ	तने, तनउ
बहुवचन कर्त्ताकारक	हम, हमें	थम, तम्हे
सम्बन्ध कर्त्ताकारक	म्हारा	थारा
अभिकर्ता	म्हा-ने, -नइ	था-ने, -नइ
सम्प्रदान कारक	म्हा-ने, -नउ	था-ने, -नइ

संकेतवाचक सर्वनाम 'योह', 'यउँह' तथा 'यु' (यह) हैं,

कर्त्ताकारक स्त्रीलिंग 'याह'; एकवचन अप्रधान 'इस', कर्त्ताकारक बहुवचन 'ये' 'यइँ, अप्रधान 'इन', 'ओह', 'अउँह', कर्त्ता स्त्रीलिंग 'वाह', एकवचन अप्रधान 'उस', बहुवचन 'वइँ', 'ओह'; अप्रधान 'उन' है। 'जो' अथवा 'जीण' सम्बन्धबोधक सर्वनाम है, अप्रधान एकवचन रूप 'जिस' है। प्रश्नसूचक सर्वनाम 'कौण', अप्रधान एकवचन 'किस' के अथवा 'कइ' हैं। अब के अर्थ में 'इब' है।

क्रिया

अ—सहायक क्रियाएँ और अस्तित्वसूचक क्रियाएँ

वर्तमान काल के रूप निम्न-लिखित हैं—

	एकवचन		बहुवचन
१	सूँ,	सा	सइ, से, सां
२.	सइ,	से	सो
३.	सइ,	से	सइँ, सैं

साधारणतया प्रचलित रूप यही है। कभी-कभी 'स्' के स्थान पर 'ह्' प्रयुक्त होता है, और तब 'हूँ' आदि रूप मिलते हैं। हिन्दोस्तानी के समान भूतकाल-मे 'था' आदि मिलते हैं।

आ—कर्तृवाच्य

हिन्दोस्तानी की सम्भाव्य वर्तमान-कालिक क्रिया का प्रयोग यहाँ भी अपने मूल रूप, शुद्ध सामान्य वर्तमान मे होता है। निम्न प्रकार से इसके रूप चलते हैं और दक्खिनी हिन्दोस्तानी मे बहुत अधिक मिलते हैं—

	एकवचन		बहुवचन
१.	मारूँ,	माराँ	मारइँ, मारे, माराँ
२	मारइ,	मारे	मारो
३	मारइ,	मारे	मारइँ, मारें

निश्चित वर्तमान की रचना सहायक क्रिया के वर्तमानकालिक रूप को या तो पुस्तकीय हिंदोस्तानी के समान वर्तमानकालिक कृदत में जोड़ कर होती है और या ऊपरी दोआब की भाँति सामान्य वर्तमान मे जोड कर, यथा 'मै मारदा-सूँ' या 'मै मारूँ-सूँ' (मैं मार रहा हूँ।)

अपूर्ण काल या तो पुस्तकीय हिंदोस्तानी की तरह अस्तित्वसूचक क्रिया के भूत-कालिक रूप को वर्तमानकालिक कृदत मे जोड़ कर बनाया जाता है और या ऊपरी दोआब के सदृश 'ए'-अत्य क्रियार्थक सज्ञा के साथ जोड़कर, यथा 'मैं मारदा था' या 'मैं मारे था' (मैं मार रहा था।) सामान्य वर्तमान के लिए जो नियम लागू होता है वही रोहतक मे भी है जैसे 'मैं—मारूँ-था'।

हिंदोस्तानी के समान ही शुद्ध वर्तमान में 'गा' (गे, गी) प्रत्यय जोडकर भविष्य के रूप बनाते हैं जैसे, 'माराँगा'।

सामान्य नियमानुसार भूतकालिक कृदन्त से भूतकाल के रूप बनते हैं जैसे, 'मन्ने मार्‌या'।

श्री जोजेफ ने भूतकालिक विधि लिङ् दिया है जो या तो हिन्दोस्तानी के समान ही बनता है अथवा साधारणतया शुद्ध वर्तमान मे 'हइ' प्रत्यय जोडकर। बाद वाला नियम लहदा मे प्रयुक्त होता है जिसमें इसी विधि से 'हा' प्रत्यय जोडते है। श्री जोजेफ द्वारा—दिये गये इस काल के प्रत्येक रूप के उदाहरण निम्नलिखित है —

(१) जे थोडा पानी न होता, तो तोड चढ जाता।

(२) जे मैं न्यूं करूँ—है, तो मैं मरूँ- (है)।

जैसा कि कोष्ठक चिन्ह द्वारा सूचित किया गया है, अन्तिम वाक्य मे 'है' छोडा जा सकता है।

वर्तमानकालिक कृदन्त 'मान्दा' है, इसमें 'त्' के स्थान पर 'द्' है।

भूतकालिक कृदन्त 'मार्‌या'; पुल्लिंग अप्रधान 'मारे', स्त्रीलिंग 'मारी'।

क्रिया का सामान्य धातुरूप 'मार्‌या' अथवा 'मारणा' है। 'आण-कढ़', 'मने करानड़' आदि जिनकी ओर मेरा ध्यान गया है उनके अतिरिक्त, साधारण हिन्दोस्तानी के समान ही अनैयमिक क्रियायें मिलती हैं। 'जाणा' का भूतकालिक कृदन्त 'गया' और 'गिया' दोनों ही हैं।

सामान्य नकारात्मक 'नाहीं' है। एकवचन क्रिया में 'नी', जैसे 'मै नी जानू' भी मिलता है। निषेधवाचक 'मत' या 'मतना' है जैसे 'मतना चलियो' (श्री जोज़ेफ)।

शब्द-समूह

अनेक विशिष्ट शब्द प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणों में मैंने कुछ शब्द चुने हैं। इनमें से बहुत-से पंजाबी से लिये गये हैं—

अवड़ा	जीमण,
अद,	कमन्द
अर	कणक, कणे
अड्ड, अट्टे	धेन
अमना	गाडण
बाब्बू या बाप्पू	खान
बंटण	खात्तर
बलाण	गोड्डा
बाण्डण	न्यो
बरगा	कुल्ल, कण
बड़ण	लागण
बय्यर	ल्हावाई
बेरा लेण	लोया
भाजण भुसका	मन्द-जाण
भूण्टा	मंगण
बीबी	नकू
बिग-जाणा	ओट
बिराण करण	पा = पास
चाल्लण	पल्ला

छेल या छैल	साप्फा
छूरट	सात्त
चून	सिओना
दन्द	स्माणा
घोरे	तवल
घूई	थियावण
घुर	तुरण
ढावी	टल्ला
ढाण्डी	टावर
ढुण्ड	उडइ उडे
गैल	वार
गियान	जरयाट
हाट	जिव
इव, इव्वी, इव्वहू	

निम्नलिखित उदाहरण करनाल से लिया गया है। यह मलत फारसी लिपि मे लिखा गया था जिसमे मूर्धन्य ण् तथा ळ् नही होते हैं। फारसी की प्रतिलिपि के साथ जो लिप्यन्तर दिया गया है उसमे यह दिखाये गये है। मैंने इनका लिप्यन्तर नागरी लिपि मे दिया है जो अधिक उपयुक्त है।

[सं० १.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बांगरू (ज़िला करनाल)

एक माणस-कै दो छोरे थे। उन-मैं-तै छोट्टे छोरे-ने वाप्पू-तै कहया अक वाप्पू हो धन-का जोण-सा हिस्सा मेरे वाँडे आवे-सै मन्नै दे-दे। तौ उस-ने धन उन्हैं वाँड-दिया। अर थोडे दिनाँ पाछै छोट्टा छोरा सब कुछ कट्ठा कर-कै परदेस-ने चाल्ल-गया अर उडै अपणा धन खोट्टे चळण-मैं खो-दिया। अर जद सारा खो-खिंडा-दिया उस देस-मैं बडा काळ पडा अर ओ ह कगाळ हो-गया। फेर एक साहूकार-कै नौकर लाग-गया। उस-ने अपणे खेताँ-मैं सूर चरावण घाल्ल्या। अर उसने-चाहण थी अक इन

छोल्कों-से जाँण-स्याँ-ने सूर खावें-सैं अपणा पेट भर-ले अक उस-ने कोई नाहीं दे-था। फेर उस-ने सोवी-मैं आण-कै कह्या मेरे वाप्पू-कै कितने कमेरे पेट भर खावें-मैं अर मैं भुक्का मरूँ सूं। अर मैं उठ-कै अपणे वाप्पू धोरे चाल्या-जाँगा अर उस-तैं कहाँगा अक वाप्पू भगवान-का अर तेरा खोट करा-सै अर इव इस जोग्गा नाहीं सूं अक मैं तेरा छोरा कोहाऊँ। मन्नै अपणे मिहनतियाँ वरगा वणा-ले। तौ उठ-कै अपणे वाप्पू धोरे गया अर ओह इव्वै दूर था अक उस-ने देख-कै उस-के वाप्पू-ने दया आई भाज-कै गळ ला-लिया अर वोह्त चुव्या। छोरे-ने वाप्पू-तैं कह्या वाप्पू, मन्नै भगावान-का अर तेरा खोट करा-सै अर इस जोग्गा नाहीं अक तेरा छोरा कोहाऊँ। वाप्पू-ने अपणे नौकरों-तैं कह्या अक, सुथरे-तैं सुथरे लत्ते काढ ल्याओ अर उस-ने परहाओ अर उस-के हाथ-मैं गूंठी अर पाह्याँ-मैं जोडा परहाओ अर हम खावें अर खुसी मणावें अक मेरा छोरा मर-गया-था इव जी-गया अर खोया-गया था इव-पा-गया। तौ फेर वैं राज्जी होण लाग्गे॥

उस-का वड़ा छोरा खेत-में था। जद ओह घर-के नेडे आया गावण अर वजावण-की वाज सुणी। तौ एक नौकर-ने वुला-कै पूछा योह के सै। उस-ने उस-तैं कह्या अक तेरा भाई आ-रह्या-सै अर तेरे वाप्पू-ने इस-की वडी खात्तर करी इस खात्तर अक उस-ने अच्छा पाया। उस-ने छो-मैं आण-कै नाहीं चाह्या अक भित्तर जावे। तौ उस-के वाप्पू-ने वाहर आण-कै उसे मणाया। उस-ने जुवाव दिया देख मैं धोरे इतने वरसाँ-तैं तेरी टहल करूँ-सूं अर कवी तेरे हुकुम विनाँ नाहीं चाल्लया पर तन्ने कवी मन्ने वकरी-का वच्चा नाहीं दिया अक अपणे याराँ गैल खुसी मणाऊँ। अर जद यू तेरा छोरा आया जिन-ने तेरा धन कचण्याँ-मैं उडाया तन्ने उस-की वडी खात्तर करी। उस-ने कह्या अक रे छोरे तौं मेरे धोरे वुर-तै सै अर जो कुछ मेरा सै औंही तेरा सै। पर खुसी मणाणा अर राज्जी होणा चाहिये था अक यू तेरा भाई मर-गया-था सो इव जी-गया-सै अर खोया-गया-था इव पा-गया।

वाँगरू (जाटू)

रोहतक की वाँगरू पूर्वोल्लिखित उदाहरण के लगभग समान है। इनका स्थानीय नाम जाटू अथवा जाटों की भाषा है। केवल एक ही वात ध्यान देने की है कि 'य' ध्वनि क्रियाओं के भूतकालिक कृदन्तों में प्रयुक्त नहीं होती है जैसे 'कह्या' के स्थान पर 'कहा'। इसके अतिरिक्त वोलचाल की भाषा में 'मेरे-से' अप्रधान सम्बन्ध कारक का उपयोग 'मूल' अप्रधान के लिए भी होता है

नमूने के तौर पर एक लघु-कथा दे रहा हूँ जिसमें अहीर जाति (अथवा हीर जो कि इसका स्थानीय नाम है) के सर्वविदित अर्थ-लोभ का चित्रण हुआ है। एक अहीर अपने

जामाता को. जो भी वह चाहे देने का वचन देता है। जब जामाता एक सुन्दर उपहार माँगता है तो अहीर उसे देने से बचने के लिए तरह तरह के बहाने बनाता है।

यह उदाहरण मुझे फारसी लिपि मे प्राप्त हुआ था। यह दिल्ली मे प्रचलित जाटू के उदाहरण के रूप में भी लिया जा सकता है।

[सं० २.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बाँगरू (जाटू) (जिला रोहतक)

[लिप्यन्तरण]

एक हीर माँदा पड़ा था। उसका असना वेरा लेण आया। जिस दिन उसका असना आया, उस दिन टुस-टुक उसको चैन थी। हीर अपणे भाई से बोला अक 'योह छोरा कोण सइ?' उसका भाई बोला अक 'म्हारा असना सइ।' हीर ने कहा अक, 'कोण-सा असना सड?' ओह बोला 'जयकली के घरवाला सइ।' हीर ने कहा अक 'चौधरी, आज तेरे आणे से मेरी चैन हुई सड। तू मेरे से कुछ माँग।' हीर का जमाई बोला अक 'चौंधरी, मैं माँगूंगा, तू नाह देगा।' हीर बोला 'नाह क्यूँ दूंगा? तेरे आणे से मेरी ओट हुई सइ। जो माँगेगा, सो दूंगा।' हीर का जमाई बोला अक, 'ओह चौसींगड जेळी तेरी धरी सड, वाह दे दे।' हीर बोला अक 'याह जेळी नाहीं दूंगा। याह जेळी तीन पीढी से धरी सइ। मेरे काका हुकम्ला के हाथ की। जिसमे पारी गैल छाल। मेरे कालजे की कोर। जिस पर तीन-तीन वियाह बिगड़ लिये। क्यू कर दे दूं?'

बाँगरू (हरियानी)

हरियानी के नमूने के लिए मैं झिंद राज्य की झिंद तहसील मे प्रचलित एक उत्कृष्ट लोककथा दे रहा हूँ। इसकी भाषा अन्य उदारणो के अनुरूप है। तथापि आपवादिक उच्चारण के निम्नलिखित उदाहरण की ओर हम ध्यान दे सकते हैं। 'कहना' की अकाल क्रिया 'कैहण' है जिसका उच्चारण प्राय 'कैह्‌ण' होता है। इसकी कारणवाची 'कौहाण' है। 'माँगना' के लिए 'मैंगण' है। 'वचाण' मे 'उ' अथवा 'ओ' 'अ' हो गये है।

'रहण' किया बहुत संक्षिप्त हो जाती है जैसे 'रहे-थे' की जगह 'रे-थे' तथा 'रह्‌या' के लिए 'र्‌हया' (हिन्दी 'रहा')।

'देण' और 'लेण' क्रियाओं के रूपों मे 'ए' स्वर की जगह 'ई' स्वर की ओर झुकाव मिलता है। अत 'दिएँगा' (पुल्लिग) और 'दींगी' (स्त्रीलिग) रूप मिलते हैं।

[सं० ३]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बाँगरू (हरियानी) झिंद राज्य (झिंद तहसील)

एक ब्राह्मण था अर एक ब्राह्मणी थी। ब्राह्मण चून मँगँ कै लि आया करदा। ब्राह्मणी कैहण लाग्गी इस नगरी मैं राज्जा भीज सै। यू मलोक कौहा कै ब्राह्मणाँ नै एक टका सिओने का दे सै। इस राज्जा कै तौं भी जा कै कह दे। ब्राह्मण कैहण लाग्या मैं सलोक नी जाणदा। ब्राह्मणी कैह्ण लाग्गी सलोक तन्नै मैं सिख्या दोंगी। फेर उन ब्राह्मणी नैं सलोक सिख्या दिया अक पों स्सा गाँठ मैं।

राज्जा भोज्ज नै सै रोपया उसनैं निआम के दे दिया। ब्राह्मण तो अपणे घराँ चाल्ल्या आया॥

राज्जा भोज एक खूर्जी रोपया की भर कै सैल मैं चाल्ल पड्या। चाल्ल्या चाल्ल्या अपनी सुसराड विग गिया। राज्जा भोज नै एक ल्हवाई की हाट पर डेरा कर दिया। ल्हवाई नै उसकी खात्तर कर दे वार हो गई। ल्हवाई रोज की रोज राज्जा भोज की रानी की महल मैं जाया करदा। ल्हवाई रानी खात्तर लाड्डू ले जाया करदा। उ दन तवल मैं ओह लाड्डू भूल गया। ल्हवाई जद कमन्द पर चढण लाग्या राज्जा भोज नैं थाप्पी अक तैं भी देख तो के गियान सैं। राज्जा की छोहरी कैहण लाग्गी लाड्डू लि आया। ल्हवाई कैहण लाग्या लाड्डू भूल आया। राज्जा की बेटी ले कै कोरडा ल्हवाई नै पिट्टण मँद गई। राज्जा भोज के पल्ले मैं चार लाड्डू बव रे थे। राज्जा भोज नै ओह साप्फा झरोखे मैं वगा कै मारा। राज्जा की बेट्टी कैहण लाग्गी यिह लाड्डू कडै लाड आये। ल्हवाई कैहण लाग्या लाड्डू रामनैं दिए सैं। फेर वाह राज्जा की बेट्टी लाडड् खाण लाग्गी अर कैहण लाग्गी ल्हवाई ईसी लाड्डू मैं अपणे सासरे मैं विग्राह ले गई जूँहीं खाए थे। तेरे को बटेऊ आ र्ह्या सै। ल्हवाई कैहण लाग्या एक वटेऊ मेरे घोड़े आला आ र्ह्या सै। वाह राज्जा की बेट्टी कैहण लाग्गी तन्ने चार सै रोपया दींगी उस बटेऊ नै मरवा दे॥

ल्हवाई उतर कै चार जाल्लाद्दाँ नै वला कै लि आया अक भाई चार सै रोपया लेओ। इस बटेऊ नै स्माणे मैं जा कै मार देओ। चार जाल्लाद्दाँ नै ओह राज्जा भोज पकड़

लिया। राज्जा भोज कैहण लाग्या भाई तम मेरा के करोगे। जाल्लाद् बोल्ले हमें तन्नै जी तै मारांगे। राज्जा पुच्छण लाग्या जी तै मारे तन्नै के थियावैंगा। जाल्लाद बोल्ले भाई चार सै रोपया थियावैंगे। राज्जा बोल्ल्या भाई तम नैं रोपया पान सैं दिआँगा जी तै ना मारो। थारे शहर मैं जिऊँदा नाहीं वड़ूंगा। उन्हाँ नै पान सैं रोपया ले कै ओह राज्जा छोड दिया॥

राज्जा भोज कै ब्राह्मण वाला सलोक सात्त आ गिया अक पैस्सा गाँठ मैं था जो जी बच गया॥

ब्रजभाखा

ब्रजभाखा का पहला उदाहरण मथुरा ज़िले का है जो इस वोली का प्रमुख क्षेत्र है।

[सं० १.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा **(ज़िला मथुरा)**

एक जने-के दो छोरा हे। उन में ते लोहरे ने कही कि काका मेरे वट कौ धन मोए दे। तव वा ने धन उन्हें वटि करि दियौ। और थोरे दिनाँ पाछे लोहरे वेटा ने सिगरौ धन इक ठौरी करि कै दूर देसन कुँ चल्यौ और वा जगे अपनौ धन उडाय दियौ। और जव सिगरो धन खर्च कर चुक्यौ वा देस में वडो अकाल पड्यौ और वह कगाल होन लागौ। तो एक वड़े आदमी के जाड लगौ और वाने वाए सूअर चराइवे कुँ अपने खेतन में पठाइयौ। वा के मन में आई उन छिलकाँ ते जिन्हें सूअर खात हैं अपनौ हू पेट भरै और वाए कोई नाए देत हौं। तव वाए चेत आयौ कि मेरे वाप के वलाइ मजूरन की रोटी चलत है और हौं भोखन मरतु हौं। अपने काका के ढोरे जाऊँगौ और वा से कहूँगौ कि काका मैंने तेरौ और भगवान कौ वडौ पाप कियौ है और अव ऐसौ नाए रह्यौ कि तेरौ वेटा वाजौं। मोए अपने मजूरन की नाई राख। और उठ्यौ और अपने वाप के ढोरे चल्यौ। वह अभै दूरई हौ कि वा के वाप कुँ वाए देखत खेम तर्स आयौ और दौड कै वाए चिपटाइ लीनी और वलाइ पिआर कीनी। वेटा ने वा से कही कि काका मैं ने तेरौ और भगवान कौ वडौ पाप कियौ है और अव ऐसौ नाए रह्यौ कि तेरौ वेटा वाजौं। वाप ने अपने नौकरन ते कही चोखे चोखे लत्ता लाओ और याए पहराओ और या के हाथन में अँगूठी और पामन में पनहा पहराओ और हम खाएँ और मगन रहैं। यह मेरौ छोरा मर गयौ हौ सो अव जिऔ है और खोइ गयौ हौ सो अव पायौ है। और वै खुसी करन लागै॥

और वा कौ वडौ छोरा खेत पै हौ। जव वाखर के ढिग आयौ वा ने गाइवे और नाचवे की आहट सुनी। तव वा ने नौकरे वुलायौ और वा से पूँछी यह कहा ह्वै रह्यौ है। तो वा ने कही कि तेरौ भैया आयौ है और तेरे काका ने वडी जोनार करी है या काजे कि वाए अच्छौ भलौ देख्यौ है। वा ने रिस के मारे भीतर जानौ न विचारौ। तव वा के वाप ने वाए मनायौ और वा ने वाप से कही हौं इतेक दिनाँ ते तेरौ टहल

करतु हौं और कब हूँ तेरी आग्या ते बाहर नाए चल्यौ। पर तैं ने कब हूँ मोए एक उन्ना हूँ नाए दियौ कि मैं ऊँ अपने दोस्तदारन में खुस लब्दी करतौ। जब तेरौ यह छोरा आयौ जा ने निगरौ धन राँडी मूँडनी में बिगार दियौ तब तैं ने वा के काजे बडी जोनार कीनी। तब वा ने कही बेटा तू तो सदा मेरे ढिग रह्यौ है और जो मेरौ है सो तेरौ है। पर तोए खुसी करनी उचित है कि तेरौ भैया मर्यौ भयौ फिर जिओ है और खोयौ भयौ पायौ है॥

पुरानी ब्रजभाखा

अब मैं पुरानी साहित्यिक ब्रजभाखा के उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ। उनके पाठकों के लिए अनुलिपि और अनुवाद देना अनावश्यक होगा। यहाँ १६वीं शताब्दी की ब्रजभाखा के निदर्शन के लिए 'सूरसागर' से एक छोटा-सा अंश प्रस्तुत है।

[सं० २]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (सूरदास)

ब्रज घर घर सब भोजन साजत।
सब-के द्वार बधाई बाजत॥
सकट जोरि लै चले देव बलि।
गोकुल ब्रजबासी सब हिलि मिलि॥
दधि-रोरी सबु साजि मिठाई।
कहँ लगि कहउँ सबै बहुताई
घर-घर-तें पकवान चलाये।
निकसि गाँव-के गोइँडे आये।
ब्रजबासी तहँ जुरे अपारा।
सिंधु समान न वार न पारा॥
पैंडे चलन नहीं कोउ पावत।
सकट चले सब भोजन आवत॥
ग्वाल सकट चले नंद महर-के।
अवर सकट कितने घर-घर-के॥
सूरदास प्रभु महिमा सागर।
गोकुल प्रगटे-हैं हरि नागर॥

अब १७वीं शताब्दी की ब्रजभाखा के उदाहरणस्वरूप बिहारी की 'सतसई' से कुछ सरल पद्य दिये जाते हैं।

[स० ३]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा ('सतसई' से उद्धृत अंश)

(बिहारीलाल, सि० १६५०)

वसंत-ऋतु वर्णन

दिस-दिस कुसुमित देखिये उपवन विपिन समाज।
मनहु वियोगिनि-कौं कियौ सर-पजर रितु-राज ॥ १ ॥

ग्रीष्म-ऋतु वर्णन

नाहिन ये पावक प्रबल लुएँ चलति चहुँ पास।
मानौ विरह बसत-के ग्रीखम लेति उसास ॥ २ ॥

समीर वर्णन

चुवतु स्वेद मकरद-कन तरु तरु तर बिरमाय।
आवतु दच्छिन देस-तें थक्यौ बटोही वाय ॥ ३ ॥

अत मे मैं १९वीं शताब्दी के प्रारभिक भाग की ब्रजभाखा के निदर्शन के लिए राजनीति से एक अश उद्धृत करता हूँ।

[स० ४]

भारतीय-आर्य-परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

(ब्रजभाखा) (राजनीति से उद्धृत अंश)

(लल्लू-जी लाल, १८४३)

गोदावरी नदी-के तीर एक सेमल-कौ रूख। ता-पै सब दिस-के पछी आय विश्राम लेतु-हैं। एक दिन प्रात-ही लघुपतनक नाम काग जाग्यौ। वह एक काल-रूप व्याधी-कौं दूर-तें आवतु देखि चिचाय-करि कहनि लाग्यौ आज भोर-ही-की वेला अधर्मी दुराचारी-कौ मुख देख्यौ। सो न जानियै कहा होय। ऐसें विचारि लघुपतनक काग उडि-गयौ। कह्यौ-है कि—

उतपात-की ठाम पडित चतुर न रहै।
मूरख भय सोग बैठ्यौ सहै ॥

इतेक-में व्याधी-नैं रूख तरैं चाँवर-के कनिका डारि ता-पर जाल पसार्यौ। तहाँ चित्रग्रीव कपोत कुटंब समेत उड़त उत आय कढ्यौ। तिन-में-तें एक पछी देखि बोल्यौ इन चाँवरनि-कौं हौं चुग्यौ चहतु-हौं। चित्रग्रीव कही अरे या वन में चाँवर कहाँ-तें आये। यह कछु कौतुक है। या-तें ये मो-कों नीके नाहीं लागतु ॥

अलीगढ़ की ब्रजभाखा

मथुरा के उत्तर-पूर्व मे अलीगढ जिला है। यहाँ ब्रजभाखा बोली जाती है, लेकिन इसमे कुछ प्रमुख स्थानीय विशेषताएँ हैं या कम-से-कम ऐसी विशेषताएँ तो है ही, जो मथुरा से प्राप्त उदाहरणो में नही मिलती।

यहाँ मैं अलीगढ की ब्रजभाखा के दो उदाहरण दे रहा हूँ। एक अपव्ययी पुत्र-कथा का रूपातर है और दूसरा एक लोक-गीत।

उच्चारण—यहाँ जब 'र्' व्यजन का पूर्ववर्ती होता है तब उसका विलोप हो जाता है और व्यजन का क्षतिपूरक द्वित्वीकरण, जैसे 'नौकरन्-सूँ' के लिए 'नौकन्न्-सूँ' (नौकरो से)। बुदेली के भदौरी रूप मे भी ऐसा बहुत होता है। 'व्' ध्वनि दीर्घ स्वर का पूर्ववर्ती होने पर प्राय 'म्' हो जाता है जैसे 'मनावन' के लिए 'मनामन' (मनाना), 'वामन' (बावन), 'रोमति' (वह रो रही थी)। 'क्य्' कभी-कभी 'छ्' में बदल जाता है जैसे 'क्यों' के लिए 'छो'। 'द्' का पूर्ववर्ती होने पर 'ज्' कभी-कभी 'द्' मे परिवर्तित हो जाता है यथा 'भेज-दयौ' के लिए 'भेद-दयौ' (उसने भेज दिया)। अतिम महाप्राण अघोष व्यजन अल्पप्राण हो जाता है उदाहरणार्थ 'हाथ' के लिए 'हात्'। 'कुफ्ल' के लिए 'कुलफ' शब्द में व्यजनो का स्थानातरण हो गया है।

शब्दरूप—यहाँ दुर्बल सज्ञाओ मे अतिम ह्रस्व 'उ' जोड़ने का प्रचलन प्रामाणिक ब्रजभाखा की अपेक्षा अधिक है। यह 'उ' सभी कारको और दोनो वचनो मे रहता है जैसे 'बाप' या 'बापू' (पिता), 'बापू-सूँ' (पिता से); 'खेतनु-मे' (खेतो मे); 'मजूरनु-कौ' (नौकरो का)। एक उदाहरण मे 'राजा' के कर्म-सप्रदान कारक रूप में 'राजै' का प्रयोग मिलता है।

इसके परसर्ग प्रामाणिक ब्रजभाखा के ही हैं लेकिन करण के लिए 'ने' के अतिरिक्त 'नु' भी मिलता है जैसे 'तुम-नु मेहमानी करी-ऐ' मे (तुमने दावत दी) और कर्म-सप्रदान के लिए 'कूँ' के अतिरिक्त 'के' भी मिलता है यथा 'एक जने के' (एक विशेष व्यक्ति को) वाक्यांश मे।

सर्वनामो मे 'मैं' का कर्म-सप्रदान कारक प्रामाणिक ब्रजभाखा के समान 'मोय' अथवा 'मोए' है और 'मो-ऊ-ए' का अर्थ है 'मुझे भी'। अन्यपुरुष का विशिष्ट सर्वनाम 'वु' अथवा 'वे' है, कर्म-सप्रदान 'वाए' और एक विकृत रूप 'वा'। बहुवचन 'वे'

और विकृत रूप 'गुनि'। इससे सवद्ध 'ग्वा' (प्राय 'ड्वा') लिखा जाता है) अर्थात् 'वहाँ' है। 'यह' के पर्याय 'जी' का कर्म-सप्रदान 'जाय' है और विकृत रूप 'जा'।

अस्तित्वसूचक क्रिया के वर्तमानकालिक रूप इस प्रकार हैं—

	एक०	वहु०
१	ऊँ	एँ
२.	ए	औ
३	ए	एँ

'ए' प्राय 'ऐ' और 'ए, ऐं' रूप मे भो उच्चरित होता है। भूतकालिक पुल्लिग रूप 'ग्रो' (अथवा 'औ') और वहुवचन 'ए'। दूसरे शब्दो मे अलीगढ मे प्रामाणिक व्रजभाखा का प्रारभिक 'ह्' विलुप्त हो जाता है।

जव ग्रस्तित्वसूचक क्रिया वर्तमानकालिक कृदतसहित सहायक क्रियास्वरूप प्रयुक्त होती है तो दोनो कभी-कभी मिल कर एक शव्द वनाती है जैसे 'मरत-ऊँ' अर्थात् 'मैं मर रहा हूँ' के लिए 'मरतूँ'। 'वह है' अर्थ द्योतित करने के लिए 'हनु-ए' का व्यवहार होता है। पूर्वकालिक कृदत जो प्रामाणिक व्रजभाखा मे 'ह्वै' है, अलीगढ़ में 'है' हो जाता है यथा 'ह्वै-गयौ' (वह हो गया।) के लिए 'है-गयौ'।

सभी क्रियाओ में पूर्वकालिक कृदत का चिह्न 'कें' है, 'कै' नही।

वताया गया है कि अलीगढ में व्रजभाखा-भापियो की सख्या ९९२,२०० है।

[सं० ५.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा **(जिला अलीगढ़)**

उदाहरण १

एक जने-कें द्वै वेटा ए। उन-में-तें छोटे-ने वाप-सूँ कह्यौ कि ए वाप मेरौ जो वाँटु होतु-ए सो मोय दै-देउ। तव ग्वा-ने मालु उन्हैं वाँटि दयौ। तव छोटौ वेटा सवु इकठौरौ करि-कें परदेस-कूँ चल्यौ-गयौ औरु ग्वाँ अपनौ सवु मालु गुलछर्रनु-में उडायौ। जव सवु उडाय खाय चुक्यौ ग्वा देस-में वडौ अकालु पर्‌यौ। फिरि गु वड़ौ कगालु है-गयौ। तव ग्वा देस-के एक भागिमान-के सहारे-सूँ जाय लग्यौ। ग्वा-ने ग्वा-कूँ अपने खेतनु-में सूअर चुगाइवे भेद्-दयौ। सूअर जो खान-एँ ग्वा-की छूँछि-सूँ पेटु भरिवे-कूँ तय्यार् हौ। ग्वाय कोई कछू ना ओ देतु। जव ग्वाय होसु आयौ तव ग्वा-ने कही मेरे वापु-कें वहुत-से मजूरनु-कूँ मुकतेरीं रोटीं एँ औरु मैं भूखनु मरतूँ। मैं याँ-तें उठि-कें अपने वाप-

के जौरें जाऊँगी औरू ग्वा-तें कहूँगी कि मैंने भगमान-के सामने औरू तिहारे अगार पापु कर्यौ-ए औरू अब मैं तिहारौ बेटा कहाइबे लायक ना ऊँ। जैसे औरू मजूर रहत एँ तैसे मो-ऊ-ए राखि-लै। ग्वाँ-ते चलि-कें अपने बाप-के जौरें आयौ। परि बहुत दूरि-तेंई ग्वा-के बाप-कूं लखाय पर्यौ औरू तब बाप-कूं तमुं आय-गयी औरू दौर्यौ औरू बेटा-की जेट भरि-लई औरू पुचकार्यौ। औरू बेटा-ने बाप-सूं कही कि ए बाप मैंने भगमान-के अगार औरू तिहारे देखत पापु कर्यौ औरू अब मैं तिहारौ बेटा कहाइबे लायक ना ऊँ। परि बाप-ने अबन नौकरनु-सूं कही कि अच्छे-अच्छे ओढ़ना लाओ औरू जाय पहराऔ औरू छाप जा-के हात-में पहराऔ औरू पनहीं पायनुं-में पहराऔ। चलौ खाँय औरू चैन करें। काहे-तें कि जि मेरौ बेटा मरि गयौ-ओ औरू फिरि जी-पर्यौ। खोय गयौ-ओ औरू पाय-गयौ। औरू फिरि वे खुसी मनामन लगे॥

ग्वा-खन ग्वा-कौ बडौ बेटा खेत-में ओ। जब गु घर-के जौरें आयौ तौ ग्वा-ने गाइबौ नाचिबौ सुन्यौ। औरू एकु नौकरू बुलायौ औरू पूछी कि याँ का है-रह्यो-ए। ग्वा-ने ग्वा-सूं कही कि तेरौ भैया आय-गयौ-ए औरू तेरे बाप-ने ग्वा-की महमानी करी-ए। काहे-तें कि गु भलौ चगौ आय-गयौ-ए। तब गु बडौ रिस भयौ औरू भीतर न बर्यौ। जा-तें ग्वा-कौ बापु बाहिर निकसि आयौ औरू ग्वा-कूं मनायौ। तब ग्वा-ने अपने बाप-कूं ज्वाबु दयौ कि मैं इतने बर्सनु-तें तिहारी टहल कर-रह्यौ-ऊँ औरू न मैं तिहारी बात-तें कब-हूँ बाहिर भयौ। तौ-ऊ तुम-ने कब-हूँ मोय एकु बकरिया-कौ बच्च-ऊ न दयौ कि मारनु-में लहरि उडावतौ। परि जैसें जि तिहारौ बेटा आयौ जा-ने तिहारी सब जमा पूंजी रडिनु-के सग उडाय खाय डारी ग्वा-की तुम-नु महमानी करी-ए। ग्वा-ने ग्वा-सूं कही कि बेटा हमन तू मेरे-ई जौरें रहतु-ए। जो कछु मो-पे हतु-ए सो तेरौ-ई ए। जि हम-कूं चहियति-ई कि हम खुसी मनावते औरू खुस होते। काहे-तें कि जि तेरौ भैया मरि-गयौ-ओ फिरि जी-पर्यौ। औरू जातु-रह्यौ-ओ फिरि आय-गयौ॥

अगले उदाहरणस्वरूप एक लोकप्रिय गीत प्रस्तुत है।

[सं० ६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (जिला अलीगढ़)

उदाहरण २

सोने रूपे-के महल बने राजा नल-के जा-के सुन-पीतरि-के है-गये। औराँ जौराँ खास अन्न मुठी भरि ना रह्यौ। नल-के है गये कौला माटी राख। सोने की साँकर ग्वै-

ऊ सुन-पीतरि-की ह्वै-गई। ग्वा-ऊ-तें ह्वै-गयौ लोहु। रानी तौ राजै समझावै बलमा छोडौ नगर-कौ मोहु। अब रानी राजा दोऊ पथ सिधारैं पमरि-पै ॥ १ ॥

भरि चौमासे सोई दुमेंती जाय चिता व्यापी गैल-की। आभूखन लये सम्हारि। खम्म-ग्रम्म-नूँ मिल्ति दुमेंती रानी रोमति छाती फारि। नल राजा-ने वान सम्हारे। काच महल कोठार कुलफ नल-ने जडि-दये तारे। करी किल्ले-मूँ परनाम। ज्वाला-मुखी लयौ नल-ने खांडी कोठनु-पै लाल कमान। गोटा फाँसे नल-ने मव धरि लीने फेंट-में ॥ २ ॥

रानी राजा निकरि फैरि दरवाजैं-पै आये। करि आवीनि दई परिकम्मा जव किल्ले-कूँ नल-ने ज्वाव सुनाये। मेरौ अमरु रहौ खाई कोटु। मेरी तेरी विछुर्यौ है किल्ले दादा जोटु। मेरी तेरी विछुरनु सुनि किल्ले भैया ह्वै-चुक्यौ। अव मेरी तेरी हरि-ने विगारी आजु। तो-में किल्ले वैठि-कें भूंज्यौ वामन-गढ-कौ मैं-ने राजु। आजु उठ्यौ किल्ले दानो तो-तें पानी। जीऊँगौ तौ फैरि मिलूँगौ। नईं आय-गई मेरी काल-की वानी। मुनि किल्ले मेरे वीर नल राजा-के कारनें तू मति हूजौ दल-गीर। मो भडक-भडक नल आँसू डारैं रोय किल्ले-सूँ यौं कहै ॥ ३ ॥

रानी-उ रोवै राजा-उ रोवै जा-कौ गढु पथरा-कौ गहभर्यौ। मुनि राजा मेरी वात। जा दिन तैं-ने हूँ वनवायौ तैं-ने चौं न वनाय-दये मेरे दोऊ हात। जा दिन राजा कारीगर वुलवाये औरु ऊँचे नीचे तैं-ने वुर्ज चिनाये खोदि नीव मेरी धरि-दई औंडी। जव राजा तैं-ने पाँय न वनवाये। देतौ पाँय वनाय। सग तिहारे चलतौ राजा आवी विपिता लेतौ वटाय। नो कैमी करूँ हीरा नरवर-वारे मेरौ धरू वासुक-ने गहि-लयौ ॥ ४ ॥

आगरा की ब्रजभाखा

वतलाया गया है कि आगरा जिले मे चार प्रमुख वोलियाँ प्रचलित है। आगरा नगर अनेक वर्षो तक मुगल सम्राटो की राजधानी थी, अत यहाँ तथा निकटवर्ती क्षेत्र मे उर्दू वोली जाती है। इम जिले के दक्षिण मे चम्वल के किनारे वुदेली के भादौरी रूप का व्यवहार होता है। शेप जिला उत्तर से दक्षिण जाने वाली एक रेखा द्वारा लगभग दो समान भागो में विभाजित हो जाता है। इस रेखा के पश्चिम मे भरतपुर रियामत तथा मथुरा जिले के निकटवर्ती भू-भाग मे स्थानीय अधिकारियो के अनुमार ब्रजभाखा व्यवहृत होती है। इसके पूर्व मे अलीगढ, एटा और मैनपुरी से घिरे प्रदेश मे वोली 'गाँव-वारी' अथवा 'खडी वोली' नाम से पुकारी जाती है। आगे उदाहरणो मे स्पष्ट हो जायगा कि ये दोनो ब्रजभाखा ही हैं, पश्चिमी वोली मथुरा की वोली से मिलती है और पूर्वी अलीगढ की वोली से।

आगरा जिले के भाषासंबंधी आँकडे निम्नलिखित हैं —

उर्दू		२००,०००
व्रजभाखा, जिले के पश्चिम मे	३३०,०००	
व्रजभाखा, जिले के पूर्व मे	२१७,०००	
		५४७,०००
भदौरी		२५०,०००
दूसरी भाषाएँ		६,७९६
		१,००३,७९६

यह आँकडे सन् १८९१ की जनगणना पर आधारित है ।

इस जिले के पश्चिम मे बोली जानी वाली व्रजभाखा के रूप के उदाहरणस्वरूप मैं अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारंभिक पंक्तियाँ देता हूँ । स्पष्टत इसकी मथुरा की बोली से बहुत समानता है ।

[स० ७]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (आगरा जिले का पश्चिम)

एकु आदिमी-कैं दो पूत हे । उनि-मैं-से लौहरे-नैं बाप-तैं कही कै ऐ काका मेरे बाँट कौ मालु मोइ दै-दै । तब वा-नैं मालु विनि-कूँ बाँटि दियौ । कछुक दिन बीतैं लौहरौ छोरा सबु इकट्ठौ करि-कैं दूर देस-कूँ चल्यौ-गयौ । महाँ वा-नैं अपनौ मालु कुसंग-मैं उडायौ । जब सबु निबटाइ चुक्यौ वा देस-मैं अकालु पर्‌यौ । वुह गरीबु होन लाग्यौ । तब वा देस-के एकु बडे अदिमी-के जहाँ जाइ लग्यौ । वा-नैं वा-कूँ अपने खेतनि-मैं सूगर चराइबे-कूँ भेज्यौ ।

आगरा के पूर्व में प्रचलित व्रजभाखा अलीगढ की बोली के लगभग समान है । इसमें अलीगढ की बोली की लगभग सभी विशेषताएँ है जिनमें अन्य पुरुष का सर्वनाम 'गु' अथवा 'ग्व' भी सम्मिलित है ।

केवल एक महत्वपूर्ण स्थानीय विशेषता (जो अपेक्षाकृत कम व्रजभाखा क्षेत्र मे अलग-अलग मिलती है) भूतकालिक कृदंत मे 'य्' के विलोप की प्रवृत्ति है जैसे 'चल्यौ' की बजाय 'चलौ' । उदाहरणों मे निम्नलिखित तथ्य भी द्रष्टव्य है—

'अनि' मे, जैसे 'भूखनि' (भूख से) करण कारक एकवचन और 'एनु' मे, जैसे 'कमेरेनु-कूँ (नौकरों को) विकृत बहुवचन । सकोचन का प्रचुर प्रयोग भी उल्लेखनीय है जो व्रज, कनौजी और बुंदेली के दूसरे रूपो मे भी मिलता है तथा 'खात-एँ' (खा रहे हैं।) के लिए

'खातइँ', 'देत-ओं' (वह दे रहा था।) के लिए 'देतो' और 'मरत-ऊँ' (मैं मर रहा हूँ।) के लिए 'मत्तूं'।

उदाहरण मे 'अपव्ययी पुत्र-कथा' की कुछ प्रारंभिक पक्तियाँ हैं।

[सं० ८]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (आगरा जिले का पूर्व)

एक आदिमी-कैं दो वेटा हे। छोटे वेटा-ने अपने वाप-ते कही कै अरे कक्कू मेरे वाँट-की मालु मो-कूं दै-दै। तव ग्वा-नें मालु गुनि-कूं वाँटि दयौ। थोडे दिन पीछे छोरौ मोंडा सब्रु समैटि-कैं दूरि देस-कूं चलौ गयौ। महाँ ग्वा-नें अपनौ मालु खोटे सग-मैं उडाय दयौ। जव सब्रु निवटाइ चुकौ ग्वा देस-मैं वडौ अकालु परौ। जव गरीव होन लगौ तव ग्वा देस-के एक वडे आदिमी-कैं जाइ लगौ। ग्वा-नें ग्वा-कूं अपने खेतनु-मैं सूगर घेरिवे-कूं खँद्यौ। ग्वा-की मज्जी जिह ही कै गुनि छोलिकन-ते जिन्हैं सूगर खातैं अपनौ पेटु भरुँ जा-के मारैं कै कोऊ ग्वा-कूं नहीं देतौ। तव होस-मैं आइ-कैं कही कै मेरे वाप-कैं भौत-से कमेरेनु-कूं भौत-सी रोटी हैं औरु मैं भूखनि मत्तूं॥

धौलपुर की व्रजभाखा

आगरा ज़िले के दक्षिण मे धौलपुर रियासत है जो पूर्व में चवल नदी द्वारा ग्वालियर से पृथक् हो गई है। यहाँ व्रजभाखा वोली जाती है। यहाँ की स्थानीय विशेषताओं में क्रियाओं के भूतकालो मे 'य्' अक्षर के विलोप की प्रवृत्ति (जैसे 'पर्यौ' [वह गिरा] की जगह 'परौ') और करणकारक एक वचन के लिए अत्य 'अन्' की अपेक्षा 'अनि' का यदा-कदा प्रयोग (यथा 'भूंखन' [भूख से] के वजाय 'भूंखनि') है। यह दोनो अनियमित प्रयोग पूर्वी आगरा मे भी होते हैं।

वहाँ' के लिए 'यॉ' का व्यवहार भी द्रष्टव्य है।

धौलपुर मे व्रजभाखा-भाषियो की सख्या अनुमानत २६२,३३५ है।

वोली का छोटा-सा उदाहरण पर्याप्त होगा।

[सं० ९]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (धौलपुर रियासत)

एक आदमी-कैं दो मोडा हे। उन-मैं-ते छोटे मोडा-नैं वाप-ते कही वाप जो तेरे पास धन है ता-मैं-ते मेरे वट-कौ वैठै ते मो-कौं दै-दै। तौ वा-के-वाप-नैं वा-कौं वाँटि दयौ।

थोरे दिन पाछै छोटो मोडा सवरौ धन इकसूतो करि परदेस-कौं चलो गयो। भाँ-जाइ-कै कछु दिनन-मैं खोटे कर्मन-मैं सगरौ धन लुटाइ दयौ। तव वा देस-मैं वडौ भारी अकाल परौ। अव तौ भूँखनि मरन लगौ ॥

जादोवाटी

करौली रियासत मे अगत समतल भू-भाग है और उत्तर, दक्षिण तथा पूर्व मे अगत. पहाडी क्षेत्र जिसे डाँग कहा जाता है। डाँग मे अनेक विकृत वोलियाँ मिलती है जो व्रजभाखा तथा जयपुरी का मिश्रण है। इनका विवरण आगे दिया जायगा। समतल भू-भाग मे मुख्यत यादव या जादो वश के राजपूत रहते है। यह लोग चवल के उस पार ग्वालियर राज्य मे भी फैले हुए है जहाँ इन्होने सवलगढ जिले और शिवपुर ज़िले के उत्तरी भाग पर अधिकार कर रखा है। इन यादवो से सवद्ध पूरे क्षेत्र मे स्थानीय वोली जादोवाटी नाम से पुकारी जाती है। यह उत्तर मे निकटवर्ती धौलपुर की अपेक्षा शुद्धतर व्रजभाखा है क्योकि यहाँ भूतकाल मे 'य्' का व्यवहार सुरक्षित है। अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ पक्तियो से यह स्पष्ट हो जायगा।

इसकी निम्नलिखित स्थानीय विशेपताएँ द्रष्टव्य है—

यहाँ 'लहुरौ' शब्द 'ल्हौरौ' मे परिवर्तित हो गया है। डाँग तथा जयपुरी मे भी यही स्थिति है। 'भेठानी' (शाब्दिक अर्थ 'उस जगह') का व्यवहार 'यहाँ' अर्थ व्यक्त करने के लिए होता है। डाँग मे भी ऐसा ही प्रचलन है जहाँ इसी अर्थ में 'म्याँ' तथा 'म्हाँ' शब्द भी प्रयुक्त होते है।

व्रज के जादोवाटी रूप के भाषा-भाषियो की सख्या निम्नलिखित है—

करौली	८०,०००
ग्वालियर	६०,०००
कुल योग	१४०,०००

[स० १०.]

भारतीय-आर्य परिवार — केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (जादोवाटी) — (करौली तथा ग्वालियर राज्य)

काऊ आदमी-कें दो मोंडा हे। विन-में-तें ल्हौरे-नें अपने वाप-तें कही वाप मों-कों मामां-में-तें अपनो वट दै-चुको। और वा-नें विन-कों अपनी सामां वाँट-दई। और वौत दिनन-के पीछें ल्हौरो मोंडा मव जोरि-कें दूर परदेस-में निकर-गयो और भेंठानी सगरी सामां उडाय दई ॥

सिकरवाड़ी

जादोवाटी के क्षेत्र ग्वालियर राज्य के उत्तर में और चवल नदी द्वारा पृथक् धौलपुर राज्य के सामने सिकरवार का ग्वालियर ज़िला है जहाँ सिकरवाड राजपूत रहते हैं। यहाँ भी व्रजभाखा का एक रूप प्रचलित है जिसे सिकरवाडी कहा जाता है। यह लगभग उतनी शुद्ध नहीं है जितनी उसके दक्षिण की जादोवाटी अथवा पश्चिम की व्रजभाखा है। इसके विलकुल पूर्व में ग्वालियर राज्य के शेप भाग में वुंदेली वोली का प्रमुखत भादौरी रूप प्रचलित है। फलत सिकरवाडी वुंदेली से काफी मिश्रित हो गयी है। जादोवाटी अपने भापा-भापियों की, जिनका इतिहास मथुरा से सवद्ध है, परपराओं के कारण इस मिश्रण से वच गयी है। सिकरवाडी के पास ऐसा कोई वचाव नहीं था। इसके भापा-भापियों की सख्या १२७,००० वतायी गयी है। उदाहरणस्वरूप मैं अपव्ययी-पुत्र कथा का एक अश दे रहा हूँ। इसकी स्थानीय विशेपताएँ निम्नलिखित हैं। यह स्पष्ट हो जायगा कि इनका कारण निकटवर्ती वुंदेली वोली है।

अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' का प्रत्येक स्थान पर व्यवहार किया जाता है और भूतकालिक कृदत का अत्य 'ओ' है, 'यौ' नही, यथा 'चुको' (वह समाप्त हुआ), 'पडो' (वह गिरा)। यहाँ भादौरी के समान शब्दों को छोटा करने की प्रवृत्ति है जैसे 'चरत्' (चरना) के लिए 'चत्त्', 'मरत्' (मरना) के लिए 'मत्त्'। भदौरी की तरह स्वरों में परिवर्तन भी हो जाता है उदाहरणार्थ 'कहि' (कहा) के लिए 'केह'। इसी प्रकार नकारात्मक अस्तित्वसूचक क्रिया भी विद्यमान है जैसे 'नाने' (मैं नहीं हूँ)। अस्तित्वसूचक क्रिया का भूतकाल वुंदेली के समान 'हतो' अथवा 'हो' है और पूर्वकालिक कृदत 'हइ-के' है, 'ह्वइ-कइ' नहीं।

इसी प्रकार 'यहाँ' के अर्थ में 'भेंठोनी' अथवा 'भइँ' का प्रयोग भी द्रष्टव्य है। इनकी तुलना जादोवाटी के 'भेठानी' तथा डाँगी के 'म्याँ या 'म्हाँ' से की जा सकती है।

'मैं' अर्थ का द्योतक शब्द 'हूँ' है। इसका प्रयोग केवल कर्ताकारक के लिए ही नहीं, वरन् विकृत एकवचन के लिए भी होता है जैसे 'हूँ-ने' (मेरे द्वारा) और 'हूँ-को' (मुझको)। प्रामाणिक हिंदोस्तानी में इसका ठीक उल्टा होता है क्योंकि वहाँ 'मैं' मूलत विकृत रूप है।

[स० ११.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (सिकरवाड़ी) (ग्वालियर राज्य)

किसू मान्स-के दो मोडा हते। विन-में-से लुहरे भैया-ने वाप-से कही वाप मेरो वट मोड दे-घाल। और वा-ने अपनी जागीर विन-में वाँट-दई। और वहुत दिनन वाद

लुहरो मोडा सगको भेलो-कर-के दूर-के देस-को चल दियो और भेंठोनी सगरो माल वाहियात-में उडाय-दयो । और जव सगरो माल उडाय-चुको भेंठोनी वडो अकाल पडो और वो तगी-में है-गयो । और वा देस-की वस्ती-के एक मान्स-से मिलो । और वा-ने विस-को सुअरियाँ चराने अपने खेत-में पठै-दयो । और भैं वा-ने मोथा-से जो सुअरियाँ चत्त-हीं अपनो पेट भर्यो । जव वा-के मूड-में लगी तौ सोचो और जी-में कह्-उठो मेरे वाप-के वहुत-से महीन्दार खूव रोटी खात-हैं और वचाय ल्येत-हैं और हूँ भूखन मत्त-हों । हूँ अपने वाप-के ढिग जाओंगो और कहोंगो हूँ-ने राम-जी-की मर्जी-के गैर काम कियो और तेरे सामने कियो और अव तेरो मोडा कहलायवे-के लायक नानें । हूँ-को अपने महीन्दारन-में राख-ले । और ठाडो है-के अपने वाप-के ढिग-को चलो ॥

एटा की व्रजभाखा

एटा ज़िला व्रजभाखा-भाषी अलीगढ और कनौजी के क्षेत्र फर्रुखावाद के वीच में है । एटा की वोली लगभग शुद्ध व्रजभाखा है । इसमें अलीगढ की कोई विशेपता नहीं मिलती । इसके विपरीत यह मथुरा की प्रामाणिक भापा के अधिक निकट है । यहाँ केवल एक स्थानीय विशेषता पायी जाती है, व्रजभाखा अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' का व्यवहार । भूतकालिक कृदत मे 'य्' का विलोप भी हो जाता है अत 'चल्यौ' (वह गया) की जगह 'चलो' जैसे रूप मिलते है । यह कनौजी की विशेपताएँ है और उस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के कारण जहाँ वे मिलती हैं, उनकी अपेक्षा की जाती है । इसी प्रकार 'व्' का 'म्' में परिवर्तन (यथा 'जामे' [वे जा सकते है]) तथा शव्दो को छोटा करने की प्रवृत्ति भी द्रष्टव्य है जैसे 'पहुँचो' के लिए 'पोचो', 'कहाँ' के लिए 'काँ' और 'वहाँ' या 'वहाँ' के लिए 'वाँ' । 'ठाकुर-साहिव' का 'ठाकुस-सा' में परिवर्तन भी उल्लेखनीय है जिसमे दूसरे व्यजन के पहले 'र्' का सामान्य विलोप और दूसरे का द्वित्वी-करण हो जाता है । 'साहिव' का 'सा' मे परिवर्तन भारत के दूर-दूर के भागो में अर्थात् कश्मीरी और विहारी तक मे मिलता है । यहाँ 'हाथ' का अक्षर-विन्यास 'हात्' है ।

एटा वोली का उदाहरण एक लोककथा है जिसमे कोरी (हिंदू जुलाहा) जाति के लोगो की मूर्खता का परिचय दिया गया है । भारतीय लोकसाहित्य मे जुलाहे, चाहे वे हिंदू हो या मुसलमान, यूरोपीय कथाओ के मूर्ख का स्थान ग्रहण कर लेते है । प्रस्तुत कथा में एक कोरी ठाकुर ज़मीदार द्वारा वेगार के लिए ले जाया जाता है और अपनी जाति की सामान्य मूर्खता का प्रदर्शन करता है ।

[सं० १२]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (ज़िला एटा)

एकु ठाकुरू हो। वा-नें एक कोरिया-कूँ वेगार-में पकरो और अपनी घुडिया-के सँग वाइ लिवाइ-कें अपनी सुसरार-कूँ चलो। तव कोरिया-की मैतारी-नें कही कि वेटा जव ठाकुरू खुसी हों तव अटाई सेर रूई माँग-लीयें। कोरिया ठाकुरू के सग चल-भयो। जव ठाकुरू सुसरार में भीतर गओ कोरिया-कूँ अपनी घुडिया थमाय-गओ और जताइ-गओ कि जाइ चोंट्टा न लै-जायें। आधी रात भयें कोरिया सोइ-गओ। घुडिया चोर लै-गये। धौतायें वा-नें देखो तो घुडिया न पाई। लगाम लै-कें अटरिया-में जा जगै ठाकुर सोवत-हे पोंचो और कही कि ओ ठाकुस-सा अहलन-खुनखुन तो मो-पै है। हुनहुन का तुम लै-गये-हो। जे सुनि ठाकुरू उठि-कें ढूँडवे-कूँ भाजे। कोरिया विन-के सग लगि-लओ। राह्-में एक नदिया परी। ठाकुरू-नें कोरिया-कूँ अपनी तरवार गहाइ-दई और कही कि मेरे सग उतरि-आ। जव वीचों-वीच पोंचो तरवार मियान-में-तें निकरि-परी। कोरिया-नें कही ओ ठाकुस-सा जा-में-सूँ मिंगी निकरि-परी और चोकलो मो-पै रहि-गओ। ठाकुरू-नें कही कि काँ गिरि-परी। तव वा कोरिया-नें नदिया-में मियान फेंक-कें वतायो कि वाँ गिरो है। मियान-हू वह-गओ। जा-पै ठाकुरू खूव हँसे। कोरिया-नें हात जोरि-कें कही कि भले ठाकुरू अम्मा-नें अढाई सेर रुई माँगी-है।

मैनपुरी की व्रजभाखा

एटा के दक्षिण मे मैनपुरी जिला है। इसके नीचे दिए गए उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि यह एटा की वोली के समान है। यहाँ भी कनौजी अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' के व्यवहार और भूतकालिक कृदत मे 'य्' के विलोप की प्रवृत्ति है। उदाहरण मे अपव्ययी-पुत्र-कथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ है। यहाँ 'र्' के विलोप तथा परवर्ती व्यजन के द्वित्वीकरण के भी कुछ उदाहरण मिलते है यथा 'खर्चु' (खर्च) के लिए 'खच्चु'; 'कर-दओ' (कर दिया), के लिए 'कद्-दओ', 'मरन' (मरना) के लिए 'मन्न' और 'मरतु' (मर रहा है) के लिए 'मत्तु'।

व्रजभाखा का यह रूप पूरे ज़िले मे प्रचलित है, केवल यमुना के किनारो वाले अतिम दक्षिणी-पश्चिमी भाग को छोड कर जहाँ लगभग ८,००० व्यक्ति वुदेली के भदौरी रूप का व्यवहार करते है।

[सं० १३]
भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (ज़िला मैनपुरी)

एकु-के दो लडिका हे। उन-मैं-से छोटे-ने वाप-से कही वाप हो जो हमारो हिस्सा निकरैं सो हमैं दे देउ। तव वा-ने उन-को मालु वाँटि दओ। कछु दिन पीछे छोटे लडिका ने सव मालु इक ठोरो करो और दूर-के मुलिक-को चलो गयो और हुअन वा-ने अपनो मालुवुरी वातन-मे खच्चु कइओ। और जव-हीं वा-को सवरो माल् उठि गओ तव-हीं हुआँ अकालु परो। और जव-ही वह भूँखन मन्न लगो तव-हीं एकु वा मुलिक-के वडे आदमी-के-ढिग गओ। तव वा-ने वा-को अपने खेतन-मैं सूअर चराइवे-को पठओ। और वह चाँहतु इ-हो कि सूअर-के वचे खुचे छुकलन-से अपनो पेट भरै काहे-सों कि वाय कोई कछू देतु नाहीं हो। और जव वा-की अकिलि ठिकाने आई वा-ने कही कि मेरे-ई वाप-के हिअन वहुत-से मजूरन-को रोटी ही और मैं भूँखन मत्तु हों॥

बरेली की ब्रजभाखा

वदायूँ के उत्तर में वरेली ज़िला है। उसके पूर्व मे ज़िला पीलीभीत है और पश्चिम मे रामपुर रियासत। पहले मे कनौजी (ब्रजभाखा के मिश्रण सहित) वोली जाती है और दूसरे मे हिंदोस्तानी।

वरेली मे अच्छी ब्रजभाखा का प्रचलन है। यहाँ दीर्घ विशेषणो के अत्यस्वरूप 'औ' की अपेक्षा 'ओ' और 'वह' अर्थ के द्योतन के लिए 'वौ' अथवा 'वहु' का व्यवहार होता है। 'देनौं' (देना) तथा 'लेनौं' (लेना) क्रियाओ के भूतकालिक कृदत कनौजी के अनुसार 'दवो' एव 'लवो' वनते है, 'दियौ' अथवा 'दयौ' नही। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि दीर्घ-काल तक मुसलमान आधिपत्य मे रहने के काण मूल ब्रजभाखा क्षेत्र की अपेक्षा वरेली में अरवी-फारसी शव्दो का प्रयोग अधिक होता है।

सन् १८९१ में वरेली की जनसख्या १,०४०,६९१ थी। यहाँ की भाषाएँ (सही (आँकडे लेकर) इस प्रकार विभाजित की गयी है—

ब्रजभाखा (गलत ढग से रुहेलखडी रूप मे प्राप्त)	८५७,२१३
उर्दू	१८०,०००
दूसरी भाषाएँ	३,४७८
कुल योग	१,०४०,६९१

उर्दू मुख्यत मुसलमानो तथा कायस्थो के द्वारा और नगरो मे वोली जाती है।

[सं० १४]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (जिला वरेली)

एक जने-के दुइ लौंडा हे । उन-में-से लहुरे-ने वाप-से कही कि ए वाप माल-में जो मेरा वाँट है वो मोप दैदेव । तव वाप-ने उसै माल वाँट दवो । थोडे दिन पाछे लहुरो लडका सव माल एकट्ठो कर-के परदेस-को चलो-गवो । और हुँआ सव रुपया वाइयात-में उडाय-दवो । जव उस-के ढिग कछु नाँहि रहो और उस देस-में वडो अक्काल पड़ो तौ वो नगो भूँखो और दुखी हुइ-के उस देस-के एक भागमान आदमी-के घर गवो ।।

हिन्दोस्तानी मे अतर्भुक्त होने वाली व्रजभाखा

वुलदशहर तथा वदायू जिलो मे अच्छी व्रजभाखा वोली जाती है लेकिन इन दोनो ही स्थानो पर यह ऊपरी दोआव एव पश्चिमी रूहेलखड की हिंदोस्तानी से काफी घुलमिल गई है। वदायू के उत्तर मे वरेली मे यह मिश्रण स्पष्ट नहीं है यद्यपि वरेली तथा वदायू दोनो पर उनके पूर्व मे वोली जानेवाली कनौजी के प्रभावचिन्ह दृष्टिगत होते हैं। इस प्रकार वदायूं दोनो दिशाओ से प्रभावित हुआ है। कनौजी के प्रभावस्वरूप यहाँ भूतकालिक कृदन्त के अत्य 'यौ' की अपेक्षा 'ओ' का व्यवहार होता है जैसे 'चल्यौ' के स्थान पर 'चलो'।

नैनीताल तराई में व्रजभाखा, हिंदोस्तानी और कनौजी के मिश्रित रूप का प्रयोग होता है। इस प्रकार इन ज़िलो के निम्नलिखित आँकडे प्राप्त होते हैं जिनमे व्रजभाखा हिंदोस्तानी में अन्तर्भुक्त हो जाती है :—

वुलदशहर	९४१,०००
वदायू	८२६,५००
नैनीताल	१९९,५२१
	१,९६७,०२१

वुलदशहर की व्रजभाखा

वुलदशहर दोआव का विलकुल उत्तरी जिला है जहाँ व्रजभाखा वोली जाती है। उसके वाद मेरठ है जिसमें सामान्य वर्नाक्यूलर हिंदोस्तानी का व्यवहार होता है।

बुलदशहर की ब्रजभाखा मे मथुरा से विशेष अतर नही है। मुख्य अतर मथुरा की प्रामाणिक बोली की मुख्य विशेषता अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' का प्रचलन है जो मथुरा की प्रामाणिक बोली की प्रमुख विशेषता है, लेकिन फिर भी यह केवल अक्षर-विन्यास का अतर है, उच्चारण का नही क्योकि मथुरा मे जहाँ 'औ'-ध्वनि निश्चित रूप से व्यवहृत होती है, बहुधा लिखने मे 'ओ' द्वारा व्यक्त हो जाती है।

बुलदशहर अलीगढ द्वारा मथुरा से पृथक् है लेकिन यहाँ अन्यपुरुष का सर्वनाम 'गु' नही मिलता जो अलीगढ मे बहुत प्रचलित है।

दूसरी ओर मेरठ की हिंदोस्तानी से कभी-कभी उधार-ग्रहण के भी उदाहरण मिलते हैं यथा अत्य 'ओ' अथवा 'औ' की अपेक्षा 'आ' का प्रयोग जैसे 'हमारो' के लिए 'हमारा'। ऐसा जिले के उत्तर मे मेरठ की सीमा पर होता है।

मेरठ के पूर्व मे रहने वाला जनसमुदाय मेरठ की हिंदोस्तानी को 'पछाडी' (पश्चिम की भाषा) कहता है। बुलदशहर की भाषाओ की मूल प्राथमिक सूची के अनुसार ९३९,००० व्यक्ति पछाडी का और २,००० व्यक्ति ब्रजभाखा का प्रयोग करते है। स्थानीय अधिकारियो का स्पष्ट अभिप्राय यह है कि ९३९,००० व्यक्तियो का जनसमूह ब्रजभाखा से अलग एक बोली बोलता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, अतर पछाडी शब्दो के यदा-कदा प्रयोग के कारण है। बोली का निश्चित आधार ब्रजभाखा होने के कारण बुलदशहर मे इसके (ब्रजभाखा के) भाषा-भाषियो की सख्या ९४१,००० ठहरती है। यहाँ यह स्मरणीय है कि जिले के दक्षिण मे लगभग २,००० व्यक्ति इसके अपेक्षाकृत शुद्ध रूप का व्यवहार करते है। यह निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा जिनमे अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ हैं।

बुलदशहर की ब्रजभाखा की मुख्य विशेषताएँ यह है कर्म-सम्प्रदान कारक का चिन्ह 'को' है 'कू' नही। उत्तम तथा मध्यम पुरुष सर्वनामो के कर्मकारक बहुवचन 'हमे' एव 'तुम्हे' है और सबधकारक बहुबचन 'हमारा' तथा 'तुम्हारा'। अन्यपुरुष सर्वनाम का कर्ताकारक एकवचन 'वो या 'वा' है। सहायक क्रिया का भूतकालिक रूप 'हो' है, 'हो' नही और इसका पुल्लिग बहुवचन 'हे' या 'है' है। समापिका क्रियाओ के वर्तमान तथा अपूर्णकालिक रूप 'तु' की अपेक्षा 'ए' जोड कर बनते है जैसे 'हम रहे हैं' (हम रह रहे है।), 'सुअर चरे-हे' (सुअर चर रहे थे।), 'पेट भरे-हे' (वह पेट भर रहा था।) 'कोई दे-नाई' (कोई नही दे रहा था।), यह विशेषता और 'हमें' आदि रूप मेरठ में भी मिलते हैं।

[स० १५]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (जिला बुलदशहर)

एक आदमी-के दो लडके हैं। छोटे-ने कही बापू हमारा हिस्सा हमें दे-दे उस-ने अपना हिस्सा वा-को बाँट-देओ। छोटो थोरे-ही दिन-में अपनो माल जमा परदेस-को ले-के चलो गयो। वहाँ सब लुगाडपने-में बरबाद कर्यो। जब सब बरबाद कर चुक्यो वा देस-में जबरा अकाल पर्यो। वा भूखो कगाल हो-गयो। वा एक कोई-के नौकर हो-गयो। वा-ने सुअरन चुगाने-पे नौकर कर-दियो। जब वा-को कोई कुछ दे-नाई तो वो जो सूअर चरे-हे खोकटा वा-से पेट भरे-हे॥

बदायूँ की ब्रजभाखा (कठेरिया)

रुहेलखड में एटा के उत्तर मे गगा के पार बदायूँ जिला है। यहाँ भी ब्रजभाखा (रुहेलखडी नही जैसा कि पहले मूल प्रारभिक भाषा-सूची मे कहा गया था।) बोली जाती है। इस बोली का स्थानीय नाम 'कठेरिया' (कठेर से) है। यह पूर्वी रुहेलखड का नाम है, यद्यपि वास्तविक कठेर क्षेत्र बरेली ज़िले के उत्तर में है। बदायूँ के उत्तर-पश्चिम में, मुरादाबाद ज़िला है जहाँ प्रचलित हिंदोस्तानी के प्रभाव-चिन्ह बदायूँ की बोली पर दृष्टिगत होते है जैसे 'था' के लिए 'था' (बहुवचन 'थे') के साथ-साथ 'हो' का प्रयोग, 'वा' (उसका) के साथ-साथ 'उस' का व्यवहार और कर्म-सप्रदान के साथ-साथ सबधकारक के लिए भी 'को' का प्रचलन। यहाँ की एकमात्र उल्लेखनीय स्थानीय विशेषता 'तुम्हारो' (तुम्हारा) के लिए 'तुम्हरो' रूप का प्रचलन है। विशेषणो और कृदतो में अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' का व्यवहार होता है।

उदाहरणस्वरूप अपव्ययी पुत्र-कथा का एक छोटा-सा अश दिया जाता है। स्थानीय अधिकारियो से प्राप्त यह नमूना मूलत फारसी लिपि मे था।

बदायूँ मे कठेरिया के भाषा-भाषियो की सख्या ८२६,५०० बतायी गयी है।

[सं० १६.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (कठेरिया) (जिला बदायूँ)

एक आदमी के दो लड़का थे। ता मैं से छोटे ने अपने पिता से कही कि पिता तुम्हरे धन में

जो मेरो होत हो वा मुझ-को बाँट दो। वाके पिता ने उसके बाँटे का जो था वाको दे दिओ। नेक दिनन में वाको छोटो पूत सिगरो धन इकठो करके कहूँ दूर के देस को निकल गयो और वा देस में अपनो सिगरो धन बुरे कामन में बितार दिओ। जब वाके पास कछू ना बचो वा देस में गभीर अकाल परो कि वा भिकारी है-गयो। तो एक भागवान धनी-की बखरी में गयो और वाके खेतन में नोकर भयो। वाने या को अपने खेतन मे सुअरन चरावन को भेज दिओ या खुमी से अपनो पेट उन जडन से भर ले तो जाको सुअर जानवर खात हैं। जडन भी याको कोऊ ना देत हो।

तराई की भुक्सा बोली

नैनीताल जिले के तराई परगने कुमायूँ की पहाडियो के नीचे-नीचे, बरेली तथा पीलीभीत जिलो और रामपुर रियासत की उत्तरी सीमा पर स्थित हैं। रामपुर बरेली तथा पीलीभीत में क्रमश हिंदोस्तानी, व्रजभाखा और कनौजी का प्रचलन है। तराई में थारू, भुक्सा आदि कई पहाडी कबीलो और मैदानो से आए हुए लोग बसे हैं। इनके बीच स्वभावत. हिंदोस्तानी, व्रजभाखा, कनौजी और पहाडी क्षेत्र में प्रचलित कुमायूँनी से मिली-जुली एक बोली विकसित हो गई है। थारू एव भुक्सा कबीलो की अपनी बोलियाँ, अगर थीं तो, विलुप्त हो गई है। इनकी बोली को इनमें से एक कबीले के नाम पर 'भक्सा' कहा गया है। मैं इसे व्रजभाखा का एक रूप मानता हूँ, लेकिन इसे इतनी ही सरलता से कनौजी का एक रूप भी कहा जा सकता है। इसके भाषा-भाषियो की सख्या १९९,५२१ दी गयी है।

इस बोली के उदाहरणार्थ और इसकी मिश्रित स्थिति के निदर्शन के लिए अपव्ययी पुत्र-कथा के एक रूपातर का छोटा-सा अश पर्याप्त होगा।

पहले वाक्य में कुमायूँ के प्रभावस्वरूप विकृत सबधकारक के लिए 'का' का प्रयोग किया गया है। दूसरी पक्ति में प्रत्यक्ष सम्बधकारक के लिए व्यवहृत 'का' मिलता है जो हिंदोस्तानी का प्रभाव है। इसी प्रकार कर्म-सप्रदान का चिन्ह 'को' तथा 'मेरा' आदि शब्द भी मिलते हैं। व्रजभाखा से 'हे' (थे) और कनौजी से 'दओ' (दिया) 'गओ' (गया) आदि प्रभाव ग्रहण किए गए है। एक विशेषता कर्ताकारक के चिन्हस्वरूप 'नाई' ('ने' के अतिरिक्त) का व्यवहार है।

[सं० १७]

भारतीय आर्य-परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (भुक्सा वोली के मिश्रणसहित) (नैनीताल तराई)

एक फलाने सखस-का दो लौंडा हे। छोटे-ने अपने वूआ-से कहो कि वूओ मेरा जो माल-का हिस्सा है सो दे-दो। और उस-नाई अपने माल दोनो-को वाँट दओ। थोरे दिन वाद छोटा लौंडा अपने माल-को वटोर-के दूर देस-को चलो-गओ। और वहाँ जा-के अपने माल लुचापन-में वरवाद कर-दओ। जव सव खरच हो-गओ तव उस देस-में वडा काल पड गओ और खाने-को भी तग हो गओ। तव उस देस-के एक रहीस के घर में सामिल हो गओ। और वोह सूअर चुगाने उस-को खेत-में भेज-दओ। और वोह चाहो कि जो वक्कल सूअर खाते-हों वोह ऊदर भरने-को चाहो। किसी-ने ना दओ॥

राजस्थानी मे अतर्भुक्त होने वाली ब्रजभाखा

ब्रजभाखा क्षेत्र के दक्षिण मे राजस्थानी की मेवाती तथा जयपुरी वोलियाँ प्रचलित है जिनमे ब्रजभाखा कमग अतर्भुक्त होती जाती है। गुडगाँव मे यह मेवाती मे परिवर्तित हो जाती है। भरतपुर रियासत मे जयपुरी के प्रारभिक प्रभावचिन्ह दृष्टिगत होते हैं जो दक्षिण दिशा मे क्रमग वढते जाते हैं। यहाँ तक कि डाँग, करौली तथा जयपुर के पूर्व मे अनेक उप-वोलियाँ मिलती है जिन्हे एक साथ 'डाँगी' नाम के अतर्गत वर्गीकृत किया जाता है। ब्रजभाखा के इन मध्यवर्ती रूपो के भापा-भापियो की सख्या निम्नलिखित है —

गुडगाँव	१४९,७००
भरतपुर	५०२,३०३
डाँग वोलियाँ	७७४,७८१
	१,४२६,७८४

गुडगाँव की ब्रजभाखा

पजाव में गुडगाँव ज़िले के पूर्व मे यमुना नदी है जो इसे अलीगढ ज़िले से अलग करती है। इसके दक्षिण में मथुरा ज़िला तथा भरतपुर रियासत है। गुडगाँव में तीन प्रमुख वोलियाँ प्रचलित है, राजस्थानी के दो रूप अहीरवाटी तथा मेवाती और ब्रजभाखा। ब्रजभाखा अलीगढ और मथुरा से लगे हुए जिले के सीमावर्ती पलवल तहसील क्षेत्र मे १४९,७०० व्यक्तियो द्वारा वोली जाती है।

गुडगाँव की ब्रजभाखा वहुत कुछ शुद्ध है। उस पर निकटवर्ती राजस्थानी के हल्के प्रभावचिन्ह मिलते है जैसे विशेषण तथा कृदतो के लिए अत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' का प्रयोग, सवधकारक एकवचन का पुल्लिग रूप (यथा 'वाट-को' (हिस्से का), 'वाट-कौ' नही), विकृत रूप मे अत्य 'ए' की अपेक्षा' 'आ' का व्यवहार और निश्चित वर्तमान काल के राजस्थानी रूप का प्रचलन।

निकटवर्ती भरतपुर रियासत मे 'औ' के लिए 'ओ' का प्रयोग भी सामान्य है। विकृत रूप मे प्राजल ब्रजभाखा के समान 'ए' अत्य होता है लेकिन कभी-कभी 'आ' भी मिल जाता है जैसे 'था' (वे थे)।

'जव' शब्द राजस्थानी की तरह अपने मूल अर्थ के साथ-साथ 'तव' अर्थ व्यक्त करने के लिए भी व्यवहृत होता है। इसी प्रकार राजस्थानी के समान 'ए' वाली क्रियार्थ सज्ञा मे सहायक क्रिया का भूतकालिक रूप जोड कर अपूर्ण काल वना लिया जाता है यथा 'चाहे-हो' (मै, तू या वह चाहता था)। सहायक क्रिया का भूतकालिक रूप ब्रजभाखा के समान सामान्यत 'हो' (वहुवचन 'हे') होता है लेकिन कभी-कभी राजस्थानी से 'थो' (वहुवचन 'था') भी ग्रहण कर लिया जाता है। क्रियाओ के भूतकालिक कृदत 'यो' अथवा 'ओ' से समाप्त होते हैं जैसे 'कह्यो' या 'कहो' (उसने कहा)।

अपव्ययी पुत्र-कथा से एक अश उदाहरणस्वरूप पर्याप्त होगा।

[सं० १८]

भारतीय आर्य-परिवार | **केन्द्रीय वग**

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा | **(ज़िला गुड़गाँव)**

एक आदमी-के द्वै वेटा हे। उन-ते लोहरे-ने वाप-ते कह्यो कि भाई हमारे वट-को हिस्सा वाँट-दीजो। जव तो वा-कूँ वाँट-दियो। थोरे दिन पीछे सव धन ले-के लोहरो लरिका पर-देस-कूँ चल-दियो और वह अपनो माल खोटी सगत-में उडा-दियो। और जव सव खरच कर-चुको तो वा देस-में अकाल पर-गयो और वह माँगन लग्यो। जव फिर वहाँ-के रहीस के जा-लग्यो। तव तो वा लरिका-कूँ सूवर चरावने-के लिए अपने खेत में खदा-दियो। और वह चाहे-हो कि उन छोलकाँ-ते जो सूवर खाँय-था अपना पेट पालन करे क्योंकि उसे कोई ना दे-हो। जव होस-में आ-के कहो देखो मेरे वाप-के कितने नोकर हैं और में भूखन मरूँ-हूँ। अव में अपने वाप-के ढोरे जाऊँगो और वा-ते कहूँगो कि हे वाप में-ने तेरा और धनी-को खोट वहुत करो और तेरे लायक में वेटा ना हूँ। तुम्हारे जो महिनिती रहे हैं उन-में मो-कूँ समझ॥

भरतपुर की ब्रजभाखा

मथुरा जिले के दक्षिण में भरतपुर रियासत है। यहाँ मुख्यत ब्रजभाखा का प्रचलन है। केवल उत्तर-पश्चिम मे अलवर की सीमा पर मेवाती बोली जाती है और दक्षिण पश्चिम में करौली के सीमावर्ती पहाडी क्षेत्र में डाँगी। पहली राजस्थानी की एक बोली है और दूसरी राजस्थानी एव ब्रजभाखा का मिश्रण। भरतपुर के पश्चिम मे राजस्थानीभाषी जयपुर राज्य है, इसलिए भरतपुर की ब्रजभाखा के सामान्यत बहुत कुछ शुद्ध होते हुए भी उस पर राजस्थानी प्रभाव दृष्टिगत होते हैं।

भरतपुर मे इन तीनो बोलियो के भाषा-भाषियो की अनुमानित सख्या निम्नलिखित है—

ब्रजभाखा	५०२,३०३
डाँगी	४०,०००
मेवाती	८०,०००
कुल योग	६२२,३०३

भरतपुर की ब्रजभाखा के उदाहरणस्वरूप अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारंभिक पंक्तियाँ दी जाती हैं। राजस्थानी से ग्रहीत निम्नलिखित स्थानीय विशेषताएँ भरतपुर की बोली को मथुरा की प्रामाणिक ब्रजभाखा से पृथक् कर देती हैं।

सबल विशेषणो और कृदंतो में अंत्य 'औ' की अपेक्षा 'ओ' मिलता है जैसे 'दियो' (उसने दिया), 'प्यो' (वह गिरा)। यद्यपि कभी-कभी 'भलौ' (अच्छा), 'ऊँचौ' (ऊँचा) आदि शब्दो मे 'औ' भी प्रयुक्त होता है।[1] यहाँ अंतिम स्वर को अनुनासिक कर देने की तीव्र प्रवृत्ति है यथा 'जनें-कैं (एक आदमी के)', 'अपनैं दाऊ-तैं (अपने पिता से)। कुछ स्थितियो मे यह अंतिम अनुनासिक पुराने नपुसक लिंग को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त होता है जैसे 'अपनौं धन'। 'ओ' तथा 'ऊ' स्वर परस्पर परिवर्तनशील प्रतीत होते हैं, कर्म सप्रदान का चिन्ह 'कों' या 'कूँ' है और 'भूख से' अर्थ के द्योतन के लिए 'भूखूँ' तथा 'भूखों' दोनो व्यवहृत होते हैं। इस राजस्थानी मे 'आ' वाली सब सज्ञाएँ विकृत रूप मे परिवर्तित नही होती यथा 'छोरा-नें' (लडके ने)। कभी-कभी ऐसी सज्ञाएँ 'आ' की अपेक्षा 'औ' या 'ओ' के साथ समाप्त होती है। भरतपुर से प्राप्त शब्द-सूची मे 'म्हौडौ' (एक मुँह) तथा 'सोंनों' (सोना, दूसरा नपुसक रूप) शब्द दिये गये है। एक नमूने में कर्ताकारक में 'आ' अत्य सबल विशेपण 'छोटा' मिलता है जिसका विकृत रूप 'ए' दिया गया है।

१ ये उदाहरण भरतपुर से प्राप्त एक शब्द-सूची से लिये गये है जो यहाँ प्रकाशित नहीं की जा रही है।

अस्तित्वसूचक क्रिया का भूतकालिक रूप व्रजभाखा के समान 'हौ' है। शब्द-सूची द्वारा एक अतिरिक्त रूप 'हतौ' या 'हत्यौ' प्राप्त होता है। 'हतौ' बुंदेली एवं कनौजी 'हतो' के समान है।

कर्तृवाच्य में निश्चित वर्तमान काल राजस्थानी के समान सामान्य वर्तमान को अस्तित्वसूचक क्रिया के वर्तमान से जोड कर बनता है। यह स्थिति मथुरा में कभी-कभी लेकिन भरतपुर में सदैव पायी जाती है। इस काल की रचना इस प्रकार होती है—

	एक०	बहु०
१	मारूँ–हूँ	मारैं–हैं
२	मारै–है	मारौ–हौ
३	मारै–है	मारैं–हैं

यह उदाहरण नमूने से लिये गये हैं।

दूसरी उल्लेखनीय विशेषता 'भयौ' (वह हो गया) की अपेक्षा 'हुओ' का प्रयोग है।

[सं १९]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (भरतपुर रियासत)

एक जनें-कें दो छोरा हे। और विन-मैं-तें छोटे छोरा-नें अपनें दाऊ-तें कही दाऊ-जी धन-में तें जो मेरे वट-में आवै सो मो-कूँ देउ। और वा-नें अपनों धन विन-कूँ वाँट दियो। और घनें दिन नांइ वीते छोटा छोरा अपनें वट-कूँ इकट्ठा ले-कें दूर देस-कों डिगिर-गयो और वहाँ लुच्चपनें-मे अपनों धन विगार दियो। और जव वा-पै-तें सव उठ-गयो तव वा देस-में वडो भारी जवाल पर्‌यो और वो भूखों मरिवे लग्यो। तव वो चल-दियो और वा देस-के एक रहवैंआ-के यहाँ जाइ रह्‌यो। और वा-नें वा-कूँ अपनें खेतन-में सूअर घेरवे-पै कर-दियो। और जो भुसी सूअर खावै-हे वा-तें वो अपनों पेट भरनों चाहे-हौ। पन कोई आदमी वा-कूँ नांइ देइ। और जव वाकूँ सोच हुओ तव वा-नें कही मेरे दाऊ-कें कितनें ही आदमी रोटी खाइ-हैं और वच-रहै-हैं और मैं भूखूँ मरूँ-हूँ॥

डाँग की अविकसित वोलियाँ

करौली राज्य चम्वल नदी और जयपुर के वीच में है। 'इम्पीरियल गज़ेटियर' में इसकी भौगोलिक स्थिति इस प्रकार दी गयी है—

पहाड़ियो और ऊवडखावड ज़मीन के इस क्षेत्र का स्थानीय नाम 'डाँग' है। वैसे यह नाम चम्वल की सँकरी घाटी के ऊपर वाले वीहड प्रदेश को दिया गया है। राज्य की मुख्य पहाडियाँ उत्तरी सीमा पर है और अकेली या साथ-साथ सीमा-रेखा तक विस्तार पाकर दुर्जेय अवरोध वन जाती है पर यहाँ ऊँची चोटियाँ नहीं है, सवसे ऊँची चोटी समुद्र की सतह से १,४००० फीट ऊपर है। चम्वल घाटी के साथ-साथ चट्टानो की एक अनियमित, ऊँची दीवार नदी किनारे के भूभाग को राज्य के दक्षिण मे स्थित ऊपरी क्षेत्र से पृथक् कर देती है। दर्रों के शिखरो से प्राय सुन्दर प्राकृतिक दृश्य दिखलायी पडते है, हरेभरे मैदान, ऊँची चट्टाने और नीचे वहती तरगित नदी। इन दर्रों के उत्तर का कुछ मील का प्रदेश ऊँचा और वहुत पथरीला है, कदराओ के लिए अनुपयुक्त और जल के लिए अभेद्य। यहाँ के निवासी तालावो और वाँवो पर निर्भर रहते है, लेकिन उत्तर दिशा में आगे की ओर कछारी भूभाग है, समतल मैदान है और पहाडियाँ अधिक स्पष्टता से आकार पाती है। करौली नगर का निकटवर्ती निचला क्षेत्र तो कदराओ का चक्रव्यूह वन गया है।

सन १८९१ की जनगणना के अनुसार करौली की जनसख्या १५६,५८७ है जिसका भाषागत विभाजन इस प्रकार है—

जादोवाटी	८०,०००
डाँगी	६०,०००
उर्दू	१०,०००
अन्य	६,५८७
	१५६,५८७

इनमें से उर्दू पठानो, राज्य के मुसलमानो तथा नगरनिवासी शिक्षित जनता द्वारा प्रयुक्त होती है। समतल भू-भाग मे जहाँ मुख्यत यादव अथवा जादो कुल के राजपूत रहते है, ब्रजभाखा के जादोवाटी रूप का प्रचलन है। इसका विवरण दिया जा चुका है। वीहड पहाडी डाँग डाँगी का क्षेत्र है। डाँग अपनी वोलीसहित करौली राज्य की सीमाएँ पार कर भरतपुर राज्य की वयाना तहसील के उत्तर मे, इसी राज्य के दक्षिण मे और जयपुर के पश्चिम मे विस्तार पा गयी है। जयपुर राज्य मे वास्तविक डाँगी के अतिरिक्त उसके रूपातर भी मिलते है जिन्हें डूँगर-वाडा, कालीमाल तथा डाँगभाँग कहा जाता है। ये सव करौली के सीमावर्ती ऊवडखावड क्षेत्र में प्रचलित है। डाँगी मुख्यत गूजरो द्वारा व्यवहृत होती है।

डाँगी के विविध रूपो के आँकड़े निम्नलिखित है—

वास्तविक डाँगी अथवा का-कचहू-की बोली		
करौली	६०,०००	
भरतपुर	४०,०००	
जयपुर[1]	४०४,४३६	५०४,४३६
जयपुर की डूँगर-वाडा		१०८,७६६
जयपुर की कालीमाल		८१,२१६
जयपुर की डाँगभाँग		८०,३६३
	कुल योग	७७४,७८१

वास्तविक डाँगी के लिए करौली तथा जयपुर से उदाहरण दिये जा रहे हैं। भरतपुर की डाँगी जयपुर की बोली से काफी मिलती-जुलती है, फिर भी वह अपने बिलकुल उत्तर मे बोली जाने वाली ब्रजभाखा से दृढत सबद्ध है। इनके नमूने अनावश्यक है। जयपुर की दूसरी बोलियो मे से यहाँ केवल डाँगभाँग के उदाहरण प्रस्तुत है क्योकि अन्य बोलियाँ डाँगभाँग तथा जयपुर की डाँगी की मध्यवर्तिनी है। यहाँ करौली एव जयपुर की डाँगी से और जयपुर की अन्य तीनो बोलियो से शब्दो तथा वाक्याशो की एक सूची भी दी जा रही है।

जयपुर मे प्रचलित सभी बोलियो के परीक्षण मे 'Specimens of the Dialects spoken in the State of Jeypore' पुस्तक से बहुत सहायता मिली है जो जयपुर महाराज की प्रेरणा से जी० मेकेलिस्टर, एम ए० द्वारा सन् १८९८ मे तैयार हुई थी। इस प्रशसनीय पुस्तक मे राज्य मे व्यवहृत सभी बोलियो के शब्दसमूह, व्याकरण और उदाहरण है।

डाँगी के राजस्थानी मे परिवर्तित होने की प्रक्रिया मे ब्रजभाखा के तत्त्व दृष्टिगत होते हैं। ब्रज क्षेत्र के दक्षिण की प्रामाणिक बोली में निश्चित वर्तमान ('करनु-हौं'[मैं कर रहा हूँ।] की अपेक्षा 'करूँ-हौं') का एक रूप मिलता है जो डाँगी से ग्रहण किया गया है। भरतपुर के मध्य मे इसके प्रभाव के अन्य उदाहरणो का उल्लेख किया जा चुका है पर इन दोनो ही स्थितियो मे उदाहरण छिटपुट हैं। दूसरी ओर डाँग बोलियो मे वे काफी सामान्य है जिससे उनमे एक विशिष्ट रग आ गया है। डाँगी मे उन भाषागत विशेषताओ के प्रारभिक चिह्न दिखलायी पडते हैं जो पश्चिम दिशा मे क्रमश बढते ही जाते है और अंतत गुजराती मे पूर्णत विकसित हो जाते है। एक उल्लेखनीय उदाहरण

१. इसमें एक मिश्रित बोली के २१७,५३१ भाषा-भाषी भी सम्मिलित हैं।

में (सकर्मक क्रिया के भूतकालिक रूप का अव्यक्तिवाचक प्रयोग) गुजराती का व्याकरणिक तत्त्व जयपुर की डाँगी मे दृष्टिगत होता है।

अनेक अविकसित भाषाओ मे ऐसे भाषागत प्रयोग दृष्टिगत होते है जिनसे विकसित भाषाओं के अपेक्षाकृत घिसे हुए प्रयोगो पर प्रकाश पडता है जैसे (पुरानी गुजराती के समान) डाँगी मे सबधकारक को अधिकरण मे रखकर सप्रदान की स्पष्टत रचना कर ली जाती है यथा 'मेरो' (मेरा) से अधिकरण 'मेरैं' (मुझको) बनता है। इस प्रकार हिंदी परसर्ग 'को' (व्रजभाखा 'कौं') का उद्गम स्पष्ट हो जाता है जो वस्तुत सबधकारक परसर्ग 'का' (व्रजभाखा 'कौ') का अधिकरण है।[1]

अलीगढ तथा आगरा के पूर्व की व्रजभाखा में अन्यपुरुष सर्वनाम के एक विलक्षण रूप 'गु' अथवा 'ग्व्' का उल्लेख किया गया है। डाँगी का तत्स्थानी 'व्ह्' या 'ह्व्' संभवत इसके उद्गम का सूचक है।' 'व्ह्' केवल 'वह' का ही एक रूपातर है।

व्रजभाखा में कई ढगो में से एक के अनुसार ह्रस्व स्वर के पूर्ववर्ती होने पर 'न्' द्वारा विकृत बहुवचन की रचना होती है यथा 'घोडा', 'घोडन-कौ' (घोडो का), 'नारी', 'नारिन-कौ' (स्त्रियो का)। राजस्थानी मे यह अनुनासिक दीर्घ स्वरसहित समाप्त होते है 'जैसे घोडाँ-को', 'नार्याँ-को'। मध्यवर्तिनी स्थिति की डाँगी में इन दोनो से ही पुराना एक रूप मिलता है जिससे यह दोनो रूप उद्भूत हुए है। यहाँ पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर वाला विकृत बहुवचन 'न्' अत्य होता है यथा 'घोड़ान्-को', 'नारीन्-को', 'दिन्' या 'दन्' (दिन), 'दिनान्-को' या 'दनान-को' (दिनो का)।

पश्चिमी हिन्दी की सभी बोलियो का भूतकाल का अर्थ द्योतित करने वाला रूप परसर्ग-रहित क्रिया का भूतकालिक कृदत है। कहा जा चुका है कि पूर्वी हिन्दी तथा बिहारी (और उस वर्ग की अन्य भाषाओ) में कुछ परसर्ग क्रिया के सभी कालो में जोड दिये जाते है जैसे पूर्वी हिंदी 'मार्य-स्' (उसने मारा)। यह 'स्' परसर्ग जैसा कि उल्लेख किया गया है एक व्यक्तिवाचक सर्वनाम का अवशेष है।

जयपुरी का विवरण देते समय हम देखेंगे कि यह परसर्ग शब्दो मे भी लगाया जा सकता है लेकिन यहाँ यह क्रियाविषयक अत्य नही, पृथक् अनुबद्ध शब्द है और इसका जोडना या न जोडना इच्छा पर निर्भर है जैसे 'गयो' या 'गयो-स्' (वह गया)। यही विशेषता बनाफरी बुंदेली मे भी मिलती।

यह अनुबद्ध शब्द डाँगी मे सामान्य है, उदाहरणार्थ 'बुलाई-स्' (वह बुलाई गई।)।

१. 'को' एक पुराने रूप 'कहूं' से और 'कहू' संस्कृत 'कृते' से उद्भूत है। 'कृते' (लिए) 'कृतः' का अधिकरण है जिससे हिंदी 'का' निकला है।

पश्चिमी हिंदी मे करणकारक का चिन्ह 'ने' अथवा 'नै' है। राजस्थानी ए गुजराती में इस कारक मे कोई परसर्ग नही लगता किंतु 'ने' या 'नै' का प्रयोग कर्म-सप्रदान के द्योतन के लिए किया जाता है। डाँगी मे सर्वनामो की स्थिति मे 'नै' करण तथा कर्म-सप्रदान दोनो के लिए व्यवहृत होता है। पहली स्थिति मे इसका कर्तारूप मे प्रयोग होता है और दूसरी मे विकृत रूप मे जैसे 'तैं-नैं' (तेरे द्वारा) 'तू-नैं' या 'तू-कूँ' (तुमको)। यहाँ परसर्ग का अर्थ परिवर्तित हो जाता है।

राजस्थानी मे यौगिक कृदत धातु मे 'अर्' जोड कर बनाया जाता है जैसे 'मारर्' (मार कर)। पश्चिमी हिंदी मे यह रचना 'कर्' परसर्ग जोड कर होती है और साथ-साथ धातु में 'इ' अक्षर वैकल्पिक रूप से लगाया जाता है यथा 'मर्-कर्' या 'मारि-कर्'। डाँगी मे 'कर्' परसर्ग जोडा अथवा 'अर्' या 'इर्' लगाया जाता है जैसे 'मार-कर्', 'मारर्' या 'मारिर्'। यहाँ 'अर्' परसर्ग का उद्गम स्पष्ट होता है। यह 'कर्' के 'क्' के विलोप से बना है। इस तथ्य की पुष्टि 'मारिर' से होती है जो स्पष्टत 'मारि-कर्' का छोटा रूप है। सयोगवश इससे राजस्थानी सबधकारक 'रो' पर भी प्रकाश पडता है। सादृश्य की दृष्टि से मारवाडी 'घोडा-रो' 'घोडा-करो' का छोटा रूप है और बगाली 'बालकेर' (बालक का) 'बालक-केर' का।

डाँगी बोलियो के शब्दो और वाक्यो की एक विशेष सूची भी दी गयी है जिससे उनके विविध रूपो पर प्रकाश पडता है।

करौली की डाँगी

करौली राज्य में डाँगी भाषा-भाषियो की सख्या ६०,००० दी गयी है। यहाँ इसका स्वरूप अविकसित ब्रजभाखा का है। इसका शब्दसमूह कुछ विचित्र है और इस पर जयपुरी के अनेक प्रभाव हैं। यहाँ दो उदाहरण दिये जा रहे है, एक अपव्ययी पुत्र-कथा का अश है और दूसरा अपने बिलकुल मूल रूप मे लिखित एक स्थानीय पत्र जिसमे से केवल प्रारभ का औपचारिक अभिवदन काट दिया गया है। डाँगी और प्रामाणिक ब्रजभाखा के मुख्य अतर निम्नलिखित है।

उच्चारण—बलाघातहीन अक्षर में 'अ' वर्ण प्राय 'इ' मे परिवर्तित हो जाता है यथा 'बालिक' (बालक), 'सूरिज' (सूरज)। 'ए' तथा 'अइ' परस्पर परिवर्तनशील है यथा 'पीटै' या 'पीटे' (वह मारता है)। यही स्थिति 'ओ' तथा 'औ' की है जैसे 'मौंडा, मोडा, मोंडा' या 'मुडा, (पुत्र), 'चल्यो' या 'चल्यौ' (वह गया)। 'ह्' वर्ण कभी-कभी दो स्वरो के बीच लगा दिया जाता है यथा 'सूहर' (सुअर)। यदा-कदा इसका विलोप भी हो जाता है उदाहरणार्थ 'रहन्' के लिए 'रन्' (रहना)। व्यजन-द्वित्व के पूर्ववर्ती होने पर स्वर का दीर्घीकरण और एक व्यजन का विलोप हो सकता है जैसे 'उत्तर' के

लिए 'ऊनर'। 'खूप' (अच्छा) शब्द में प्रारंभिक 'क' 'ख्' मे परिवर्तित हो गया है। सकोचन के उदाहरण 'वहुत' के लिए 'भोत' या 'भौत' अथवा 'दो-एक' के लिए 'दोक' आदि है।

व्रजभाखा की 'आ'-अत्य सवल सज्ञाएँ यहाँ सामान्यत. '-औ' अथवा 'ओ'-अत्य है यथा 'घोडौ' (घोडा)। 'मोंडा' (पुत्र) आदि कुछ संबंधसूचक सज्ञाएँ अब भी 'आ' से समाप्त होती है। 'औ (ओ)'- अत्य सज्ञाओ का विकृत एकवचन रूप सामान्यत 'ए'-अत्य होता है जैसे 'घोडे-कौ' (घोडे का)। 'आ'-अत्य राजस्थानी रूप भी यहाँ प्रचलित है उदाहरणार्थ 'वैयो' मे 'वैया-कूँ' (माँ को)। द्रष्टव्य है कि स्त्रीलिंग होने पर भी यह शब्द 'ओ' से समाप्त होता है। कर्ताकारक वहुवचन रूप सामान्यत 'घोडे' लेकिन यदा-कदा 'घोडा' और विकृत वहुवचन रूप 'घोडान् मिलता है। विकृत वहुवचन के अतिम अक्षर मे दीर्घ स्वर डाँगी की विशेपता है। कभी-कभी 'आन्' के स्थान पर 'एन्' भी मिलता है यथा 'जेगरेन्-कें', कर्ता० एक० 'जेगरो'। 'मोंडा' जैसी सज्ञाओ का वि० एक० तथा कर्ता० वहु० 'मोंडा,' और वि० वहु० 'मोडान' मिलता है। व्यजनात सज्ञाओं का कर्ता० वहु० 'आ' से समाप्त होता है यथा 'दिन, दिना' (दिनो), 'पुरिख' (एक पिता), वहु० 'पुरिखा'। विकृत वहुवचन 'अन्, एन्' या 'आन्'-अत्य होता है जैसे 'दिनन्' या 'दिनेन्', 'जनेन्' ('जन' एक व्यक्ति) और 'पुरिखान्'। 'ई' तथा 'ऊ'-अत्य सज्ञाओ के दीर्घ स्वर विकृत वहुवचन मे सुरक्षित रहते है। उदाहरणार्थ 'मेहनती', (नौकर), 'मेहनतीन', 'पडरू' (पँडवा, पँडिया), 'पडरून'।

यहाँ कारक परसर्ग व्रज के समान है लेकिन कुछ अनियमित रूप भी मिलते है, उदाहरणार्थ कर्म- सप्रदान के लिए 'कौं, के,' तथा 'कू' के अतिरिक्त 'नें' भी प्रयुक्त होता है जो वस्तुत करणकारक का चिन्ह है, जैसे 'विन रुपैयान-नें लै-लै' (वे रुपये ले लो)। अपादान-उपकरण परसर्ग साधारण रूपातरोसहित 'सूँ', 'से' तथा 'सों' हैं लेकिन 'पै-से' वहुत सामान्य है यथा 'वा-पै-से लै-लै' (उससे ले लो)। अधिकरण का चिह्न 'पै' 'मो-पै डिग्यो नाने जात' (मुझसे चला नही जाता, मै नही जा सकता।) जैसे वाक्यो मे अपादान तक के लिए प्रयुक्त होता है। यहाँ सामान्य पुल्लिंग एव स्त्रीलिंग के अतिरिक्त नपुसकलिंग के भी स्वतत्र चिह्न मिलते है जो अतिम 'औ' या 'ओ' के अनुनासिकीकरण द्वारा द्योतित किया जाता है यथा 'पान्यौं सूखि—गयो' (पानी सूख गया।), 'सुखा-काल पर्‌यो' (अकाल पडा।), 'विचार्‌यो' (यह उनके द्वारा सोचा गया, उन्होने सोचा।) 'अपनो पेट' (अपना पेट')।

उत्तम पुरुप का सर्वनाम 'हू, हो,' 'मे' अथवा 'मैं' है। उत्तम तथा मध्यम पुरुपो के सबधकारक वहुवचन ये है—(१) 'हमारो' अथवा 'हमरो', (२)

'तुमारौ, तुमरी' या 'तियारौ'। विकृत बहुवचन रूप क्रमश 'हमन्' या 'तुमन्' हैं। 'आप' (अपना) का सबधकारक 'अपनौ' अथवा 'आप-की' है। 'झा' (वहाँ) 'जब' (इस समय तथा कहाँ) एव 'भा' (यहाँ) सर्वनामीय क्रिया-विशेषण हैं।

क्रियासबधी अनियमितताएँ सख्या मे कम है। नकारात्मक अस्तित्वसूचक क्रिया का केवल एक ही रूप 'नाने' मिलता है जिसका अर्थ 'मैं नही हूँ' और 'वह नही है' दोनो है। जैसा कि कहा जा चुका है, सिकडवारी ब्रजभाखा मे 'नाने' रूप प्रचलित है

भादौरी बुदेली के समान अस्तित्वसूचक क्रिया का प्रारभिक 'ह्' प्राय विलुप्त हो जाता है जब क्रिया सहायक क्रियास्वरूप प्रयुक्त होती है। कभी-कभी 'य्' भी बीच मे जोड दिया जाता है यथा 'रोपत्-ए' (वह रोपता है।), 'जात्-ये' (वह जाता है।) 'देत्-ओ' (वह दे रहा था।) 'चरत्-ए' (वे चर रहे थे)। पूरा रूप भी व्यवहृत होता है जैसे 'डोलत्-है' (वह टहल रहा है)।

यहाँ क्रिया-रूप-रचना की राजस्थानी पद्धति के अनुसार सामान्यत निश्चित वर्तमान में सहायक क्रिया को वर्तमानकालिक कृदत की अपेक्षा सामान्य वर्तमानकालिक रूप से जोड दिया जाता है।

भूतकालिक कृदत लगभग सदैव 'यौ'-अत्य होता है। कभी-कभी 'य्' का विलोप हो जाता है। यहाँ 'चुक्यौ' तथा 'चुकौ' दोनो रूप मिलते है।

आज्ञार्थ के इच्छासूचक रूप 'अईयो' (आना), 'घो-घालिजौ' (देना), 'लीजौ' (लेना) तथा 'दीजौ' (देना) है।

नमूनो में आये असामान्य शब्दो की एक सूची नीचे दी जाती है। क्रियाएँ अपने धातुरूप में उद्‌धृत है —

आत्यौ (थका हुआ(
आरा (आला, गवाक्ष)
ओझयूँ, औझयूँ (फिर)
कूट्ठान (भैंसा)
कूकस (सूखी घास)
खिरक (पशुशाला)
घुर (लडना)
चालू (टिकाऊ)
छट्टा (अच्छा, सुन्दर)
जेगरो (बछडा बछिया)
टरक-दे (चला जाना)

टारा-टूरी (छल)
ठठरो (ठठेरा)
डिग (चलना)
डोल (घूमना)
ढूंक-ले- (देखना)
दाजू (पिता)
दो-घाल धो-दे (देना)
नाख (पीछे छोडना) जयपुर में इसका अर्थ 'वमन करना' है।
न्यार-फूस (चारा-भूसा)
पान्यों (पानी)
फिटक ('वाय फिटक सूझी', उसका दिमाग ठिकाने आ गया।)
फूस (भूसा)
वैयो (माँ)
वैरवानी (स्त्री, पत्नी)
भायलो (मित्र)
भिआ (भाई)
भूस (भौंकना, कुत्ते के समान)
मलूक (सुदर, अच्छा)
मेहनती (नौकर)
राहौ (अँगीठी)
लागन (शत्रुता)
लार (पशुओ के आगे खाद्य फेंकना)
लोह्यो (खून)
लोठा (वडा)
हल (हिलना, अकर्मक)

[स० २०.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (डांगी) (करौली राज्य)

उदाहरण १.

कोई आदमी-के दो मोडा हे। विन-में-से ल्हौरे मोड़ा-ने दाजू-से कही अरे दाजू विनुघा-में जो मेरो वट है वाय मों-को वांट-दे। तव वाप-ने अपनी विसुवा वांट दीनी।

कछूक थोरे-ई दिनन-में लहीर्या मोडा मव विसुवा समेटि दूर परदेस-कूँ चल्यो गयो और भाँ गुलाम्यों-से सव दिना खोय-दीए सव विसुवा लुटाय-दीनी। जव सवे गमाय-चुक्यौ तव भाँ वडो भारी भूखा-काल पर्यों और वो नगा हे वैठ्यो। वो वा देस-में वसिवे-वारे एक कोई-के भ्राँ रहवे लग्यो। वा-ने-वा-कूँ आप-के खेतन-में सूहर चरायवे पठायौ। भाँ जा कूकस-कूँ सूहर चरते वा-से अपनों पेट भरवो विचार्यो। वा-कूँ कोई नहीं देतो। जव वाय फिटक सूझी और वा-ने कही के मेरे दाजू-के भ्राँ भोत मेहनतीन-कौं पेट-से ऊवर रोटी होय-है और में भूखन मरूँ। जा-से भ्राँ-से दाजू-के घर जाऊँगो और भाँ वा-से कहूँगो अरे वाप में-ने तेरे अगारी पापै-पाप-की घघो कर्यौ-है। में तेरो लाडिलो वजवे-वारो नहीं रह्यो। मोय तू तेरे एक मेहती-की नाई राखि-ले ॥

[सं० २१]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (डाँगी) (करौली राज्य)

उदाहरण २.

मैं मुकते-ऊ दिनन-से तुमन-कौं लिख-लिखा हार-चुकौ कि भ्राँ डाँग-में ढोर-ढारेन-कूँ न्यार-फूस भी नाने रह्यौ। पान्यौं-पात नदी-में सूखि गयौं। तुमारे मुडा-से कट्ठान-कूँ ठाँठरे लाखिवे-की कहत-हौं तो टारा-टूरी करत-है। मोडा लोठा हो-गयो तो भी हाल-ई जानत वूझत नाने। अव ढुंक-ले भिआ तेरो मुडा जेगरेन-कें लार-लार भी नाने जात-ये। हूँ भूसत भूसत थकि मर्यो। हमन-से दिनेन-के दिनेन लागन रोण्ते। अव हौं वाखर-में-से कढि-जाऊँगो। वो घुरिवे डोलत-है। मैं-ने भोत समझाय वुझाय कह्यौ तो औझूँ ऊतर नाने देत-ई। कैयो जनेन-ने समझायो तव वो भाँ-से टरक देत-है। तैं-ने भ्राँ वैयो भी नै रन दीनी। जव वैरवानी झौंपरी-से खिरक-में आवत-ए तव पड्रून-कूँ न्यार-फूस डारत्ये। मो-पै तनक भी नाने हल्यौ डिग्यौ जात-ई। अव भिआ इन रुपकन-से दिन-उठि लोह्यौ सूखत-है। अव तू भ्राँ अईयो। हौं लिखि चुक्यौ। अव हौं नाने जानतौ। आ-में-ई तू सव समझ वूझ लीजौ। हौं तो वाट निहारतौ निहारतौ आत्यौ हो-चल्यौ। नई-तो थोरे दिनन-में हूँ आवतौ। अनाज कुठीला-में रन दीजौ। हमन-कौं मुकतौ चैय्येगौ। और आ-में-ते दो मन अनाज झडू-कौं घो-घालिजौ। मोय झरनो हो-गयो-ही। सो दोक दिना-में कल है। और ननूआ भायले-से टेर-कें कीजो के राहे पीछे-के आरे-में तीन रूपैया नाखि आयौ-हूँ। सो हाट-में-से मलूक चलू अँगरखी

और पन्हा और छ्ट्टा कखा ले-के वैया-कूँ फाय-देय। वो इाँ मिलि भेंट-जायगी। मिति वैसाख सुदी ७ सम्वत १९५६ ॥

जयपुर की डाँगी

जयपुर की वास्तविक डाँगी भरतपुर तथा करौली की सीमाओ पर राज्य के उत्तर-पश्चिमी कोने मे प्रचलित है। भरतपुर राज्य की वोली से इसका सूत्र जुडा हुआ है। वास्तविक डाँगी के पश्चिम मे अलवर की दक्षिणी सीमा के साथ-साथ एक मिश्रित वोली का व्यवहार होता है जिसके माध्यम से डाँगी क्रमश जयपुरी मे परिवर्तित हो जाती है। इसे भी डाँगी के अतर्गत लिया जा सकता है। यहाँ के भाषा-भाषियो की सख्या निम्नलिखित है—

वास्तविक डाँगी	१८६,९०५
मिश्रित वोली	२१७,५३१
कुल योग	४०४,४३६

जयपुर की अन्य वोलियो के समान वास्तविक डाँगी के निम्नलिखित पत्कृष्ट उदाहरण के लिए मै जी० मेकेलिस्टर का आभारी हूँ। वोली की प्रमुख विशेषताओ की व्याकरणिक रूपरेखा उनके व्याकरण तथा उदाहरणो पर आधारित है।

उच्चारण—सभी जयपुरी वोलियो के समान डागी में व्रज मे पाये जानेवाले दत्य 'न्' की अपेक्षा दृढतापूर्वक उच्चरित मूर्धन्य 'ण्' का व्यवहार होता है। वस्तुत यह कहा जा सकता है कि प्राकृत में मध्यवर्ती एकाकी 'न्' से सवद्ध प्रत्येक 'न्' व्यजन मूर्धन्य होता है और प्राकृत मे दुहरे 'न्न्' के अवशेष केवल कुछ ही दत्य होते है यथा प्राकृत 'जणो' के कारण 'जणू' (एक पुरुष) मे 'ण्' मूर्धन्य है किंतु प्राकृत 'सोण्णो' अथवा 'सोन्नो' में दुहरा 'न्न्' होने से 'सोनू' में दत्य 'न्' है। श्री मेकेलिस्टर के अनुसार मध्यवर्ती 'ल्' भी मूर्धन्य रूप मे उच्चरित होता है। सभव है, यह नियम इस स्थिति मे भी लागू होता हो। नमूनो मे मूर्धन्य 'ळ्' न होने के कारण इसे अनुलिपि में नहीं दिया गया है।

शब्द के मध्य अथवा अत में यहाँ महाप्राणत्व समाप्त करने की भी प्रवृत्ति है यथा 'भूखन', 'भूकन' (भूख से), 'कही', 'कई' (कहा), 'हाथ,' 'हात्', 'चट', 'चँड' (चढना)।

'च्' वर्ण कभी-कभी 'स्' में परिवर्तित हो जाता है जैसे 'सोची,' 'सो सी' (उसने सोचा)।

श्री मेकेलिस्टर द्वारा दीर्घस्वर के पूर्ववर्ती होने पर अंतिम 'य्' की अनुलिपि सदैव 'यअ' रूप में दी गयी है यथा 'वायअ' (उसको), 'जायअ' (वह जाता है।), 'खोयअ' (खोने पर)।

संकोचन के उदाहरणस्वरूप 'लहुडो' (छोटा) के लिए 'ल्होडो' का उल्लेख किया जा सकता है।

बलाघातहीन अक्षर मे आने पर 'अ' वर्ण 'इ' मे परिवर्तित हो सकता है जैसे 'बालक,' 'बालिक,' 'पोखर,' 'पोखिर'। इसी प्रकार 'ठाकुर' के लिए 'ठाकर' मे 'उ' 'अ' मे परिणत हो गया है।

ब्रजभाखा मे 'औ'-अंत्य संज्ञाएँ, विशेषण तथा कृदंत इस बोली मे 'ओ'-अंत्य होते हैं यथा 'जेवडो' (रस्सी), 'भलो' (अच्छा)। भूतकालिक कृदंत मे 'य्' सुरक्षित रहता है जैसे 'चल्यो' (ब्रजभाखा 'चल्यौ'), 'चलो' नही।

करौली की डाँगी के समान संज्ञाओ के रूप अधिक होते है और विकृत बहुवचन रूप मे दीर्घ स्वर भी विशेषत सुरक्षित रहता है।

सबल पुल्लिंग संज्ञाएँ (विशेषणो तथा कृदंतो से पृथक्) 'आ' से समाप्त होती हैं, 'ओ' से नही। 'ओ' अंत्य जयपुरी है और प्राय मिलता है। यदा-कदा 'ऊ' भी दृष्टिगत होता है यथा 'सोनू' (सोना), 'जणु' (पुरुष)। इस वर्ग की संज्ञाओ के विकृत एकवचन तथा कर्ताकारक बहुवचन या तो ब्रजभाखा के समान 'ए'-अंत्य होते हैं और या जयपुरी के समान 'आ'-अंत्य। 'आ' वाली संज्ञाओ का रूप केवल 'आ' मे ही रहता है, यथा 'पोता' (पौत्र), कर्मकारक 'पोता-कूँ,' कर्ता० बहु० 'पोता'; 'घोडा' (घोडा या घोडे)। दूसरी संज्ञाओ मे 'ए' हो जाता है जैसे 'रहवे-वालो' या—'वाडो' (निवासी) से संबंधकारकस्वरूप 'रहवे-वाले-को' और 'जणू' से विकृत रूप 'जणे' मिलता है। इन सभी संज्ञाओ के विकृत बहुवचन रूप 'आन्' अथवा 'एन्'-अंत्य होते है यथा 'पोतान-कूँ' या 'पोतेन-कूँ' (पौत्रो को)।

व्यंजनांत पुल्लिंग संज्ञाओ का कर्ताकारक बहुवचन रूप 'आ' से और विकृत बहुवचन रूप 'आन्' से समाप्त होता है जैसे 'दिना' (दिनो) 'दिनान्'। कभी-कभी 'नौकरन्-को (नौकरो को) आदि उदाहरणो मे ब्रजभाखा अंत्य 'अन्' भी मिलता है।

'छोडी' (लडकी) जैसी 'ई' से समाप्त होनेवाली स्त्रीलिंग संज्ञाओ का वि० एक० एव कर्ता० बहु० रूप 'छोडी' और वि० बहु० रूप 'छोरीन' है।

इसके कारक परसर्ग निम्नलिखित है—

करण	ने
कर्म-सम्प्रदान	कूँ, कैं, कैं
विकृत उपकरण	तें, तैं, तैं, पै-ते, कै-ते
सम्बन्ध	को, वि० पु० के, स्त्री० की
अधिकरण	में (अंदर), पैं, माऊ (पर)

सम्बन्धकारक का विकृत पुल्लिंग कभी-कभी जयपुरी के समान 'का' होता है यथा 'ऊ देस-का एक रहवे-वाले-के ढिगारे' (उस देश के एक निवासी के निकट)।

कर्म-सम्प्रदान में कभी-कभी 'यअ'-अन्त्य होता है यथा 'पोतायअ' (पौत्र को)। यहाँ सामान्यतः 'अन्' में करणकारक भी मिलता है जैसे 'भूखन्' (भूख से)।

यहाँ नपुंसक लिंग के चिह्न भी मिलते है यथा 'सुण्यूँ' (यह सुना गया, उसने सुना)। ब्रजभाखा में 'औ'-अन्त्य सबल विशेषण इस बोली मे 'ओ'-अन्त्य होते है और उनका विकृत पुल्लिंग रूप 'आ' अथवा 'ए' से समाप्त होता है जैसे 'भलो' (अच्छा), विकृत 'भला, भले'।

सर्वनामो में मध्यम पुरुष का बहुवचन (कर्ताकारक तथा विकृत) 'तुम' की अपेक्षा 'तम' और सम्बन्धकारक बहुवचन 'तुमरो' अथवा 'त्यारो' है। 'वह' एव 'वहाँ' का अर्थ द्योतित करनेवाला 'ऊ', 'वा' या 'व्हा' है, वि० एक० 'वा', कर्ता० बहु० 'वे' वि० बहु० 'उन'। कर्म-सम्प्रदान का एकवचन का एक वैकल्पिक रूप 'वायअ' है।

'या' अथवा 'ई' 'यह' के पर्याय है, वि० एक० 'या', कर्म-सम्प्रदान 'यायअ' कर्ता० बहु० 'ये'; वि० 'इन'।

'वह' के लिए दूसरा शब्द 'जे' है, वि० एक० 'जा', कर्म-सम्प्रदान 'जायअ', कर्ता० बहु० 'जे', वि० 'जिन'। इसी प्रकार 'जब' शब्द 'तब' के साथ-साथ 'अब' का भाव भी व्यक्त करता है।

सम्बन्धबोधक सर्वनाम 'जे' के रूप 'जे' (वह) के समान ही बनते है।

'कोण', 'का' तथा 'कछऊ' क्रमशः 'कौन?', 'क्या?' एव 'कुछ भी' के पर्याय हैं। इसी को 'का-कछऊ-की बोली' भी कहा जाता है। 'काउ' अथवा 'कोउ' 'किसी, कोई' भाव को व्यक्त करते हैं। रूपों में इनमें से किसी का आधार परिवर्तित नहीं होता।

'आप' (अपना) का सम्बन्धकारक 'आप-को' अथवा 'आप-णो' है। यह शब्द कभी-कभी जयपुरी के समान 'हम' अर्थ द्योतित करने के लिए प्रयुक्त होता है। यहाँ ब्रज-

भाखा के नियमो के अनुसार 'आप-णो' का व्यवहार होना चाहिए, वहाँ 'मेरो', 'वा-को' आदि व्यक्तिवाचक सर्वनाम वहुधा मिलते है।

अस्तित्वसूचक क्रिया मे और सब वाते व्रजभाखा के समान है, केवल भूतकाल का एक रूप 'हुतौ' की अपेक्षा 'हत्यो' मिलता है।' 'हत्यो' 'हैवो' (होना) के वर्तमान-कालिक कृदतस्वरूप भी व्यवहृत होता है। 'हैवो' क्रिया के दूसरे रूप ये हैं—वर्तमान, 'होऊँ', भविष्य, 'हूँगो', भूत, 'हूयो', 'यौगिक कृदत 'है' ('ह्वै' नही), 'हैर्' आदि।

कर्तृवाच्य की रूप-रचना सामान्यत व्रजभाखा के समान है। निश्चित वर्तमान में राजस्थानी ढग के अनुसार सहायक क्रिया सामान्य वर्तमानकालिक रूप के साथ जुडती है, वर्तमानकालिक कृदत के साथ नही। वर्तमानकालिक कृदंत कभी-कभी भूतकाल की तरह प्रयुक्त होता है यथा 'खँदातो' (उसने भेजा [उसे खेतो मे]), 'दँतो' ([किसी ने नहीं] दिया।)

जयपुरी से ग्रहीत यौगिक कृदत का रूप द्रष्टव्य है। इसका विशिष्ट चिन्ह 'र' वर्ण है यथा 'वोलर', 'वोलर-कँ', 'वोलर-कँन' अथवा 'वो लर-कैन' (कहकर)। कभी-कभी 'अर' की अपेक्षा 'इर' अत्य होता है जैसे 'उठिर' या 'उठर' (उठ कर)। 'अर'-अत्य के प्रथक शव्द के रूप मे लिखे जाने से इसमे और 'अर' (और) शव्द मे भ्रमहो जाता है। इसी कारण 'चँडर (चढकर) 'चँड अर' रूप मे भी लिखा गया है।

'इ' (अथवा 'य्') मे व्रजभाखा यौगिक कृदत के चिन्ह दृष्टिगत होते हैं यथा 'जायअ' (जाकर) 'खोयअ' (खोकर), 'कै'' (कहि) (कहकर) 'कै' (कहकर) तथा अव्यय 'कै' (कि) मे भ्रम नही होना चाहिए, यद्यपि 'कही' ([उसने] कहा) के लिए 'कै' के व्यवहार से स्थिति आगे और भी उलझ गयी है।

'इ' अथवा 'य्' अत्य यह यौगिक कृदत प्राय 'आवो' (आना) क्रिया से जोड कर साथ-साथ एक शव्द के रूप मे लिख दिया जाता है जैसे 'कर्याऊँ' (करके मैं आता हूँ, मैं यह करके वापस आ जाऊँगा), 'जीयायो' (वह जीकर आया, वह जिदा हुआ)।

'करवो' (करना) का भूतकालिक रूप 'कर्यो' है। 'देवो' (देना) तथा 'लेवो' (लेना) से क्रमश 'दियो' अथवा 'लियो ('दीयो' या 'लीयो' भी) रूप वनते हैं। 'गयो' शव्द 'गया' अर्थ द्योतित करता है।

विस्तृत जानकारी और अनेक उत्कृष्ट नमूनो के लिए श्री मेकेलिस्टर की पुस्तक देखी जा सकती है।

[सं० २२]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (डाँगी) (जयपुर राज्य)

(श्री जी० मेकेलिस्टर, एम० ए०)

उदाहरण १.

एक-कें दो वेटा हे। उन-मेंते ल्होडे वेटा-ने वा-के बाप-ते कही अरे दाऊ धन-में मेरो वट है जाय मो-कूं वाँट-दे। जे वा-पै धन हत्यो जे उन-कूं वाँट-दीयो। भौत दिना नहीं हूये ल्होडो वेटा सब-ई लैर भौत दूर परदेम-में चल्यो-गो। व्हाँ जार आप-को सग धन लुच्चापणे-में उडा दीयो। जब वा-ने सग धन उडा-दीयो जब वा देस में ऐसो भारो जवाल पड्यो अर ऊ कगाल है-गो। पीछै वा ऊ देस-का एक रहबेवाले-के ढिंगारे जा रह्यो। ऊ वाय सूवर चरावे खेत-मे खँदातो। जे पातडा सूवर खावै-हे जिन-के खायबे-कूं ऊ राजी हत्यो। अर काऊ-ई आदमी वाय नहीं देतो। जब वा-कूं सुरत आई वा-ने कही अरे मेरे वाप-के-ई नोकरन-कें निरी रोटी अर मैं भूकन मरूँ। मैं उठूंगो और मेरे वाप-के ढिंगारे जाऊँगो अर वा-ते कहूँगो दाऊ मैं-ने सुरग-को पाप कर्यो अर तेरो पाप कर्यो। अर अब मैं ऐसो नहीं रह्यो जे तेरो वेटा कहवाऊँ। मो-कूं तेरो नोकर राख-लै। ऊ उठिर वा-के वाप-के ढिंगारे आयो। वाप-कूं वा-कूं दूर-ते आतो -ई देखर दया आय गई। जब वाप दौड्यो जार गले-ते लगा-लीयो अर मट्टी लई वा-की। जब वेटा-ने वा-ते कई अरे दाऊ मैं-ने सुरग-को पाप कर्यो अर तेरो पाप कर्यो। अर अब ऐसो मैं नहीं रह्यो जे तेरो वेटा कहवाऊँ। जब वाप-ने आप-के नोकरन-ते कई आछे-ते आछे ओढणा लावो अर वा-कूं पेहरावो। अर वा-के हात-में अँगूठी पेहरावो। अर पाँवन-में पणाँ पेहरावो। अर हम खावें पीवें अर चैन करें। क्यो अक ई मेरो वेटा मर्‌-गो हो जे फेर जी आयो। अर खोय-गो हो जे पाय-गो। अर वे खुसी है वे लगे॥

वा-को वडो वेटा हो जे खेत-में हो। जब ऊ आयो अर जब घर-ते लगतो आयो जब वा-ने वजावो गावो अर नचवो सुर्ण्यू। अब वा-ने एक जणू नोकरन-मेंते वुलायो। जब वा-ते पूछी अक आज ई वात का है। जब वा-ने वा-ते कई तेरो भैया आय-गो है। तेरे वाप-ने जिंवाँये-हैं अक वा-ने ऊ राजी-वाजी आछें देख-लीयो। ऊ रिसाय-गो। जा-ते भीतर नहीं गयो। जा-ते वा-के दाऊ-ने वाहर आर ऊ मनायो। जब वा-ने वा-के वाप-कूं जुवाव दीयो अक देख इतेक वरसन-ते मैं तेरी चाकरी करूँ अर मैं-ने कमूं-हीं तेरो कह्यो नहीं राल्यो। तो ऊतैं-ने मो-कूं एक वकरा-ऊ नहीं दीयो अक मेरे भायलेन-के साजे मैं खुसी करतो। पण तेरे या छोरा-कूं आते-ई जा-ने तेरो धन वेडणीन-में उडा-दीयो या-

के लहँ तो तैं-ने जिवाँये। वा-ने वा-ते कई वेटा तू-तो सदाँई मेरे ढिंगारे रहै। जे मेरे ढिंगारे है जे तेरो-ई है। खुसी करवो अर राजी हैवो तो हम-कूं चैयेई हो क्यों अक ई तेरो भैया मर-गो हो जे फेरूँ जीयायो। खोय-गो हो जे फेर पायगो ॥'

[सं० २३.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

ब्रजभाखा (डाँगी) (जयपुर राज्य)

(श्री जी० मेकेलिस्टर, एम० ए०)

उदाहरण २

एक ठाकर हो। तो वा-कै खायवे-कूं घर-में कछू हत नहीं हो। तो झटसीदेण वा-न कही कि भाई चाकरी-कूं जाऊँगो। तो एक सोण-चिडैया ही। जा-के सोण लेवे जाय। रोजीना तो ऊ सोण-चिडैया वा-कूं सोण नहीं दे। सोण-चिडैया तो चुगेरे-कूं जाय। और वा-के वच्चान-तें कह जाय वेटा काउ-कूं सोण मत दे-दीज्यो। तो ऊ तो चुकवे-कूं गई अर पीछे-तै आयो ठाकर। तो सोण-चिडैया-के वच्चान-ने वा-कूं सोण दै-दीयो। तो ठाकर ऊँट-की काठी खूब कस-अर ऊँट-पै चँड-अर चल-दियो। तो पीछे-तै सोण-चिड़ैया आई। वा-ने पूछी वेटाओ काउ-कूं सोण तो नहीं दियो-है। तो कै मैया हम-ने तो सोण दै-दीयो। ठाकर आवो करै जा-कूं। तो सोण-चिडैया भजी व्हाँ-तैं। तो गैल-में ठाकर जा-लियो। तो व्हाँ जार वैरवानी-को रूप घर-लियो। तो ठाकर-ने पूछी तू कोण। में तेरी वैरवानी। तो कै श्रा एक-ते दो हुये। तो ऊँट-पै ऊ वैठा-लई। खटकेन-की दव लगी। तो एक पोखिर भरी ही पाणी-ते। तो वा सोण-चिडैया-तें वोल्यो कै मैं खटके कर्‌याऊँ। वा-ने कही कै जा कर्‌या। तो वा पोखिर-कै ढँगारे खटके करवे गयो। तो खटको कर-कैन सोसो लेर उलटो वगद्यो। तो पोखिर-की पाड-में स्याँप मेंडका माँऊँ लपकै। तो वा-ने कही कै या-को ज्यो या श्रजाँय ले। तो वा-ने चक्कू-तें काट माँम आपणी जाँग-में-ते और वा स्याँप-कूं फैकवो कर्‌यो। तो स्याँप खूब धाप-गो। तो आप-ई उठर चल्यो-गो। तो ऊ जार पोंछ्यो ऊँट-कै ढँगारै। तो लोईन-ते वा-की जाँग भीज रही। तो सोण-चिडैया-ने देखी। कही का हुयो। तो वा-ने कही कै एक मेंड़का-कूं स्याँप खावै-हो। जा-तें मैं-ने मेरी जाँग-को माँम राड्‌यो काट-काट-कैं। झटसीदेण सोण-चिडैया-ने हात फेर दियो। तो ऐसी-की ऐसी जाँग है गई। तो चँड़ ऊँट-पै दोन्यूं चले। तो वा मेंडका-ने सोसी कै तू वा-कूं आडो कव श्रावैगो तो होय न होय। अव-ई चल्गो। तो झटसीदेण व्हाँ-तें चल दियो ॥

डाँगभाँग

कोटा तथा करौली की सीमाओं पर जयपुर राज्य के दक्षिण-पूर्वी कोने में डाँगभाँग का प्रचलन है जो डाँगी से कालीमाल तथा करौली की डाँगी द्वारा पृथक् हो जाती है।

इसके भाषा-भाषियो की अनुमानित सख्या ८०,३६३ है।

डाँगभाँग पर जयपुरी के भाषागत प्रभाव डाँगी की अपेक्षा अधिक है। इसमें ऐसे प्रयोग भी मिलते है जो अभी तक गुजराती की विशेषता समझे जाते थे। व्याकरणिक रचना की दृष्टि से इसमे जयपुर की डाँगी से निम्नलिखित अतर है।

उच्चारण—यहाँ 'इ' मे 'अ' हो जाने की प्रवृत्ति है यथा 'दन' (दिन), 'लखयो' (लिखा हुआ)। इसी प्रकार 'रिपयो' (रुपया) शब्द मे 'उ' 'इ' मे परिवर्तित हो जाता है।

महाप्राणत्व का प्रयोग न करने की प्रवृत्ति यहाँ डाँगी से व्यापक है जैसे 'कुसी' (खुशी), 'बादो' (बँधा), 'मूको' (मूखा), 'साद्' (साधु), 'भूको' (भूखा), 'जीव' (जीभ), 'लो' (लोहा) एव 'राकस' (राक्षस)। 'ह्' वर्ण प्राय शब्द के पहले वर्ण के बाद आ जाता है यथा 'महल-म्हल', 'महाराज-म्हाराज', 'गधो-घदो'। 'लम्बो' (लबा) के लिए प्रयुक्त 'लमबो' शब्द के 'म्' के साथ भी यही स्थिति है। सामान्यत 'रह' (रहना) तथा 'कह' (कहना) के धातुरूपो में महाप्राणत्व का विलोप प्रमुख है। उदाहरणार्थ 'रहै-है' के लिए 'रै-है' (वह रहता है।), 'रयो' (रहा), 'कई' (कहा), 'कै' (कहो) (आज्ञावाचक, द्वितीय एक वचन), 'कूँगो' (मैं कहूँगा)।

सबल पुल्लिग सज्ञाएँ 'ओ' अत्य होती हैं, डाँगी तथा ब्रजभाखा के समान 'आ' अत्य नही जैसे 'बेटा' की अपेक्षा 'बेटो'। इन सज्ञाओ का विकृत एकवचन तथा कर्ता-कारक बहुवचन 'आ'-अत्य होता है यथा 'बेटा-को,' 'बेटा'। विकृत बहुवचन डाँगी के समान 'आन्' से समाप्त होता है। और दूसरी स्थितियो मे सज्ञाओ के विकृत रूपो की रचना डाँगी के समान होती है।

डाँगी के 'पोतायअ' के समान 'यअ' मे कर्म-सप्रदान नही है। 'आँ' मे तथा 'ओ' अत्य सज्ञाओ एव विशेषणो वाली 'अइ' में अधिकरण है जैसे 'म्हलाँ' (महल मे), 'साँच्याँ' (सच मे), 'महीनै' (महीने मे), 'आगै' (सम्मुख, पहले)। यह अतिम अधिकरण सामान्य है और जब विशेषण (अथवा सबधकारक) अधिकरणवाली सज्ञा के अनुरूप होता है, यह भी उसी कारक में परिवर्तित हो जाता है उदाहरणार्थ 'आप-कै ('आप-के' नही) म्हलाँ', 'मेरै ('मेरे' नही) आगै', 'तुमारै पाछै'।

परसर्ग डाँगी के समान है, केवल करण का चिन्ह 'ने' की अपेक्षा 'नैं' है और विकृत संबंध 'के' की बजाय 'का' से समाप्त होता है यथा 'ऊँ देस-का रैंवाला-कैं' (उस देश के एक निवासी को)।

सम्प्रदान (डाँगी मे भी प्रचलित) का अत्य 'कैं' यहाँ सबध के चिह्न 'को' का अधिकरण कारक है। दूसरे शब्दो मे डाँगभाँग मे एक सप्रदान सबध को अधिकरण मे रख कर अर्थात् 'ओ' अत्य 'अइ' मे परिवर्तित करके बनाया जा सकता है जैसे 'रैंवाला-कैं' (एक निवासी को), 'चायना है मेरैं' (मेरी एक चाह है।), 'दो पुत्र हो–ज्यायगा तेरैं' (तेरे दो पुत्र होगे), 'बेटा होयअ आपणैं' (हमारे बेटे होगे)।

जब एक विशेषण अथवा सर्वनाम_सज्ञा के अनुरूप होता है तब कभी-कभी परसर्ग दोनो मे जोड दिया जाता है उदाहरणार्थ 'ऊँ-नैं-राजा-नैं कई' (यह उस राजा द्वारा कहा गया था), 'रैंवाला-कैं एक -कैं' (एक निवासी को)।

कभी-कभी कर्ता का चिन्ह जयपुरी के समान विलुप्त कर दिया जाता है यथा 'ऊँ ('ऊँ-नैं' के लिए) मैतरी-कूँ मारी' (उसने मेहतराइन को मारा)।

ब्रजभाखा तथा डाँगी के क्रमश 'औ' एव 'ओ'-अत्य विशेषण यहाँ प्राय. 'यो' से समाप्त होते है जैसे 'आछ्यो' (अच्छा, वि० एक०पु० 'आँछ्या', 'साछ्यो' (सच्चा, स्त्री० 'साँची', अघि० एक० पु० 'साँच्याँ'), 'असयो' (इस प्रकार का, हिंदोस्तानी 'ऐसा')। आगे देखा जायगा कि वे भूतकालिक कृदत के अनुरूप होते है।

सर्वनामो मे उत्तम पुरुष डाँगी के समान है, यदा-कदा 'म्हारो' या 'मेरो' (मेरा) आदि कोई जयपुरी रूप मिल जाता है। 'मोयअ', 'तोयअ', 'वायअ' आदि कर्म-सम्प्रदान नही मिलते।

मध्यम पुरुष का कर्ताकारक बहुवचन 'तुम', 'तम' या 'तमु' और सबधकारक 'तुमारो' है। यह सर्वनाम कर्ताकारक के चिन्ह 'नैं' का कर्म-सप्रदान के चिन्हस्वरूप भी (विकृत रूप से जुडा हुआ, कर्ताकारक मे नही) व्यवहार करता है यथा 'तैं-नैं' (तेरे द्वारा), 'तो-नैं' (तुझको), 'तुम-नें' (तुम्हारे द्वारा या तुमको)।

डाँगी के समान कर्तृ-विषयक सर्वनाम 'आपाँ' (अपना) का व्यवहार 'हम' अर्थ व्यक्त करने के लिए भी होता है जिसमें सबोधित व्यक्ति तथा 'मै' तक सम्मिलित रहता है। इसका विकृत रूप 'आपाँ' अथवा (बहुवचन) 'आपाँन' एव सबधकारक 'आपणो' अथवा आप-को' है। 'अपना' के अर्थ में 'आपणो' की अपेक्षा व्यक्तिवाचक सर्वनाम प्रायः प्रयुक्त होते है यथा 'ऊँ-का (अथवा 'आपणा') बाप-सूँ कई' (उसने अपने पिता से कहा)।

अन्यपुरुष का सर्वनाम 'वो' है, 'वि० एक० 'ऊँ', कर्ता० बहु० 'वे', वि० बहु० 'अनः न्हाँ' (वहाँ)।

'यो' (कभी-कभी 'या') 'यह' का भाव द्योतित करता है, वि० एक० 'ई", कर्ता० वहु० 'ये', वि० वहु० 'इनाँ : न्या' (यहाँ), 'न्यों' (ऐसे)।

'जो' वि० एक०, 'जी" कर्ता० वहु० तथा 'जे' वि० वहु० है। 'जिन' सववसूचक सर्वनाम सकेतवाचक सर्वनाम 'वह' का भाव भी द्योतित करता है। 'जद्' या 'जव' 'तव' तथा 'कव' के और 'ध्याँ' 'यहाँ' एव 'वहाँ' का पर्याय है।

'कुण' (रूपो मे अपरिवर्तित) 'कौन ?', 'काँई"' 'क्या', 'कोई' 'कोई' एव 'किसी', 'काँई"' 'कुछ भी' और 'खाँ' 'कहाँ ?' अर्थ व्यक्त करता है। 'क्यो' शब्द यथावत् है।

क्रियाओ की रूप-रचना डाँगी के समान होती है। केवल जयपुरी की भाँति उत्तम पुरुष वहुवचन 'आँ'-अत्य होता है तथा अन्यपुरुष वहुवचन अनुनासिक नही होता यथा—

	एक०	वहु०
१	मारूँ	माराँ
२	मारै	मारो
३	मारै	मारै

यौगिक कृदत 'कै', 'कर' अथवा 'अर'-अत्य होता है जैसे 'मार-कै', 'मार-कर' या 'मार-अर'। कर्तृत्व की सज्ञा 'वालो' से समाप्त होती है उदाहरणार्थ 'रै-वालो' (एक निवासी)।

सहायक क्रियामे ब्रज तथा जयपुरी दोनो रूपो का व्यवहार होता है यथा—

ब्रज—'मैं हूँ', 'मैं हो' (वहु० पु० 'हा') (मै था)।

जयपुरी—'मैं छूँ' (मै हूँ), 'मैं छो' (वहु० पु० 'छा') (मै था)। ब्रजरूप का प्रचलन अधिक है।

सामान्य वर्तमान में सहायक क्रिया जोड कर निश्चित वर्तमान की रचना होती है जैसे 'मैं मारूँ-हूँ'। 'अइ' लगी धातु को सहायक क्रिया के भूतकालिक रूप से जोड कर अपूर्ण काल वनाया जाता है उदाहरण के लिए (एकवचन) 'मैं मारै हो', (वहुवचन) 'हम मारै हा'।

'स्' तथा 'क्' वर्ण प्राय व्यर्थ ही क्रियाओ के अन्यपुरुष से जोड दिये जाते है। ये पुराने सर्वनामो के अवशेष है यथा 'कई-अस्' (उसने कहा), 'पूछी-स्' (उसने पूछा), 'मारै-क्' (वह मार सकता है)।

व्याकरणिक रचना के एक महत्वपूर्ण पक्ष मे डाँगभाँग सभी राजस्थानी वोलियो एव गुजराती के अनुरूप है। हिंदी मे जव सकर्मक क्रिया भूतकाल मे होती है तव इसका व्यवहार कर्मवाच्य अथवा अव्यक्तिवाचक रूप मे किया जाता है यथा (कर्मवाच्य) 'उस-ने स्त्री मारी' में क्रिया ('मारी') लिग की दृष्टि से कर्म ('स्त्री') के अनुरूप है, (अव्यक्तिवाचक) 'उसने-स्त्री-को मारा' वाक्य मे क्रिया ('मारा') अव्यक्तिवाचक रूप मे प्रयुक्त होने से सदैव पुल्लिग रहती है, कर्म का लिग जो भी हो।

गुजराती के समान डाँगभाँग में जव यह अव्यक्तिवाचक प्रयोग होता है, क्रिया कर्म के लिग द्वारा प्रभावित होती है और उसके स्त्रीलिग होने पर स्त्रीलिग हो जाती है जैसे 'राजा-नैं मैंतरी-कूँ वुलाई।' यहाँ यह द्रष्टव्य है कि 'वुलाई' लिग की दृष्टि से 'मैंतरी' के अनुरूप है यद्यपि दूसरे शब्द में सम्प्रदान का चिन्ह 'कूँ' जुडा हुआ है।

'नहीं' का भाव व्यक्त करने वाला जयपुरी शब्द 'कोनी' अथवा 'को···नी' उल्लेखनीय है।

[सं० २४]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (डाँगभाँग) **(जयपुर राज्य)**

(श्री जी० मेकेलिस्टर, एम० ए०)

उदाहरण १

कोई आदमी–कै दो वेटा हा। उन-मैं-सूँ छोटा वेटा–नै ऊँ-का वाप-सूँ कई वाप पूँजी-मैं-सूँ जो मेरी पाँती आवै सो मो-कूँ दै। ऊँ-नै ऊँ-की पूँजी उन-कूँ वाँट-दी। थोडा दन पाछै छोटो वेटो सारी पूँजी ले-कै दूर परदेस-मैं चल्यो-गयो। व्हाँ जा-कर ऊँ-नैं-ऊँ-की पूँजी गैर चलण-मैं उडा-दी। ऊँ-नै सव पूँजी उडा-दी। पाछै ऊँ देस-मैं भोत-सो काल पड-गयो। जद वो कँगाल हो–गयो। वो गयो अर ऊँ देस-का रैंवाला-कै एक-कै जा-कर रयो। ऊँ-नैं ऊँ-कूँ सूर चरावा-कूँ खेतन-पै खँदायो। जो पातडा सूर खावै–हा जिन-सूँ वो पेट भरवा-कूँ राजी हो। कोई आदमी ऊँ-कूँ काँई वी नई दे-हो। जव ऊँ-कूँ ग्याँन आयो जव ऊँ-नै कई मेरा वाप-का चाकरन-कूँ रोटी घणी अर मैं भूको मरूँ-हूँ। मैं उठूँगो अर मेरा वाप कनै जाऊँगो अर ऊँ-नूँ कूँगो वाप मैं-नै सरग-को पाप कर्यो अर मैं अम्यो नै रह्यो मो तेरो वेटो कुवाऊँ। तेरा नोकरन-मैं मो-कूँ वी एक नोकर राख लै॥

[सं० २५]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

व्रजभाखा (डाँगभाँग) (जयपुर राज्य)

(श्री जी० मेकेलिस्टर, एम० ए०)

उदाहरण २

एक राजा छो नपुत्री। जो मैतरी झाड़ू काड़वा आवै–ही राजा हात मूंडो वोवै-छो। मैतरी-नै राजा-कूं देखर आप-का मूंडा-कै आडो ढोकरो लगा-लीयो। फेर राजा-नै कई अ्रस में देसपती तो राजा अर मैतरी-नै मो-कूं देखर मूंडा-कै आडो ढोकरो कसाँ लगायो। फेर मैतरी-कूं वुलाई। पूछीम मैं देसपती तो राजा। तैं-ने आडो ढोकरो क्यों लगायो मो-कूं देखर। मैतरी-नै कई माहाराज क्यों-ई नई। न्यों-ई कुसी मेरी लगा-लीयो। ऊँ-नै राजा-नै कई कै साँची कै। फेर ऊँ-नै कई कै म्हाराज म्हारो घर-को मैतर मो-कूं मारै। तुम नपुत्री हो। तुमारो मूंडो देखवा-को धरम नई। जव राजा-नै अपणा नौकरन-कूं हुकम दे–दीयोस जा-कर देखो साँच्याँ-ई-कूं भगी मारैक नई। उन-नै जार देखीस साँच्याँ-ई ऊँ मैतरी-कूं मारी। फेर उन-नै आ कयोअस मारी। जव ऊँ-नै राजा-नै देखीअस साद-सत-की वदगी करो। सो साद-सत आवै जीं-की-ई वो वदगी करै। अर रोजीना धरम पुन्न करै। अव ऊँ-कै तो वेटा-की लग्गीअस कोई दाय करर वेटा होय आपणै। आपाँ तो नपुत्री हाँ। ऊँ-को वाग मूको पड्यो-हो। एक साद-ऊँ-में आर अस्यो उतर्‌यो सो वाग हर्‌यो हो-गयो। राजा-नै ऊँ-की वदगी करी साद-की। साद कारामाँती है। सो अलवत या आपान-कूं वेटो देगो। उन-नै राजी होर कई वच्चा माँग। वचन द्यो तो माँगूं। वचन ई है। माँग। पुत्र-की चायना है मेरै। तेरा करम-में लख्या तो कोनी। जा दो पुत्र हो–ज्यायगा तेरै। वो तो साद हो रमतो। सो रम-गयो अ्रर राजा म्हलाँ आ-गयो आप-कै। ऊँ-कै नवैं महीनै पुत्र हो-गया। राजा राजी हो-गयो। ऊँ-का घरवार वस्या।

कालीमाल

कालीमाल जयपुर राज्य मे करौली की सीमाओ पर डाँगी के विलकुल दक्षिण मे डाँगी तथा डाँगभाँग के वीच वोली जाती है। इसके भापा-भाषियो की सख्या ८१,२१६ है।

यह डागभाँग से वहुत मिलती-जुलती है। 'ओ' वाली सज्ञाओ एव विशेषणो के विकृत रूप 'आ' तथा 'ए'-अत्य होते है। 'मेरा' 'म्हारो' तथा 'मेरो', 'तेरा' 'थारो' एव 'तेरो', 'तुम्हारा' 'तमारो', 'यह' 'या', 'वह','वा' या 'ऊँ' (वि० वहु० 'ऊन') तथा 'कौन '?'

'कौण' का पर्याय है। क्रियाओ का उत्तम पुरुष बहुवचन डागभाँग की भाँति और अन्य पुरुष बहुवचन डाँगी के समान बनता है।

आगे दी गयी शब्द-सूची मे कालीमाल के उदाहरण सम्मिलित है, इसलिए और उदाहरण देना अनावश्यक है। व्याकरण तथा बोली के नमूनो के लिए श्री मैकेलिस्टर की पुस्तक देखी जा सकती है।

डूँगर-वाडा

जयपुर मे 'डूँगर' 'पहाडी' को कहते है और इस तरह 'डूँगर-वाडा' से अभिप्राय 'पहाडी क्षेत्र की बोली' से है। १०८,७६६ की जनसख्या द्वारा प्रयुक्त डूँगर-वाडा डाँगी के दक्षिण-पश्चिम और कालीमाल के बिलकुल उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र मे प्रचलित है। कालीमाल से इसका वैभिन्न्य जयपुरी से अधिक प्रभावित होने के कारण है। वस्तुतः समान औचित्य के साथ इसे जयपुरी के एक रूप की भाँति वर्गीकृत किया जा सकता है। डूँगर-वाडा में कालीमाऴ के विपरीत सप्रदानकारक के लिए 'कै-ताँईं' परसर्ग का व्यवहार होता है, 'थमारो' 'तुम्हारा' तथा 'कुण' 'कौन ?' का पर्याय है, अस्तित्वसूचक क्रिया मे 'हूँ' तथा 'हो' की अपेक्षा जयपुरी रूप 'छूँ' (वर्तमान) एव 'छो' (भूत) प्रयुक्त होते हैं और क्रिया बहुवचन के साथ कभी डाँगी और कभी जयपुरी के ढँग से जुडती है।

कालीमाल के समान डूँगर-वाडा के उदाहरण भी सलग्न शब्द-सूची में सकलित है। अन्य नमूनो तथा सपूर्ण व्याकरण के लिए श्री मेकेलिस्टर की पुस्तक द्रष्टव्य है।

डाँग बोलियो के शब्दों तथा वाक्यो की प्रामाणिक सूची

हिंदी	डाँगी (करौली)	डाँगी (जयपुर) (करौली की डाँगी से भिन्न)	कालीमाल (जयपुर) (जयपुर की डाँगी से भिन्न)	डूंगर-वाडा (जयपुर) (जयपुर की डाँगी से भिन्न)	डाँगभाँग (जयपुर की डांगी से भिन्न)
१ एक	एक		.		
२ दो	दो	. .		.	.
३ तीन	तीन		.	. .	
४. चार	च्यारि	च्यार	.	.	
५. पाँच	पाँच	. . .		.	.
६ छः	छै	छुड	.	.	. .
७ सात	सात	.		. .	. . .
८. आठ	आठ	. .		. .	
९. नौ	नौ	.		.	
१०. दस	दस	. .	.	. .	.
११. बीस	बीस	. . .			. .
१२ पचास	पचास	.	. .		. .
१३. सौ	सैंका	. .	सौ	सौ	सो
१४ मैं	हूँ, हौं	मैं	मैं, हूँ	मैं, हूँ	.
१५. मेरा (of me)	मेरौ	मेरो	म्हारो	म्हारो	. .
१६ मेरा (mine)	मेरौ	मेरो	म्हारो	म्हारो	. .
१७ हम	हम	.		.	. .
१८ हमारा (of us)	हमारौ, हमरौ	हमारो		.	.
१९ हमारा (our)	हमारौ, हमरौ	हमारो		.	.
२०. तू	तू, तैं	तू	.		.
२१ तेरा (of thee)	तेरौ	तेरो	थारो	थारो	.

२२. तेरा (Thine)	तेरी	तेरो	थारो	थारो	..
२३. तुम	तुम	तम	..	..	तमू, तम, तुम
२४. तुम्हारा (of you)	तुमारी, तुमरी, तियारी	तुमरो, त्यारो	तमारो	थमारो	तुमारो
२५. तुम्हारा (your)	तुमारी, तुमरी, तियारी	तुमरो, त्यारो	तमारो	थमारो	तुमारो
२६. वह	वो	ऊ, वा, व्ह्	वा, ऊँ	वा	वो
२७. उसका (of him)	वा-की	वा-को	ऊँ-को	ऊ-को	ऊँ-को
२८. उसका (his)	वा-की	वा-को	ऊँ-को	ऊँ-को	ऊँ-को
२९. वे	वे	वे	वैं, वे	वैं	...
३०. उनका (of them)	विन-की, उन-की	उन-को	ऊन-को	ऊन-को	...
३१. उनका (their)	विन-की, उन-की	उन-को	ऊन-को	ऊन-को	.
३२ हाथ	हात्	हात्	..	...	..
३३ पैर	पाम	पाँव	पग	पग	पाँव, पग
३४ नाक	नाक	...	...	...	..
३५. आँख	आँख	...	..	...	.
३६ मुँह	मोँड्ही	मोँहरो	म्होँडो, म्हूँ	म्हूँडो	मूंडो, म्होँडो
३७ दाँत	दाँत	...	...	....	...
३८ कान	कान-	..	...	...	...
३९. बाल	रोँगटा	वाल	वार	...	.
४० सिर	मूंड	मूंड	माथो	माथो	माथो
४१. जीभ	जीभ	...	जीव	जीव	जीव
४२ पेट	पेट	...	...	...	..
४३ पीठ	पीठि	पीठ	पीठ, मँगर	मँगर	मोर
४४ लोहा	लोह, लँकर	लोह	ल्हो	ल्हो	लो
४५ सोना	सुन्नों	सोनू	सोनो	...	...
४६. चाँदी	चाँदी, रुपो	चाँदी	...	..	...
४७ पिता	दाजू, दाऊ	दाऊ	बाप, दाऊ	बाप, दादो	बाप

४८. माँ	बैयो	मैया	मा	मा, माई	मा
४९. भाई	भिआ, भैंकडी	भिआ	भाई	भाई	भाई
५०. बहन	भैंना	जीजी	भैंण, जीजी	भैंण	भैंण
५१. पुरुष	मानिख, मोट्यार	मोट्यार	आदमी, मोट्यार, मर्द		आदमी, मानस
५२ स्त्री	वैयर, वैरबानी	वैरबानी	वैरबानी		लुगाई, वैरबानी
५३. पत्नी	लुगाई, वैरबानी	भौटीया	वैरबानी, औरत	लुगाई	लुगाई, भऊ
५४. बालक	वालिक, छोटो	वालिक	बच्चा, वालक	बालक	बच्चो
५५ पुत्र	मौंडा	बेटा, छोरा, लाला	छोरो, बेटो	बेटो, छोरो	बेटो, लडको, छोरो
५६. पुत्री	मौंडी	बेटी, छोरी, लाली	छोडी, बेटी	बेटी, छोरी	बेटी, लड़की, छोरी
५७. दास	बन्दोरा	बाँदो			
५८. किसान	जोता, किसान	जिमिदार		कसान, पालती	कसान
५९. चरवाहा	भेड़ि-वारौ, छिर-वारौ	गवाल	गुवार		
६०. ईश्वर	राम-जी, ईसुर	परमेसुर	राम-जी, परमेसुर	भगवान्	राम-जी, भगवान्
६१. प्रेत	पिरेत	भूत	राँकस, भूँत, पलीत		राकस, भूत, जन्द
६२. सूर्य	सूरिज	सूरज-नारान	सूरज	सूरज	सूरज
६३ चद्रमा	चदा		चाँद	चाँद	चँदरमा, चाँद
६४. तारा	तरैंयाँ		तारो	तारो	तारो
६५. आग	आँच	आग	आगँ		आग, अग्नी, वसाँदर
६६. पानी	पान्यौं	पाणी	पानी		
६७. घर	बारिवर	घर			घर, जाग
६८. घोडा	घोरौ	घोडा	घोरो	घोडो	घोडो
६९. गाय	गैया, टाली	गायअ			
७०. कुत्ता	कूकरा	कुत्ता	कुत्तो	कूकरो	कुत्तो, गँडक
७१ बिल्ली	बिल्लो	बिलिया	बिल्ली	बलाई	बिल्याई, बलाई
७२ मुर्गा	मुर्गा	कूकरा	मुर्गो	मुर्गो	मुर्गो
७३. बत्तख	बतक				

७४ गधा	गधा	...	..	घदो	वदो
७५ ऊँट	ऊँट	...	...	...	...
७६. चिड़िया	छरेरू	चिडिया	चीड़ी	चिडी	चडी
७७ जा	जाइबी (क्रियार्थक सज्ञा Infinitive)	जा (आज्ञावाचक, एकवचन)	...	...	...
७८. खा	खाइबी	खा	...	...	..
७९. बैठ	बैठिबी	बैठ	...	...	...
८०. आ	आइबी	आ	...	...	...
८१. पीट	पीटिबी	पीट	मार	मार	मार
८२. खड़ा हो	ठैरिबी, डतिबी	ठाडे हो	ऊँबो हो	ऊबा है—जा	ऊबो हो
८३. मर	मरिबी	मर	...	...	...
८४. दे	धोइ-दैबो	दे, दइ	दे	दे	...
८५. दौड	दौरिबी, भजिबी	भज	भग, दौर	भाज	दौड, भाग
८६ ऊपर	ऊपर	ऊपर	...	...	...
८७ निकट	ढिंग	लगतो	गोड्याँ, कनै	खन्याँ	रानै, नजीक
८८. नीचे	नीचें	नीचे	नीचै	नीचै	नीचै
८९. दूर	दूरि, अलग	दूर	...	...	दूरो, दूर
९० पहले	अगारी	आगे	आगै	आगै	आगै
९१ पीछे	पिछारी	पीछे	पीछै	पाछै	पीछै, पछोकडा
९२. कौन	कौन, को	कोण	कौन	कुण	कुण
९३. क्या	का, कहा	का	काँई	काँई	काँई
९४ क्यो	क्यों	क्यों	क्यों, चूं, च्यूं	क्यों, चौं	क्यूं
९५ और	और	और, अर	और, अर	अर	और, अर
९६ लेकिन	परि	पणि	पन	पणअ	पण
९७. यदि	जौ	जै	जो	जे	जो
९८. हाँ	हाँ	हाँ	...	...	...

९९. नहीं	ना, नँ	नहीं	नइँ	नहीं	नइँ
१०० हाथ	हाइ	हायम्र	.	..	...
१०१. एक पिता	दाजू	दाऊ	वाप	बाप	वाप
१०२ एक पिता का	दाजू-कौ	दाऊ-को	..	...	..
१०३ एक पिता को	दाजू-कूँ	दाऊ-कूँ	..	..	.
१०४ एक पिता से	दाजू-सें	दाऊ-तें	वाप-सूँ	वाप-सूँ	वाप-सूँ
१०५ दो पिता	दो दाजू	दो दाऊ	...	.	..
१०६ पिता	मोट्यार,बडे,बूढे,पुरिखा	दाऊ	वाप	वाप	वाप
१०७ पिताओ का	पुरिखान-कौ	दाऊन-को	वापन-को	वापन-को	वापन-को
१०८ पिताओ को	पुरिखान-कूँ	दाऊन-कूँ	वापन-कूँ	वापन-कूँ	...
१०९ पिताओ से	पुरिखान-से	दाऊन-तें	वापन-सूँ	वापन-सूँ	.
११०. एक पुत्री	मोंडी	छोरी	.	.	..
१११ एक पुत्री का	...	...	..	..	..
११२ एक पुत्री को	..	...	...	..	...
११३ एक पुत्री से	..	.	...	...	.
११४ दो पुत्रियाँ	..	..	..	...	
११५ पुत्रियाँ	भीत मोंडी	छोरी	..	...	छोरी, छोर्‌याँ
११६ पुत्रियो का	मोंडीन-कौ	छोरीन-को	...	...	..
११७ पुत्रियो को	..	...	...	...	...
११८ पुत्रियो से	...	..	..		
११९ एक भला पुरुष	एक चोखो मनिख	एक भलो आदमी	...	एक चोखो आदमी	एक आछ्यो आदमी
१२०. एक भले पुरुष का	एक चोखे मनिख-कौ	एक भला आदमी-को	..	एक चोखा आदमी-को	एक आछ्या आदमी-को
१२१ एक भले पुरुष को	...	...	...	...	...
१२२ एक भले पुरुष से	...	...	.	...	...
१२३. दो भले पुरुष	...	...	..	...	...
१२४ भले पुरुष	मुकते-ऊ चोखे मनिख	भले आदमी	भला आदमी	चोखा आदमी	भला आदमी

१२५. भले पुरुषों का	...	...	...	...	...
१२६. भले पुरुषो को	...	...	...	...	...
१२७ भले पुरुषो से	. :	...	...	.	...
१२८. एक भली स्त्री	एक चोखी वैरबानी	एक भली वैरबानी	...	एक चोखी वैरबानी	एक आछी लुगाई
१२९. एक बुरा लडका	एक वण्ड मोंडा	एक बुरो छोरा	एक बुरो छोरो	एक बरो छोरो	एक बुरो छोरो
१३०. भली स्त्रियाँ	मुकती चोखी वैरबानी	भली वैरबानी	...	चोखी वैरबानी	आछी लुगायाँ
१३१ एक बुरी लडकी	एक बुरी मोंडी	एक बुरी छोरी	.	एक बरी छोरी	.
१३२. अच्छा	मलूक, चोको	आछ्यो, भलो	चोको, आछ्यो	चोखो, आछ्यो	
१३३. बेहतर	..	.	...	.	
१३४ सबसे अच्छा	.	...	:	.	.
१३५. ऊँचा	ऊँची	ऊँचो	...	.	.
१३६ उच्चतर	:	:	...	..	.
१३७. उच्चतम	.	.	...	.	.
१३८ एक घोडा	घोरी	घोडा	घोरो	घोडो	घोडो
१३९. एक घोडी	घोरी	घोडी	.	घोडो	घोडो
१४०. घोडे	मुकते घोरे	घोडा	.	.	
१४१. घोडियाँ	मुकती-ऊ घोरी	घोडी	...	...	घोड्याँ
१४२. एक साँड	अकेला	बिजार	आँको	नारो	आँको
१४३. एक गाय	गाय, टाली	गायअ	...	...	
१४४. कई साँड	मुकते-ऊ बिजार, अकेला	बिजार	आँका	नारा	आँका
१४५. गाये	मुकती-ऊ गाय, टाली	गायअ	.		गायाँ
१४६. एक कुत्ता	कूकरा	कुत्ता	कुत्तो	कूकरो	कुत्तो
१४७. एक कुतिया	कुतीया	...	कुत्ती	कूकरी	कुत्ती
१४८ कुत्ते	मुकते-ऊ कूकरा	कुत्ता	...	कूकरा	...
१४९. कई कुतियाँ	मुकती-ऊ कुतिया	कुत्तीया	कुत्ती	कूकरी	कुत्ती

१५०. बकरा	बोक	बकरा	बकरो	वाकरो	बकरो
१५१. बकरी	बोकरी	बकरिया	बकरी, छेरी	वाकरी	छेली
१५२. बकरे	बोकरा	बकरा	बकरा-बकरी	वाकरा	बकरा-बकरी
१५३. हिरन	हिन्न	हिरन	..	...	हरन
१५४ हिरनी	हिन्नीयाँ	हिरनी	.		हरनी
१५५ कई हिरन	हिन्न	हिरन	..	.	हरन
१५६. मैं हूँ	हूँ हूँ	मैं हूँ	..	हूँ छूँ ..	मैं हूँ, छूँ
१५७ तू है	तू है	तू है	...	तू छै	तू है, छै
१५८. वह है	वो है	ऊ है	...	वा छै	वो है, छै
१५९ हम हैं	हम हैं	...	हम हाँ	हम छाँ	हम हाँ, छाँ
१६०. तुम हो	तुम हौ	तम हो	...	तम छो	तुम हो, छो
१६१ वे हैं	वे हैं	...	..	वे छैं, छै	वे हैं, छै
१६२ मैं था	मैं हौ	मैं हो, हत्यो	मैं हो	हूँ छो	मैं हो, छो
१६३. तू था	तू हौ	तू हो, हत्यो	तू हो	तू छो	तू हो, छो
१६४ वह था	वो हौ	ऊ हो, हत्यो	वा हो	वा छो	वा हो, छो
१६५. हम थे	हम हे	हम हे, हत्ते	हम हा	हम छा	हम हा, छा
१६६ तुम थे	तुम हे	तम हे, हत्ते	तम हा	तम छा	तुम हा, छा
१६७ वे थे	वे हे	वे हे, हत्ते	वै हा	वै छा	वे हा, छा
१६८. हो	हो	हो	हो	है	हो
१६९ होना	होइबौ	हैवो	होबो	हैवो	होवो
१७०. होते हुए	होतौ	हत्यो	होतो	हैतो (भूत० कृ० 'हे ओ')	होतो
१७१ होने पर	है–कैं	हइर	होर	...	होर
१७२ मैं हो सकता हूँ	...	...	..	..	..
१७३ मैं होऊँगा	हूँ हाऊँगो	मैं हूँगो	मैं होऊँगो	हूँ हूँगो	..
१७४ मुझे होना चाहिए	...	...	...	...	...

१७५ पीट	पीट	पीट	मार	मार	मार
१७६. पीटना	पीटिवौ	पीटबो	मारबो	मारबो	मारबो
१७७ पीट रहा	पीटतौ	पीटतो	मारतो	मारतो	मारतो
१७८. पीट कर	पीटि-कैं	पीटर	मारर	मारर	मारर, मार-कर
१७९ मै पीटूं	हूँ पीटूं	मैं पीटूं	मैं मारूँ (तथा अन्य)	हूँ मारूँ (तथा अन्य)	मैं मारूँ
१८०. तू पीटे	तू पीटै	तू पीटै	...	.	तू मारै
१८१ वह पीटता हे	वो पीटै	ऊ पीटै	...		वो मारै
१८२ हम पीटे	हम पीटैं	हम पीटैं	हम माराँ	हम मारैं या माराँ	हम माराँ
१८३. तुम पीटो	तुम पीटौ	तम पीटो	..	तम मारो	तुम मारो
१८४ वे पीटें	वे पीटैं	वे पीटैं	.	वै मारैं, मारै	वे मारै
१८५ मैंने पीटा (भूतकाल)	मैं-नैं पीट्यौ	मैं-ने पीट्यो	मैं-नै मार्यो (तथा अन्य)	मैं-नै मार्यो (तथा अन्य)	मैं मार्यो
१८६. तूने पीटा (भूतकाल)	तैं-नैं-पीट्यौ	तैं-ने पीट्यो	.		तू मार्यो
१८७ उसने पीटा (भूतकाल)	वा-नैं पीट्यौ	वा-ने पीट्यो	.	..	वो मार्यो
१८८. हमने पीटा (भूतकाल)	हमन-नैं पीट्यौ	हमन-ने पीट्यो	..		हम मार्यो
१८९ तुमने पीटा (भूतकाल)	तुमन-नैं पीट्यौ	तम-ने पीट्यो		..	तुम मार्यो
१९०. उन्होंने पीटा (भूतकाल)	विन-नैं पीट्यौ	उन-ने पीट्यो		.	वे मार्यो
१९१. मै पीट रहा हूँ	हूँ पीटूं-हूँ	मैं पीटूं-हूँ	मैं मारूँ-हूँ	हूँ-मारूँ-हूँ	मैं मारूँ-हूँ
१९२. मै पीट रहा था	हूँ पीटि रह्यौ-ही	मैं पीटै-हो	मैं मारै-हो	हूँ मारै-छो	मैं मारै-हो
१९३. मैंने पीटा था	मैं-नैं पीट्यौ-ही	मैं-ने पीट्यो-हो	मैं-नै मार्यो-हो	मैं-नै मार्यो-छो	मैं-नै मार्यो-हो
१९४. मै पीटूं	हूँ पीटूं	मैं पीटूं	मैं मारूँ	हूँ मारूँ	मैं मारूँ

१९५ मै पीटूंगा	में पीटूंगो	मैं पीटूंगो	मैं मारूँगो (तथा अन्य)	हूँ मारूँगो (तथा अन्य)	मैं मारूँगो
१९६ तू पीटेगा	तू पीटैंगो	तू पीटैंगो		...	तू मारैंगो
१९७ वह पीटेगा	वो पीटैंगो	ऊ पीटैंगो		...	वो मारैंगो
१९८. हम पीटेंगे	हम पीटैंगे	हम पीटैंगे	हम मारांगा	हम मारांगा	हम मारांगा
१९९ तुम पीटोगे	तुम पीटौगे	तम पीटोगे	तम मारोगा	तम मारोगा	तुम मारोगा
२०० वे पीटेंगे	वे पीटैंगे	वे पीटैंगे	वै मारैंगा	वै मारैंगा	वे मारैंगा
२०१ मुझे पीटना चाहिए	.	.			
२०२ मै पिटा हूँ	में पीट्यौ जाऊँ-हूँ	मैंपीट्यो (या पिट्यो) हूँ	मैं पिट्यो हूँ	हूँ पट्यो-छूँ	मैं पट्यो-हूँ
२०३ मै पिटा था	हूँ पीट्यौ	मैं पीट्यो (या पिट्यो) हो	मैं पिट्यो हो	हूँ पट्यो छो	मैं पट्यो-हो
२०४ मै पिटूंगा	हूँ पीट्यौ जाऊँगौ	मैं पिटूंगो		हूँ पटूंगो	मैं पटूंगो
२०५ मै जाऊँ	हूँ डिगूँ, जाऊँ	मैं जाऊँ		हूँ जाऊँ	
२०६. तू जाए	तू डिगै, जाग्रइ	तू जायग्र	तू ज्या-है	तू ज्या-छै	तू जावै
२०७ वह जाता है	वो डिगै, जाग्रइ	ऊ जायग्र	वा ज्या-है	वा ज्या-छै	वो जावै
२०८. हम जाएँ	हम डिगैं, जाएँ	हम जाँयग्र	हम जावां	हम जावा	हम जावां
२०९ तुम जाओ	तुम डिगौ, जाग्रउ	तम जावो	तम जावो	तम जावो	तुम जावो
२१०. वे जाएँ	वे डिगैं, जाएँ	वे जाँयग्र	वै जावैं	वै ज्यां	वे जावै
२११. मै गया	हूँ गयौ	मैं गयो			
२१२. तू गया	तू गयौ	तू गयो	..		
२१३ वह गया	वो गयौ	ऊ गयो	.	. .	.
२१४ हम गये	हम गये		हम गया	हम गयग्र	हम गया
२१५ तुम गये	तुम गये	तम गये	तम गया	तम गया	तुम गया
२१६ वे गये	वे गये	वे गये	वै गया	वै गया	वे गया
२१७ जाओ	जा	जा	.	.	जा

२१८ जा रहा	जातौ	जातो	...	..	जातो
२१९ गया	गयौ	गयो	..	.	गयो
२२०. तुम्हारा क्या नाम है ?	तियारौ का नाम है ?	तेरो का नाँव है ?	तमारो काँईं नाँव है ?	थारो काँईं नाँव छै ?	तुमारो काँईं नाँव है ?
२२१. इस घोडे की आयु क्या है ?	ये घोरौ कितेक दिनन-कौ है ?	ई घोडा कितेक दिनान-को है ?	या घोडो कतेक बरसन-को है ?	या घोडो कतेक दनाँ-को छै ?	यो घोडो के बरस-को हे ?
२२२. यहाँ से काश्मीर कितनी दूर है ?	ह्राँ-सूँ कश्मीर कितेक परै ?	ह्याँ-ते कस्मीर कितेक दूर है ?	कस्मीर न्याँ-सूँ कितेक दूर है ?	ह्याँ-सूँ कस्मीर कतेक दूर छै ?	कस्मीर-न्ह्याँ-सूँ कत्ती दूर है ?
२२३. तुम्हारे पिता के घर मे कितने पुत्र है ?	तियारे दाजू-कीं बाखरी-में कितेक मोंडा है ?	त्यारे दाऊ-के घर में कितेक बेटा हैं ?	तमारे बाप-के घर-मैं कितेक बेटा है ?	तमारा बाप-का घर मैं कतेक बेटा छै ?	तुमारा बाप-का घर में के बेटा हैं ?
२२४ आज मै बहुत दूर चला हूँ।	आजि हूँ निरी दूरि डिग्यो -हूँ ।	आज में भौत दूर 'चल्यो-हूँ।	आज मै भौत चल्यो हूँ।	आज हूँ घणी दूर चल्यो-छूँ।	आज मैं भोत दूर चल्यो-हूँ।
२२५. मेरे चाचा के बेटे का व्याह उसकी बहन से हुआ है।	मेरे काका-की मोंडा वा-की भैंना-कूँ व्याह्यौ-है ।	मेरे काका-के वेटा-को भ्याव वा-की भैंण-ते हुयो-है।	मेरे काका-का बेटाँ-को भ्याव वा-की भैंण-सूँ हुयो-है।	म्हारा काका-का वेटा-को भ्याव ऊन-की भैंण-सूँ हीओ-छै।	मेरा काका-को बेटो ऊँ-की भैंण-कूँ परण्यूँ है।
२२६ सफेद घोडे की जीन घर मे है।	धौरे घोडे-की पलैंचा बाखरी-में है।	धौले घोडा-की जीन घर-में है।	सुफेद घोडा-की जीन घर-मैं हे।	धौला घोडा की जीन घर-मे छै।	धोला घोडा की जीन घर-में है।
२२७ उसकी पीठ पर जीन कस दो।	वा-की पीठि-पै पलैंचा घालि-दे ।	जीन वा-की पीठ-पै धरो।	जीन वा-की पीठ -पै धर-दै।	जीन ऊँ-का माँगरन-पै धर-द्यो।	ऊँ-की पीठ-पर जीन करो।
२२८ मैंने उसके बेटे को कोडो से बहुत पीटा है।	मैं-नैं वा के मोंडा-कैं कितेकउ कोर्रा मारे	मैं-ने वा-के बेटा-कूँ भौत कोरडान्-ते पीट्यो-है।	मैं-ने वा-के वेटा-कूँ भौत कोरडान्-सूँ मार्यो-है।	मैं ने ऊँ-का वेटा-कूँ घणा कोरणान्-सूँ मार्यो-छै।	मैं-नै ऊँ-का वेटा-कूँ भोत कोरडान्-सूँ मार्यो-है।
२२९ वह पहाडी के ऊपर मवेशियो को चरा रहा है।	डाँगरीया-पै वो ढोर चराय-रह्यौ-है।	ऊ पाहाड-के ऊपर ढोर चरावै-है।	वा डौंगर-कै उपर ढोर चरा-रो-है।	वा डूंगर-कै ऊपर, ढाँडा चरावै-छै।	वो डूंगर-का माथा-पर ढाँडा चरार्‌यो-है।

२३० वह उस पेड के नीचे एक घोडे पर बैठा है।	रूख-के नीचे वो घोरे-पै वैठ्यो-है।	वा रूख-के नीचे ऊ घोडा-पर बैठ्यो-है।	वा रूँख-कै नीचै वा घोडा-पै वैठ्यो-है।	वा ऊँ रूँखरा-कै नीचै घोडा-पै वैठ्यो-छै।	वो ऊँ रोंखडा नीचै। घोडा-पर वैठ्यो-है।
२३१. उसका भाई उसकी बहन से लवा है।	वा-की भैंकरी वा-की भैंना-से ऊँचौ हे	वा-को भाई वा-की भैण-ते लवो है।	वा-को भाई वा-की भैण-सूँ लवो है।	ऊँ-को भाई ऊँ-की भैण-सूँ लांबो छै।	ऊँ-को भाई-ऊँ-की भैंण-सूँ लमवो-है।
२३२ उसका मूल्य ढाई रूपया है।	वा-की मोल अढाई रुपैया है।	वा-को मोल ढाई रुपिया हैं।	वा-को मोल ढाइ रिप्या -हैं।	ऊँ-को मोल ढाई रिप्या छै।	ऊँ-का मोल ढाई रिप्या है।
२३३ मेरेपिता उस छोटे घर में रहते है।	मेरी दाजू वा ल्हौंगी वाखरी-में है।	मेरो दाऊ वा ल्होडे घर-में रहै-है।	मेरो वाप वा छोटे घर-मैं रहै-है।	म्हारो वाप ऊँ ल्होड-या घर-में रहै-छै।	मेरो वाप ऊँ छोटा घर-में रै-है।
२३४. यह रुपया उसको दे दें।	या रुपैया-इ वा-कूँ घो-घालि।	या रुपिया वा-कूँ दै-दै।	या रिप्यो वा-कूँ द्यो	या रिप्यो ऊँ-कै ताँईं दे-दै।	यो रिप्यो ऊँ-कूँ मोंगो
२३५. वे रुपये उससे ले लो।	विन रुपैयान-नैं वा-पै-से लै-लै।	वे रुपिया वा-पै-ते लै-लेवो।	वै रिप्या वा-सूँ ल्यो।	वै रिप्या ऊँ-सूँ ले-ल्यो।	वै रिप्या ऊँ-मूँ ल्यो।
२३६ उसको खूब पीटो और रस्सियो से बांध दो।	वा-कूँ जेवरा-से वांधौ और खूब पीटौ।	वायअ खूब पीटो अर वायअ जेवडान-ते वांधो।	वा-कूँ खूब मारो अर रस्सीन-सूँ वान्द्यो।	ऊँ-कै-ताँईं खूब मारो अर जेवरान-सूँ बांध-द्यो।	ऊँ-कूँ खूब मारो अर जेवडान-सूँ बाँदो।
२३७ कुएँ से पानी खीचो	कूआँ-से पान्यौं खैंचौ	कूवा-मैं-ते पाणी ऐंचो	कुवा-सूँ पानी काड-लै।	कुवा-मैं-मूँ पाणी काडो।	कूवा-सूँ पाणी भरो।
२३८ मेरे पहले चलो।	मेरे आगे डिगि।	मेरे आघैं चलो।	मेरे आगै चल।	म्हारै आगैं चालो।	मेरै आगै चलो।
२३९. तुम्हारे पीछे किसका लड़का आता है?	तुमारे पिछारी कौन-को मौंडा आवै-है?	कोण-को छोरा त्यारे पीछैं आवै-है?	तेरे पिछारी कौंन-को छोरा आवै-हे?	कुण-को छोरो थमारै पाछै आवै-छै?	तुमारैपाछो कडै कुण-को लडको आवै-हे?
२४० तुमने वह किससे खरीदा?	तुमन-नैं वा-कूँ कौन-पै-से मोल लीनौं?	कोण-पै-ते तम-ने ऊ मोल लीयो?	तम-नैं वा कौंन-सूँ मोल-लीनू?	तम-नै वा कुण-सूँ मोल-लीयो?	तुम-नै वो कुण-सूँ मोल-लीयो?
२४१ गाँव के एक दूकानदार से।	गाम-के एक वनिया-से।	गाँव-के एक दुकान-वाले पै-ते।	गाँव-का एक वणियाँ-सूँ।	गाँव का एक दुका-न्दार-सूँ।	गाँव-का एक दुका-न्दार-मूँ।

कनौजी

कनौज नगर फरुखावाद जिले की दक्षिण-पूर्वी मीमा पर स्थित है। यहाँ की बोली कनौजी का प्रामाणिक रूप समझी जा सकती है। इसकी व्याकरणिक रूपरेखा पीछे दी जा चुकी है।

अव तक यह समझा जाता रहा है कि फरुखावाद के उत्तर-पश्चिमी छोर पर ब्रज-भाखा अथवा अतर्वेदी का प्रचलन है लेकिन यह ग़लत है। जैसा कि आगे स्पष्ट हो जायगा, कनौजी इस पूरे जिले मे वोली जाती है। फरुखावाद मे कनौजी के भाषा-भाषियो की सख्या ७१२,५०० है। स्थानीय अधिकारियो ने इसका विभाजन इस प्रकार किया है—

अतर्वेदी	६७८,९००
'हिन्दी'	३३,६००
कुल योग	७१२,५००

यह दोनो रूप कनौजी के ही है।

[सं० १]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी **(फ़रुखावाद जिले के पूर्व में)**

एक जने-के दोए लड़िका हते। उनमें-से छोटे-ने वाप-से कही कि हे पिता मालुको हींसा जो हमारो चाहिए सो देओ। तव उन-ने मालु उन्हें वाँट-दओ। औरू थोरे दिनन पीछे छोटे लडिका-ने सव कुछ इकट्ठा करि-के एक दूरि-के देस-को चलो-गओ औरू हुआँ अपनो मालु वुरे चलन-में उडाओ। औरू जव सव खरच कर-चुको उस मुल्क-में वडो अकालु परो औरू वहु कगाल हुइ-गओ। तव उस मुल्क-के एक रईस-के हियाँ लगि-गओ। उन-ने उसे अपने खेतन-में सूअर चरइवे-को पठओ। औरू उसे चाह हती कि उन वकलन-से जो सूअर खात-हैं अपने पेटु भरैं कि कोई-उसे-देत-नाईं-हतो। तव होसु-में आय-के कहन लगो कि हमारे वापु-के कितने मजूरन-को रोटी वहुत है औरू हम भूखों मरत हैं। मैं उठ-के अपने वापु-के तीर जैहों औरू उन-से कैहों कि पिता हम-ने दैव-को औरू तुम्हारो दोख करो है औरू अव इस लाइक नाहीं कि फिरि तुम्हारे वेटा कहावैं। हमैं अपने मजूरन-में से

एक-की वरोवर वनाओ। तव उठि-के अपने वाप-के तीर चलो। औरु वे अभै दूर हते कि उसै देखिके वापु-काँ दया लगी औरु दौरि-के उस-काँ गरे लगाय-लओ औरु चूमो। वेटा-ने उस-से कही कि हे पिता मैं-ने दैव-को औरु तुम्हारो पापु करो औरु अव इस लाइक नाहीं कि फिरि तुम्हारो लडिका कहाऊँ। वाप-ने अपने नौकरन-से कही कि अच्छी-से अच्छी पोशाक निकास-लावौ औरु इस-काँ पहिरावौ औरु हम-सव-खायँ औरु खुसी मनावैं। काहे-से कि हमारो यहु लडिका मरो-हतो सो अव जिओ है। खुइ-गओ-हतो अव मिलि गओ-है। तव वे खुसी करन लागे॥

उस-को वडो लडिका खेत-मैं हतो। जव घर-के नगीच आवो औरु गैवो औरु नाचिवो सुनो तव एक नौकर-को वुलाय-के पूछी कि यी का है। उस-ने उस-से कही कि तुम्हारो भाई आवो-है औरु तुम्हारे वापु-ने वडी जेओनार करी-है काहे-से कि उसै भलो चगा पाओ। उस-ने रिसाय-के भीतर जानो नाहीं चाहो। तव उस-के वापु-ने वाहिर आय-के वहि-काँ मनाओ। उहि-ने वापु-से कही देखा इतनी वरसन-से हम तुम्हारी सेवा करत-हैं औरु कव-हूँ तुम्हारे अगिया-की वहिर नाहीं चलत-हैं। परतु तुमने-कव-हूँ एक वकरी-को वच्चा हमें नाही दओ कि हम अपने मिलापिन-के सग खुसी मनाते। औरु जव तुम्हारो यहु लड़िका आवो जिन-ने तुम्हारो मालु पतुरिअन-मैं उडाओ तुम-ने उहि-की वडी जेओनार करी। उहि-ने उस-से कही अरे वेटा तुम सदा हमारे तीर रहे औरु जो कुछ हमारो है सो तेरो-ई है। पर खुसी मनइवो औरु राजी होइवो चाहिए काहे-से कि तुम्हारो यहु भाई मरो-हतो सो जिओ-है औरु खुइ-गओ-हतो सो अव मिलो है॥

फरुखावाद के उत्तर-पश्चिमी भागो मे भी कनौजी का प्रचलन है— अतर्वेदी या व्रजभाखा का नही, जैसा कि अव तक समझा जाता रहा है। यह निम्नलिखित उदाहरण से प्रमाणित हो जायगा। इसकी भाषा पूर्ववर्ती नमूने के तत्स्थानी अश के समान है।

[स० २.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी **(फरुखावाद जिले के पश्चिम में)**

एक मनई-के दोए लडिका हते। छोटे लडिका-ने वाप-सन कही कि हमारे हींसा-को वाँटु करि देओ। वाप-ने उस-को हींसा वाँटि दओ। थोडे दिन पाछे छोटे लडिका-ने अपनो सव वनु इकट्ठो करि-के परदेस निकसि-गओ। हुआँ सवरो माल-टाल खोंटे राह-माँ उडाय-दओ। जव सव खर्च हुइ-गओ तव उस देस-माँ अकाल पडो औरु वहु भूखन मरन लगो॥

इटावा की कनौजी (पछरूआ)

इटावा ज़िले के अधिकाश भाग मे कनौजी का प्रचलन है। केवल दक्षिण तथा चवल एव यमुना के दोआव मे वुंदेली के भदौरी रूप का व्यवहार होता है। इटावा के उत्तर-पश्चिम मे मैनपुरी ज़िला है जहाँ व्रजभाखा अथवा अतर्वेदी वोली जाती है। इसके उत्तर मे फरुखावाद है और पूर्व में कानपुर। दोनो ही स्थानो पर कनौजी प्रचलित है। इटावा की कनौजी पर व्रजभाखा तथा भदौरी के प्रभाव-चिह्न दृष्टिगत होते है किन्तु सामान्यत यह वहुत-कुछ शुद्ध है।

इस ज़िले की भाषाओ की मूल प्रारभिक सूची मे कनौजी को अतर्वेदी वतलाया गया है। यह गलत है। परवर्ती नमूनो के निरीक्षण के वाद इसको कनौजी मानने मे कोई सदेह नही रहेगा।

इटावा ज़िला सेनगर नदी द्वारा लगभग दो समान भागो मे विभक्त हो गया है जिसका उत्तर-पश्चिम तथा दक्षिण-पूर्व मे वहाव यमुना के अनुरूप है। इस प्रकार यहाँ (चवल-यमुना दोआव के अतिरिक्त) दो प्रमुख क्षेत्र हैं, सेनगर एव यमुना के वीच दक्षिण-पश्चिमी तथा सेनगर के आगे उत्तर-पूर्वी। दूसरे भूभाग का स्थानीय नाम 'पछार' है। स्थानीय अधिकारी 'पछार' की 'पछरूआ' कनौजी और शेष ज़िले की वोली मे भेद करते हैं। विना नाम वाले दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र की कनौजी की अपेक्षा 'पछरूआ' पर व्रजभाखा का कुछ अधिक और भदौरी का कुछ कम प्रभाव पडा है।

कनौजी के इन दोनो रूपो के भाषा-भाषियो की अनुमानित सख्या निम्नलिखित है—

पछरूआ	२५०,०००
दक्षिण-पश्चिम की कनौजी	१०१,०००
कुल-योग	३५१,०००

सन् १८९१ में ज़िले की कुल जनसंख्या ७२७,६२९ थी। यह सख्या मुख्यत. भदौरी के ५५,००० और उर्दू के तथाकथित २८५,००० भाषा-भाषियो से मिल कर वनी है। वाद की सख्याएँ कुछ अनावश्यक ऊँचा अनुमान प्रतीत होती है किंतु और सही आँकडे उपलब्ध नही है। अव कनौजी के दोनो रूपो के नमूने प्रस्तुत किये जाते हैं।

पछरूआ के उदाहरण में वहुत कम स्थानीय विशेषताएँ है। कर्म-सप्रदान के चिन्ह स्वरूप 'कें', 'कों', तथा 'कों' मिलते है और कर्ता के लिए 'ने' तथा 'नें' (भदौरी)। यौगिक कृदत का चिन्ह 'कें' है जो भदौरी में भी विद्यमान है। 'हैं' (वे थे) के लिए यहाँ 'ऐं' प्रयुक्त होता है जो वस्तुत. व्रजभाखा से सवद्ध है। तृतीय पुरुषवाचक सर्वनाम 'वू' तथा एक विकृत रूप 'वा' अथवा 'वा' (भदौरी) है। यहाँ व्यजन के पूर्ववर्ती 'र्'

के विलोप की भी प्रवृत्ति है जो भदौरी की प्रमुख विशेषता है यथा 'खर्च' के लिए 'खच्चु', 'परदेस' के लिए 'पद्देस'। 'यहाँ' अर्थ का द्योतक 'जुआँ' शब्द द्रष्टव्य है।

[सं० ३.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (पछरूआ) (जिला इटावा)

एक मनई-कें दुइ लरिका हते। उन-मैं-तैं छोटे-ने बाप-तें कही एबाप धन-मैं-त्ते जो हमारो हींसा होय सो हमें दै-देउ। तब वा-ने वा-कों अपनो धनु बाँटि-दओ। कछु बहुत दिन नाहीं भये-ऐं की छोटो लरिका सब कछु जोरि-बटोरि-कें पद्देस निकरि-गओ और जुआँ लच्चई-में दिन काटत अपनो बनु उडाय-भडाय दओ। जब वा-को सब खच्चु हुय-चुको औरू वा देस-में बडो भारी अकालु परो औ वू कगालु हुइ-गओ तब वू जाय-कें वा मुलिक-के रहैय्यन-मैं-तैं एक-के हियाँ रहन लगो जा-नैं वा-कों अपने खत-में सूअर चरैवे-कों पठओ॥

दक्षिण-पश्चिमी इटावा की कनौजी

इटावा के दक्षिण-पश्चिम मे प्रचलित बोली और पछरूआ मे बहुत ही कम अतर है। यहाँ भदौरी का प्रभाव कुछ अधिक है। इसी कारण तृतीय पुरुषवाचक सर्वनाम के विकृत रूप के लिए 'वा' की अपेक्षा 'वा' का प्रयोग होता है। इसी प्रभावस्वरूप कर्ता के लिए 'वाह' के साथ-साथ 'वा' (भदौरी 'वा') का भी प्रचलन है। भूतकाल में अकर्मक क्रिया के कर्म के लिए कर्ताकारक का व्यवहार भी द्रष्टव्य है। इस स्थिति में क्रिया अव्यक्तिवाचक रूप मे प्रयुक्त होती है। जैसे 'ओछे लडका-ने चलो'। प्रामाणिक हिन्दी के नियमो के बिलकुल विरुद्ध होने पर भी इस क्षेत्र मे ऐसा प्रयोग सामान्य है। यह एक बहुत पुराने भाषागत रूप के सुरक्षित रहने का उदाहरण है। इससे सस्कृत 'तेन चलितम्' तुलनीय है।

[सं० ४.]

भारतीय आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (जिला इटावा का दक्षिण-पश्चिम)

कोई आदमी - के दो लड़का हते। दोऊ-मैं-से नन्हे-ने बाप-से कही कि अरे बाप रूपया-पैसा-मैं-से जो मेरो हींसा होय सो मो-कों देओ। तब वा-कों हींसा रूपया पैसा

बाँट दओ। थोरे दिन भये कि ओछे लडका-ने सब चीजें जोर-कर परदेस चलो और हुआँ बुरे काम रोज रोज करत रहो। और रूपया पैसा अपनो खोय दओ। जब वा-ने सब कौडी पैसा खोय दओ तब परदेस-में भारी काल परो और वह गरीब हुइ-गयो। और वह जाय-के हुअन -के आदमियों-में-से एक-के हियाँ रहन लगो जने वा-को अपने खेतों-में सूअर चराइवे-को पठओ। और वा उन कोंसों-को जो सूअर खात-हते आपौ खायौ चाहत-हतौ और कोऊ वा-कों कुछ नहीं देत-हतो ।।

हरदोई की कनौजी

फरुखाबाद जिले के निकट गगा के पार हरदोई है। यह अवध का एकमात्र पश्चिमी जिला है जहाँ अवधी नही बोली जाती। यहाँ प्रत्येक स्थान मे कनौजी का प्रचलन है। यद्यपि स्थानीय अधिकारियो द्वारा यहाँ बोली के तीन या चार गौण प्रकार बतलाये गये हैं लेकिन वस्तुत अतर अवधी के उस परिमाण में है जिसके साथ कनौजी का मिश्रण हुआ है।

हरदोई मे कनौजी-भाषियो की अनुमानित सख्या १,०३०,५०० है। इस ज़िले के पूर्व मे उन्नाव एव लखनऊ है और उत्तर में सीतापुर तथा खेरी। इन सभी मे अवधी का प्रचलन है, अत. स्थानीय कनौजी पर उसका कुछ-न-कुछ प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। स्थान के अनुसार प्रभाव मे अतर हो जाता है लेकिन यह सामान्यतः मात्रा मे बहुत कम है। केवल जिले के बिलकुल पूर्व की सडीला तहसील तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्र मे प्रभाव अवश्य ही अत्यंत तीव्र है जिससे एक मिश्रित बोली विकसित हो गयी है। हरदोई मे व्यवहृत कनौजी के दोनो रूपो के व्यवहारकर्ताओ की अनुमानित सख्या निम्नलिखित है—

अवधी के किंचित् मिश्रणसहित प्रामाणिक कनौजी	८८०,५००
सडीला की मिश्रित बोली	१५०,०००
कुल योग	१,०३०,५००

सडीला की मिश्रित बोली पर अन्य मिश्रित बोलियो के साथ आगे विचार किया जायगा। यहाँ शेष ज़िले की कनौजी का विवरण ही अभिप्रेत है। नमूने के रूप मे अपव्ययी पुत्र-कथा का एक अश प्रस्तुत है जिससे ज़िले के मध्य तथा दक्षिण की बोली के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। इसका स्थानीय नाम 'बनग्रही' है। यह नाम 'बनगर' परगने के नाम पर पडा है जहाँ इसका प्रचलन है। ज़िले के दूसरे भागो की बोलियो के उदाहरण अनावश्यक हैं।

यहाँ अवधी के प्रभावस्वरूप दुर्बल पुल्लिग सज्ञाओ के विशेष कनौजी अत्य 'उ' का यदा-कदा प्रयोग एव 'सो' (कि) के विकृत रूप की तरह 'तेहि' तथा अविकरण 'पर-देसइ' (अवधी 'पर-देसहि') का व्यवहार होता है।

इसी प्रकार व्यजनात शब्द में 'इ' वर्ण के जुड़ने का ढग भी द्रष्टव्य है जैसे 'खुसामदि' (खुशामद)। यह योग कानपुर तथा गगा के कनौजी-भाषी उत्तरी क्षेत्र में सामान्य है।

[सं० ५.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (ज़िला हरदोई का मध्य तथा दक्षिण-पश्चिम)

एक आदमी-के दुइ लरिका हते। तेहि-माँ-ते जो छोटो लरिका हतो सो अपने वाप-पर कहन लागो कि जो कुछु रुपया हमारे हींसा-को होइ सो वाँटि देउ। तव वाप-ने वहि-के हींसा-को रुपया वाँटि दओ। तव छोटो लरिका अपनो हींसा लेइ-के परदेसइ चलो-गओ औ।र हुआँ सव रुपया कुचाल-में उड़ाइ दओ। और जव वनाइ-के खरखीन हुइ-गओ तव कुछु दिनन-के पीछू वहि देस-माँ अकाल परो। तव वहु केहु वडे अमीर-के दुआरे गओ। तव वहि-ने वहि-का खेतन-माँ सुअरी चरैवे-पर करि दओ। जव वहु हुअ-ऊँ व्याकुल भओ तव फिरि अपने घर लौट आओ और अपने वाप-की खुसामदि करी और कहन लागो कि हमारी खता माफु करो। तव वाप आनद हुइ-गओ और कसूर माफु करि-दओ॥

शाहजहाँपुर की कनौजी

रुहेलखंड प्रदेश मे हरदोई तथा खेरी ज़िलो के पश्चिम मे शाहजहाँपुर जिला है। सामान्यत यह कहा जाता है कि इस प्रदेश की अपनी अलग वोली है लेकिन यह गलत है। रुहेलखड के पूर्वी भाग मे कनौजी, पश्चिमी में हिंदोस्तानी तथा अन्यत्र व्रजभाखा प्रचलित है।

निम्नलिखित नमूने से स्पष्ट हो जाता है कि शाहजहाँपुर की वोली सामान्य प्रामाणिक कनौजी है। यहाँ की स्थानीय विशेषताएँ वहुत ही कम है। कारक परसर्गो के स्थानीय रूपो की तरह कर्म सप्रदान के चिन्ह 'का', कर्ता के चिन्ह 'नें' तथा अधिकरण के चिन्ह 'माँ' अथवा 'महियाँ' का उल्लेख किया जा सकता है। 'उसका' के लिए 'उहि' की अपेक्षा 'ओहि' का प्रयोग सभवत खेरी की अवधी के प्रभाव के कारण है। यहाँ 'वादि' (वाद), 'देति' (देना) आदि व्यजनात शब्दो मे 'इ' स्वर को जोड देने की प्रवृत्ति है जो कानपुर

मर्वनाम ये है—

उत्तम पुरुष—'मैं', मोरो, हम, हमु, हमें', हमरो, हमारो'।

मध्यम पुरुप—'तू, तोरो, तुम, तुम्ह, तुम्हरो, तुम्हारो'।

अन्य पुरुप–'वह, वुह, वहु (प्राय 'वहु' रूप मे लिखित), वौ (प्राय 'वौ' रूप में लिखित) वि० एक० 'वहि, वुहि, वोहि, उइ', कर्ता 'वहिँ, वुहिँ, वोहिँ, उइँ', कर्ता वहु० 'वे, उइ', वि० वहु० 'उन'।

यह—'ई, यह (जह), यहु (जहु), यौ (जौ),; वि०एक० 'ई, यहि, जहि, ज्यहि', कर्ता 'यहिँ, जहिँ, ज्यहिँ', कर्ता वहु० 'ये, जे', वि० वहु० 'इन'।

ऊपर स्थूल रूप में सभी मे और विशेषत. उत्तम तथा मध्यम पुरषो मे वहुवचन सामान्यत एकवचन के लिए प्रयुक्त होता है।

प्रामाणिक कनौजी के समान सवधवाचक सर्वनाम 'जौनु' आदि तथा प्रश्नवाचक 'कौनु' आदि है। 'क्या' का पर्याय 'काहा' एव विकृत रूप 'काहे' है।

उत्तम पुरुष वहुवचन की क्रिया अनियमित है जो वैकल्पिक रूप से 'अनु'-अत्य हो सकती है। यह रूप पूर्वी हिदी-'अन' तथा कनौजी के वहुप्रयुक्त अत्य '–उ' का सयोग प्रतीत होता है। यहाँ अस्तित्वसूचक क्रिया इस प्रकार गठित होती है —

	वर्तमान		भूत	
	एक०	वहु०	एक०	वहु०
१.	हौं	हनु, हैं	रहौं	रहनु, रहैं
२	है	हौ	रहै	रहौ
३	है	हैं	रहै	रहैं

कभी-कभी पूर्वी हिन्दी मे ग्रहीत वर्तमान रूप मिलते है जैसे 'हम आहेन' (हम है।) के लिए 'हम आहिनु'।

भूतकाल के लिए विशेष कनौजी 'थो' का भी व्यवहार होता है और एक-दो वार 'मैं थों' (मैं था।) जैसे रूप दृष्टिगत होते है 'रहीं' 'रहो' का (स्त्री० वहु०) का प्रयोग 'वह रहीं' अर्थ के द्योतन के लिए किया जाता है।

कर्तृवाच्य मे क्रियार्थक सज्ञा (Infinitive) 'मारन, मारनु, मारनो, मारव, मारवु' अथवा 'मारवो' है। वर्तमानकालिक कृदत 'मारत,मारतु' या 'मारतो' है। तीन-चार वार एक पुल्लिग रूप 'मारति' का प्रयोग मिलता है। 'लरिका आवति–है' तथा 'तू सोगध ग्वाति–है और तयै-का वापु वनावति –है' आदि मे 'इ' का योग दृष्टिगत होता

है। 'इ' के ऐसे योग गगा के उत्तर मे कनौजी के दूसरे रूपो मे भी मिलते हैं। यहाँ भूतकालिक कृदत 'मारो' एव यौगिक कृदत 'मारि-कैं' हैं।

वर्तमान काल मे एकवचन 'मारौं, मारै, मारै' और बहुवचन 'मारनु' या 'मारैं, मारौ, मारैं' हैं। 'मारत-हौं' आदि भी सामान्य है।

'मरिहौं, मरिहै, मरिहै; मरिहनु (मरिहैं), मरिहौ' तथा 'मरिहैं' भविष्य के रूप हैं। उपान्त्य मे होने के कारण पूर्वी हिंदी के समान प्रथम स्वर ह्रस्व हो जाता है। यहाँ-वहाँ 'व' वर्ण की विशेष स्थिति वाला पूर्वी हिंदी का भविष्यत् रूप दृष्टिगत होता है यथा 'हम मरिवे' (मै मारूँगा।)।

अन्य दृष्टियो से क्रिया का गठन प्रामाणिक कनौजी के समान है। कभी-कभी पूर्वी हिन्दी के छिटपुट प्रयोग भी मिलते हैं जैसे 'दिन्हेनि' (उसने या उन्होने दिया।)।

[सं० ७] केन्द्रीय वर्ग

भारतीय-आर्य परिवार

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (मिश्रित बोली) **(ज़िला कानपुर)**

याकैं हते राजा वीर विकरमाजीत। तिन-के याक रानी रहै। उइ राजा औ रानी-माँ वाजी लागी कि याक चिरैया वोलति-रहै। तौन राजा तौ कहत-रहैं कि हस वोलतु-है। औ रानी कहती-हतीं कि कौनवाँ वोलतु-हुइ है। ऐमी हुज्जत रहै कि वहै चिरैया पेंडे-पैं-से उड़ि भाजी। तौ कौनवै निकसो। तव तो सरमाय-कैं राजा रानी-कइहाँ निकारि दीन्हेनि। रानी-के उड राजा-ते अढाई महिना-को औधान हतो। उड रानी-का चलत चलत याक मडैया मिली। तौन तया-केरी मडैया कहावति-हती। तौने-माँ जाय-कै रहीं-जाय औरु मडैया-माँ टटिया लगाय-लीन्हेनि। जव थोरी विरियाँ-माँ तया उइ मडैया-के नेरे आये तव कहन लागे कि ई मडैया-माँ लरिकिनी होय तौ लरिकिनी औ लरिका होय तौ लरिका होय। तव वहि-माँ-से उइ रानी-ने जवावु दओ कि हम फलानी आहिनु। औरु अपनु सव विथा तया-से कहि डारी। तया वहि-की लरिकिनी-ही-की नाईं रच्छा कीन्हेनि ॥

फिरि नवयें महिना-माँ उड रानी—के एकु लरिका भओ। जव वहु लरिका वडो भओ तव औरे लरिकवन-माँ खेलिवे-का जान लागो। औरु जव अनवादु करै तव उड लरिकन-ते सौंगधैं खाय कि हम ऐसो नाहीं करो—है। तव सव लरिकवा वहि—के वोलैं मारैं। तव फिरि हर दाँय तयै-की सौंगव खाय औ कहै कि हम अनवादु नाहीं करो-

तथा गगा के कनौजी-भाषी उत्तरी क्षेत्र की विशेषता है। अंत में, कर्म को कर्ताकारक में रख कर अकर्मक क्रिया का अव्यक्तिवाचक प्रयोग भी द्रष्टव्य है यथा 'लरिका-नें चलो' (लडका गया)।

उदाहरण मे अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ है।

[सं० ६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (ज़िला शाहजहाँपुर)

एक आदमी-के दुइ लरिका हते। उन-में-से छोटे-नें बाप-से कही कि हे बाप माल-को हींसा जो हम-का मिलिबो चहियें सो हम-का दै-देउ। तब ओहि-नें मालु उन-का बाँटि दओ। और थोरे दिन बादि छोटे लरिका-नें सबु एक-ठाओ करि-के एक दूर-के देस-को चलो और हुँआँ अपनो मालु कुचालि-में उड़ाइ-दओ। और जब सबु खर्चु हुइ-गओ तब ओहि देस-में बड़ो अक्काल परो और वहु बनाइ-के सखत हाल होन लगो। तब ओहि देस-के एक भागमान-के हियाँ जाइ लगो। ओहि-नें उसै अपने खेतन-महियाँ सूकर चराओन-क पठओ। और ओहि-को मनु भओ कि उन बकलन-से जो सूकर खात- हैं हम हू अपनो पेट भरि लेहिं कि कोई ओहि-का नाहीं देति हतो॥

पीलीभीत की कनौजी

शाहजहाँपुर के उत्तर का पीलीभीत ज़िला मूलतः बरेली का एक भाग था। बरेली ज़िले मे व्रजभाखा का प्रचलन है। पीलीभीत में मुख्यत. कनौजी बोली जाती है, लेकिन यहाँ-वहाँ उस पर व्रजभाखा का प्रभाव मिलता है। उदाहरणार्थ कनौजी 'थो' (था) के काफी मामान्य होने पर भी व्रज 'हो' का प्रयोग किया जाता है, यथा पीलीभीत से प्राप्त एक गवाह के बयान मे यह दो वाक्य बिलकुल निकट ही मिलते है, 'वैयार-बानी सोअत-हीं' (मेरे घर की स्त्रियाँ मो रही थीं) तथा 'वा-ने मो-को बुलाओ-थो' (उमने मुझे बुलाया था।) व्रज के ऐमे कुछ ग्रहीत प्रयोग अपवाद है, अन्यथा यहाँ की बोली शाहजहाँपुर की कनौजी के समान है। इस कारण यहाँ का अलग उदाहरण देना अनावश्यक होगा।

मिश्रित बोलियाँ

कानपुर की कनौजी

कानपुर ज़िले के उत्तर-पश्चिम मे फर्रुखाबाद तथा इटावा है जहाँ कनौजी बोली जाती है। इसके पूर्व मे गगा के पार उन्नाव ज़िले मे पूर्वी हिंदी का व्यवहार होता है।

इसके दक्षिण-पूर्व मे गगा-यमुना के बीच के दोआब मे फतेहपुर स्थित है जहाँ पूर्वी हिंदी ही प्रचलित है। इसके दक्षिण मे यमुना के पार, पूर्व से पश्चिम की ओर बुंदेली-भाषी हमीरपुर तथा जालौन हैं। इस प्रकार तीन पृथक् बोलियो से घिरे होने के कारण स्थानीय बोली की मिश्रित स्थिति स्वाभाविक है। यह यहाँ हर कही कनौजी पर आधारित है किंतु सामान्यत पूर्वी हिंदी से मिश्रित है। पूर्वी हिंदी का प्रचलन यमुना के दोनो किनारो पर हमीरपुर तथा जालौन की सामान्य सीमा तक है। यहाँ इसका रूप कही भी शुद्ध नही है और इसे 'तिरहारी' अर्थात् 'नदी किनारे की बोली' नाम से जाना जाता है। हमीरपुर में यह बुंदेली से प्रभावित है लेकिन इसका आधार पूर्वी हिन्दी ही है। कानपुर के दक्षिण-पूर्व मे फतेहपुर मे भी इसका पूर्वी हिन्दी स्वरूप सुरक्षित है। इसके विपरीत कानपुर में पूर्वी हिन्दी का मिश्रण अपेक्षाकृत कम है जिससे तिरहारी की स्थिति शेष जिले की कनौजी के समान हो गयी है, केवल यह पूर्व हिन्दी से कुछ अधिक प्रभावित है। इसी कारण इसे हमीरपुर, बाँदा तथा फतेहपुर की तिरहारी के समान पूर्वी हिन्दी के अतर्गत वर्गीकृत न करके कनौजी का एक रूप माना गया है। कानपुर में कनौजी तथा तिरहारी-भाषियो के अनुमानित आँकड़े निम्नलिखित हैं —

कनौजी		१,०९०,०००
तिरहारी		४०,०००
	कुल योग	१,१३०,०००

कानपुर की कनौजी के उदाहरणस्वरूप एक लोककथा दी गयी है। यहाँ इस बोली की उन प्रमुख विशेषताओ की सक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत है जो इसे प्रामाणिक कनौजी से पृथक् करती है।

उच्चारण में क्रमश 'ऐ', 'ए', 'ओ' दीर्घ तथा 'ओ' ह्रस्व क्रमश 'या', 'यअ', 'वा' एवं 'वअ' मे परिवर्तित हो जाते है यथा 'ऐकु', 'याकु' (एक); जेहि', 'ज्यहि' (यह, वि० रूप); 'तोरो', 'त्वारो' (तेरा) तथा 'तोहि', 'त्वहि' (मुझे)। यह विशेषताएँ पूर्वी हिन्दी में भी मिलती है।

सज्ञा-रूप सामान्य कनौजी के समान ही बनते है। दुर्बल सज्ञाओ का अत्य 'उ' बहुत प्रचलित है जैसे 'घर' या 'घरु'। कर्म-सम्प्रदान का चिन्ह 'को', 'कँहाँ' अथवा (पूर्वी हिन्दी) 'का' है। 'नितिन' 'लिए' का द्योतन करता है। करण-अपादान के लिए'से', 'ते' अथवा 'तें' का व्यवहार होता है। सबध के लिए प्रामाणिक कनौजी 'कौ', ('के', 'की') एव पूर्वी हिन्दी 'केर' या 'क्यार्' (रूप, लिंग के लिए अपरिवर्तित) तथा 'केरो' अथवा 'क्यारो' (वि० '—रे', स्त्री० '—री') है। अधिकरण का चिह्न 'में', 'माँ' या (पूर्वी हिन्दी) 'महाँ', 'पर', 'पै' तथा 'लों' है।

है। आखिर-का उइ सब लरिकवा वहि-से कहैं कि अपने बाप-को नाउँ बताव। तब वहि-ने तयैं-को नाउँ बताय-दओ। तब फिरि उइ लरिकवा वहि-से कहैं कि धा ससुर तयैं-की सौगध खाति-है औरु तयैं-का बापु बनावति-है औरु वैसे तौ तया-केरो गुलामु है। तब फिरि महैं सरमाय-करि-कैं अपनी मैया-से बापु-को नाउँ पूँछो। तब वहि-की मैया-ने बापु-को नाउँ विकरमाजीत बताय दओ। दुसरे दिना विकरमाजीत-की सौगव खाई। तब उइ लरिकन वहि-से कहो कि ससुर-ऊ औरौ कव-हूँ विकरमाजीत-को नाउँ सुनो-है कि अब-हीं जानत-हौ। तब फिरि सरमाय-गओ औरु अपनी मैया-से कहो-जाय कि हम अपने बाप-के तीरा जैवे औरु कहि-कैं चलो-गओ॥

जाय-कैं उइ देस-माँ पहुँचो जाय। हुवाँ याक कुआँ-माँ पानी भरती-हतीं। उन-ते कहो कि हम-का पानी पियाय-देउ। उइ कहन लागीं कि पियाय देती-हनु। तब फिरि वहि-ने कहो कि हम-का जल्दी पियाय देव। तौ उइ कहन लागीं ऐसै जल्दी होय तौ कुआँ-माँ कूदि परौ। तब कूदि परो। तौ वहि-माँ देखो कि याक वहि-माँ वहुतै नीकी लरिकिनी दैन्तुर-केरी वैठी-है। तौन दैन्तुर वारा कोस इगे औरु वारा कोस उगे मानुस-केरी महँक तक नाहीं राखति-रहै। तौन मानुस-की महँक पाय-कर अपनी लरिकिनी-से पूँछो कि ह्याँ मानुस-की महँक जानि-परति-है। लेकिन वहि-ने भुनगा वनाय-कैं लुकाय राखो। जब दैन्तुर चलो-गओ तब भेदै-भेद उइ लरिका-ने लरिकिनी-ते उइ दैन्तुर-केरे मरिवे-की जुगुति पूँछि-लई औ ओही जुगुति-ते वहि-का मारि-डारो औरु वहि-का ओही कोनवाँ से ऐंचि लाओ औरु वहि-के साथ विआह करि-लओ औरु विकरमाजीत-को लरिका बनि-गओ। जा भैया अढाई मानिक-केरी कथा कहावति है॥

कानपुर की तिरहारी

जैसा कि पूर्ववर्ती नमूने के परिचय मे कहा गया है, कानपुर की तिरहारी हमीरपुर ज़िले के सम्मुख यमुना के किनारो पर प्रचलित है। इसके भाषा-भाषियो की सख्या लगभग ४०,००० है। तिरहारी का आधार कनौजी है किंतु पूर्वी हमीरपुर की बनाफरी बुदेली एव पूर्वी हिन्दी से इसका पर्याप्त मिश्रण हुआ है।

अपव्ययी पुत्र-कथा के एक रूपांतर की कुछ पक्तियो से इस बोली का स्वरूप स्पष्ट हो जायगा। यहाँ मिश्रण बिलकुल यान्त्रिक है जैसे एक वाक्य में कनौजी 'लड़िका' मिलता है और दूसरे मे पूर्वी हिन्दी 'लरिका'। इसी प्रकार कनौजी 'कहो' (कहा) के साथ बुदेली 'दीन्होस' (दिया)', 'लीन्होस' (लिया) तथा 'डारोस' (फेका) आदि भी प्रयुक्त होते है। 'पठौस' (भेजा) बुदेली 'पठओस' का छोटा रूप है। दूसरे पूर्वी हिन्दी रूप

'ओह्' (ह्रस्व 'ओ', उसे), 'मोह्' (मुझे) तथा विकृत बहुवचन 'जनेन' (व्यक्ति), 'कामेन' (कार्य) आदि है।

[सं० ८]
भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (तिरहारी) (जिला कानपुर)

याक मनई-के दुइ लडिका हते। उन-माँ-ते छोटे लडिका-ने कहो अपने बाप-तन कि माल-को जौन हीँसा मोह्-का चहिये वह मोह्-का दै-दे। तब बाप-ने उन दूनौं जनेन-का वह मालु अलग-अलग कै दीन। और फिर थोरे दिनन-में जब छोटे लरिका-ने सब मालु इकठौरी कै-लीन्होन तब एक बडी दूर-के मुलुक-का चलो और हुन पहुँच-कै सब मालु खराब-खराब कामेन-माँ उठाय-डारोस। और फिर जब ओई मुलुक-माँ सूखा परो और वह पिटागेन मरैं लाग तब फिर ओई मुलुक-माँ याक ठिकाने याक तालेबर रहत-रहै। ओ-खी इहाँ चाकरी करैंगा। ओह्-ने यह-का सोरियाँ चरावैं अपने खितवा-माँ पठौस॥

पूर्वी हरदोई की मिश्रित बोली

हरदोई ज़िले की मुख्य बोली अवधी मे किंचित् मिश्रणयुक्त कनौजी है। इसके नमूने पीछे दिये जा चुके है। जिले के पूर्वी भाग की सडीला तहसील तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्र के तीन ओर उन्नाव, लखनऊ एव सीतापुर के अवधी-भाषी ज़िले है। यह सच है कि यहाँ की बोली कनौजी पर आधारित है किंतु अवधी के साथ अधिक मिश्रण हुआ है। इस बोली का व्यवहार स्थूल रूप से लगभग १५०,००० व्यक्तियो द्वारा किया जाता है।

इस बोली के उदाहरणस्वरूप अपव्ययी पुत्र-कथा का प्रारभिक अग दिया जा रहा है। इस कथा तथा कुछ और सामग्री के आधार पर सकलित यहाँ की विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं। यहाँ सबल पुंल्लिग सज्ञाओ, विशेषणो एव कृदतो का अत्य 'ओ' की अपेक्षा अवधी 'आ' है यथा 'घोडा', 'घोडो' नही, 'घोडे-का', 'घोड़े-को' नही, 'हता' (अवधी अत्य वाला कनौजी रूप), 'हतो' (वह था।) नही, 'गवा, गा', 'गओ' (वह गया।) नही, 'भवा, भा', 'भओ' (वह हुआ) नहीं।

भूतकाल की रचना में भूतकालिक कृदत के एकाकी प्रयोग का कनौजी ढग (मैंने,

तूने, उसने 'मारा'।) भी मिलता है और अवधी का विशेषत गठित रूप भी प्रचलित है यथा (पुल्लिग)—

	एक०	बहु०
१	मारेउँ	मारा
२	मारिस	मारेआ
३	मारिस	मारिन्

केवल अन्यपुरुष एकवचन की दृष्टि से अवधी के भविष्यत् काल की रचना कनौजी से पृथक् है। यहाँ की बोली मे अवधी की पद्धति व्यवहृत होती है जैसे (मैं मारूँगा)—

	एक०	बहु०
१	मरिहौं	मरिहैं
२	मरिहै	मरिहौ
३	मारी ('मरिहै' नही)	मरिहैं

नमूनो मे यह फुटकर अवधी रूप भी मिलते हैं—कर्म-सप्रदान के चिन्हस्वरूप 'का', 'देना' का भूतकालिक कृदत 'दीन्ह' तथा क्रियार्थक सज्ञा 'अइँ' की रचना, जैसे 'कहैं लाग' (वह कहने लगा।)।

व्यजनात शब्दो में 'इ' वर्ण जोडने का प्रचलन भी द्रष्टव्य है यथा 'बादि' (बाद), 'बरबादि' (बरबाद)। यह हरदोई मे अन्यत्र भी होता है और कानपुर मे वर्तमानकालिक कृदतो के सदर्भ मे इसका उल्लेख किया जा चुका है।

[सं० ९]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

कनौजी (मिश्रित बोली) **(तहसील सडीला, जिला हरदोई)**

एक मनई-के दुई लरिका हते। वहि-माँ-से जौन छोटकवा लरिका हता सो अपने बाप-पर कहैं लाग कि जो हमार हिस्से-का रुपया होई सो हमार बाँटि देव। तब वहि-के बाप-नें बाँटि दीन्ह। रुपया लै-के छोटकवा लरिका कहूँ बिदेस-का चला-गा। हुँआँ अपन सब रुपया बद-चलनी-माँ खरच कइ-डारेसि औ बनाइ-के बरबादि हुइ-गा। थोरे दिन-के बादि हुँआँ सूखा परि-गा। फिरि वहु कोहू अमीर-के दुवारे गा। तब वहि अमीर-नें अपने खेतन-में सोरी चरावैं-पर करि दीन्ह। जब वहु हुँआं कायल भवा तब वहु अपने बाप-के तीर आइ-के कहैं लाग कि हमार खता माँफ कै-देउ। तब वहि-के बाप-नें खता माँफ कीन्ह और खुसी भा॥

बुंदेली अथवा बुंदेलखंडी

झाँसी की बुंदेली

झाँसी जिला बुंदेलखंड के बीचोंबीच है और यहाँ प्रचलित बुंदेली प्रामाणिक समझी जा सकती है। बतलाया गया है कि कुल ६८३,६१९ की जनसंख्या में से लगभग ६७९,७०० व्यक्ति बुंदेली का व्यवहार करते हैं। नीचे यहाँ के दो नमूने प्रस्तुत हैं। एक अपव्ययी पुत्र-कथा का रूपांतर है और दूसरा एक लोक-कथा।

[सं० १]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (जिला झाँसी)

उदाहरण १

एक जने-के दो मोडा हते। ओर ता-में-सें लोरे-ने अपने दद्दा-से कई, धन-में-सें मेरो हिस्सा मो-खों देइ राखों। ता-के पीछें ऊँ-ने अपनो धन बरार् दओ। बिलात दिना नई भये हते लौरो मोडा सब कछू जोर-कें पल्ले मुलक चलो गओ और हुना वा-ने कुकर्मन में अपनो सबरो धन गमा-दओ। जब वा-ने सब कछू उड़ा-दै बैठो तब वा मुलक-में बडो काल परो और वो माँगनो हो गओ। ता-खों पीछें वा-ने उस मुलक-के रहाइय्यन-में-सें एक जने-के ढिगा रन लगो। वा-ने वा-खों अपने खेत-में सुंगरा चरावे-के-लाने पठै-दओ। ओर वा-ने जो भुस सुंगरा खात-तो ता-सों अपनो पेट भरो भाउत-तो। कोऊ वा-खों कछू नई देत-तो। तब वा-खों होस भओ। ओर वा-ने कई मेरे बाप-के कतेक मडँदार-खों खैबे-के लाने बिलात रोटीं होत-हैं ओर बच रतीं है और में भूखन-के मारे मरो-जात। मैं उठ-के अपनो बाप-के ढिंगा जेहों और वा-सों केहों दद्दा-ए मैं-ने स्वरग-के उल्टो ओर तेरे आगें पाप करो। मैं फिर तुमारो छोरा कुआवे-के लाक नइँआ। मो-खों आपनो कमीनन-के बिरोबर लेखो। रायी का की वो उठो ओर बाप-के हिना चलो। वो अपने दद्दा-से दूर हतो अनेक-में वा-के बाप-ने वा-खों देख-लओ ओर भागत गओ ओर वा-खों गले-से लगाओ ओर मुँह चूमो। तब मोडा-ने बाप-सों कई दद्दा-ए मैं-ने स्वरग-के उल्टो ओर तेरे आगें पाप करो। मैं तेरो छोरा कुआवे-के लाक नइआँ। वा-के बाप-ने चाकरन-सें कई सब से नोने उन्ना लाओ ओर जा-खों पैरा देओ ओर हान-के नुगरिअन-में मुदरिया ओर

पाओं-में पनइया पैरा देओ। अब सब जने जुर-के पाँत करें ओर वधाई करें। काये सें कि वो मोडा मरो हतो अब जी उठो। जात रओ तो फिर-के मिल गओ ॥

रायी का की वा-को वड्डो भइया खेत-में हतो और जव वा आउत-के वेरे घर-के-नेरे आ गओ तव वाजो ओर नाच-के वोल सुनो। ना-ने अपने चाकरन-में-सें एक-खों दै टेरो ओर वा-सें वूझन लगो कि जो सब का होत। वा-ने कई तेरो भैया आओ सो तेरे वाप-ने पाँत करी जा-के लाने कि वा-खों जियत अच्छो पाओ। ता पै वो रिस में-भर गओ ओर भीतर जावे-खों वा-खों मन-ना भओ। ता-पै वा-खों वाप-वे आ-के थराई करी। वा- ने अपने वाप-सों जुआव करो के देख-लो मैं तुमारे कतेक दिनन-सें सेवा करत-हों। कभ-ऊँ आप-की कयी-खो नयी टारी। तऊ आप-ने मोए कभ-ऊँ एक वुकरिया भी ना दई के मैं अपने हेतिओं-के सग हँसी खेल करूँ। अब देख-लो अपन-खों जो मोडा जो हुरकिनिनें-कें सग अपनो धन खा-गओ तऊ आप-ने वा-खों आउत-यी पाँत करी। तव वाप-ने वा-से कयी ए वेटा नैं मेरे ढिगा आठों पहर रउत ओर जो कछु मो-नो है सो सव तेरो है। तऊ वधाई करनो चाउनो हतो काये कि तेरो लोरो भइया मरो हतो उठ जिओ ओर जात रओ तो फिर मिलो ॥

[सं० २.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली **(जिला झाँसी)**

उदाहरण २

एक गाँव-के माते-की छीर-के ढिगाँ एक गरीव किसान-की खेती ठाढी-ती। ता-खों लख-कें माते बोलो कि काये-रे तैं-ने हमारी खेती अपने ढोरन-सें चरा लयी। तो-ग्वों देख नयी परत कि हम रखवारी करे-हैं। किसान वोलो कि माते कक्का ढोर तो मेरे भुन्सारे-से हारे बरेदी लइ-गओ। माते-ने सुन-के कयी कि काल तेरो वाप हमारी फिराद-के लाने चऊतरे जात-तो। किसान-ने जुआव दओ कि बाप मेरो तीन मइना-से परदेन-में है। तव माते-ने कयी के तो तेरी मतायी हुए। किसात बोलो मतायी मेरी वेजारी-से मर-गयी। तव मैं नन्नो हतो। वा-की मो-खों खवर नइय्या। माते-ने दौर के वा-खों तीन चार लाते ओर गतकिन-से भौंत मारो। फरेब -से सवरी खेती वा-की काट-के अपने ढोरन-सों चरा-लयी ओर कयी के जो नैं फिराद-के-लाने राज-में जैहे तो हमारे मारे गाउँ-में वसन ना पेहे। किसान हार-सों अपने घरे आओ ओर अपने

मानसन-सें माते-की सवरी हकीगत कयी। तव सव-की सम्मत भयी के चलो राज-में फिराद करें। हुना हाकिम के आगें सवरो ठीक हो-जेहे। ओर जो मोंगे वैठ रेहें तो गाओं में निहवो वटी दारें हुहे। तव किसान सव-की मुँह की कुदाई हेर-के वोलो कि सुनो भइय्या नला-में रेड-के मगरा-सों वैर करवो भलो नइयाँ ओर अव तो हम-ने जा ठान-लयी कि खेती पाती जा गाँव-में ना करें। वनजी-भोरी कर-कें अपनो पेट भरहें ओर अपनी मडय्या-मे डरे तो रेहें॥

वा वेरा हुना मुतके मान्स जुरे ते। किसान-की वातें सुन-के मोंगे हो-गये। उन में-से एक जने-ने कयी के सुनो भय्या जबर फरेवी-के आगें निवल वे-अपराधी-की वात काम नई आउत। ता-सें भइय्या गम खाओ ओर अपने घरें वैठ-रओ॥

जालौन की बुंदेली

झाँसी जिले के बिल्कुल उत्तर में ज़िला जालौन है। इसकी पूर्वी सीमा पर 'निभट्टा' तथा 'लोधाती' बोलियाँ प्रचलित है लेकिन ज़िले के शेष भाग की बोली झाँसी के समान ही है। अतर केवल इतना है कि यह कानपुर की कनौजी से किंचित् प्रभावित है। इसके भाषा-भाषियो की संख्या ३६०,१२९ है। इसे शुद्ध प्रामाणिक बुंदेली माना जा सकता है, यद्यपि जिले के दक्षिण की अपेक्षा उत्तर मे यह कनौजी से अधिक प्रभावित है। जिले के पश्चिम मे इसमे कुछ भेद भी मिलते है।

मध्य जालौन के नीचे दिये गये नमूने से बोली के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। कनौजी का प्रभाव उच्चारण मे सबसे स्पष्ट है। यह बुदेलखड के समान विवृत नही है। 'ऐ' तथा 'औ' की अपेक्षा क्रमश 'ए' एवं 'ओ' स्वर प्रयुक्त होते हैं यथा 'ऐसो', 'एसो'; 'पै', 'पे', 'जैहै', 'जेहै', 'और', 'ओर', 'लौटन', 'लोटन', 'औरत', 'ओरत' आदि।

निकटवर्ती 'ह' के प्रभाव से स्वर परस्पर परिवर्तनशील प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ 'सहर' या 'शहर' के लिए 'सहिर', 'पहिरान' के लिए 'पिहरान', 'कह है' के लिए 'किह है' तथा 'बहुत' के लिए 'बुहुत' मिलता है।

सज्ञाओ में विकृत 'अन्' रूप प्राय एकवचन के लिए व्यवहृत होता है जैसे 'डेरन-पे' (घर पर)। यह बिलकुल दक्षिण-पूर्व के हमीरपुर में अधिक सामान्य है। नमूने मे कनौजी रूप 'तुम्हें' एक बार आया है।

'कहना' अर्थ के द्योतक क्रिया के भूतकालिक रूप का अव्यक्तिवाचक व्यवहार होने पर विज्ञात (understood) 'वात' के अनुरूप होने के लिए उसका स्त्रीलिंग में परिवर्तन बहुत सामान्य है यथा 'कही'। इस प्रयोग का बहुत अच्छा उदाहरण 'जा कही' (उसने यह कहा।) है जिसमे 'जो' (यह) का स्त्रीलिंग रूप 'जा' विज्ञात

'वात' के अनुरूप है। इसी प्रकार 'तीसरे दिन-की वात कही' के लिए 'तीसरे दिन-की कही' (तीसरा दिन निश्चित हुआ था।) प्रयोग भी द्रष्टव्य है।

जालौन मे प्रचलित वोलियो के सशोधित आँकडे निम्नलिखित है—

बुदेली (प्रामाणिक)	३६०,१२९
वुदेली (निभट्टा)	१०,२००
वुदेली (लोधाती)	८,०००
हिन्दोस्तानी	१०,२४४
अन्य वोलियाँ	७,७८८
कुल योग	३९६ ३६१

निम्नलिखित उदाहरण जालौन की एक लोककथा है।

[सं० ३.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (जिला जालौन)

घासी-राम वावा-नें पूत-वुलाकी नाऊ-सें कही के हमारे सग तीरथन-कों चलो। तव नाऊ-नें अपनी नाइन-सें सलाह कर-कें जा कही के हमारे किसानन-कें बहुत आमदनी हुइहै सो मारी जेहै। वावा-नें कही जो आमदनी हुइहै सो हम देहैं। तव नाऊ-नें फिर वात वनाई के हम दुनियांदारी-में जो चरित्र देख आयहैं सो तुम्हें वतावने पर है। जभ-ईं नहीं वतायहो तभ-ईं लोट आय हैं। तव दोऊ एमी कहकें- चल-दये।

एक मुकाम-पे नाऊ बाजार-सें मव सामान ले-कें वाहर कढो। तव वा-नें कही के कोन-ऊ चरित्र हम-नें नहीं देखो-हे। तो का देखत-है के एक डाँक चली-जात-है ओर डाँक-कों सिपाई चला-चल कहत चलो-जात-है। एसो देख-कें वो डेरन-पे आओ ओर जव दो-ऊ जनें रोटी वनाय खाय-कें तय्यार भये तव नाऊ-नें कही के वावा एक वात हम देख आये हैं सो वताओं। उन-नें कही कहो। तव वा-नें कही के एक डाँक चली जात-है ओर सिपाई चला-चल कहत चलो-जात-है। ता-को मायनो वताओ। उन-नें कही तुम पाँय दावो हम कहत-हैं। सुनो। जा सहिर-में एक साहूकार-की वहू वडी कवूल सूरत है और वा-को खामिद पदेस-में है। वा एक दिन अपनी विरादरी-में वुलीआँ गई-हती। जव उनें-सें लोटी तो आँधी पानी आओ। वा एक मुसल्मान-के घर-में अपने-घर-

के धोखे-से घुस गई। जब वा-ने जानी के जो हमारो घर नहियाँ तब बिलबिलाय-कें अपने घर-कों भजी। इत्ते-में मुसल्मान निकरो। वा-नें कही जा कौन-की ओरत हमारे मकान-में घुस आई। देखें चहियें। तब वो वाही-के पीछूँ-पीछूँ चल-कें वा-के घर-पे जाय-कें पता सुराक लगाओ। देखी के जा ओरत-के घर-में कोऊ आदमी नहियाँ। कोऊ ऐमो उपाय करें चहियें जा-सें जा-कों अपने-घर-में डार-लें। वो सहिर-में जाय-कें एक भटियारी-के मोडा-कों दस पचीस रुपय्या दे-कें वाय सिखओ ओर जनाने उढना पहिराय-कें बादसाह-के दरबार-में पीनस-में बैठाय-कें लिवाय-गओ। साहूकार-की बहू के नाँव-में अर्जी दई के में साहूकार-सों राजी नहीं हों। में मुसल्मान-मों राजी हों। बादसाह-नें कही के हिंदू-कों एसें मुसल्मान न भयें चहियें। जब न मानी तब कही के काल फिर अर्जी दियो। तब फिर दूसरे दिन वा-नें अर्जी दई। बादसाह-नें फिर तीसरे दिन-की कही। अब साहूकार-की बहू-कों खबर भई के मेरे नाम-सें मेरे लेवे-की अर्जी दई गई-है। वा-नें अपने खामिंद-कें लिवायबे-कों डाँक रमाने करी-है।

सो घासी-राम बाबा कहत-हैं के इत्ती बात तो हुइ-गई जो हम-नें कही। अब जो नई हुइहै सो हम कहत-हैं के सबेरें वो साहूकार आय-जेहै ओर बादसाह-के दरबार-में वा ओरत-के नाम-सें अर्जी लगहै सोई साहूकार पुहुँच-जेहै ओर बादसाह-सों हाँत जोर-कें किहहै के हजूर जा ओरत हमारो माल जो जहाँ धरो-है बताय-दे फिर चली-जाय। जब वा ओरत निकर है तब साहूकार किहहै के हजूर जा हमारी ओरत नहियाँ। देखें चहियें के कोन है। जब बादसाह देखहैं तो भटियारे-को मोड़ा निकर है। तब बादसाह वा मुसल्मान ओर मोडा-कों धरती-में गडाय देहैं ओर साहूकार अपने घर-कों चलो-जेहै ॥

पश्चिमी जालौन की बुंदेली

पश्चिमी जालौन के निम्नलिखित उदाहरण से वहाँ की बोली का स्वरूप स्पष्ट होता है। जालौन की प्रामाणिक बुदेली के ३६०,१२९ भाषा-भाषियो मे से अनुमानत. २०,००० इस बोली का व्यवहार करते है। जालौन की बोलियो की मूल प्रारभिक सूची में यह 'भदौरी' नाम से उल्लिखित थी। यह गलत था। इसका बुदेली तथा व्रज मिश्रित भदौरी से कोई सबध नही है।

पश्चिमी जालौन की बोली का शेष जिले से मुख्य अंतर उच्चारण के विवृत होने में है। यहाँ 'ए' एव 'ओ' की अपेक्षा क्रमश 'ऐ' तथा 'औ' को प्राथमिकता मिलती है यथा 'पै' ('पे' नहीं); 'कौ' एव 'कौ'; कर्म-सम्प्रदान के चिन्हस्वरूप 'कौं' तथा 'कौं'; 'हौं'; 'चल्यौ', 'गअउ'; 'बैठौं'; 'करौं' और 'बडौ' का प्रयोग होता है। इस बोली मे मध्य जालौन के समान स्वरो की परिवर्तनशीलता भी मिलती

है जैसे 'सिव' (सव), 'वुहुत' (वहुत) 'पुहुँचन' (पहुँचना) आदि। सर्वनामो में 'वह' तथा 'यह' कमश 'वअ' एव 'जअ' है, 'वो' और 'जो' नही। विकृत रूप प्रामाणिक वोली के समान 'वा' एव 'जा' है। 'जअ' (कौन) का वहुवचन 'जाय' है।

उदाहरणार्थ अकवर और वीरवल से सवद्ध एक लोककथा प्रस्तुत है।

[सं० ४]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वुंदेली (जिला जालौन का पश्चिम)

एक वेर वास्साय और वीरन वैठे-हते। वास्साय-ने वीरन-सें पूछी कै पेट कौन-को वड़ौ है। तव वीरन-ने कही कै महाराज जा-कौ जैसौ डील ता-कौ तैसौ पेट। तव वास्साय-ने फिर कही कै नइँ वताओ सव-तें वडौ पेट कौन-की है। तव वीरन-ने कही कै सिव-तें वडौ पेट तौ जिमीदारन-को है। अव वास्साय-ने कही कै वताओ जिमीदार-को पेट कैसें वडौ है। अच्छौ वताय हैं। ज कह-कें वीरन एक दिना काऊ गाँव-के जिमीदारन-के हिँयाँ जाय ढुके। जव वीरन दरवार-में न गये तव वास्साय-ने वुलाइवे-कों आदमी पठओ। जव न मिले तव अपने राज-भर-मूँ और और -ऊ देसन-में ढुँडौआ पुहुँचाये। जव ढूँड ढूँढ-कें हार-गये और न मिले तव वास्साय-ने वुहुत-से वुकरा मँगाये और उन-कों तौल-कें गाँवन गाँवन-के जिमीदारन-के हिँयाँ पठये और कही के इन-कों छे महिना-लों खूव चरावें। अकेलों तौल-में न वढन पावें। तौल वढ़है तौ वडौ डड देहैं। सिव जिमीदार अपनौ अपनौ उपाव सोचन लगे। जा गाँव-में वीरन हते हुँवाँ-के जिमीदार उन-के ढिगाँ गये और उन-सों कही कै जा-कौ जतन वताओ। वीरन-ने कही वेहडा-में-तें एक भिड़ा मँगाय-कें वुकरा- के आगे वँधाय देव। फिर वाय खूव चराओ। व डर-के मारें कभ-ऊँ न चेतहै न तौल-तें जादाँ वढहै। उन लोगन-ने ऐसो-ई करौ। जव छे महीना-में सिव वुकरा मँगाये और तौले गये तौ सिव तौ तौल-तें वढे और जा-मे वीरन हते वा गाँव-के जिमीदारन-कौ वुकरा तौलउतें पौआ-भर कम कटौ। तव वास्साय-ने उन जिमीदारन-सों कही कै तुमारे हिँयाँ वीरन हैं। उन-कों लिआओ। उन-ने कही हमारे हिँयाँ नइँया। वास्साय-ने वड़ी घुरकी दिखाई तौ-ऊ उन-ने न वताये। तव वास्साय-ने कही कै वुकरा काये कम भओ। उन-ने कही कै हमारे हिँयाँ रोगी वुकरा पठओ-हतो। वा-ने चारौ-सारौ कछू नइँ खाओ। अभै नेक चेतौ-है। ता-सैं कम भओ-है। फिर वास्साय-ने ऐमे-ई कइयक उपाव करे अकेलों वीरन-कौ पतौ न लगौ। तव कही कै जो कोऊ वीरन लिआवे ता-कों एक हजार रुपैया

इनाम दईं। तव वे जिमीदार वीरन-कों लिवाय-गये। वास्साय वीरन-सों उठ-कें मिले और पूछी कै तुम कहाँ दुके ते। हम-ने तौ सिव मुलक ढूंड-डारौ। तव वीरन-ने कही कै हम तौ हेंई कोस-भर-पै इन जिमीदारन-के घर-में दुके- ते। देखौ जिमीदार-कौ कितनौ वडौ पेट है कै हम-कों दुकायें रहे और तुम-ने मुलक-भर ढूंड-डारौ तौ-ऊ हमें न पाओ। तव वास्साय-ने कही कै वीरन तुम साँची कहत-हौ जिमीदार-कौ पेट सिव-तें वडौ है। और उन जिमीदारन कों वुहुत इनाम दओ ॥

हमीरपुर की वुंदेली

हमीरपुर के मध्यभाग की वोली झाँसी की प्रामाणिक वुदेली के समान है। यह नीचे दिये गये उदाहरण की प्रारभिक पक्तियो से स्पष्ट हो जायगा। यहाँ प्राप्त 'मौ-काँ' (मुझ-को) रूप उल्लेखनीय है जो झाँसी में 'मो-खों' होता। जैसा कि वोली के परिचयात्मक विवरण में कहा गया है, 'मौ' का 'मो' मे परिवर्तन केवल अक्षर-विन्यास के कारण हैं। 'खों' की अपेक्षा 'काँ' का व्यवहार निकटवर्ती विकृत अवधी के प्रभावस्वरूप होता है। 'मेरो' की अपेक्षा 'मोरो' का प्रचलन भी इसी कारण है।

हमीरपुर मे प्रचलित वोलियाँ निम्नलिखित है—

प्रामाणिक वुदेली	३८४,०००
लोधाती	९८,०००
कुण्डरी	११,०००
वनाफरी	५,०००
तिरहारी	३,०००
हिन्दोस्तानी	१२,०००
अन्य वोलियाँ	७२०
	५१३,७२०

इनमें मे वनाफरी तथा तिरहारी (इस ज़िले मे) वुदेली के रूप नही है, वरन् पूर्वी हिन्दी पर आधारित तथा वुदेली से मिश्रित है। 'पूर्वी हिन्दी' (देखिए खड ६) के शीर्षक से इनका विवरण दिया जा चुका है। कुण्डरी हमीरपुर एव वांदा तथा केन नदी के किनारो पर प्रचलित है। वाँदा की ओर यह वुदेलीमिश्रित पूर्वी हिन्दी है और इसका विवरण अन्य वोली के नाम से (दे० खण्ड ४) दिया जा चुका है। हमीरपुर की कुण्डरी की व्याकरणिक विशेष्ताएँ आगे दी गयी हैं। इसका आधार वुदेली है, यद्यपि पूर्वी हिन्दी से इमका मिश्रण हुआ है।

[सं० ५.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (जिला हमीरपुर)

एक जने-के दो कुवँर ते। लौरे-ने मालकान-तें कई कि एँ जू मौ-काँ धन-में-से जो मोरो हीसा होय सो मिलवै आवै। तव उन-ने अपनो धन बाँट दओ। कछू दिनन भये-ते कि लौरे कुवँर वोत धन जोर-के परदेस जात रये। माँ लुचपन-में दिन खोये और अपनो धन वडा डारो ॥

पूर्वी ग्वालियर की बुदेली

झाँसी जिले के पश्चिम मे ग्वालियर है। आधी उत्तरी सीमा तक झाँसी जिला ग्वालियर से बुदेलखण्ड के दक्षिण राज्य द्वारा पृथक् है, लेकिन दक्षिण की ओर इसका विस्तार ग्वालियर राज्य के साथ-साथ है।

ग्वालियर एजेंसी मे अव उसके दक्षिण की पुरानी गुना एजेसी भी सम्मिलित है। स्थूलत- कहा जा सकता है कि मूल ग्वालियर एजेंसी (पुरानी गुना एजेसी के अतिरिक्त) की मुख्य वोली भदौरी है जो वास्तव में बुदेली का मिश्रित रूप है। इसका विवरण आगे दिया जायगा। पुरानी गुना एजेंसी में राजस्थानी की मालवी वोली का व्यवहार होता है। पुरानी ग्वालियर एजेसी मे मुख्यत ग्वालियर राज्य के जिले सम्मिलित है जहाँ की वोली भदौरी है।

पुराने ललितपुर जिले की पश्चिमी सीमा के साथ-साथ, जहाँ ग्वालियर राज्य तथा झाँसी जिले के क्षेत्र निकट है और सागर जिले की पश्चिमी सीमा के साथ दक्षिण की ओर झाँसी की प्रामाणिक बुदेली का व्यवहार होता है। यह ग्वालियर के चदेरी तथा मुगावली जिलो मे और भेलसा जिले के आधे पूर्वी भाग मे अनुमानत २००,००० व्यक्तियो द्वारा वोली जाती है।

उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत निम्नलिखित लोककथा भेलसा जिले की है।

[सं० ६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (जिला ग्वालियर)

एक साहूकार तो। वा-के चार वेटा ते और धन मुतकेरो तो। वा-ने अपने जीयत-में अपनो धन चारी वेटन-को वरावर वाँट दओ। और चार लाल अपनी मौत जिन्दगी

का निआरे रख छोड़े। परमेसर की मरजी-से साहूकार मर-गओ। और वे चारों लाल बेटन-ने एक टिपारी-में धर दए।

जब कुछ दिन बीत गए, तो बड़े बेटा-ने टिपारी-को देखो। वा-में एक लाल कम हतो। तब आपस-में चारो-ने विचार करो कि सिवाय हम चारन-के और काहू-को खबर न ती। लाल कौन ले-गयो। ता-पै राजा-के पास निआव-को गए और कही है राजा हमारो निसाफ कर और लाल ऐसे हेर कि लाल मिले और चोर-की लाज रहे। राजा-ने अपने दीवान-से कही कि जा-को निसाफ कर नहीं-तो अन पानी न खाऊँगो।

राजा जा-ही सोच-में तो कि वा-की मोड़ी-ने कही कि अरे बाप जा निआव मोए सौंप-दे। और मोडी-ने उन चारन-के पाछे मुखबर छोड दए कि वे विन-की बातचीत सुन-के खबर देत-रहें। मुखबरन-ने विन चारन-के मन-में भर-दई कि राजा-की बेटी अन्तरगियानी है कोई बात वा-से डोकी नही रह-सकत- है। जब मोडी-ने अपनो भय उन चारन-के मन-पर खूब जमाए लओ तो चारन-को टिपारी और लालन सुद्वाँ अपने सामने बुलाय-के कही कि हम आज रात-को लाल हेरेंगे। और रात-के वखत अँधेरे-में लाल निआरे कर-के और कुछ अपने-पास-से मिलाए-के विन-को दए कि वे टिपारी-में डालत-जाएँ। तब सबन-ने लालन-को टिपारी-में डालो और जब गने तो एक लाल बढ़ो। जा सुरत-से लाल मिल गओ और चोर-की लाज रही॥

ओरछा की बुंदेली

बुंदेलखड के पश्चिमी भाग में, जो पुराने ललितपुर ज़िले के पूर्व में है, ओरछा राज्य तथा टोड़ी फतेहपुर, बिजना, बंका पहाड़ी एव बुरवै की जागीरें सम्मिलित है। यहाँ प्रामाणिक बुंदेली बोली जाती है। इसकी कुछ स्थानीय विशेपताएँ उल्लेखनीय है। सबल विशेषणो का विकृत बहुवचन कभी-कभी 'ऐं' या एँ'—अंत्य तथा प्रत्येक स्थिति में विकृत बहुवचन वाली सज्ञा के अनुरूप होता है। उदाहरणार्थ 'अपनें' या 'अपनें' एव 'धारें' आदि उल्लेख्य हैं। कर्म-सप्रदान का सामान्य चिह्न 'कें', 'कौं' एव 'खाँ' ('खों' नही), कर्ता का 'नें' तथा करण-अपादान का 'सें' है। 'उनें' द्वारा 'उनको' अथवा 'उसको' (सम्मानपूर्वक) का भाव व्यक्त होता है। कर्तृ-विषयक सर्वनाम का कर्ता 'अपुन' (वह स्वय या वे स्वय) है। यौगिक कृदत के चिह्नस्वरूप 'कें' का व्यवहार होता है यथा 'उठ-कें'। 'रहना' का छोटा रूप 'रात्' उल्लेखनीय है। यह भी द्रष्टव्य है कि 'कहीं' (उसने कहा) के समान 'पूँछी' (उसने पूछा) शब्द भी सदैव स्त्रीलिंग में विज्ञात 'बात' के अनुरूप होता है। यह विशेषताएँ उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत लोककथा में विद्यमान है जो चरखारी के रायसाहब काशीप्रसाद, वकील द्वारा तैयार की गयी है।

[सं० ७.]
भारतीय-आर्य परिवार

केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली

(ज़िला ओरछा)

एक वेरैं एक हाँथी मर गवो तो। जब ऊ-कौ जी जमराज-कैं गवो तौ उन-नैं पूँछी कै तैं इतनौ वडौ है और आदमी जो इतनौ हलकौ है ऊ-के वस-मैं काये रात। हाँथी-कौ जी वोलो कि तुमैं मुरदन-सैं काम परत-है। अबैं जिदन-सैं काम नहीं परो। जम-राज सोचे कि जिंदा कैसें होत हुहैं। अपने जमदूतन-खाँ हुकम दवो कि जाव सिसार-सैं एक जिंदा लै आवो। वे गये और एक मुसद्दी-कौं लै आये जो अपनी खाट-में सब अपनें कागद आगद धरें सोवत-तो। जब जमपुरी-में पहुँचे तौ मुसद्दी-खाँ एक जागाँ उतार दवो। और अपुन जमराज-कैं गये। इतनें वीच-मैं मुसद्दी-नें उठ-कें अपनें सब कपड़ा पहिने और एक परवानौ बिसुन-की कचहरी-को लिखो कि जमराज खारज व सिवराज वहाल। और त्यार हो-कैं वैठ रहे। जब जमराज के सामनैं गये तब झट परवानौ उनैं दवो। जमराज नैं-परवानौ देखतनई सब अपनी जागाँ-कौ काम सिवराज-खाँ सौंपो और अपुन बिसनु-कैं गये। और बितवारी करी कि मो-सैं का काम बिगरो कि मैं वर-खास कर दवो गवो। इतनैं वीच-मैं सिवराज-नैं अपनैं हंती व्यवहारी मिरतलोक-सैं वुला-कैं खूब सुख करो और फिर उतईं पठुवा दवो। बिसनु जमराज-खाँ सगैं लैं-कैं सिव-राज-के पास आये और बोले सिवराज-सैं कि तुम-नैं अब खूब काम कर लवो-है। और फिर सिवराज-खाँ मिरतलोक-मैं पठुवा दवो। और जमराज-सैं कही कि देखौ जिंदा कैसे होत-हैं और फिर जमराज-खाँ उन-कौं काम सौंप-कैं अपनैं लोक-खाँ चले गये॥

सागर की बुंदेली

झाँसी तथा ओरछा के दक्षिण मे सागर ज़िला है। यहाँ प्रामाणिक बुंदेली प्रचलित है। नमूने के रूप में दी गयी अपव्ययी पुत्र-कथा की प्रारम्भिक पक्तियो से यह स्पष्ट हो जायगा।

[सं० ८.]
भारतीय-आर्य परिवार

केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली

(ज़िला सागर)

एक जने-के दो लरका हते। और उन-में-सें लुहरे-नें अपनें बाप-सें कही, दद्दा, जाजात-को हैंसा जो कछू मोरो कड़े मो-खों दे देउ। और ऊ-ने अपनी गिरस्ती उन-खों

बाँट दई। और भौत दिना ने बीते नने लरका-ने सबरो इखट्टो समेटो और अपनी गैल आन मुलक-खों धरी। और उते अपनो-धन गुडोई-में गमा दओ। और जब ऊ सब उड़ा चुको, तबई-कें ऊ देन-में एक बडो भारी काल परो और ऊँ तग होन लगो॥

नरसिंहपुर की बुंदेली

सागर के पूर्व मे दमोह जिला है जहाँ बुंदेली का ही व्यवहार होता है। यहाँ इस बोली का एक पूर्वी रूप प्रचलित है जो पन्ना की खटोला के समान है। दमोह के दक्षिण-पूर्व में उससे भाँड़ेर क्षेत्र की पहाड़ियो द्वारा पृथक् जिला जबलपुर है। जबलपुर की मिश्रित बोली का विवरण 'बघेली' के अन्तर्गत (दे० खड ६) दिया जा चुका है। जबलपुर के दक्षिण-पश्चिमी भाग की बोली समान औचित्य सहित बुंदेली के रूप मे वर्गीकृत की जा सकती है, यह उत्तर-पूर्व मे क्रमश शुद्ध बघेली में परिवर्तित हो जाती है।

सागर जिले के पश्चिम मे ग्वालियर तथा भोपाल राज्य हैं। भोपाल मे मुख्यत. राजस्थानी की मालवी बोली प्रचलित है लेकिन सागर-सीमा के साथ-साथ लगभग ६७,००० व्यक्तियो द्वारा प्रामाणिक बुदेली का भी व्यवहार होता है। यह धीरे-धीरे मालवी मे घुल-मिल जाती है। ग्वालियर में मुख्य रूप से बुदेली के भदौरी रूप का प्रचलन है लेकिन उत्तर में पूर्वी सीमा के साथ दतिया के निकट पँवारी बुदेली का व्यवहार होता है। और आगे झाँसी तथा सागर की सीमाओ पर लगभग २००,००० व्यक्तियो द्वारा प्रामाणिक बुदेली बोली जाती है।

सागर के दक्षिण मे उससे विंध्य पर्वतश्रेणी द्वारा अलग ज़िला नरसिंहपुर है जिसमे नर्मदा घाटी का ऊपरी आधा भाग सम्मिलित है। यहाँ भी सागर के समान सामान्य बुंदेली प्रचलित है। यहाँ के नमूने के रूप में अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ प्रस्तुत हैं।

[सं० ९.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (जिला नरसिंहपुर)

कोई आदमी-के दो मोडा हते। तिन-में-से नन्हे-ने अपने बाप-से कही के ए दादा घर-के धन-में-से जो मेरो हींसा हो सो मो-खों दे-दो। तब बाप-ने उन-खों अपनो धन बाँट दओ। कछू दिनों-के पीछें नन्हो मोडा अपनी धन-दौलत ले-कें दूर देस-खों चलो गओ। और भाँ गँवाँरी चाल से सब खो दओ। जब सब धन बढा-गओ तब वा देस-में बड़ो काल परो और वो भूखों मरन लगो॥

होशंगाबाद की बुंदेली

नरसिंहपुर के बिलकुल पश्चिम में होशंगाबाद जिला है। यह नर्मदा घाटी तथा महादेव पहाड़ियों के बीच स्थित है। इस ज़िले से संबद्ध प्रारंभिक सूची में यहाँ की मुख्य बोली मालवी बतलायी गयी थी। यह गलत था। पश्चिमी भूभाग अथवा हरदा तहसील की बोली अवश्य ही मालवी है लेकिन शेष ज़िले में बुंदेली का व्यवहार होता है। यह निम्नलिखित उदाहरण से प्रमाणित हो जायगा जिसके लिए मैं श्री एल० एन० चौधरी की कृतज्ञ हूँ। यहाँ कुछ बाहरी प्रभाव भी दृष्टिगत होते हैं यथा हिन्दोस्तानी 'वह' तथा 'था' के लिए मालवी 'थो' (बुंदेली 'हतो' के साथ) का यदा-कदा प्रयोग। कर्म-संप्रदान का चिह्न 'खों' अथवा 'खाँ' है। यहाँ छिन्दवाड़ा की बुंदेली के समान कर्ता को कर्ताकारक में रख कर अकर्मक क्रिया के भूतकालिक रूप के अव्यक्तिवाचक व्यवहार की भी प्रवृत्ति है जैसे 'मोंडा-ने चलो-गओ'। इस प्रकार संस्कृत में 'पुत्रेण गतम्' होना चाहिए। होशंगाबाद के बुंदेली-भाषियों की संख्या अनुमानत: ३००,००० है।

[सं०१०.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (ज़िला होशंगाबाद)

(श्री एल० एन० चौधरी, १८९९)

कोई आदमी-के दो मोंडा हते। उन-में-से नेंनें-ने बाप-से कई दादा धन-में-से मेरो बाँटो होय सो मोय दे-दो। तब बा-ने अपनो धन बाँट दओ। मुतके दिन नईं भए कि नेंनें मोंडा-ने अपनो बाँटो सबरो समेट कर-के दूर देस चलो-गओ और व्हाँ गँमारी-में दिन काटते अपनो धन उड़ा-दओ। जब सबरो धन उड़ा दओ तब बा देस-में बड़ो काल पड़ो और वह गरीब हो-गओ। और वो जा-के व्हाँ-के रैनवारों-में-से एक-खाँ रैन लगो जे-ने वा-के खेत-में सूअर चरान-खों भेजो। और वो उन छीमियोंमें-ने जिनें वे सुगर खात- थे अपनो पेट भरन चाहत-थो। और वाय कोई कछू नह देत-थो॥

सिवनी की बुंदेली

नरसिंहपुर के दक्षिण-पूर्व में सिवनी ज़िला है जिसके दो-तिहाई उत्तरी भाग में बुंदेली का व्यवहार होता है। इसके दक्षिण में मराठी प्रचलित है। यहाँ यह भी उल्ले-

खनीय है कि सिवनी नगर के बिलकुल निकटवर्ती क्षेत्र में ८,००० की मुसलमान-बहुल जनसंख्या द्वारा उर्दू बोली जाती है।

सिवनी ज़िले में बुंदेली-भाषी अनुमानतः १९५,००० है। पूर्व में बिलकुल निकट ही मँडला एवं बालाघाट ज़िले हैं जहाँ बघेली का एक रूप प्रयुक्त होता है। इस प्रकार सिवनी ज़िला बुंदेली की बिलकुल दक्षिण-पूर्वी सीमा है। जैसा कि नीचे दिये गये नमूने से स्पष्ट हो जायगा, यहाँ की बोली काफी सामान्य बुंदेली है। बघेली के प्रभाववश केवल कर्म-सम्प्रदान के चिन्हस्वरूप 'खों' की अपेक्षा 'कों' का व्यवहार किया जाता है।

सिवनी के लिए मूलतः संकलित प्रारंभिक भाषा-सूची में यहाँ प्रचलित बुंदेली को बघेली बतलाया गया था।

[सं० ११.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली **(ज़िला सिवनी)**

कोई आदमी-के दो लरका हते। ऊ-में-से नन्हें-ने अपने दद्दा-से कही, अरे दद्दा धन-में-से जो मोरे हींसा बाँटा-को हो सो मोरो मों-कों दे-दे। तब ऊ-ने ऊ-कों अपनो धन बाँट दओ। बहुत दिना नहीं भये-हते के नन्हों लरका सब हींसा बाँटा-को धन लै-के दूर मुलक-कों चलो गओ और हुँआँ खोटे कामों-में सबरो हींसा-बाँटा-को धन खो दओ॥

बुंदेलखंड की खटोला बुंदेली

बुंदेलखंड के दक्षिण-मध्य एवं पश्चिम-मध्य (अर्थात् बिजावर तथा पन्ना राज्य; चरखारी राज्य के रामपुर एवं महाराजनगर परगनें, छतरपुर, छतरपुर राज्य के मान, देओरा और राजनगर परगने तथा लुगासी, गरौली, अलीपुरा, बीहत एवं बिलहरी जागीरें) में जो बुंदेली बोली जाती है, उसका स्थानीय नाम 'खटोला' है। यह पश्चिम के ओरछे में प्रचलित बुंदेली के समान ही है। यह नीचे उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत लोक-कथा से स्पष्ट हो जायगा जिसके लिए मैं चरखारी के रायसाहब काशी प्रसाद का आभारी हूँ। खटोला-भाषियों की संख्या ५६९,२०० बतलायी गयी है।

स्थानीय विशेषताओं के रूप में 'नहियाँ' (नहीं है।), 'दैहौ' (तुम दोगे।) एवं 'जैहै' (वह जायगा) उल्लेखनीय है। 'जो' (यह) का कर्ता स्त्रीलिंग 'जा' है।

[सं० १२]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (खटोला) (जिला पन्ना)

एक राजा-कें एक बेटी हती। राजा पूजा-के लानें एक बाबा राखें-हते। ऑर बाबा की कही बहुत मानत-हते। राजा-की बेटी बहुत सुन्दर हती। जब हुस्यार भई तब राजा-नें ऊ-के ब्याह-कौ विचार करो। बेटी-की सुनाई-पै बाबा जो राजा पूजा-के लानें राखें-हते मोहत-हतो। बाबा-नें राजा-सें कही कै ई बेटी-के लछिन अच्छे नहियाँ और जो ई-कों अपनें इतै रहन दैहौ तो राज छूट जैहै। सो आप-कों चाहिये कै ई-कों अपनें राज-सें निकार देव। राजा-नें कही अच्छी ऑर पूँछी कै कैसें निकारें। बाबा बोलो एक कठारा बनवा-कें ऊ-मैं खैबे-खाँ धर देव ऑर बेटी-कों ऊ-मैं बैठार देव और नदी-मैं बहा देव। बाबा-नें इतै तौ राजा-सें जा कही ऑर मॉइ नदी-के नीचें दो चार कोस-के फासले पर जो चेला रहत-हते उनें इसारौ लगा राखौ कै नदी में जो कौनउँ कठारा कड़े तौ रोक-राखिऔ ऑर बिना हमारे आए ना खोलिऔ। राजा-नें बेटी-कों कठारा-में बंद करकें और खैबे-खाँ धर-कें नदी-मैं बहा दओ। कठारा बहत बहत एक दूसरे राजा-के गाँउ हो-कर जो नदी-के किनारें थोड़ी दूर-पै हतो निकरो। राजा-नें जो कठारा बहत देखो मँगवा लओ ऑर जो खोलो तौ ऊ-मैं-सें बेटी निकर आई। राजा-नें पूँछी तुम को हौ। बेटी-नें बतायो कै हम फलानें राजा-की बेटी आँय। राजा-नें कही कै जैसी उन-की बेटी तैसी हमारी। जाव रनवास-मैं रहौ ऑर राजा-नें एक घुर-मूँआ बाँदर मँगा-कें ऊ कठारा मैं बंद कर-कें छुड़ा दओ। कठारा बहत-बहत जब चेलन के ऐंगर हो-कर कड़ो तौ उन-नें पकर लओ ऑर बाबा-खाँ खबर दई कै कठारा रोक राखो-है। बाबा राजा-सें कौनउँ मिस-सें छुट्टी लै-कर चेलन-कें गओ ऑर कठारा धरो देख-कें बहुत खुसी भओ। बाबा चेलन-सें बोलो कै आज रात भर खूब भजन गाव और जो कोई टेरैं बा चिल्लाइ तौ काउ-की ना सुनिऔ। चेला खूब भजन गाउन लगे ऑर बाबा कठारा उठा-कें एक घर-में लै गओ ऑर घर-के किवारे खूब बंद कर-कें जो कठारा खोलो तौ ऊ-मैं-मैं बाँदर निकर आओ। बाबा जानत-तो कै बेटी हूहै ऑर बाबा-खाँ चींथन लगो। रात भर चींथो ऑर बाबा खूब चिल्लात रहो अकेलें काऊ-नें ना सुनी। जब अँधियारी भई ऑर बाबा बड़ी देर-लौं ना निकरो तब चेलन-नें जो किवारे टारे तौ एक बड़ा बाँदर निकर-कें भग गओ और बाबा एक कौनें-मैं मरो डरो मिलो॥

कहावत

जो जा-कौं जैमी करै सो तैसो फल पाइ ।
सुदर वैठी राजघर वावै वन्दर खाइ ॥

दमोह की खटोला बुंदेली

दमोह जिले की वोली अपने विलकुल उत्तर के पन्ना राज्य में प्रचलित खटोला से वहुत मिलती-जुलती है । यह नीचे दिये गये नमूने से प्रमाणित हो जायगा ।

[सं० १३.]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (खटोला) (ज़िला दमोह)

कोई मनखे-के दो लरका हते । ऊ-मँ-से लुहरे-ने अपने दद्दा-से कई कै ए दद्दा धन-मँ से जो मोरो हीँसा होय सो मो-खाँ वाँट दवै । तव ऊ-नेँ ऊ-खाँ अपनो धन वाँट दवो । भौत दिन नइँ भये कै लुहरो लरका सवरो धन समेट-के दूर मुलक-मँ कढ़ गयौ और उतै वदमासी-मँ अपनो धन वढा-डारो । जव ऊ-नेँ सवरो धन वढा-डारो तव उतै काल परो और ऊ गरीव हो-गओ ॥

हमीरपुर तथा जालौन की लोधाती अथवा राठोरा बुदेली

हमीरपुर ज़िले के उत्तर-पश्चिमी भाग तथा जालौन के निकटवर्ती उरई परगनें की आवादी मे लोधा जाति के व्यक्तियो का वाहुल्य है । अत. यह क्षेत्र 'लोधात' नाम से जाना जाता है । यहाँ का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण राजस्वविषयक विभाग हमीरपुर के राठ परगने में है और यहाँ प्रचलित वुदेली के रूप को 'लोधाती' अथवा 'राठोरा' कहते हैं । हमीरपुर ज़िले के मध्य मे चरखारी राज्य का वावन चौरासी परगना, सरीला राज्य तथा जिगनी जागीर है । यहाँ भी राठोरा ही प्रचलित है ।

इस प्रकार लोधाती एव राठोरा-भाषियो की निम्नलिखित सख्याएँ मिलती हैं । ये वे आँकडे नही है जो ज़िलो की प्रारभिक भाषा-सूचियो मे मूलत प्रकाशित हुए थे ।

जालौन	८,०००
हमीरपुर	९८,०००
वुंदेलखड एजेंसी	३९,५००
कुल योग	१४५,५००

लोवाती बोली लगभग शुद्ध बुंदेली है। इसमे ओरछा की बुंदेली की ऊपर उल्लिखित सभी विशेषताएँ हैं जैसे कर्म-सम्प्रदान का चिन्ह 'कों' अथवा 'खाँ', करण-अपादान का चिन्ह 'सें' तथा यौगिक कृदत का चिन्ह 'कें'। यहाँ शब्दसमूह असामान्य है। अन्यत्र तथा नमूने मे प्राप्त निम्नलिखित शब्द उदाहरणार्थ प्रस्तुत करने योग्य है—

'अनुआ', झूटा आरोप। सामान्य हिंदोस्तानी मे यह स्त्रियो का शब्द समझा जाता है।
'उपद्रड', लडाई, हिन्दोस्तानी 'उपद्रव'।
'बैयर', स्त्री, पत्नी।
'चुनाटू', चूना रखने का सदूक, हिन्दोस्तानी 'चुनौटी'।
'खालें', नीचे।
'बेंडन,' वदी वनाना, 'विंडन', वदी हुआ, हिन्दोस्तानी 'बेंडा', साँकल।
'निवेरन', निश्चय, अतर करना, हिन्दोस्तानी 'निवेडना', बाँटना।
'खुवाहद', खावद, पति।
'सुआनौं', सोना।
'लुआहौं', लोहा।
'अकेऊँ', लेकिन।

हमीरपुर में लोवाती का उच्चारण अन्य स्थानो की अपेक्षा सामान्यत- अधिक विवृत है। यहाँ 'ओ' की अपेक्षा 'औं' ध्वनि को प्राथमिकता दी जाती है, यथा 'को' एव 'मोती' की अपेक्षा 'कौ' तथा 'मौती' का व्यवहार होता है। 'सुआनौं' और 'लुआहौं' के अतिरिक्त 'मेरा' भी कभी-कभी 'मुआरौ' रूप में मिलता है। 'वड़ौ' जैसे सवल विशेषण भी 'ओ' की अपेक्षा 'औ' अत्य होते हैं। इसी प्रकार 'अपने' एव 'वेटा' के लिए क्रमश- 'अपनै' तथा 'व्याटा' रूप मिलता है। अधिकतर सवल सज्ञाएँ 'ओ' अथवा 'औ' अत्य होती हैं लेकिन कुछ, विशेषत 'व्याटा' जैसी सवधसूचक सज्ञाएँ, 'आ'-अत्य भी होती हैं। 'आ' से समाप्त होने वाली ऐसी सज्ञाओं का विकृत रूप भी 'आ'-अन्त्य होता है, यथा कर्म 'लरका-खाँ', 'मुपेत घुरा-कौं पलँचा'।

सज्ञा-रूपों की रचना का ढँग सामान्य है। अन्य अनेक वोलियो के समान यहाँ भी 'ए' अंत्य अधिकरण एव करण के उदाहरण मिलते हैं, जैसे 'घरे' (घर में), 'भूखे' (भूख से या में)। 'जनें' (व्यक्ति) कर्ता वहुवचन है।

सर्वनामो में 'वौ' (वह), 'वा' (वह, स्त्री०) तथा दोनो लिंगो के लिए विकृत 'वा' उल्लेखनीय है। 'जौ', 'ऊए', 'उनअ-ई' एवं 'कोऊ' (वि० 'काऊ') क्रमश 'यह', 'उसे', 'उन्हें भी' तथा 'कोई' के पर्याय हैं। 'आप' या 'अपुन' सम्मानसूचक हैं। 'विचारी',

'कही' और 'पूंछी' जैसे रूपो में विज्ञात 'वात' के अनुरूप स्त्रीलिंग का व्यवहार फिर उल्लेखनीय है। अन्य द्रष्टव्य रूप यह है, 'आन्' (आकर), 'खवा' (खिला), 'खाएँ', वनाफरी के समान स्त्रीलिंग क्रियार्थक सज्ञा, और 'पहिनी' के लिए 'पहिनै', वनाफरी की भाँति 'अइ' स्त्रीलिंग है।

[सं० १४]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (लोधाती अथवा राठोरा) (जिला हमीरपुर)

(रायसाहब काशीप्रसाद)

एक कोऊ साहूकार रहै। वा चार जनैं घर-मैं हते। साहूकार वा साहूकारिन वा साहूकार-का वहू वा व्याटा। जौन गाँव-मैं साहूकार रहत-तो वा गाँव-के राजा-नैं विचारी कै साहूकार-सैं हजार दो हजार रुपैया कौनउ अनुआ उपद्रै-सैं लै लओ चाहिये। रात-कैं राजा ऊ-के घर-की पछीत आन लगो कि साहूकार-की वहू वा व्याटा रात-कैं जो निक-रहैं तौ एही-मैं ऊखाँ डाँड लैहौं। अकेलैं साहूकार-के घर-मैं-सैं कोऊ ना गओ आओ। और जहाँ तहाँ पर रहे॥

साहूकार की वहू वा व्याटा जो भीतर परे-ते वहू-नैं अपनै स्वामिया-सैं कही कि सोओ वहुत रात जात-रही-है। ऊ-नैं कही कि, पान लगा-देव। खा-कैं सो रहैं। विगर पान खाएँ मोरी आँखी ना लगहै। वइयर-नैं कही कि चुनाटू-मैं चूना नहीं आय। वो वोलो थैंखालैं डुकर-की लिया-मैं-सैं चूना लै-आओ। वा खालैं आई। उतइँ चूना ना मिलो। सो जा-कैं ऊ-नैं स्वामिया-सैं कही कि ओई थैं लिया-मैं चूना नहियाय। वो वोलो कि विगर पान मोरी आँखी ना लगहै सो अपनी नथुनिया-मैं जो नौ लाख-कौ मोती पहिनै-है सो ई-खाँ दिया-की जोत-सैं जरा देव कि चूना हो-जाय। ऊ-नैं मोती-कौ चूना बना-कैं पान लगाओ और ऊए खवा-दओ और फिर वे सो-रहे॥

राजा-नैं जो पछीतैं लगे हते सव सुनी, और मन-मैं वोलो कि जव एक त्रिरी पान-के लानैं नौ लाख-कौ मोती जरा-दओ-है तौ जा-के धन-कौ कौन मित है॥

राजा अपनै महलन-कौं आवत-रहे और जव सकारी भओ तव साहूकार-कौं पकर वुलाओ वा पूंछी कि तुम वडे कि हम वडे। साहूकार-नैं कही कि मैं नहीं जानत कै को बडो आय। आप-ई जानैं। राजा-नैं साहूकार-कौं हवालात-मैं वैंड दओ और फिर राजा-नैं साहूकारिन वा ऊ-के लरका-कौं वुलाओ वा पूंछी कै हम वडे हैं कै तुम। उन-ई-नैं निवेरो ना; कओ। तव उन-ई कौं हवालात-मैं विडा-दओ। फिर साहूकार-की वहू-कौं

बुला-कैं पूंछी कि हम बड़े कि साहूकार वडौ है। ऊ-नैं कही कि गरीपरवर जो मैं जान माफ-कर पाऊँ तौ कहौं। राजा-नैं कही कि तोरी जान माफ है कहू। ऊ-नैं कही कै ना-तौ अपुन वडे आँय ना मोरी ससुर वडौ आय। दिन वडौ है। राजा-नैं पूंछी कि कैसैं दिन वडौ है। ऊ-नैं कही देखौ काल मोरे ससुर-कौ दिन वडौ हतो कि मोरे खुवाहंद-नैं नौ लाख-कौ चूना एक विरी पान-मैं खा-लओ। औंर आज अपुन-कौ दिन वडौ है कि अपुन-के हुकम-सैं मोरे सास ससुर वा खुवाहद भूखे हवालात-मैं थिंडे-हैं। सो दिन वडौ है। कोऊ काऊ-सैं वडौ नही आय। राजा जा सुन-कैं खुसी भए और ऊ-के सास ससुर वा खुवाहद-कौं हवालात-सैं छोड-दओ वा ऊ-खाँ इनाम दई और ऊ-कौं-ऊ-के घरे पठवा-दओ॥

दतिया तथा निकटवर्ती क्षेत्र की पँवारी बुंदेली

वुदेली का पँवारी रूप ग्वालियर तथा वुदेलखड के उन भागो मे प्रचलित है जहाँ परमार एव पँवार राजपूतो की सख्या अविक है। वुदेलखड मे पँवारी झाँसी ज़िले के पश्चिम मे दतिया राज्य तथा इदौर राज्य के आलमपुर परगने मे वोली जाती है। ग्वालियर मे इसका व्यवहार दतिया से मिले हुए क्षेत्र अर्थात् ग्वालियर के पूर्व मे एव इस राज्य के भाँडेर ज़िले मे होता है।

इसके वोलने वालो की सख्या निम्नलिखित वतलायी गयी है—

वुदेलखड	२०३,५००
ग्वालियर	१५०,०००
कुल योग	३५३,५००

पँवारी और सामान्य वुदेली में कोई अंतर नही है। इसकी स्थानीय विशेषताओ में से अधिकाश लोधाती में भी विद्यमान है और उनका विवरण दिया जा चुका है। यह नीचे दी गयी लोककथा से स्पष्ट हो जायगा जो वुंदेली के अन्य अनेक उदाहरणो के समान रायसाहव काशीप्रसाद से प्राप्त हुई है। यहाँ के साधारण शब्दकोशो मे न मिलने वाले निम्नलिखित शब्द उल्लेखनीय है—

'हाइ–पिंगला', विलाप।
'लिंरैया', भेड़िया।
'कोल–कदैयाँ', कँधे पर।
'सींका', कँधे पर।

मध्यवर्ती 'ह' के विलोप तथा सकोचन की वुंदेली प्रवृत्ति यहाँ वहुत प्रवल है, यथा 'कै' ('कहि', कह कर); 'रौंगो' (मैं रहूँगा); 'रओ' (रहा); 'रतो' ('रहत-तो',

वह रह रहा था)। दूसरे उल्लेखनीय क्रियासबधी रूप 'लघै' (वह पहुँचेगा।) तथा 'लखँ-रतो' (वह चराता रहा था) हैं। नमूने मे 'कुग्रान' (कहलाना), 'दिखावन' (ग्रर्थ में नपुसक, सभाव्य कर्मवाच्य) तथा 'दिवान' (दिलवाना) कारणवाची क्रियाएँ मिलती है।

[सं० १५]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

वुदेलो (पँवारी) **(दतिया राज्य)**

(रायसाहब काशीप्रसाद)

एक सॉहूकार एक तलाव-के किनारैं रतो। एक दिन एक कगाल साहूकार-के इतै माँगवे-कौं ग्राग्रो। साहूकार वोलो कि जो तलाव-मैं सब रात ठाडो रहै वाए मैं वीम रुपैया देंव। कगाल वोलो मैं ठाडो रग्रोंगो ग्रौर साहूकार-सैं तीन वेर कुवा-कैं रुपैयन-की पक्की कर लई। ग्रौर कगाल तलाव-मैं रात-के समैयाँ जाय-कैं ठाडो भग्रो। ग्रौर हुन-बीचाँ वाए कोऊ ना दिखावै ग्रकेलैं एक दिया दूर गाँव-के दिवाले-मैं उजरत दिखावै। सो वाए ग्रपनी नजर-सैं लखैं रतो। सकारैं तलाव मैं-सैं कढ-कैं साहूकार-के ढिकाँ गग्रो ग्रौर साहूकार-सैं वोलो कि रुपैया देव। साहूकार वोलो जा तौ वता रात भर तो-कौं काऊ-कौ ग्रासरो तौ नाई रग्रो। कगाल वोलो मोए काऊ-कौ ग्रासरो नाई रग्रो। ग्रकेलैं दिवाले-मैं एक दिया उजरत दिखात रग्रो। साहूकार-नैं कही कि तैं-नैं सब रात दिया-सैं तापो ग्रौर वाए कछू ना दग्रो।

बो हाइ-पिंगला करत चलो गग्रो। गैल-मैं वाए एक लिंरैया मिलो ग्रौर पूँछी कि हाइ-पिंग्रुला कैसी करत-जात है। वा-नैं सब हाल कहि सुनाग्रो। लिंरैया वोलो कि मैं रुपैया तोए दिवा देहौं। ग्रकेलैं तैं मोए कोल-कदैयाँ घर लै-चल ग्रौर इत-ई-कौ-इत-ई उतार जाइयो। ग्रौर पैलाँ गाँव-मैं कै ग्रा कि वन-कौ राजा ग्राउत-है सो ग्रपनै ग्रपनै कुत्ता वाँध लेव। कगाल गाँव-मैं कै ग्राग्रो ग्रौर लिंरैया-कौं लिवा-गग्रो। लिंरैया-नैं जा-कैं पँचाइत जोरी ग्रौर कही कि दो खम्म गार-देव जा-सैं सीका वाँध-देव ग्रौर जा-मैं चावरन-की हडी धर-देव ग्रौर तरैं ग्राग वार-देव कि चावर चुर-जावैं। पच वोले कै हडी दूर टगी-है। ग्राँच ना लगहै। चावर कैसैं चुरहैं। लिंरैया वोलो कि दिया-सैं तापत कैसैं हैं। ऐसैं चावर चुरहैं। पच कछू ना वोले। लिंरैया वोलो कि ना दिया-मैं कगाल-नैं तापो-है ना चावर चुरहैं। वाए रुपैया गिन-देव। ग्रौर साहूकार-सैं वाए रुपैया गिना-दए। कगाल-नैं रुपैया लै-कैं लिंरैया-कौं कोल-कदैयाँ धरो ग्रौर वन-मैं वाए उतार-ग्राग्रो ग्रौर फिर ग्रपनै घरे गग्रो॥

उत्तर की मिश्रित बोलियाँ

उत्तर की ओर बुंदेली के पश्चिम मे पश्चिमी हिन्दी की निकटत सबद्ध ब्रजभाखा है और पूर्व मे पूर्वी हिन्दी की बघेली बोली। हमीरपुर मे इसका विस्तार यमुना के निकट तक है। उससे यह तिरहारी-भाषी एक सँकरे-से भूभाग द्वारा पृथक् हो गयी है। जैसा कि कहा जा चुका है, शुद्ध बुंदेली लगभग सपूर्ण हमीरपुर मे प्रचलित है। इसके पूर्व मे बाँदा ज़िला है।

तिरहारी तथा बाँदा की बोलियो का विवरण 'पूर्वी हिन्दी' के अतर्गत (दे० खंड ६, प्र० १३२ पर और आगे) दिया जा चुका है। ये सब बोलियाँ बघेली और बुंदेली के मिश्रित रूप हैं। इन सभी में बघेली के तत्त्व अधिक प्रमुख होने के कारण इनका विवरण इसी के अतर्गत दिया गया है। यही स्थिति हमीरपुर मे लगभग ८,००० बनाफरो द्वारा व्यवहृत बनाफरी की है, यद्यपि यह अन्यत्र बुंदेली का एक रूप ही है।

हमीरपुर और बाँदा के बीच मे (केन नदी के दोनो किनारो पर, जिससे इन ज़िलो की सीमा निर्धारित होती है।) कुण्डरी बोली जाती है। बाँदा की ओर कुण्डरी जूडर-बघेली का एक रूप है और इसी शीर्षक से (दे० खंड ६, पृ० १५२ पर और आगे) उसके बारे मे बतलाया जा चुका है। हमीरपुर मे भी यह एक मिश्रित बोली है लेकिन उसमे बुंदेली तत्त्वो का प्राधान्य है। इसका विवरण आगे दिया जायगा।

हमीरपुर के दक्षिण-पूर्व में (अर्थात् बुंदेलखड के उत्तर-पूर्व मे और उसके निकटवर्ती क्षेत्रो में) वास्तविक बनाफरी बोली जाती है। इस मिश्रित बोली मे पूर्वी हिंदी की कई विशेषताएँ होते हुए भी इसका स्वरूप मुख्यत बुंदेली का है।

जहाँ तक पूर्वी हिंदी के इन मिश्रणो का सबध है, कहा जा चुका है कि तिरहारी (बघेली के एक रूप की भाँति वर्गीकृत) हमीरपुर ज़िले मे यमुना के दक्षिणी किनारे के साथ-साथ प्रचलित है। ज़िले की सीमा पर हमीरपुर के बिलकुल उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र जालौन के निकट तिरहारी का व्यवहार समाप्त हो जाता है, लेकिन यहाँ जालौन मे एक छोटा-सा भू-भाग है जहाँ तिरहारी ज़िले की सामान्य बुंदेली मे क्रमश घुल-मिल जाती है। इस बोली को 'निभट्टा' कहते हैं। यह बुंदेली पर आधारित है किंतु इसमे पूर्वी हिंदी की भी अनेक विशेषताएँ निहित हैं। जालौन मे अन्यत्र शुद्ध बुंदेली बोली जाती है।

उत्तर-पश्चिम मे बुंदेली भदौरी के माध्यम से ब्रजभाखा मे क्रमश. परिवर्तित हो जाती है। भदौरी का विस्तार आगरा के ज़िले में चबल नदी के साथ-साथ, मैनपुरी, इटावा तथा ग्वालियर राज्य के लगभग समस्त ज़िलो मे है।

इन मिश्रित बोलियों के बोलने वालों की अनुमानित संख्याएँ निम्नलिखित हैं —

बोली का नाम	व्यवहार का क्षेत्र	भाषा-भाषियों की संख्या	
बनाफरी	बुंदेलखंड	२४५,४००	
	बघेलखंड	९०,०००	३३५,४००
कुण्डरी	हमीरपुर	...	११,०००
निभट्टा	जालौन	...	१०,२००
भदौरी	ग्वालियर	१,०००,०००	
	आगरा	२५०,०००	
	मैनपुरी	८,०००	
	इटावा	५५,०००	
			१,३१३,०००
	कुल योग	...	१,६६९,६००

यह स्मरणीय है कि इनके अतिरिक्त हमीरपुर में ५,००० बनाफरी-भाषी तथा बाँदा में कुछ कुण्डरी-भाषी बघेली के अंतर्गत वर्गीकृत किये गये हैं।

इन बोलियों में अपना साहित्य होने के कारण बनाफरी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। बोलने वालों की संख्या के आधार पर भदौरी इसके बाद आती है।

बनाफरी

बुंदेली का बनाफरी रूप बनाफर जाति के राजपूतों द्वारा व्यवहृत होता है। इसके क्षेत्र में बुंदेलखंड का मुख्यतः उत्तर-मध्य तथा पूर्वी भाग (अर्थात् चरखारी राज्य का चदला परगना, छतरपुर का लौरी परगना, पन्ना का परगना धरमपुर; नौगाँव रेवइ, गौरिहर तथा बेरी की जागीरें और अजयगढ एवं बओनी राज्य) है। बनाफरी हमीरपुर जिले के दक्षिण-पूर्वी कोने में और पूर्व की ओर बघेलखंड के नागोद एवं मैहर राज्यों के पश्चिमी भागों में भी बोली जाती है। मिश्रित होने पर भी बनाफरी बुंदेली के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रूपों में से है क्योंकि इसमें आल्हा-ऊदल-जैसे विख्यात वीरों से संबद्ध काव्य सुरक्षित है। बोली की इस उपलब्धि का आगे विस्तृत विवरण दिया जायगा।

बनाफरी-भाषियों के अनुमानित आँकड़े निम्नलिखित हैं —

बुंदेलखंड एजेंसी	२४५,४००
हमीरपुर	५,०००
बघेलखंड एजेंसी	९०,०००
कुल योग	३४०,४००

लीच के अनुसार उर्दू के अधिक मिश्रण के कारण बनाफरी प्रामाणिक बुंदेली से भिन्न है। उनका अभिप्राय संभवत यह है कि बनाफरी में अरबी-फारसी शब्द भारत के इस भाग की बोलियो की अपेक्षा अधिक मिलते हैं। यह बिलकुल सही है। प्राप्त उदाहरणो, विशेषत आल्हा-ऊदल से सबद्ध, के निरीक्षण से स्पष्ट हो जाता है कि ये विदेशी शब्द काफी बडी सख्या में गृहीत किये गये है। उनमे से कुछ तो मूल भारतीय शब्दो के समान क्रियार्थक धातुओं के रूप मे व्यवहृत होते हैं और उनमे क्रियारूप बनाये जाते हैं। ऐसे उधार लिये गये शब्द सामान्य रूप में बिना किसी परिवर्तन के प्रयुक्त होते हैं और यदि उनके क्रियास्वरूप का व्यवहार हो तो यह केवल वक्रोक्ति के द्वारा ही किया जाना चाहिए। लेकिन यहाँ अरबी 'नजर' तथा 'तजवीज' से बने 'नजरत' (वर्तमानकालिक कृदन्त, 'नजर करता') एव 'तजवीजैं' जैसे रूप मिलते हैं। लीच ने आगे बनाफरी को 'उर्दू का एक विकृत तथा अपरिष्कृत रूप' कहा है। यह कथन सही नही कहा जा सकता क्योकि इसके व्याकरण मे प्राप्त बाह्य तत्त्व बघेली के है, उर्दू के नही। बनाफरी बुंदेली एव बघेली का ऐसा मिश्रण है जिसका परिमाण व्यवहार-क्षेत्र तथा बोलने वालो की जाति और व्यक्तित्व के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। हमीरपुर से प्राप्त अपव्ययी पुत्र-कथा के रूपातर मे बघेली प्रभाव प्रमुख है, अत. इसे पूर्वी हिंदी के अतर्गत (दे० खड ६, प्र० १५५ पर तथा आगे) रखा गया है। आगे दक्षिण की ओर वास्तविक बुंदेलखड मे सर्वत्र बुंदेली प्रभाव का आधिक्य है, जैसा कि चरखारी राज्य से प्राप्त नमूनो से प्रमाणित हो जायगा। इन नमूनो मे से एक मे अपव्ययी पुत्रकथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ हैं और दूसरा एक लोककथा के रूप मे है। इनके बाद विशेष परिचयसहित पूर्वी हिंदी के दो और उदाहरण दिये गये हैं। यह आगे स्पष्ट हो जायगा कि पुत्र-कथा का रूपातर प्रामाणिक बुंदेली के समान है लेकिन अन्य तीन उदाहरणो मे पूर्वी हिंदी के अनेक प्रभावचिह्न दृष्टिगत होते हैं।

बनाफरी की मुख्य विशेषताओ का निम्नलिखित विवरण उदाहरणो तथा श्री विन्सेंट स्मिथ की पुस्तक पर आधारित है।

उच्चारण—सामान्य बुंदेली के समान है। सयुक्त स्वर 'अइ' तथा 'अउ' साधारण रूप से क्रमश 'ए' एव 'ओ' के लिए प्रयुक्त होते है, यथा 'से' की अपेक्षा 'सै'। 'ओ' तथा 'ए' का 'वा' एव 'या' में परिवर्तन अपेक्षाकृत अधिक सामान्य है। यह व्यवहार वैकल्पिक भी है क्योकि एक ही शब्द प्राय दोनो प्रकार से लिखा हुआ मिलता है जैसे 'एड़' (सहारा) के लिए 'याड', 'खेत' तथा 'ख्यात' दोनो, 'केर' (का) एव 'क्यार'; 'घोड़' और 'घ्वाड'।

व्यजनो मे 'न्'प्राय 'ल्' मे परिवर्तित हो जाता है, यथा 'जलम' ('जनम'), 'जलनी' ('जननी')। दूसरी ओर 'तरवार' ('तलवार') जैसे शब्दो मे 'ल्' बहुधा 'र्' मे परिणत हो जाता है। 'वनापर' शब्द मे 'फ्' वर्ग नियमपूर्वक 'प्' हो जाता है और 'र्' वर्ण प्राय अनपेक्षित स्थानो पर मिलता है, जैसे 'सरमान' ('सनमान', सम्मान'), 'सरमूच' ('समूच', समूचा) तथा 'असरार' ('वेशुमार')।

उपान्त्य-पूर्व का दीर्घस्वर नियमित रूप से ह्रस्व हो जाता है, उदाहरणार्थ 'मान' धातु का भविष्यत् उत्तम पुरुष एकवचन 'मनिहौं' तथा 'खेल' से सम्मानसूचक आज्ञार्थक 'खिलियडँ' वनता है। 'मोहि' (मुझे), 'जेह' (किसे) आदि शब्दो मे यदा-कदा ह्रस्व 'ऐ', 'ओ' मिलते हैं।

संज्ञा-रूप—अनेक स्त्रीलिंग सज्ञाएँ अत्य 'एँ' (हिंदोस्तानी 'ई' के तत्स्थानी) से समाप्त होती है जो विकृत कारक मे परिवर्तित नही होता, यथा 'एक जुहारँ' (एक जुहार), 'शिकारँ' (शिकार), 'खवरँ' (खबर, एकवचन तथा वहुवचन दोनो रूपो में प्रयुक्त) और 'सलामँ' (सलामी, वहुवचन के समान भी व्यवहृत)। सवल तद्भव सज्ञाएँ वुंदेली के समान सामन्यित 'ओ'-अत्य होनी हैं लेकिन कभी-कभी पूर्वी हिंदी के 'आ' रूप का भी प्रयोग होता है। इन सज्ञाओ के विकृत रूप का आधार 'ए' होता है जैसे 'घोडो' या 'घोडा', वि० 'घोडे'। कभी-कभी 'भौंरा' के समान 'आ'-अत्य विकृत रूप मिलता है जो सभवत राजस्थानी से उधार-ग्रहण का उदाहरण है। इसी पकार 'चेलानै कहस' (चेला ने कहा) भी उल्लेख्य हैं।

एकवचन एव वहुवचन का एक अत्यत सामान्य विकृत रूप 'अन्' अथवा 'एन्'-अत्य है। यथा 'खेतन्'-मा (खेतो में), 'चौकन्-का' (चौकी को), 'आहूँ सौदागर मैं घोड़ेन्-का, घोडन्-का वेचैं जाँव' (मैं घोडो का सौदागर हूँ, मै घोडो को वेचने जा रहा हूँ।),

कर्ताकारक का व्यवहार कुछ अनियमित-सा है क्योकि 'ने' अथवा 'नै' चिह्न प्राय. विलुप्त रहता है। चाहे पश्चिमी हिंदी के समान सामान्य भूतकालिक कृदत का प्रयोग हो और चाहे पूर्वी हिंदी की भाँति काल के एक जुडे हुए रूप का, कारक का व्यवहार सकर्मक क्रियाओ के सभी भूतकालिक रूपो के पूर्व होता है। इसलिए दूसरी स्थिति तक में क्रिया कर्म की दृष्टि से लिंग के अनुरूप होती है, जैसे 'वाँनी-नै लाग तौल-दई'(दुकानदार ने रसद तौल दी।), 'या वात व्राह्मन सुनी' (ब्राह्मण ने यह वात सुनी।), 'वावा पूछिस' (वावा ने पूछा।), 'चेला-नै कहस' (चेला ने कहा।), 'ना सीख्यूँ (स्त्री०) वरारँ साँग' (मैंने तीर चलाना नही सीखा है।)। अंतिम उदाहरण में स्त्रीलिंग में 'सीख्यूँ' 'वरारँ' के अनुरूप होने के लिए है। इसका पुल्लिग रूप 'सीखौंय' होगा।

कारक परसर्गों के सामान्य रूप निम्नलिखित हैं—

कर्ता, 'ने', 'नै'।

कर्म-संप्रदान, 'खाँ' ('खों' नहीं), 'काँ', 'का', 'कीं', 'कै'।

सम्प्रदान, 'लानें', 'खितिर', 'काजे' (लिए)।

करण-अपादान, 'सें', 'सैं', 'खैं', 'तें', 'साँ', 'सो', 'मन', 'पैं'।

सबंध, 'केर', 'क्यार'; सामान्य लिंग, प्रत्यक्ष तथा विकृत।

'केरौ', 'क्यारौ', 'काँ', 'का', पुल्लिंग, प्रत्यक्ष।

'केरे', 'क्यारे', 'के', पुल्लिंग, विकृत।

'केरी', 'क्यारी', 'कै', 'की', स्त्रीलिंग, प्रत्यक्ष तथा विकृत।

अविकरण, 'मैं', 'माँ', 'मा', 'माहीं', 'महनी'।

व्यक्तिवाचक सर्वनाम ये हैं 'मैं', 'मैं' (मैं), 'मा-हूँ' (मैं भी), 'मा-हीं' (मैं तक); वि० रूप, 'मोहिं', 'मोह', 'म्वह', 'मो'; 'मोहीं' (मुझको); 'मोर', 'मोरा', 'म्वार', 'म्वारा' (मेरा), 'हम', 'हम-हूँ' (हम भी), 'हम-हीं' (हम तक); वि० रू० 'हम'; 'हमैं' (हमको), 'हमार,' 'हमारौ' 'हमरौ,' (हमारा)।

'तुइँ', 'तइँ', 'तइ' (तू), 'ता-हूँ' 'तो-हूँ' (तू भी), 'त-हीं', 'तो-हीं' (तू तक); वि० रू० 'तोहिं', 'तोह', 'त्वह', 'तो', 'तोहीं' (तुझको), 'तोर', 'तोरा', 'त्वार', 'त्वारा' (तेरा), 'तुम', 'तुम-हूँ' (तुम भी), 'तुम-हीं' (तुम तक), वि० रू० 'तुम', 'तुमैं' (तुमको), 'तुमार', 'तुमारौ', 'तुमरा' (तुम्हारा)।

'ऊ', 'वा' (वह), 'व-हूँ' (वह भी), 'व-हैं' (वह तक), वि० रू० 'वह', 'वा'; 'वहीं' (उसको); 'उँय', 'ऊँय' (वे), 'वो-ऊ', 'व-ऊ' (वे भी), वि० रू० 'उन', 'उन्हैं' (उन्हें), 'उनहुन' (उनको भी) 'उनहिन' (उनको तक)।

'ई', 'या' (यह), वि० रू० 'एह', 'या', बहु० 'इँ', वि० 'इन' आदि।

सर्वनाम 'जे' या 'ज्या', वि० 'जेह', 'जे', 'ज्या' हैं।

उपरोक्त सभी मे एकवचन की अपेक्षा बहुवचन का व्यवहार होता है।

'काहू', 'कोऊ' (कोई), वि० 'काहू'। 'को', 'कौन', वि० 'क्या'। 'का', वि० 'काहे'।

क्रिया-रूप—बिना सहायक क्रियाओं के कृदतों से बने सभी कालों के दो रूप होते हैं, पश्चिमी हिंदी के समान अकेला कृदत और पूर्वी हिंदी की भाँति वचन तथा पुरुष का द्योतन करता हुआ परसर्गयुक्त कृदत। दूसरी स्थिति में परसर्ग 'ओ' वाले कृदत के बदल रूप मे जोड़े जाते हैं, सामान्य आधार में नहीं, यथा 'मार-स्' के स्थान पर 'मारो-स्'।

अस्तित्वसूचक क्रिया—

वर्तमान, 'मैं हूँ', आदि

	एक०	बहु०
१	आहूँ, हौं	आहैं, आहन, आह्यन, हन
२	आही, ही	आहू, आहा, हा
३	आही, आहै, है, आइ	आहैं, आहीं, हैं, आँइ

'हौं' के लिए 'हवौं' का व्यवहार किया जा सकता है।

भूत, 'मैं था', आदि

एक०		बहु०	
पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
हतो, तो	हती, ती	हते, ते	हतीं, तीं

हिंदोस्तानी के समान सभी पुरुषों के लिए 'था' का प्रयोग होता है अथवा—

	एक०		बहु०	
	पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
१	हतोंय, तोंय	हतयूँ, त्यूँ	हतयन, त्यन	हतिन, तिन
२	हतोय, तोय	हती, ती	हत्यो, त्यो	हत्यू, त्यू
३	हतो, तो	हती, ती	हते, ते	हतीं, तीं

अथवा—

	एक० (उभय लि०)	बहु० (उभय लि०)
१	रहौं	रहन, रहैं
२	रहस	रहा
३	रहै	रहैं

नकारात्मक अस्तित्वसूचक क्रिया 'मैं नहीं हूँ' इस प्रकार बनती है—

	एक०	बहु०
१	नियाहूँ	नियाहन
२	नियाही	नियाहा
३	निहाइ	निहाँइ

कर्तृ-वाच्य का गठन ऐसे होता है—

वर्तमान यौगिक, '(यदि) मैं मारूँ', आदि—

	एक०	बहु०
१	मारौं	मारन
२	मारस	मारा
३	मारै	मारैं

वहुधा यह सामान्य वर्तमान के अर्थ मे प्रयुक्त होता है। काल के उदाहरणस्वरूप 'मानस', 'व्वालस', 'माँगस', 'जास' तथा 'खाँय' उल्लेख्य है।

आज्ञार्थक के उदाहरण ये है—'मार', 'मारा', 'पुकारा', 'काटी', 'करायम', 'खिलियएँ'।

भविष्यत्—'मै मारूँगा' आदि। इसके दो रूप है—१ 'मारव्' पुरानी पूर्वी हिंदी के समान सभी लिगो, वचनो तथा पुरुषो के लिए प्रयुक्त होता है,—२. यह निम्न-लिखित है—

	एक०	बहु०
१	मरिहौं, मरहौं	मरबे, मरिहे, मरहे
२.	मरिहै, मरहै	मरिहा, मरिहौ, मरहा, मरहौ
३	मारी	मरिहैं, मरहैं

दीर्घ तथा उपान्त्य-पूर्व होने पर पहला अक्षर ह्रस्व हो जाता है, यथा 'मनिहौं' 'कँहैं' बुदेली के समान किंचित् अनियमित है।

वर्तमानकालिक कृदंत से बने काल

वर्तमान कालिक कृदत 'मारत' (उ० लि०) या 'मारतो' (पु०) तथा 'मरती' (स्त्री०) है। इससे साधारण काल बनते है, जैसे—

वर्तमान—'मारत-हौं' (प्रायः लिखित रूप मे 'मारथौं')। सहायक क्रिया के किसी भी रूप का व्यवहार हो सकता है।

अपूर्ण—'मारत-हतौंय'। सहायक क्रिया का कोई अन्य रूप प्रयुक्त हो सकता है। एकाकी रूप 'करै रहैं' उल्लेख्य है।

भूतकालिक अपेक्षाव्यजक—यह दो प्रकार से बनाया जा सकता है। या तो हिंदोस्तानी के समान अकेले वर्तमानकालिक कृदत का व्यवहार होता है और या पूर्वी हिंदी के अनुरूप एक काल वनाया जाता है। पहले रूप के लिए 'मरतो' (पु०), 'मरती' (स्त्री०), '(यदि) मैंने, तूने या उसने मारा'। दूसरे रूप की स्थिति निम्नलिखित है—

	एक०		बहु०	
	पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
१.	मरतौंय	मरत्यूँ	मरत्यन	मरतिन
२.	मरतोय	मरती	मरत्यो	मरत्यू
३.	मरतो	मरती	मरते	मरतीं

भूतकालिक कृदंत से बने काल

वर्तमानकालिक कृदंत 'मार' (उ० लि०) या 'मारो' (पु०) तथा 'मारी' है। इनसे साधारण काल बनते हैं यथा—

भूत—भूतकालिक अपेक्षाव्यंजक के समान यह दो प्रकार से बनाया जा सकता है। या तो हिंदोस्तानी की भाँति केवल भूतकालिक कृदंत का व्यवहार होता है और या पूर्वी हिंदी के अनुरूप एक काल का गठन किया जाता है। दोनों ही स्थितियों में क्रिया के सकर्मक होने पर रचना कर्मवाच्य होती है। कर्ता को कर्ताकारक में रख दिया जाता है और क्रिया कर्म की दृष्टि से लिंग के अनुरूप होती है। इसके विपरीत दूसरी स्थिति में क्रिया का सादृश्य कर्म के पुरुष के साथ होता है, यथा 'मैं-नें मारौंय' का अर्थ 'मैंने किसी पुरुष को मारा' है किंतु 'मैं-नें मारयूं' वाक्य 'मैंने किसी स्त्री को मारा' भाव व्यक्त करता है। सकर्मक क्रिया के भूतकालिक रूप के गठन का सामान्य ढँग निम्न-लिखित है। अकर्मक क्रिया की रचना अन्य पुरुष की दृष्टि से भिन्न होती है।

	एक०		बहु०	
	पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
१	मारौंय	मारयूं	मारयन	मारिन
२.	मारोय	मारी	मारयो	मारयू
३	मारोम	मारिम	मारोन	अनुपलब्ध

ये प्रामाणिक रूप हैं लेकिन अन्यपुरुष एक वचन के लिए 'मारस्', 'मारिस्' तथा 'मारुस्' रूप भी मिलते हैं।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, अकर्मक क्रिया की स्थिति में अन्यपुरुष एकवचन का व्यवहार नहीं होता, केवल एकाकी भूतकालिक कृदंत प्रयुक्त होता है, जैसे 'बैठ, बैठो' (वह बैठा।), 'बैठ, बैठी' (वह बैठी।), 'बैठ, बैठे' (वे बैठे।), 'बैठ, बैठीं' (वे बैठीं)।

संपूर्ण—'मार-हौं' या 'मारो-हौं' (मैंने मारा।)। सहायक क्रिया का अन्य कोई रूप प्रयुक्त हो सकता है।

निश्चयार्थ—'मार-हतौंय' या 'मारो-हतो'। यहाँ भी सहायक क्रिया के किसी दूसरे रूप का व्यवहार हो सकता है। दोनों कालों में रचना सामान्य हिंदोस्तानी की ही है।

'मारन्', 'मारैं', 'मारब' या 'मारबो' क्रियार्थक संज्ञा है। क्रियार्थक संज्ञा सदृश प्रयुक्त होने पर 'मारैं' स्त्रीलिंग हो जाता है। दूसरे रूप पुल्लिंग हैं। पहले तीनों के विकृत रूप कर्ता के समान है। चौथे 'मारबो' का 'मारबे' है।

अनियमित क्रियाएँ—

यहाँ निम्नलिखित अनियमित भूतसालिक कृदत मिलते है —

क्रियार्थक सज्ञा	भूतकालिक कृदत
'आउब', 'आवब' या 'अइवो' (आना)	'आवो', स्त्री० 'आई'
'जाउब' (जाना)	'गवो', 'गा' या 'गौ', स्त्री० 'गइ' या 'गई'
'देब' (देना)	'दवो', 'दौ', 'दीन्ह' या 'दीन', 'दवो' या 'दौ' 'दी' का स्त्रीलिंग 'दीन्ह' से 'दीन्हो', स्त्री० 'दीन्ही'
'लेब' (लेना)	इसकी स्थिति 'देब' के समान है, 'द्' 'ल्' से स्थानातरित हो जाता है।
'करब' (करना)	'कर', 'करो' या 'कीन्ह', 'कीन्हो'

भूतकाल मे 'आउब' तथा 'जाइब' क्रियाएँ काफी अनियमित है। 'आउब' की रचना इस प्रकार होती है —

	एक०		बहु०	
	पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
१	आवँ	आयूँ	आयन	आइन
२.	आवै	आयी	आयो	आयू
३	आवो	आई	आये	आईं

अन्यपुरुष के लिए भूतकालिक कृदत के किसी अन्य रूप का व्यवहार हो सकता है। 'जाइब' का भूतकालिक रूप भी समान है, यथा 'गवँ' (मै गया) तथा अन्य।

'आउब' का भविष्यत् रूप 'अइहौं' (मै आऊँगा।) है, 'अइबे' (वह आएँगे।), 'अई' (वह आएगा।)। यही स्थिति 'जइहौं' (मै जाऊँगा।) की है।

[सं० १६]

भारतीय-आर्य परिवार — केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुँदेली (बनाफरी) बोली — (ज़िला चरखारी)

(रायसाहब कालोप्रसाद)

उदाहरण १

काहू-के दुइ लरका हते। लहुरे लरका अपने बाप-सें कहो कै बाप मोर हींसा बाँट दो। और उह-ने [illegible] रुपैया बाँट दओ। और वह-ने सब थोरे दिनन-में इकट्ठा कर

लओ और बहुत दूरी देस-खाँ चलो गओ और वहाँ आपन सब इयार बाहीयाद-में व्हाइ दओ ॥

[म० १७.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (बनाफरी) बोली (राज्य चरखारी)

(रायसाहब काशीप्रसाद)

उदाहरण २

एक ब्राह्मन वा एक ब्राह्मनी रहैं। दोऊ मिहरिया मुंसवा आंड। कुछ दिन बीतैं धुवक परो। तब ब्राह्मन आपन मिहरिया छोड दखिन भाग गा। और एक साहूकार-कै चाकर रहो। पाँच सौ रूपैया कमाइस। जब दो बरसैं हो चुकी तब ब्राह्मनी-की खबर आई। और साहूकार-सैं विदा माँग-कर आपन घर-कौ रैंगो। जब कुछ दूर घर रह-या तब मन-मैं सोचिस कै ब्राह्मनी करजदार हुइ गई हू है सो मैं काऊ बडे आदमी-के इहाँ रूपैया घर दैंव। गाँउ-मैं एक बाँनी रहैं। तिया-सन कहुस कै भाई मोर रूपैया धरोहर धर राख। इतनैं बीच-मैं एक वैरागी-का चेला लाग लैन आयो। बांनी-नैं जल्दी-मैं चेला-कौं लाग तौल दई और चेला लाग लैं-गा। बाबा पूछिस आज लाग सिवाइ काहे है। चेला-नैं कहुस कै एक राहगीर बाँनी-के इहाँ पाँच सौ रुपैया की धरोहर-की बातचीत करै रहै। सो मो-खाँ लाग जल्दी-मैं तौल दिहस-है। बाबा मन-मैं सोचो कै वा राहगीर-काँ कौनउ जुगत-सैं बुलाव। सो अचकारी कनक वा घी ऐंचस वा चेला-सैं कहिस कै या जिंस फेराव और बाँनी-सैं कहब कै हमार बाबा काहू-का हराम नहीं खात आंड। चेला गा और जिंस फेर दिहस। या बात जब वा ब्राह्मन सुनी तब कहिस कै या बाबा ईमान्दार है। यह-के इहाँ रूपैया मैं धरब। ब्राह्मन बाबा ढिंग गा वा कहस कै महाराज मोर रूपैया धर राखौ। बाबा-नैं रूपैया लैं-कर एक कोठा-मैं ब्राह्मन-कै साम्हनैं गाड दिहस और ब्राह्मन आपन घर चलोगा। अपनी ब्राह्मनी सैं पूछिस कि काहू-की करजदार तौ नाही हा। ब्राह्मनी कहस कि नियाहूँ। तब कुछ दिन बीतैं ब्राह्मन आपन रुपैया लैन बाबा ढिंग गा। बाबा कहिस हमार ढिंग कब धर गा। ब्राह्मन मन-माँ गिल्याँद मानी और एक जिमीदार-सैं आपन सब हाल जा कहिस। जिमीदार कहुस कै हमार जोर निहांड। तुम फलानैं मौजा-की बीबी-को सुनाव। ब्राह्मन बीबी-कैं गा और आपन हाल कहुस। बीबी कहो कै मैं फलानैं दिन बाबा-के ढिंग जाब सो तुहीं आइ-जाइस। बीबी सब आपन जमाँ लैं-कर बाबा ढिंग गई और कहिस कै मोर मियाँ साहब मदारन गे ते मो नहीं आये आंड। मैं

उन-के ढूडै-ख जात-हों। मोर घरोहर घर राखी। इननै वीच-मै ब्राह्मन आइ-गा वा कहुम कै वावा मोर रुपैया दै राख। वावा-नै रूपैया उखार-कर-कै दे दीन। या सोच-कर-कै कै जो मै या-सै झगडहों तौ वीवी आपन रूपैया ना घरहै। वीवी देखिस कै ब्राह्मन आपन रूपैया पाइ-गा। तव वावा-सै कहिस कै मोर भाई कहत आवा-है कै मियाँ साहव मदारन-सै आइ-गे सो अव मै घरोहर ना घरहों। और फिर वीवी हसन लाग वा ब्राह्मन हसन लाग और वावऊ हमै लाग ॥

॥ कहावत ॥

वीवी हसी मियाँ घर आये। हसे मुसाफर गठरी पाये॥
तुम का हसे मियाँ भीखे। एक तमासा ये भी सीखे॥

आल्हा-ऊदल से सबधित काव्य

आल्हा और ऊदल से सबधित काव्य वहुत ही लोकप्रिय है। यह सारे उत्तरी भारत में भ्रमणशील चारणो द्वारा गाया जाता है। यह सारे काव्यखड सकलित नही हुए है लेकिन कुछ भाग एव भागो के अनुवाद प्राय प्रकाशित किये गये है। इस महाकाव्य का सवसे पुराना रूपातर चद वरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' के 'महोबा खड' मे सम्मिलित है। चन्द वरदाई दिल्ली के सम्राट पृथ्वीराज चौहान के चारण थे। 'महोबा खड' में मुख्यत पृथ्वीराज चौहान तथा महोबा के चदेल शासक परमार के वीच हुए युद्ध का विवरण है। एक अन्य सभाव्य परपरा के अनुसार इसकी रचना परमाल के दरबारी कवि जगनिक द्वारा हुई है। इसके एक भाग का अनुवाद टॉड कृत 'राजस्थान' (पृ० ६१४ तथा आगे) मे उपलब्ध है। इस महाकाव्य के दो-तीन देशी सस्करण भी प्रकाशित हुए है जिनमे कोई भी पूर्ण नही है। इनमे से एक के कुछ अश श्री वाटरफील्ड द्वारा ओजस्वी अँग्रेजी छदो मे अनूदित तथा 'नौ लाख जजीरे अथवा मारो वैमनस्य' शीर्षक से 'कलकत्ता रिव्यू' (खड ११, १२ एव १३) मे प्रकाशित हुए है। इन सस्करणो की सामग्री का पूरा विवरण इन पक्तियो के लेखक ने 'इडियन एटीक्वैरी' (खड १४, पृ० २५५ तथा आगे) मे दिया है। पाठ का संपादन एवं विहार में प्रचलित आल्हा के विवाह से सबद्ध अध्याय का अनुवाद भी प्रस्तुत लेखक द्वारा इसी खड के पृष्ठ २०९ पर तथा आगे दिया गया है।

कुछ वर्षो पूर्व श्री विंसेट स्मिथ ने मुझे हमीरपुर की बुंदेली वोली से सवधित अपनी एक पुस्तक भेट की थी। इसमे महाकाव्य के निम्नलिखित दो अश भी हैं जिन्हे श्री स्मिथ की देख-रेख में ग्रामीण गायको के मुँह से सुनकर यथावत् लिपिवद्ध किया गया है। इन

अपूर्ण अंशो का महत्व बुंदेली की बनाफरी उप-बोली के नमूनो की भाँति ही नही, वरन् एक बहुत बडे भारतीय भू-भाग मे अत्यधिक प्रचलित जनकाव्य के उदाहरणस्वरूप भी है। हमीरपुर मे आल्हा-ऊदल से सबद्ध काव्य-खड 'सैरा' अथवा 'आल्हा' नाम से जाने जाते हैं। एक ही समय में गाये जाने वाले पृथक् अशो को 'पँवारा', 'समय' अथवा 'मार' कहते हैं।

नीचे दिया गया अविकृत पाठ श्री स्मिथ का है। अनुवाद भी उनके द्वारा तैयार किये गये एक प्राथमिक रूपातर पर आधारित है। सलग्न टिप्पणियाँ मेरी हैं।

यहाँ इन काव्य-खडो की कथा का विस्तृत विवरण देना अनावश्यक होगा। जिज्ञासु पाठको को अपेक्षित सामग्री 'इडियन एटीक्वैरी' के ऊपर उल्लिखित लेख में मिल जाएगी। यहाँ केवल उतने ही कथा-सूत्र देने वाछनीय हैं जितने प्रकाशित उदाहरणो को समझने के लिए आवश्यक है। यह स्मरणीय है कि यह लोककथा है, इतिहास नही। प्रमुख चरित्र अवश्य ही ऐतिहासिक हैं किंतु उनके सभी साहसिक क्रियाकलापो की ऐसी स्थिति नही है।

कथा में राजकीय पात्र तीन हैं, दिल्ली का चौहान सम्राट् प्रथ्वीराज या पिथौरा, कनौज का राठौर शासक जयचद और बुंदेलखड मे महोवा का चंदेल राजा परमाल अथवा परमर्दी।[1] इनमें से पहले दो दिल्ली के अनगपाल तोमर के भ्रातृ-पौत्र एव परस्पर चचेरे भाई थे। उनके देहात के पश्चात् छोटे होते हुए भी पृथ्वीराज को राजसिंहासन और जयचद को निष्कासन मिला। इसका परिणाम इन दोनो के बीच जीवन भर की शत्रुता थी जिससे मध्य एशिया के तातारो के लिए भारत की विजय सरल हो गई। पृथ्वीराज और उनके भाट चंद सन् ११९३ में मुसलमानो के विरुद्ध लडते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। अगले वर्ष कनौज पर भी आक्रमण हुआ और शिहाबुद्दीन ने जयचंद का वध कर दिया। उसके पुत्र को मारवाड़ भागना पड़ा, जहाँ उसने अब जोधपुर नाम से जाने जाने वाले राज्य की स्थापना की। परमाल का शासनकाल सन् ११६५ से सन् १२०२ तक रहा। पृथ्वीराज ने सन् ११८२ में उसे पराजित तथा महोवा से निष्कासित किया। यहाँ लोककथा इतिहास से पृथक् हो जाती है। लोककथा के अनुसार इस पराजय के बाद परमाल को अपना राज्य छोड कर गया भाग जाना पडा था जहाँ उसकी मृत्यु हो गई। वह महोवा का अतिम चदेल शासक था। इतिहास के अनुसार

---

१. यहाँ यह स्मरणीय है कि यह तथा अन्य नाम पूर्णतः विशुद्ध रूप में लिपिबद्ध नहीं है। केवल लोकप्रिय अक्षर-विन्यास ही प्रस्तुत है। उदाहरणार्थ 'परमाल' का सही लेखन 'परमाल' होना चाहिए।

उसने वीस वर्ष पश्चात् कालिंजर मे कुतुबुद्दीन के विरुद्ध वीरतापूर्वक युद्ध किया था। वह अपने वश मे अतिम भी नही था। उसके कई उत्तराधिकारी थे।

ऐतिहासिक परमाल सभवत अपने पूर्ववर्ती मदन वर्मा चदेल का पुत्र था, लेकिन लोककथा की स्थिति काफी भिन्न है। इसके अनुसार परमाल पूरे भारत का विजेता है। उसने सर्वप्रथम बुंदेलखड के महोवा नगर पर अधिकार प्राप्त किया जहाँ का शासक वासुदेव परिहार था। उसके एक पुत्र माहिल तथा तीन पुत्रियाँ मालना अथवा पद्मिनी, दिवाला एव तिलका थीं। परमाल ने मालना से विवाह कर लिया और माहिल के साथ सद्व्यवहार किया लेकिन वह अपने पिता के विजेता को कभी क्षमा नही कर सका और अततोगत्वा उसके पतन का कारण बना। सभी काव्यखडो मे उसकी भूमिका सदैव खलनायक की है।

चदेलो मे प्रचलित जनश्रुति के अनुसार परमाल के दो विश्वासपात्र सेवक दसराज तथा वछराज थे। इनका सवध राजपूतो की वनाफर जाति से था। परमाल ने इन दोनो के साथ दिवाला एव तिलका का विवाह कर दिया। इस विवाह से दसराज के दो पुत्र आल्हा (और उससे काफी छोटा) ऊदल तथा वछराज के एक पुत्र मल्खा हुआ। एक अहीर स्त्री से दसराज के एक और पुत्र हुआ था जिसका नाम 'चौंडा' अथवा 'चौंडा' रखा गया था।[1] जन्म के पश्चात् उसे नदी मे वहा दिया गया। किसी ने उसे वचाया और दिल्ली मे पृथ्वीराज चौहान के पास ले गया। पृथ्वीराज ने उसे अपना दत्तक पुत्र वना लिया और वडे होने पर अपनी सेना का एक सेनापति नियुक्त कर दिया। अत मे वह अपने आधे भाइयो—आल्हा और ऊदल के विरुद्ध लडा। दसराज के एक पुत्री भी थी जिसके सोहा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

ब्रह्मजीत वर्मा परमाल एव मालना का पुत्र था। अपने पिता की इच्छा के विपरीत उसने पृथ्वीराज चौहान की पुत्री वेला से विवाह किया, लेकिन उरई के युद्ध-क्षेत्र मे अपेक्षाकृत कम उम्र मे उसकी मृत्यु हो गयी। वह अपनी पत्नी को कभी घर नही लाया और प्रस्तुत उदाहरणो में वेला अपने पिता के यहाँ रही है किंतु एक सच्ची राजपूत पत्नी के समान अपने पति की प्रवल पक्षधर है। जनश्रुति के अनुसार वशानुक्रम की निम्न-लिखित सूची मिलती है—

---

१ कुछ रूपातरो में उसका नाम 'धांदो' दिया गया है।

वासुदेव, महोबा का शासक

- मालना, पुत्री, परमाल चदेल से विवाहित
  - ब्रह्मजीत वर्मा, पुत्र, पृथ्वीराज चौहान की पुत्री बेला मे विवाहित
- दिवाला, पुत्री दसराज बनाफर मे विवाहित
  - आल्हा, पुत्र, माछिल से विवाहित
    - इदल, पुत्र
  - ऊदल, पुत्र
  - पुत्री, नाम अज्ञात
    - सीहा, पुत्र
  - चौंडा, एक अहीर स्त्री से दसराज का पुत्र
- तिलका, पुत्री, बछराज बनाफर से विवाहित
  - मलखा
- माहिल, पुत्र
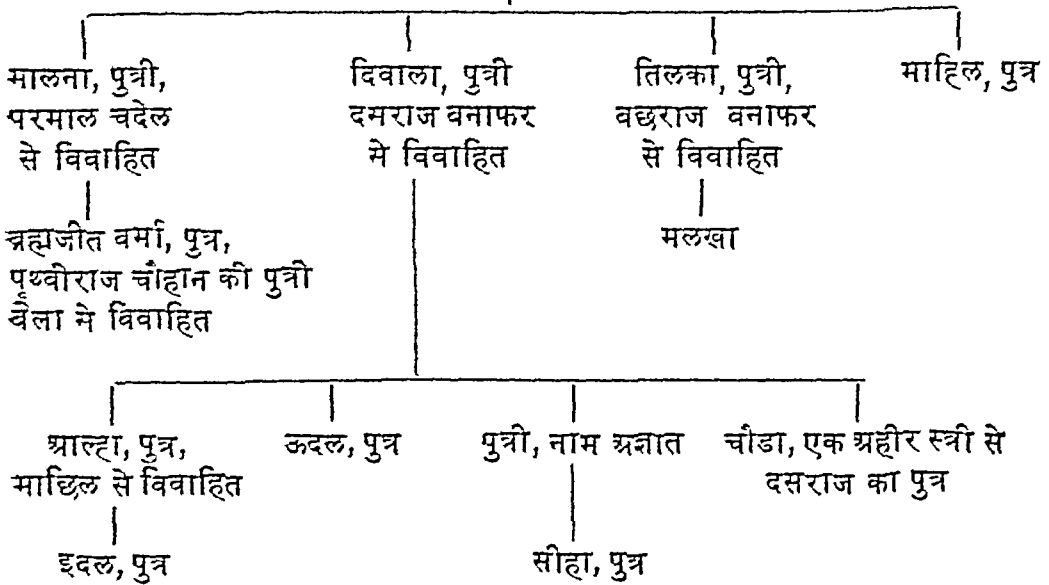
पृथ्वीराज एवं जयचद के अतिरिक्त अन्य मुख्य पात्र निम्नलिखित है —

जगनिक, परमाल का चारण

लाखन, जयचद का भतीजा

रायपाल, जयचद का बडा पुत्र

गुलालन, जयचद का छोटा पुत्र

रायमान, जयचद के अधीन कुरहट का शासक

बनारस के मियाँ तालहन (नीचे देखे।)

अली अलावर
काले खाँ
जडी बेग
सुलतान
बहूवली } तालहन के पुत्र

हीरसिंह देव
बीरसिंह देव
पूरनदेव } गाजर के प्रधान। आल्हा द्वारा विजित, किंतु अत मे उसके मित्र।

मतौवा अहीर, ब्रह्जीत की सेवा मे

दिरिया, ऊदल का प्रधान सेवक, बेंदुला घोडे का साईस

ग्वालियर का रामापति, पृथ्वीराज का एक सेनापति

रजीत, परमाल का अन्य पुत्र

अलखा, वछराज का अन्य पुत्र
करिलिया, आल्हा के घोडे का नाम
वेंदुला या वेंदुलिया, ऊदल का घोडा } यह जादुई घोडे हवा मे उड सकते थे।
सिघिन, मियाँ तालहन का घोडा
मनोरथ, जयचद का घोडा

इनमे से मियाँ (अथवा मीरा) तालहन सर्वाधिक महत्वपूर्ण पात्र है। बनारस का यह मुसलमान परमाल के अधीन था। वह और दसराज घनिष्ठ मित्र थे जिन्होने परस्पर पगडियाँ बदली थीं। दसराज की मृत्यु के पश्चात् वह आल्हा-ऊदल के साथ कनौज चला गया। आल्हा उसे अपने पिता के समान मानता था और कथा मे उसकी स्थिति एक बुद्धिमान् वृद्ध पुरुष की है। उरई के अतिम युद्ध मे उसका देहात हो गया। महोवा मे कीरत सागर के निकट उसका मकबरा है। उसके नौ पुत्र तथा अठारह प्रपौत्र थे।

परमाल ने आल्हा को महोवा के दक्षिण-पूर्व मे (बाँदा के वर्तमान ज़िले में) कालिजर ज़िला जागीर के रूप मे प्रदान किया। मलखा को सिरसा[1] की जागीर मिली। आल्हा, ऊदल एव मलखा के अनेक प्रारभिक पराक्रमो की चर्चा छोड कर हम अतिम सघर्ष पर आते है। माहिल ने यह समझ लिया था कि ऐसे साहसी सूरमाओ के होते हुए परमाल का विनाश सभव नही है। अत उसने परमाल को आल्हा से उसकी विख्यात घोडी करिलिया माँगने के लिए उकसाया और अनुरोध के अस्वीकृत होने पर दोनो भाइयो को उनकी सारी सेवाएँ भुला कर देश निकाले का दड दे दिया। आल्हा और ऊदल अपनी माँ, परिवारो एव मियाँ तालहन के साथ कनौज चले गये जहाँ जयचद ने उनका स्वागत किया। लेकिन वह स्वय आल्हा से आतकित था, अत उसने उसे गाजर के विद्रोहियो के विरुद्ध सैनिक अभियान पर भेज दिया। लाखन तथा जयचद के भतीजे के साथ आल्हा-ऊदल ने सफलतापूर्वक विद्रोहियो का दमन किया और पराक्रम की प्रशसा में आल्हा को कनौज के निकट रायकोट की जागीर प्रदान की गई।

इसी बीच पृथ्वीराज के सैनिको की कुछ टोलियाँ परमाल के अधिकार-क्षेत्र से निकलते समय समाप्त कर दी गयीं जिससे इन दोनो के बीच सघर्ष प्रारभ हो गया। माहिल ने यह आग भडकाते हुए पृथ्वीराज को प्रतिशोध के लिए सुअवसर की प्रतीक्षा करने की सलाह दी। आठ वर्षो के बाद माहिल ने मत्री की हैसियत से कपटपूर्वक परमाल की सेना दक्षिण भेज दी और पृथ्वीराज को सदेश दिया कि महोवा का रास्ता खुला है।

१. सिरसा वर्तमान ग्वालियर राज्य में पहुज नदी के निकट है। अमाहा से इसकी दूरी अधिक नहीं। दे० ग्वालियर गज़ेटियर (१९०८), जिल्द १, पृ० १९४।

पृथ्वीराज ने तुरत सिरसा पर आक्रमण कर दिया। वहाँ के दुर्गपति मलखा ने परमाल से सहायता का अनुरोध किया, किंतु उसने माहिल के विश्वासघाती परामर्श पर यह उत्तर भेजा कि पृथ्वीराज से निपटना मलखा का काम है। ऐसे उद्दंड उत्तर से मलखा बहुत आहत हुआ किंतु उसने अदम्य साहस से पृथ्वीराज की शक्तिशाली सेना का सामना करने की ठानी और युद्ध-क्षेत्र मे वीरगति प्राप्त की।

परमाल अब अपने राज्य की सुरक्षा के लिए आशंकित हुआ। उसने परिषद् बुलाई और रानी मालना के परामर्श से आल्हा-ऊदल की अनुपस्थिति के आधार पर पृथ्वीराज के पास युद्ध-विराम का प्रस्ताव भेजा। पृथ्वीराज ने राजपूती शौर्य के अनुरूप यह प्रार्थना इस शर्त पर स्वीकार कर ली कि एक वर्ष की समाप्ति पर, जिसके बीच दोनो ओर से पूरी तैयारी कर ली जाय, खुले मैदान में सामना हो जिससे किसी पक्ष को कोई लाभ न मिले। उरई के निकट का विस्तृत भू-भाग (जालौन के वर्तमान ज़िले में) युद्ध-क्षेत्रस्वरूप चुना गया।

तत्पश्चात् परमाल ने आल्हा-ऊदल को बुला लाने के लिए अपने चारण जगनिक को कनौज भेजा। यमुना किनारे जगनिक कुरहट मे रुका। वहाँ के राजा ने उसे सम्मान पूर्वक ठहराया लेकिन सुबह अपने मेहमान के घोडे का विलक्षण आच्छादन देना अस्वीकृत कर दिया। जगनिक कनौज चला गया, किंतु उसने रायभान के विरुद्ध प्रतिशोध की शपथ ले ली।

आल्हा ने उसका स्नेहपूर्ण स्वागत किया, किंतु वह परमाल की सहायता के लिए प्रस्तुत नही हुआ। इस पर उसकी माँ दिवाला ने उसे अपने राजपूत धर्म का स्मरण दिलाया। 'हमें उड कर महोबा पहुँचना चाहिए', दिवाला बोली। आल्हा मौन रहा, किंतु ऊदल ने कहा, 'चाहे दैवी विपत्ति महोबा पर टूट पडे मेरी बला से। क्या वह दिन भुलाया जा सकता है जब हमे वहाँ से निकाल बाहर किया गया था। चाहे महोबा रहे या जाय, मेरे लिए कोई अतर नही पडता। अब कनौज ही मेरा घर है।'[1]

'अच्छा होता, यदि ईश्वर मुझे बाँझ बनाता।' दिवाला बोली, 'मेरे ऐसे पुत्र ही न होते जो राजपूत धर्म छोड कर सकट मे पडे अपने नरेश की रक्षा न करते।' उसका हृदय दुःख से भारी था। अपनी आँसू-भरी आँखे आकाश की ओर उठा कर वह कहती रही, 'ओ ईश्वर! बनाफरो की उज्ज्वल ख्याति में इन्ही धब्बा लगाने वालो के लिए मैंने माँ की यातना झेली थी। सच्चे राजपूत का हृदय युद्ध के नाम से ही नाच उठता है लेकिन यह अधम दसराज के पुत्र नही हो सकते। किसी नीच से मेरा संबध हुआ है और

१ यह अंश टॉड की पुस्तक से लिया गया है।

इस तरह यह उत्पन्न हो गये है।' तब युवा पराक्रमी खडे हुए। उनके चेहरे दु ख से म्लान थे, 'जब हम महोबा की सुरक्षा मे वीरगति को प्राप्त होगे, घावो से क्षत-विक्षत विलक्षण शौर्य से अपना नाम अमर करेगे। जब हमारे सिर युद्ध क्षेत्र मे पडे होगे, तब माँ को अपार प्रसन्नता होगी।'

अत मे आक्रोश जाग्रत हो उठा। आल्हा अधीरता से जयचद के निकट पहुँचा और जाने की अनुमति चाही। यह कोधपूर्ण वाद-विवाद के बाद प्राप्त हुई। एक शक्तिशाली सेना भी साथ मे मिली जिसका नेतृत्व जयचद के पुत्र रायपाल एव गुलालन तथा भतीजा लाखन कर रहे थे।

सेना ने कूच किया। रास्ते मे कुरहट आया और वहाँ हुए युद्ध मे रायभान को पराजित होकर अपने कपट द्वारा प्राप्त वस्तु लौटाने लिए विवश होना पडा। बनाफरो के पराक्रम की प्रशसा मे वह भी उनके साथ हो लिया। जैसे-जैसे सेना आगे बढी, बुरे-बुरे अपशकुन होने लगे। लाखन अस्थिर हो उठा। इन लक्षणो ने उसे आशकित कर दिया किंतु आल्हा बोला, 'यद्यपि यह अपशकुन मृत्यु के सूचक है लेकिन सदाशयी शूरवीरो के लिए मृत्यु भी वरेण्य है। उससे दु ख नही होना चाहिए। राजपूतो का पथ दुर्गम है, उसमे पग-पग पर कठिनाइयाँ हैं, वह काँटो से भरा है किंतु सच्चा राजपूत इसकी तनिक भी चिंता किये बिना दृढ निश्चय से युद्ध मे प्रवृत्त होता है।' और इस तरह घोडे द्रुतगामी हिरनो के समान दौड़ते गये।

रास्ते मे युद्ध-विराम के बावजूद एक नदी के मोड पर चौडा के नेतृत्व मे पृथ्वीराज की सेना ने इन पर आक्रमण कर दिया। लाखन के अतिरिक्त सब भाग गये। उसने अपनी मुट्ठी भर टुकडियो के साथ सामना करने का असफल प्रयास किया। तब दिवाला अपनी डोली से उतर आयी और उसने ऊदल से डोली मे बैठने तथा अपनी ढाल-तलवार उसे देने के लिए कहा। उसके कटु वचनो से सबद्ध सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काव्याश सलग्न उदाहरणो मे ९८ तथा परवर्ती छदो मे उपलब्ध है। इस धिक्कार से आहत होकर अल्हा-ऊदल लौटे और उन्होने चौडा को पीछे धकेल दिया।

महोबा के निकट पहुँचने पर इन भाइयो ने केसरिया बाना पहना। उनके आने का समाचार सुनकर परमाल के हर्ष का पारावार न रहा। वह उन्हे ससम्मान नगर मे लाया। रानी मालना भी दिवाला के अभिनदन के लिए आयी।

आल्हा-ऊदल के आने पर युद्ध-परिषद् बुलायी गयी। सदा के कायर परमाल ने पहले महोबा छोड देने का प्रस्ताव रखा[1] किंतु बनाफरो तथा उनकी माँ के आग्रह पर

१. लोक कथा में उसका चरित्र ऐसा ही है जो इतिहास द्वारा प्रमाणित नहीं होता।

उरई की ओरें बढने की अनुमति दे दी। कुछ दिनो चलने वाली प्रारभिक लडाई मे परमाल के पुत्र ब्रह्मजीत वर्मा की वीरोचित मृत्यु हुई। चौडा यह समाचार देने के लिए शीघ्रता से दिल्ली को ओर बढा जहाँ ब्रह्मजीत की वधू बेला थी। अपने शत्रु को पहुँचे तीव्र आघात से पृथ्वीराज वहुत प्रसन्न हुआ और उसने अपने सेनापति को महोवा की रूपवती रानी पद्मिनी अथवा मलना को दिल्ली ले आने की आज्ञा दी। चौडा स्वय तो अपनी युवा पत्नी के पास रुक गया और उसने अपने सहायक ग्वालियर के रामापति को स्वामी की इच्छा-पूर्ति का आदेश दे दिया। विधवा वेला अपनी ससुराल के साथ थी। उसने तुरत ऊदल को यह सूचना भिजवाई। ऊदल ने कालपी के निकट रामापति को रोका और घमासान युद्ध के बाद उसे पीछे खदेड दिया।

अत में वह निर्णायक दिन भी आ पहुँचा और दोनो सेनाएँ उरई के मैदान में आमने-सामने खडी हुईं। परमाल शत्रु की तैयारियाँ देख कर वहुत भयभीत हो गया। उसने वहाँ से जाने का निश्चय कर लिया। आल्हा तथा अन्य सेनानियो ने उसे परामर्श दिया कि वह सेना के साथ रह कर उसका उत्साहवर्धन करे, लेकिन परमाल नही माना। उल्टे उसने आल्हा से अनुरोध किया कि वह उसे कालिजर तक छोड आये। आल्हा गया किंतु इससे पहले कि वह वापस लौट सके, युद्ध लडा जा चुका था और परमाल की सेना समाप्त हो चुकी थी। आल्हा का पुत्र इदल, ऊदल तथा उसका विश्वासपात्र तालहन सभी वीरगति को प्राप्त हुए थे। क्रोधोन्मत्त हो आल्हा ने पृथ्वीराज की सेना के विध्वस के लिए अपनी जादुई तलवार निकाली, लेकिन देवी शारदा ने उसका हाथ पकड लिया।[1] देवी के अनुरोध पर आल्हा ने अपनी तलवार म्यान में रखना स्वीकार कर लिया, पर शर्त यह रही कि पृथ्वीराज सात पग हवा मे चले। अपनी अपराजेयता की इस छूट से सतुष्ट होकर आल्हा मानवीय दृष्टि से परे अधकार के उस रहस्यमय क्षेत्र कजरी वन में विलीन हो गया जो पूर्व की सभी लोक-कथाओ में विख्यात रहा है। प्रत्येक मास के अतिम दिन आल्हा मैहर की पहाडी पर स्थित देवी शारदा के मदिर मे आता है और नये खिले फूलो से उनकी पूजा करता है। उसे कई वार देखा गया है किंतु हर वार पीछा न करने की कडी आज्ञा पाकर किसी को आगे वढने की हिम्मत नही हुई और वह अदृश्य हो गया।

लोक कथा के अनुसार[2] उरई मे पराजित होने पर परमाल गया भाग गया और वहीं उसकी मृत्यु हो गयी।

१. मैहर में इनकी पूजा की जाती है।
२. लेकिन इतिहास के अनुसार नहीं। इस विवरण का अधिकाश टॉड की पुस्तक पर

इस प्रकार राजपूती शौर्य की यह गाथा समाप्त होती है। यह चमत्कारिक घटनाओं और विरोधी गुणों वाले चरित्रों से परिपूर्ण उत्कृष्ट कथा है। यह अंग्रेजी पाठकों की संवेदना को संस्कृत के अपेक्षाकृत कृत्रिम महाकाव्यों की अपेक्षा अधिक छूती है।

निम्नलिखित दो नमूनों में पहला (उदाहरण ३) खंडित है। इसमें कनौज में आल्हा-ऊदल के नाम संदेश, कनौज से प्रस्थान तथा रास्ते में पृथ्वीराज की सेनाओं से हुए युद्ध का वर्णन है। यह युद्ध के बीचोबीच एकाएक समाप्त हो जाता है। दूसरे (उदाहरण ४) का प्रारम्भ दिल्ली से है जब चौंडा उरई मे ब्रह्मजीत की मृत्यु का समाचार लाता है। फिर मलना के अपहरण की रामापति की योजना और ऊदल द्वारा उसकी पराजय वर्णित है।

[सं० १८]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (बनाफरी) बोली (जिला हमीरपुर)

उदाहरण ३

प्रश्न जयचंद का

की कुछ गिर गा जमुना मा की दह मा कगार।
मैं तो से पूछौं लाखन राने काहे मा उठै झनकार॥

उत्तर लाखन का

ना कुछ गिर गा जमुना मा ना दह मा गिरी कगार।
सूर महोबे का आवत है जेह के लोहे उठै झनकार॥

जयचंद ने कहा

जँघिया ड्वालैं औ घर काँपै हिलैं बत्तीसौ दाँत। ५।
गरभै आन जाय जो महुबे का कनउज देइ मोर उजार॥

लाखन ने कहा

ऐसी न कहिए महराजा झूँठी ना मोहीं सुहाय।
जैसे थापे हैं चन्देलैं पहिले तोही थापे समान॥

आधारित है। कुछ सामग्री 'आर्कैलोजीकल सर्वे ऑफ इंडिया' के सातवें खंड से भी ली गयी है।

जयचंद के दरबार की तारीफ

गऊ-कोस लौं जाजम पर गई तकिया कोई डेढ हजार ।
पलथी से पलथी जहाँ अरझी ती भालन भुंइँ हरियाय ।१०।
किररा माचो तो लोहे का अरझो तो खेरी सार ।
कुरी निवारा जहाँ बैठे ते रजपूत टिकौना लाग ॥
खाये अफीमन के सनका ते बिन मारे न बदलैं वात ।
देवी भगवती धरी पलथी पै जैसे ल्वाटै कालिया नाग ॥

आल्हा का हरकारा जयचंद के पास गया

गिरो साँडिया जाय दरबार मा राजा सुन वात हमार ।१५।
सूर महोवे का आवत है राजा खवरदार हुइ जाँव ॥

जयचंद के दरबार में आल्हा का पहुँचना

आवत देखो आल्हा का सभा उठी भहराय ।
भई सलामैं गन डीलन औ वडे भये सरमान ।
दहिनी वाजू आल्हा का खाली कर दौ तबू माँझ ॥

जयचंद ने आल्हा से कहा

एक जुहारैं मोरी सकरैयाँ एक तो साँझी बार ।
आये मनौवा हैं महुवे से सो राज तोहि को करौं सलाम ॥

जयचंद ने कहा

टूटी घुडाघर से तैं आवै घोडा तैं चलोय मताय ।
जब मैं चाहौं तोही जूझैं का सौंरोय नगर महोव ।२५।
हँस कै राजा वोलन लागो आल्हा सुन वात हमार ।
एक एक गोहूँ के दुइ दुइ लैहौं घी के काहौं चौगुने दाम ।
दूध के मोलन पानी कटिहौ आल्हा सुन वात हमार ।
खाय मतानोय तैं गाँजर मा मोहरा मा दैहौं झुकाय ।
मार निकारो तोही चदेले ने घर डोम के छ्वोलन डार ।३०।
याद बिसर गै तोही वा दिन के जब आवै दुपहरी माँझ ॥

ऊदल ने जयचद को जवाब दिया

हँस कै ऊदल वोलन लागो राजा सुन वात हमार ।
को है निकरैया मोही दुनिया मा केह के मुँह मा दाँत ।

जेह के कारन मैं भागो तोंय सो गाँजर मा दीन्ह गँवाँय ।
वाप न पाई तोरे गढ गाँजर वगाला दीन्होंय दिवाय ।३५।
वेरी माखि तोरी छेरी ग्रस कान धरे मिमियाय ।
मारोंय विजहटा दिन दुपहर वगालें ग्रागी लगाय ।
नौ दा भगाय दौ जे ने लाखन का वाप मारो कनौजी क्यार ।
तौन दिवाय दौ तोही राजा मैं सुख सोवो कनौजा माँझ ।
वारा वजारैं तोरी लुटवाय लईं सब हाथी डार्यों वढवाय ।४०।
ऐमा दुवहियाँ तैं राजा तोय मोहीं तुरतैं देतोय लौंटाय ।।

जयचंद ने ऊदल से फिर कहा

हँसी ममकरी वैटा तो से कीन्ही ग्रौ तैं तौं गवै खमियाय ।।

ऊदल ने जयचंद को जवाव दिया

हँस कै ऊदल वोलन लागो राजा सुन वात हमार ।
हँसी ममकरी कर विसुवन से जे दीन्ह तुम्हारो खाँय ।
हँसी ममकरी हम मे का कीन्ही दाँतन से लोह चवाँय ।४५।

राजा जयचंद ने गुस्सा होकर कहा

कनिकी नहाँय गवैं मैं कालिजर लौटत दा मागे महोव ।
तवै मनमवा कहाँ ऊदल तोय जव मै लूटे ते वारा वजार ।।

आल्हा ने राजा को जवाव दिया

टीकों अँवाय गवै तैं कतिकी लौटत दा मारो महोव ।
खेलत शिकारैं तोय रमना मा खवरैं दीन्हीं डाँक-व्ररदार ।
जव मैं आवैं महुवे का तव छूटा घली तलवार ।५०।
जव तैं भागोय खेनन ने तव मैं ने ऊँचो मनोरथ ध्वार ।
ना पन आवै जो राजा तोटी ता मैं अवै मँगाय लेंव ध्वार ।।

राजा जयचंद आल्हा से वोला

तुम नौ जैगे महुवे को मुँहमाँगे देंव तुम्हैं आज ।।

आल्हा ने राजा से यह माँगा

माया तुम्हारी राजा चाहौं ना चाहौं ना अर्थ भँडार ।
मागन गंगा मोह का मिलै जो नदिया में करै नहाय ।।५५।।

राजा ने आल्हा को इस प्रकार मदद दी

नार वघेरे ने दीन्ह लाखन नवा लाख रायपाल ।
वेटा गुनाहन को जव दीन्हो तव घोड़ा दीन्ह वावन हजार ।।

आल्हा ने राजा से इजाजत लेकर महोवे को कूच किया

कीन्हीं सलामैं आल्हा नें जब फौजैं करीं तयार।
कूच कराय दवो कन्नौज से फौजैं चलीं गाँय गुंवार॥

आल्हा ने कुरहट में मकाम किया और जगनायक ने जीन की वावत अर्ज किया

डेरा पर गये जाय कुरहट मा जगनायक जोरे हाथ।६०।
पाखर ऐंच लई मेरे घोडे की सो मँगवाय दे वनापर आल्ह॥

आल्हा की चिट्ठी जो कुरहट के राजा को लिखी

लिखे परवाना तव आल्हा ने कलमदान ले हाथ।
राम रमौवल सवही का राजा का वडी सलाम।
जैसे नतइत तुम लाखन के वैसे आहू हमार।
पाखर भेज देव घोडे की तौ काहे का माचै रार।६५।

जवाव कुरहट के राजा का

तोही चुनौटी तोरे दादे का चदेल का वडी तलाक।
पाखर न दैहौं घोडे की चाहै दिन रात चलै तलवार॥

ऊदल ने फिर राजा को चिट्ठी लिखी

राम रमौवल सवही का राजा का वडी परनाम।
पाखर दै देव घोडे की या पाखर चदेले केर।
ऐसी पाखर ना काहू के साढे तीन लाख का मोल।७०।
जलदी पाखर जो भेजी ना तौ कढि आओ मलै मैदान।

राजा लड़ने को तैयार हुआ

वजे नगाडा राजा के डकन में परी वुकार।
तोपैं जुताईं आगे का पीछे सिंदुरिया वान।
जितनी फौजैं राजा की कढि गौ मले मैदान।
परी लडाई ऊदल से खूव घलो हथियार।७५।
ज्वान हजारौं गिर गे घोडा गिरे असरार।
हाथी गिर गये खेतन मा वही खून की धार।

राजा भागा और ऊदल ने वांध कर आल्हा के आगे खड़ा किया

राजा भागो खेतन से ऊदल मुसुक लीन्ह वँधवाय।
जव लै पहुँचै राजा का आल्हा केरे पास।
जोरी हथुलियाँ आल्हा से वेटा चलौं तुम्हारे साथ॥८०॥

कूच होना लश्कर का वेत्रवती नदी को

कूच कराय दओ कुरअट से नद्दी को परे सौंहाय ।
कुछ दिन रेंगे गैलन में नदी वेतवैं में पहुँचे जाय ।।

पृथीराज और आल्हा की लड़ाई नदी में

खवरैं पाईं पृथीराज ने बाँधे बयालिस घाट ।
परी लडाई पृथीराज से अलाघुघ घली तरवार ।।
ज्वान हजारों गिर गे घोडा गिरे असरार । ८५ ।
हाथी गिर गये खेतन मा वही खून की धार ।
वेटा जूझो मियाँ ताल्हन का जहाँ खूव घली तरवार ।।

ऊदल ने पृथीराज के लड़के को मार कर ताल्हन के लड़के का इन्तिकाम लिया

खवरैं पाईं ऊदल ने औ घोडा दओ उडाय ।
जाय कै पहुँचो वा मुर्चा मा वदला लै लौ सय्यद क्यार ।
वेटा मारो पृथीराज का सव सूरन का सरदार । ९० ।
कीन्हीं दावैं पृथीराज ने तव खूव घलो हथियार ।

आल्हा की फौजों का भागना और लाखन की लड़ाई

फौजैं विचल गईं आल्हा की भगे सव सरदार ।
फौजैं रोक लईं लाखन ने खूव घलो हथियार ।
राना जूझो सात सौ करी दाव चौहान ।
चौंटै पकरत कट गये चौदा सौ चौहान ।।९५।।

आल्हा की जोरू ने ऊदल को ललकारा

भागी फौजैं आल्हा की तव रानी माह्लि ने देखो आन ।
तव फिर नोका आय ऊदल को देवर भगे कहाँ तुम जाव ।।
चंद्र कवि का वनाया हुआ कवित्त खास पुरानी हिंदी भाषा मे जो मह्ला ने ऊदल से कहा था ।

मोहीं दे कमर-कटार ढाल तरवार कि वच्छी ।
कच्छी के असवार जात लाखन में अच्छी ।।
मरवे को डर करौ वेख तिरियन को धरौ ।१००।
नैनन कज्जल देव माँग मोतिन से भरौ ।।
फिर फिर लडौ देवर उदयराज नहीं अगऊँ सभर कटक ।।
कटक गाँजर का वीर पायक ललकारै ।

कुरट्ट का रायभान घाव हाथिन से मारैं ।।
वच्छराज गुजरात गिद्ध गिद्धनी चराईं।१०५।
दसहर वागैं तीर रुधिर की नदी वहाईं ।।
जगनिक आल्ह से यों कहे कि तेरे कुल भग्गिव कौन ।।

जगनायक के कहने से आल्हा लड़ने को फिर लौटा

सुन जगनिक के बोल गोल से कढो वनापर ।
ज्यों काली कढ़त सेत से उठत फना फन ।
चली भीर सोंहाय जहाँ तो लाखन रानो ।।११०।।
आवत देखो उद्दल को चौडा उलझारी मलखे की ढाल ।।

[सं० १९]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (वनाफरी) वोली **(जिला हमीरपुर)**

उदाहरण ४.

साखी

जे सुर सारदा दये कोयल का भौंरा का दीन्ह गूजार ।
वे सुर सारदा मोह का दे नकशा कहीं वनापर क्यार।

पँवार

देहली के कुवाँ में

घन पनघटवा गढ सम्हर के सव सखियाँ भरतीं पान ।
चीन्हा चीन्हा मोरी सखियो यह असवारी कहाँ कै आय ।
कोई सखी चीन्है अग्गिम की पश्चिम देस ङहार ।। ५ ।।
चौडा दुल्हिया नी नगनाचन चौडा मरद की नारि ।
देय जुवावैं कुवना मा सखी तुम सुनियो वात हमार ।
कथा हमारे आवत हैं एक-दता मा असवार ।
सोने घैलना वर मूंडे लये कुवना से चली भगाय ।
चाल मयुरियन भागी ती जेह के जमीं न छू जाय पाँव ।१०।
घरी महूरत के अतर मा फाटक तर पहुँची जाय ।
ज्वारैं गडुलियाँ चौडा मे चवँर करैं दोऊ हाथ ।
भेद वताय ने उरई मा कैसी घली तरवार ।।

चौड़ा का जवाब

काह वताऊँ मैं द्वार मा कुछ मो से कहो ना जाय ।
नाहर हुइ गा वर्म्मानन्द सव साँवँत घर घर खाय । १५ ।
वारा वेटा हन डारे तेरा हने दमाद ।
उरई चौसठ के मरवा मा कर डारी देस कै राँड ।
हुकुम तौ दीन्हो वादशाह ने मैं नें मारे वर्म्म चदेल ॥

चौड़ा की जोरू वेला के पास चली

इतनी वातैं सुनी औरत ने चौकन का चली भगाय ।
ऊँच नागवर ती वेला की चढ गै ती लात लगाय । २० ।
सोवै कन्या वादशाह की चद्दर पकरी जाय ।

चौड़ा की जोरू वेला से वोली

सुरग चुनरिया तुम छोर डारौ कर चुरियाँ चटकाय ।
कथ जूझ गा उरई मा ननदी आवो रँडापाँ त्वार ॥

वेला वोली

घर दुदकारो महलन मा कमजातिन सुन वात हमार ।
कथ हमारे वारे हैं खेलत हूहैं सखन के साथ । २५ ।

चौड़ा की जोरू वोली

लरका भरोसे तैं भूली हा ननदी सुन वात हमार ।
वारा वीरन जिन हन मारे तेरा मार दमाद ।
उरई चौसठ के मरवा मा कर डारी देस कै राँड ।
मोर न मानस जाय पूँछी ले आये हैं वीरन तुम्हार ।
लागी कचहरी चौडा की अडजगी लगो दरवार । ३० ।

वेला वोली

नगर महोवा मैं देखो ना देखो ना किरतुवा ताल ।
रानी पद्मिनी का देखौंय ना पूज्यों ना मनियाँ देव ।
एडी महावर छूटो ना लागो न चुनरिया दाग ।
तोही न चहिये चौडामन कर डारी निरासिन राँड ।
लै ले सरापैं चौडामन वर कै खाक हुइ जास । ३५ ।

चौड़ा वोला

दीन्हीं जुवावैं तव चौडा ने वेला सुन वात हमार ।
कुसगुन व्वालति हा ग्वाँडा मा कुछ मो से कहो न जाय ।

फते गुसैयाँ ने मोरी कीन्ही तोही बुरा लाग कस आज ।
स्याही सुपेती का मैं मालिक सभर मा हीसा तिहाव ।
हुकुम दीन्ह है पृथीराज ने घर ल्याऊँ पद्मिनी नारि ।४०।

बेला बोली

दीन्हीं जुवावैं तव वेला ने चौंडा सुन वात हमार ।
एक लरकवा के मारे नैं ब्वालम बढ बढ बोला ।
सास हमारी का घर पैहै जब डिल्ली दिया नष्ट हो जाय ॥

चौंड़ा बोला

दीन्हीं जुवावैं तव चौंडा ने वेला सुन वात हमार ।
हुकुम तौ दीन्हो या ने रामा का काका सुन वात हमार ।४५।
जूझो ब्रह्मा है उरई मा सेवा करैं बनापर आल्ह ।
म्याहर राजा है महुवे का घर ल्याव पद्मिनी नारि ।
यहै पिथौरा जानैं ना जानैं ना सती बल्लार ।
घाट कालपी भे निकरी जा घर ल्याव पद्मिनी नारि ॥

वेला बोली

हँस कै वेला वोलन लागी काका सुन वात हमार ।५०।
नाहर पाले हैं परमाल ने राखैं भुइँवरा माँझ ।
अँगुरी उठाय देय परमाल तौ डारैं जान से मार ॥

चौंडा ने रामापति से कहा

अच्छे अच्छे घोडा लै ले औ लै ले नीक सवार ।
आधी रात के अमला मा निकर जा पल्ले पार ॥

वेला ने चेरी से कहा

इतनी वातैं सुनी वेला ने दीन्ह गुरू ललकार ।५५।
वाँदि वाँदि कहि गुहिरावै वाँदी सुन वात हमार ।
जैयँ जैयँ महलन का बसता मोरो ल्याव उठाय ।
कलम दवाइत हाथे लई कागद लओ उठाय ।
राम रमौवल सव सौंतिन का ऊदल का लिखै परनाम ।
घोडा विंदुलिया की वुड्ढा भा की मर गा रजा परमाल ।६०।
मैं तो से पूछौं रे ऊदल तैं सुन ले वात हमार ।
तोरे नाहर के जीते जी महुवे होय हँसौवा त्वार ।

घाट कालपी मे आवत है रामापति ग्वालियर क्यार ।
बाँचै न रामा रे घाटे मा चाहै सात धरै औतार ॥

बेला ने हरकारे से कहा

तव हरकारे को वुलवावैं भारी वेल कुमारि । ६५ ।
काट जँगीरैं देवँ जलमों भर अमलोकर देस इहार ।
यहँ तौ चौंडा जानै ना ना जानै रामापति ग्वालियर क्यार।
खवर जनाय दे तैं ऊदल का रामाआवत है ग्वाल्यिर क्यार ॥
टोंक जहाज धरै सँडिनी पर तुरत भवो असवार ।
याडा लगावैं सँडिनी के वैहर साथ उडाय । ७० ।
रातिन दौरै औ दिन धावै वीचौं ना करै मुकाम ।
कछू दिना केरे अतर मा जाय उरई मा गरद उडान ॥
लवी सिराचन का तँवुवा लगो चँदवा आसमान मडराय ।
घिरी दावनी तौ दक्खिन कै जहाँ चौमुक्ख की झालर लाग ।
गऊ कोस लौं जाजम पर गै गदिया कोऊ डेढ हजार । ७५ ।
पलथी से पलथी जहाँ अरझी तौ ढालन भुँइँ हरियाय ।
झार करचुली औ कछवाहे सेंगर धार पँवार ।
कुरी निवारा जहाँ वैठे ते रजपूत टिकौना लाग ।
खाये अफीमन के सनका रहैं विन मारैं न वदलैं वात ।
देवी भगवती वरी पलथी पै जैसे ल्वाटैं कालिया नाग । ८० ।
गिरो साँडिया जाय वेला का तम्वू के मले मैदान ।
कूद साँडिया से नीचे गिरो चरपेट ढाल तरवार ।
कीन्हीं सलामें जाय गदिया का परवाना दीन्ह थमाय ।
कुलफे कागद जव टारत तो नजरत तो करिया आँक ।
वर कै ऊदल कुइला हुइ गा गदिया मा काल-रूप हुइ जाय । ८५ ।
डिरिया डिरिया कहि ललकारैं डिरिया सुन वात हमार ।
झपट पुकारा तुम आल्हा का जलदी द्या खवर जनाय ॥
चलियँ चलियँ तुम वजरगी तुम्हैं वुलवावैं लहुरवा भाय ॥
तुरतै नेगो तो वजरगी तँवुवा का परो टुराय ।
वरी महूरत छिन वीती ना तवू मा जुमुक गा जाय । ९० ।
जाय ललकारो तो ऊदल का ऊदल सुन वात हमार ।
डाँडे डँडैया की तोही खटको या तोही दाव कीन्ह चौहान ।

मैं तो से पूंछौं ऊदल काहे बुलवावो दुपहरी माँझ ।।
घाट विचारी चौंडा ने रामा का कीन्ह तय्यार ।
घाट जालवन में आवत है पकरैं का पद्मिनी नारि। ९५।
दीन्हीं जुवावैं तव आल्हा ने ऊदल सुन वात हमार ।
अच्छे अच्छे तैं घोडा ले औ छडे छडे असवार ।
बाँचै न रामा गलियन मा सिर काटौ मूँड लुटाय ।।
जेही जेही माँगौं तवू मा मुँहमाँगे दे मोही ज्वान ।।
दीन्हीं जुवावैं तव आल्हा ने ऊदल सुन वात हमार ।१००।
जो तैं माँगस तवू मा तोरे वोल करौं परवान ।।
सीहा मिरजा का मोह का दे कनउज का लाखन रान ।
अली अलावर औ काले खाँ जडी वेग सुलतान ।
वेटा वहुवली सय्यद का जेह का घरियक आल्ह डराय ।
मन मन आटा जे खाते ते सरमुच वुकरा खाँय ।१०५।
घरैं कल्यावा जेह पतरी मा वह पतरी घुन हुइ जाय ।
अहिर मतीवा दे वम्ह्रा का इतनें सव कर दे तय्यार ।
दारवौं हकीकत मैं रामा कै वाँची ना ग्वालियर क्यार ।।
हुकुम तौ दीन्हों तो आल्हा ने ऊदल सुन वात हमार ।
जो जो माँगे तैं तँवुवा मा मैं सव वोल कीन्ह परवान ।११०।
भाई सिरसवा का छोंडे जा मियाँ ताल्हन बनारस क्यार ।
जैयें जैयें तुम वेटा ऊदल वाँचैं ना ग्वालियर क्यार ।।
परगे वावा एकै दा गैलन मा परे टुराय ।
कछू दिनन केरे अंतर मा नद्दी मा जुमुक गे आय ।
वाँध मोरचा लये ऊदल ने नदिया के मले मैदान ।११५।
आठ वजे केरे अमला मा रामापति पहुँचो आय ।
जव ललकारो तो ऊदल ने मोरी सुन ले ज्वान तैं वात ।
कौने दिसतर तोरे जलमौ भे कहाँ धरे औतार ।
मैं तो से पूंछौं अरे अलवेले तैं कौन देस कै जास ।
छल तौ कीन्हो तो रामा ने वात कही वनावट केर ।१२०।
पच्छिम दिसा मा मोरे जलमौ भे हुई धरे औतार ।
आहूँ सौदागर मैं घोडेन का घोडन का वेचैं जाँव ।
सुनी विककरी मैं घोडन की घोडा महुवे वेचन जाँव ।।

तब ललकारो ऊदल ने सौदागर सुन बात हमार ।
होत भुरहरे औ पहु-फाटत जब रथ निकरै सुरजन क्यार ।१२५।
रस्ता कर देंव में गैलन मा फिर चले जैयो नगर महोब ॥
बातन रोमन हुइ बतरस गै बातन से बढ चली रार ।
भल समझावो ऊदल ने मानै ना ग्वालियर क्यार ।
चीन्हा-जानी भै दोनौं कै नदिया के मले मैदान ॥
हँस कै ऊदल बोलन लागो काका सुन बात हमार ।१३०।
एक लरकवा के मारे से ऐसी दगा विचारा आन ॥
हँस कै रामा बोलन लागो ऊदल सुन बात हमार ।
कोटिन कैहै मैं मनिहौं ना घर ल्याऊँ पद्मिनी नारि ॥
इतनी बात सुनी ऊदल ने गादी डारी चबाय ।
तोही चुनौटी स्वामीसुर का जिनके आँय पिथौरा राय ।१३५।
पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन हन डारे चारै बास ।
पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन टापू बाज बेंदुला केर ।
जगन्नाथ घुरमुहाँ लौ मारौंय मेला कीन्ह बटेसुर क्यार ।
सेतुबन्ध रामेसुर मारौंय लका लग कीन्हौंय डाँड ।
धार नरबदा की बँधवाई जो उलट पछाहैं जाय ।१४०।
तेंह की जलनी का अस ब्वालै तौ मोही जीवे को धिरकार ॥
बातन रोसन जादा भै बातन से बढ गै रार ।
कढी भगवती नदिया मा औ रन उइर घली तरवार ।
मारे सिरोहिन के बोजा परै तरवारन गरद उडाय ।
कट कट चिता गिरैं धरती मा गिरैं घोडन के सुम्मार ।१४५।
बिन बिन बहियन के असवरवा बिन थुमरिन के धार ।
बिगिर भमूंडर के मगल मे दल होय कराह कराह ।
जे सिर बाँधतते कुसमहनी लागत ते अतर फुलेल ।
उँय सिर लोटैं धरती मा मारी फिरैं ढाल तरवार ।
रात की मारन मा दिन निकरो औ दिन कै हुइ गै साँझ ।१५०।
तिल तिल धरती बरै रामापति पै ह्वाँ धरे छुट जाँय घाट ।
मार कै मगल का निकरि गा मोहरा के मले मैदान ।
सेर के चाकर का को मारै बिढवै का जलम के द्वाख ।

मोर विराई होय महुवे मा कढि आवैं मले मैदान ॥
दाव वे दुला का मुहरैं गा आल्हा का लहुरवा भाय ।१५५।
मैं तौ टाँड़े का ईं नायक मैं ईं दल का सिरदार ।
तोर विराई मैं महुवे मा सो कढि आवैं मले मैदान ॥
एडिन निरखै औ मूँडे से वेटा सुन ले ऊदल वात ।
जेठ पठै दे मोहरा का जो अँगवै लोह हमार ॥
हँस कै ऊदल वोलन लागो काका सुन वात हमार ।१६०।
एक तौं जेठो है वजरंगी हाथे ना गहै तरवार ।
दूसर जेहो है सिरसा का तैं सिर काटो मूँड लुटाय ।
महीं सयानो मैं जेठो हौं अँगवैं का लोह तुम्हार ॥
दीन्हीं जुवावँ जव रामा ने वेटा सुन ऊदल वात ।
घाल सवाही पहिले ले रहि जाय जियत की लाह ।१६५।
दीन्हीं जुवावँ तव ऊदल ने काका सुन वात हमार ।
तोरी साँगन से वचि जैहौं पाछे है वार हमार ।
साँग शनीचर का उलझारैं पटिया कै याड लगाय ।
उडर के मारैं टीका मा वेला अनी देत वरकाय ।
माथ नवावँ का अगवन भा पाछे जाय गरद उडान ।१७०।
मुहियाँ सुखाय गई रामा कै मुख झाँवँर पर गे गाल ।
वार तौ सरई का चूकोंये ना नदिया हुचोंये साँग का वार ।
उदसा आय गई दिल्ली कै जो मोहीं दगा दीन्ह हथियार ॥
दूसर सावर या उलझारैं दै के वजुर के भात ।
छाती मारैं का तजवीजै ऊदल खेलो नटन के साथ ।१७५।
हन कै सावर मारत तो ऊदल लै गा ढाल से टार ॥
जव ललकारो फिर ऊदल ने काका सुन वात हमार ।
उसरी पाछे तैं दोहरी मारी तिसरे है वार हमार ।
ऐसे खिलियै दल भीतर जैसे कुवाँ भरै पनिहार ।
दीन्हीं जुवावँ तव रामा ने ऊदल सुन वात हमार ।१८०।
की तैं करुवा पढि आवै की सिखी वरारैं साँग ।
भल मैं मारो तोही नदिया मा तोरे अग चढो ना घाव ।
ना मैं करुवा पढि आवैं ना सीख्यूं वरारैं साँग ।

साँगैं तुम्हारी आहीं कच-लुहिया दीन्हें ना न्हुहारन दाम।
वोछी माता के लडका तुम वोदे है पिता तुम्हार।१८५।

घी लडकैयाँ तुम पावो ना किहुँचा मा वन्है निहाय।
साँगैं हमारी अँगई ले जो वनवाईं रजा परमान्न।
साँगन मोरी से जो वँचिहा ना घर छठी करायन जाय॥
लवे लै गा या घोडे का औ धरती का दै कै उभार।
सकती देवता तैं मनिया देव राजा वर्म्म चदेले वयार।१८०।

हुइ जा दाहिन तैं माई वेला राजा वरमजीत की नारि॥
साँग छाँड दई याँ हाथे से छाती मा जाय ठठान।
गिर गा रामा ह्वाँ खेतन मा जहना परी दुहेली मार।
भीरैं भगानीं रनवन भईं कोऊ छूटी न वाँधे पाग॥

हमीरपुर की कुण्डरी

कुण्डरी केन नदी के दक्षिणी किनारे पर हमीरपुर जिले के विलकुल उत्तर-पूर्व में लगभग ११,००० व्यक्तियो द्वारा वोली जाती है। यह वाँदा जिले मे इसी नदी के दाएँ किनारे पर भी प्रचलित है। इसके विलकुल उत्तर मे तिरहारी का व्यवहार होता है जो वघेली तथा वुदेली का मिश्रण है। इसका विवरण 'पूर्वी हिंदी' (खड ६) के अतर्गत दिया जा चुका है। कुण्डरी भी एक मिश्रित रूप है किंतु इसमे केन के दोनो किनारो पर अतर हो जाता है। दाईं अथवा पूर्व दिशा मे वाँदा की अन्य वोलियो के समान वह वघेली पर आधारित एव वुदेली से मिश्रित है। कुण्डरी के इस रूप का विवरण खड ६ मे मिलेगा। स्थूलत. दक्षिण की ओर केन की निचली धारा तक कुण्डरी को तिरहारी का विस्तार समझा जा सकता है।,

इस वोली की प्रकृति सलग्न नमूने से स्पष्ट हो जायगी। यहाँ क्रिया की रचना तथा भूतकाल का व्यवहार वुदेली के समान है, केवल 'रहैं' की स्थिति वघेली के अनुरूप रहती है। दूसरी ओर 'माँ' एव 'का' परसर्ग तथा 'म्वारो' रूप वघेली का है, यद्यपि इस रूप में वुदेली 'ओ'-अत्य है। इस वोली में वाक्यो का सामान्य ढाँचा वुदेली के समान है। वुदेली की सकर्मक क्रियाओ के भूतकालिक रूपो के पहले कर्ताकारक के विशेप प्रयोग के उदाहरण भी यहाँ मिलते हैं। 'पुत्र' का 'लामडा' पर्याप्त उल्लेखनीय है।

[सं० २०.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (कुण्डरी) वोली (जिला हमीरपुर)

ई मनई-के द्वी लामडा रहैं। उह-माँ-से हलके-ने वाप-से कहो ओ रे वाप धन-माँ-से जो म्वारी हीसा होय सो मोहैं दै राख। तव उह-ने उह-का अपनो धन वाँट दओ। वहुत दिन न भये कि हलके लामड़ा-ने वहुत जोर-कै मुलक-माँ चला गओ। हुआँ सुहदपन-मैं रह-के अपनो पैमा खो दओ॥

जालौन की निभट्टा

जालौन की मुख्य वोली वुदेली है लेकिन ज़िले के पूर्वी कोने में यमुना के दक्षिणी किनारे पर निभट्टा प्रचलित है। यह इसी नदी के किनारो पर व्यवहार मे आने वाली तिरहारी का विस्तार है। इसके वोलने वालो की सख्या लगभग १०,२०० है।

तिरहारी के समान निभट्टा वघेली तथा वुदेली का मिश्रित रूप है किंतु पश्चिम मे और आगे अधिक व्यापक वुदेली क्षेत्र मे प्रचलित होने के कारण इसे इन दोनो मे से किसी के भी अतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है। अपव्ययी पुत्र-कथा की कुछ प्रारभिक पक्तियाँ ही उदाहरणस्वरूप पर्याप्त होगी। इस वोली पर वघेली तथा वुदेली के प्रभावो की सघर्षमय स्थिति द्रष्टव्य है। यहाँ 'कहसि', 'दिहिस' जैसे भूतकालिक रूपो का व्यवहार होता है जिसमे कर्ता का कर्ताकारक मे होना वाछनीय है। लेकिन यह वुदेली के समान कार्यवाहक कारक में मिलता है। इसके साथ ही विशुद्ध वुदेली रूप 'हते" (वे थे।) भी उल्लेख्य है।

पश्चिम दिशा मे निभट्टा अतिम अविकसित वोली है। इस पर निकटवर्ती कनौजी के प्रभाव चिह्न भी दृष्टिगत होते है जैसे 'वा-ने' (उसने)।

[सं० २१]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (निभट्टा) वोली (जिला जालौन)

किसी आदमी-के दो लडका हते। उन-मैं-से छोटे-ने वापू से कहसि कि हे वापू धन-मैं-से जो मेरा हिस्सा होय सो हमिन देओ। तव वा-ने उन-को धन वाँट दिहस। वहुत दिन नहीं वीते कि छोटा लड़का सव कुछ जमा कर-के दूर-देस चला गहिस। वहाँ वदमाशी-में दिन खोइस अपना धन उडा दिहिस॥

भदौरी अथवा तोवँरगढी

भदावर राजपूतो का मुख्य क्षेत्र चवल नदी के दोनो ओर है जिससे ग्वालियर राज्य की पूर्वी सीमा वनती है। यही ग्वालियर का तोवँरगढ ज़िला तोमर राजपूतो का प्रमुख निवासस्थान है। इस क्षेत्र मे प्रचलित वोली भदौरी अथवा (तोवँरगढ मे) तोवँरगढी कही जाती है। नामो के वैभिन्य के वावजूद यह वोली एक ही अर्थात् वुदेली का एक रूप है जिसका आगरे मे प्रचलित व्रजभाखा से मिश्रण हुआ है। स्थान के अनुसार इसमे कुछ अतर हो जाता है। उत्तर दिशा मे स्वभावत व्रज के प्रभाव की क्रमश वृद्धि होती है।

भदौरी ग्वालियर राज्य के लगभग सपूर्ण मुख्य भाग मे प्रचलित है। यह राज्य के मध्य मे चवल से लेकर गुना की सीमा तक फैली है। इसके पश्चिम मे व्रजभाखा एव हरौटी है और पूर्व मे पँवारी वुदेली। दक्षिण दिशा मे यह मालवी मे अतर्भुक्त हो जाती है। आगरा ज़िले के दक्षिण मे चवल के सीमावर्ती क्षेत्र मे इसका व्यवहार होता है। मैनपुरी ज़िले के दक्षिण-पश्चिम की ओर यमुना के किनारो पर खरका भूभाग मे भी इसके कुछ वोलने वाले है। इटावा मे इसका प्रचलन यमुना एव चवल के मध्यवर्ती तथा दूसरी नदी के परवर्ती क्षेत्र मे है। भदौरी-भापियो की अनुमानित सख्या निम्नलिखित है—

ग्वालियर	१,०००,०००
आगरा	२५०,०००
मैनपुरी	८,०००
इटावा	५५,०००
कुल योग	१,३१३,०००

ग्वालियर तथा आगरा से नमूने देना पर्याप्त होगा। अन्य दो ज़िलो की भदौरी मे भेद नही है। यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि जालौन मे भदौरी का व्यवहार नही होता, यद्यपि इस ज़िले की वोलियो की प्रारभिक सूची मे भदौरी का नाम भी आ गया था। जालौन की यह तथाकथित भदौरी सामान्य वुदेली है।

वोली का निम्नलिखित विवरण नमूनो पर आधारित है।

उच्चारण मे 'औ' तथा 'ऐ' प्राय इतनी ही वार प्रयुक्त होते है जितनी वार 'ओ' एव 'ए'। एक ही वाक्य मे एक ही शब्द दोनो प्रकार से लिखा हुआ मिलता है यथा 'मारो' एव 'मारौ'। जालौन की वुदेली के समान यहाँ स्वरो का विचित्र

परिवर्तन भी दृष्टिगत होता है जैसे 'वहुत' (जालौन 'वुहत') के लिए 'वौहत', 'रहत' के लिए 'रेहत,' 'कहि' के लिए 'केह' ।

व्यजनो मे सकोचन की प्रवल प्रवृत्ति है उदाहरणार्थ 'जानतु' के हेतु 'जान्तु' । 'र्' वर्ण के सवध मे यह स्थिति विशेपत द्रष्टव्य है–

वाछनीय रूप	उपलव्ध रूप
चाकरन (नौकरो)	चाकन्न
परदेस (दूर का प्रदेश)	पद्देस
वरिसन (वर्पो)	वस्सन
सुरति (स्मृति)	सुत्ती
मारनौ (मारना)	मान्नौ
करतु (करना)	कत्तु
मारतु (मारना)	मात्तु

सज्ञाश्रो मे सवल रूप सामान्यत 'औ' अथवा 'ओ'-अत्य होते हैं यथा 'सहारौ' (सहारा) । विकृत रूप नियमानुसार 'ए'-अत्य होते है । जैसा कि वुदेली मे अन्यत्र होता है, सवधसूचक सवल सज्ञाएँ और कुछ अन्य 'आ' से समाप्त होती हैं जिनमें विकृत एकवचन अथवा कर्मकारक वहुवचन मे परिवर्तन नही होता यथा—

कर्ता० एक०	वि० एक०	कर्ता० वहु०	वि० वहु०
लरका	लरका	लरका	लरकन्
घोरा	घोरा	घोरा	घोरन्

इस उदाहरण मे 'ए' विकृत रूप का वहुवचन 'एँ' में है, 'हमारें' ('हमारे नही) दो वच्चा हैं'।'

व्रज (अथवा सभवत कनौजी) का प्रभाव सज्ञाओ के दुर्वल 'उ'-अत्य के वैकल्पिक प्रयोग मे दृष्टिगत होता है जैसे 'ज्वावु' (जवाव), 'मात्तु' अथवा 'मात्तअ' (मारना), 'मत्तु' (मरना), 'कत्तु' (करना) 'जान्नु' (जानना) ।

इस वोली मे 'अन्' सामान्य करण एकवचन है यथा 'भूखन' (भूख से) । कर्म-सप्रदान का परसर्ग 'कें' अथवा 'कों' है । शव्द-रूप-रचना अन्य दृष्टियो से प्रामाणिक वुदेली के समान है । उच्चारण मे अवश्य ही कुछ भेद हो जाता है ।

सर्वनामो मे व्रज के प्रभाव के कारण 'मैं' अथवा 'मैं' के साथ-साथ 'हौं' या 'हौं' रूप का भी व्यवहार होता है। इसी प्रकार वुदेली के सामान्य 'तुमारो' एव 'तुमाओ' रूपो के अतिरिक्त 'तिहारो' (तेरा, तुम्हारा) भी विद्यमान है । 'मुझे' का पर्याय 'मोइ' प्रामाणिक वुदेली रूप 'मोए' का तत्स्थानी है। जालौन के समान 'वह' (पु०,

स्त्री०) 'वा', वि० 'वा' अथवा 'वाँ', वहु० 'वे' तथा वि० 'विन' है। 'जा', 'जी' या 'जे' 'यह' का अर्थ द्योतित करता है। 'अपये' 'अपना' अभिप्राय व्यक्त करने वाला विकृत वहुवचन है।

'क्या' के लिए व्रज 'कहा', वि० 'काहे' का व्यवहार होना है।

क्रियाओ मे व्रज का 'हौं' (मैं हूँ।) तथा अत्यन्त सामान्य रूप 'हो' (था) मिलता है। सहायक क्रिया का प्रारंभिक 'ह्' प्राय विलुप्त हो जाता है जिनसे 'खात-ऐं' (खाते हैं।), 'खाति-औ' (तुम [स्त्री० लि०] खाती हो।), 'ना-ओ' (वह नही है।), 'रहत-ए' (वह रह रहे थे।) तथा 'देत-ए' (वे दे रहे थे।) के लिए 'देत-ये' जैसे रूप मिलते हैं।

'चाहो' (उसने चाहा।) की अपेक्षा विद्यमान 'चाहौं' मे पुराना नपुंसक रूप सुरक्षित है। अन्य दृष्टियो से क्रिया-रूपो की रचना प्रामाणिक वुंदेली से भिन्न नही है।

कहने की क्रियाओ के वाद 'कि', 'के' अथवा 'कैं' की अपेक्षा समुच्चय-वोधक 'कि' के लिए प्राय 'जि' का प्रयोग होता है।

[सं० २२]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

वुंदेली (भदौरी) **(जिला ग्वालियर)**

उदाहरण १.

काऊ आदमी-कें द्वै लरका हे। लुहरे लरका-ने अपने वाप-सों कही ददा हमारो हिसा देउ। दोऊ लरकन-कों हिसा कद-दओ वा-के वाप-ने। फिर लुहरो लरका अपनो माल-ले गओ और पर्देस चलो गओ और अन्याउ-में अपनी सिग जमा वहाइ दई। वा-के पास कछू न रहो। वाँ वडो अकाल परो और वडो तंग-दुखी होन लगो। ठाकुर-कें रहुआ रहन लगो। वा-ने सुअरा खेतन-में चराउन-कों भेजो। तव वाँ-ने चाहौं कि पेट भरि लेउँ भुस खाइ-कें। काऊ आदमी-ने वा-कों सहारो नइँ दओ। वाँ-ने सोचौ और कही, मेरे वाप-के हिंआँ गल्ले आदमी हैं, और सिव कछू खात-पिअत-हैं और कोऊ भूखें अन्न नाहिं खात। हौं भूखन मत्तु हौं। हों अपने वाप-के हिंआँ चलों और कहौं, हों तिहारो और पनमेसुर- कौ वडो पापी जनमो हों। हों तिहारो लरका कहिवे जोगि नाहिं। मोइ अपनो चाकर राखि लेउ। महाँ-सें चलि-कें व लरका अपने वाप-के हिंआँ आइ-गओ। जव वाप-ने लरका देखो दूरई-तें तव वाप भजो और लरका ले-कें छाती-सों लगाइ लओ और पुचकारो। तव लरका-ने कही कक्का हों तिहारो और पनमेसुर-कौ वडो पापी हों और तिहारे चाल-चलन-कौ मो-में कोऊ

वात नाईं। हालईं वाप-ने अपने चाकन्न-सौं कही जा-कौं घर-तें पोसाकें ल्याओ और हाथ-में मुदरिया और पाँव -में जूती पहराओ। हम तुम सिवरे खांय और खुसी मनामें। जा लरका-कौ फिर-कें जनम भओ-है। और खोग्रौ फिर-कें मिलौ-है। और सिवन-नें घरकिन-नें वड़ी खुसी मानी॥

वा खन वा-कौ वड़ौ भैया हार-में हो। जव व अपने घर-के ढिंगा पोंहँचि गओ तव अपने आदमी-सों वुलाई-कें पूछी जि कहा चौहल-वौहल हुई-रही-है। वा-ने कही कि तिहारे कका और लुहरे भैया-ने आइ-गये-की खुसी मानी-है। काहे-तें वाप-नें फिर-कें जे लरका आँखिन देखौ। जा-पै कछु दुखिआय-कें व अपने घर-में न गओ। तव वाप-ने आइ-कें वा-कौं समझाओ। तव जेठे लरका-ने वाप- सौं ज्वावु दओ। देखौ मुद्दत-तें तिहारी सेवा हौं कत्तु-हौं। और कव-हूं तिहारी वात न डारी। तुम-ने छदाम की कौड़ी खेलिवे -कों न दई और चली कहा है जा-सों हम अपये सगकिन देते और खुसी मनाउते। जा-ने यों हीं धन सिगरौ वरवाद कर-दओ सो लरका तुम-कों प्यारौ लगौ वाइ लिवाइ लाये और सिवरी सिमार-कौं भेपाचारी-कौं जिमाओ। वाप-ने जेठे लरका-सों कही हम तूं सग रहे-हैं। और जो कछू घर-में है वनु सो सिव तेरौ है। और ज लोकचारज मेरौ एसिय राह चली आई- है जे तेरे लुहरे भैया-कौ फिरि-कैं जनम भओ है। खोओ भओ फिरि-कें आओ-है। जाइ को जान्तु-हो कि आवेगो॥

[सं० २३]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुदेली (भदौरी) **(जिला ग्वालियर)**

उदाहरण २.

कहूँ एक गौहदुआ और गौहदुनियाँ रेहत-ए। एक दिना विन दोउन-कों खूब पिआस लगी। तव गौंहदुनियाँ-ने गौहदुआ-सों कही चलो हम तुम पानी पियें। तुम कोऊ कहानी केह जान्त-हो के नाहीं। वहाँ एक चीते-की भटार है। जो तुम कहानी कहि जान्त-हौ चीते-की भटार-पै पानी मिलेगौ। वौहत पिआस लग-रही-है। विन दोउन-ने हालईं चल-दओ और पानी-के ठौर पौंहिचे। तव गौंहदुनियाँ वोली तुम कहानी जान्त-हो कि नाहीं। और चीते-ने उन दोउन-कौं देखि लओ। तव गौहदुआ-ने कही कि मोहि देह की सुत्ति कछू नाईं रही। गौहदुनियाँ-ने कही कि तौ हिंआँ काहे-कौं ठाडे-हौ पानी पी-लेउ और अपने पुरखा काका-सों राम राम करो। गौहदुआ पानी

पिअन लग-गओ। जब पानी पी-कें सुत्तो हो-गओ तब कलानो कका राम राम। फिर गौहद्दुनियाँ-तें लौट-कें कही कि तू-ऊँ पानी-पी-लै और तू-ऊँ राम राम कर-लै। पानी पी-कें व-ऊ मुत्ती हो-गई। तव पुरखा-सों कही मेरे घर चलौ। हमारें दो वच्चा हैं। जे गौहदुआ कहत-है वच्चा मेरे हैं। वे वच्चा हों कहति-हों कि मेरे हैं। सो तुम चलौ और सुझाइ देउ। तब चीते-ने अपने मन-में जान-लई कि मेरौ काम वन गओ। चारों खाइ लैहों। मेरौ काम वन-जैहै। वहाँ-सें चले अपने ठौर-पै-आये वे सिगरे। तव गौहदुनियाँ गौहदुआ-सें वोली लरकन-कौं काका-के ढिगाँ लिवाय-लाउ। सो वे समझ-कें तैसो कर-दें। गौहदुआ डरपन-के मारें भीतर-से वाहर कौं मोंह न दिखाओ। तव गौहदुनियाँ-ने कही कि वच्चन-कों हों ल्याउति-हों। फिर व-ऊ भटार-में गुलि गई। चीतो अकेलौ वाहर ठाढो रहि गओ। गौहदुनियाँ-ने मसक-कें उझक-कें कही पुरखा हम दोऊ जने आपुस-मे राजी हुइ गये। एक वा-ने ले-लओ। एक मैं-ने ले-लओ। चीतो लौटो। अपनी भटार-कों चलौ गओ। वे दोऊ अपने वच गये। चीते-सों कहि सुनि-कें पानी पी आये॥

निम्नलिखित लोक-कथा आगरा ज़िले की भदौरी की है। यहाँ की वोली ग्वालियर के लगभग समान है। इसमे व्रज के 'उ'-अत्य का व्यवहार अधिक होता है। इसी प्रकार सकोचन की व्यापकता भी द्रष्टव्य है यथा 'पज्जा' ('परजा', 'प्रजा'), 'खच्चु' ('खर्च'), 'पत्तु' ('परतु', गिरना) तथा 'जातो' ('जात-तो', जा रहा था।) यहाँ कर्म-सप्रदान का व्रज अत्य 'कूँ' एव कनौजी रूप 'थो' विद्यमान है।

[सं० २४]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (भदौरी) (जिला आगरा)

एक सूर्ज नारायनु-की महतारी और घरवारी रहें। वे आधौ पज्जा औरु आधौ घर-कौ खच्चु देत-ये। सो वहू औरु महतारी-कौ खच्चु-तें पूरौ ना-ओ पत्तु और पज्जा-कौ खच्चु-तें पूरौ परौ-जातो। तव सूर्ज नारायनु-की घरवारी-ने सासु-सों कही कै तुम सूर्ज नारायनु-पै जाऊ सो तुम सूर्ज नारायनु अपने वेटा-तें कहो इतनी हम-कूँ देऊ ता-सों हमारी उदर भरे। तव सूर्ज नारायनु-ने अपनी महतारी-तें पूछी कै तुम कैसें करि-कें खाति-औ। तव उन-ने कही कै सासु वहू-की चोरी और वहू सास-की चोरी ऐसें करि-कें खात-ऐं। तव उनि-की वहू चली गई सासु-के पीछें कौरे-सौं जाइ ठाढी भई। महतारी ढोटा वतराने फिरि सुनि-कें चली-आई। विन-ने घरु आइ-कें लीपो पोतो रोटी वनाई। खूव झक्क दोनों सासु वहू-ने एक ठौर वैठि-कें एक थार-में जेंई रोटी खूवु नीकी तरियाँ-तें। सूर्ज नारायनु-कें खूवु वरकति भई।

सूर्ज नारायनु अपनी अस्त्री-पास आये सूर्ज नारायनु चोरी-चोरा काऊ पज्जा-ने जानी नाहीं। फिरी सूर्ज नारायनु-की अस्त्री-कों अवानु रहि-गयो। तव उन-के पैंदा भयौ पुत्र नवें महीना। पज्जा-में चवाउ भऔ। फिरि सूर्ज नारायनु अपने देस-कौं नीकी तरियाँ-सों आये। लाऊ लसकर लै-कें आये। तव उन-कौ रथु गैल-में अटकि गऔ। तव हम-ने कही कै सूर्ज नारायनु-कौ जाईदा पुत्र होयगौ तो वा-के छूएँ तें रथु चलि-होय। तव हमारे तुमारे जानें तो सूर्ज नारायनु-कौ नाहीं थो। सूर्ज नारायनु अपने मन-में जानत-ए कै हमारौ वेटा-है। तव वेटा घर-तें आऔ। रथु पाँय-के अगूठा-तें छूइ दऔ। रथु चलि-उठौ। अपने घर-कौं चलौ-आऔ। तव अपने घर आइ पोहोंचौ। खूव नीकी तरियाँ-तें आनदु भऔ। खूवु भजनु भऔ ॥

दक्षिण की विकृत वोलियाँ

कहा जा चुका है कि मध्य प्रात के सागर तथा दमोह जिलो मे प्रामाणिक वुदेली प्रचलित है। इनके दक्षिण मे नर्मदा घाटी के अतर्गत माडला, जवलपुर, नरसिंहपुर होशगावाद तथा निमार का एक भाग सम्मिलित है। माडला एव जवलपुर मे पूर्वी हिंदी का व्यवहार होता है किंतु इस दूसरे जिले की वोली पश्चिम की ओर क्रमश वुदेली मे अतर्भुक्त हो जाती है। नरसिंहपुर तथा होशगावाद के वड़े भाग मे प्रामाणिक वुदेली का प्रयोग होता है लेकिन होशगावाद के शेप भाग मे मालवी एव निमार के एक भाग में निमाडी वोली जाती है। नर्मदा घाटी के दक्षिण मे वालाघाट, सिवनी, छिंदवाडा तथा वैंतूल ज़िले हैं। वालाघाट मे मुख्यत मराठी का एक रूप तथा पूर्वी हिंदी (खड ६) के अतर्गत वर्णित कई विकृत वोलियाँ प्रचलित हैं। यह वोलियाँ वघेली एव मराठी के मिश्रण से वनी हैं। इस ज़िले मे लोधी जाति द्वारा वुदेली और मराठी के एक मिश्रित रूप का व्यवहार होता है। सिवनी मे अपने उत्तर-पश्चिम के नरसिंहपुर के समान प्रामाणिक वुदेली वोली जाती है। छिंदवाडा सतपुडा पर्वत-श्रेणी के गोडी तथा कोर्कू-भाषी क्षेत्र द्वारा होशगावाद की वुदेली से पृथक् हो गया है। छिंदवाडा ज़िले के मध्य में वुदेली का एक विकृत रूप और दक्षिण मे मराठी प्रयुक्त होती है। छिंदवाडा के पूरे मध्य भाग की कोई एक प्रामाणिक वोली नही है। प्रत्येक जनसमूह की वोली एक-दूसरे से किंचित् भिन्न प्रतीत होती है लेकिन इन सभी मे परस्पर वहुत समानता है। छिंदवाडा की वुदेली की प्रमुख विशेपता वड़ी मात्रा मे हिंदोस्तानी के शव्दो एव भापागत् प्रयोगो का ग्रहण है। छिंदवाडा के पश्चिम में वैंतूल है जहाँ विकृत मालवी तथा मराठी का प्रयोग होता है।

सतपुडा पर्वत-श्रेणी के दक्षिण में नागपुर का विस्तृत भूभाग है जहाँ मराठी वोली जाती है। लेकिन नागपुर ज़िले के एक वडे क्षेत्र में विखरे हुए कवीले जिस वोली का

व्यवहार करते हैं उसका स्थानीय नाम 'हिंदी' है। प्राप्त नमूनो के परीक्षण से स्पष्ट होता है कि यह बुदेली एव मराठी का विकृत मिश्रण है।

छिदवाडा, चाँदा, भँडारा तथा बरार मे कोष्टी कबीले और छिदवाडा एव बुल्डाना मे कुम्भार कबीले के कुछ लोग नागपुर की 'हिंदी' से बहुत मिलती-जुलती एक बोली बोलते है।

इस प्रकार दक्षिण की विकृत बोलियो की निम्नलिखित सूची प्राप्त होती है —

लोधी (बालाघाट)		१८,६००
छिदवाडा, बुदेली	१४५,५००	
छिदवाडा, कोष्टी	३,२४२	
कुम्भारी	४,४००	
		१५३,१४२
नागपुर की 'हिंदी'		१०५,६००
मध्य प्रदेशो की अन्य कोष्टी बोलियाँ .		८,८००
बरार की कोष्टी		२,६५०
बुल्डाना की कुम्भारी		४८०
	कुल योग .	२८६,५७२

बालाघाट के लोधियो की विकृत बोली

बालाघाट मे बुदेली का एक विकृत रूप प्रचलित है।

बालाघाट मे किसानो द्वारा तीन बोलियाँ बोली जाती है जो पिछले कुछ दशको मे जिले मे आ गये हैं। ये बोलियाँ मरारी, पँवारी तथा लोधी है। इनमे से पहली दो का विवरण 'पूर्वी हिंदी' (खड ६) के अतर्गत दिया जा चुका है। लोधी जिले के मध्य एवं पश्चिम मे बिखरे हुए इसी जाति के लगभग १८,६०० व्यक्तियो द्वारा बोली जाती है जो मूलत उत्तर की ओर से आये थे। यह बोली हिंदोस्तानी, दक्खिनी हिंदोस्तानी, मराठी, बघेली एव बुदेली का मिश्रण है। प्राप्त नमूनो के परीक्षण से स्पष्ट होता है कि लोधी मुख्यत बुदेली पर आधारित है। अत. इसे इसी के अतर्गत वर्गीकृत किया गया है।

इस बोली के अधिक उदाहरण देना व्यर्थ होगा। अपव्यी पुत्र-कथा की कुछ प्रारम्भिक पक्तियाँ ही पर्याप्त हैं। इन्ही मे उपरोक्त उल्लिखित बोलियो के प्रभाव-चिह्न दृष्टिगत होते हैं यथा 'थे', 'मेरा', (हिदोस्तानी), 'मेरे-को' (दक्खिनी), 'अपली' (अपना, मराठी), 'ओ' (कि, बघेली) और 'चुको', 'पड्यो' एव 'गयो' (बुदेली)।

[सं० २५.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (विकृत लोधी बोली) (ज़िला बालाघाट)

एक आदमी-ख दो लडका थे। ओ-मैं-से छोटा-ने वाप-से कहा हे वाप सम्पत मैं जो मेरा हिस्सा हो सो मेरे-को दे-देव। तब ओ-ने अपली सम्पत बाँट दीन्ही। भवत दीन नहीं बीते छोटा लडका सब एकुट्ठा कर-खु दूर देस चलि गयो और वाहाँ लुचपन-माँ दीन गुमाते हुए अपनी सम्पत उडाय दीन्ही। जब वह सब उडाय चुको तब वो देस-मैं बडो अङ्काल पड्यो और ओ देस-माँ जा-कु कङ्गाल भय गयो ॥

मध्य छिंदवाडा की वोलियाँ

सिवनी के पश्चिम में छिंदवाडा है। इस जिले के दो भाग हैं। उत्तरी अथवा वाला-घाट क्षेत्र मे (वालाघाट ज़िले से पृथक्) सतपुडा पर्वत-श्रेणी की ढलानो से ऊपर का पहाडी प्रदेश सम्मिलित है और दक्षिण या ज़ेरघाट क्षेत्र मे इसका निचला भूभाग आता है। दूसरे भाग में मराठी प्रचलित है। वालाघाट ऊँची अधित्यकाओ की शृखला है जो उत्तर दिशा में महादेव पहाडियो की ओर क्रमश ऊँची होती जाती है। इन पहाडियो में गोडो तथा कोर्कुओ द्वारा व्यवहृत वोलियो से इस समय हमारा कोई प्रयोजन नही है। उनके एव ज़ेरघाट के वीच अर्थात् जिले के मध्य भाग मे विकृत वुदेली का प्रयोग होता है।

वघेली, वुदेली, कुभारी, गाओली, राघोवमी, किरारी, कोष्टी तथा पँवारी मूलत मध्य छिंदवाडा में प्रचलित वतलायी गयी थी। वघेली के उदाहरणो से स्पष्ट हो जाता है कि इसमें और तथाकथित वुदेली मे वहुत ही कम अतर है। जहाँ तक कुभारी का सबध है, छिंदवाडा के कुम्हार द्विभाषी प्रतीत होते हैं। इनकी वोली के कुछ उदा-हरण ज़िले की सामान्य वुदेली में हैं और अन्य मराठी में। यह भी कहा जा सकता है कि इनमें से कुछ एक वोली वोलते है और कुछ दूसरी। अधिक जानकारी के अभाव मे छिंदवाडा की कुभारी को वुदेली के अतर्गत वर्गीकृत कर दिया गया है। इसके साथ-साथ वुदेली पर ही आधारित कुंभारी का एक वहुत समान रूप वरार के वुल्डाना क्षेत्र में में भी प्रचलित है। अत इस वर्ग के अत मे सभी कुभारी वोलियो पर सामूहिक रूप से विचार किया गया है।

गाओली, राघोवंसी तथा किरारी के मूलत दिये गये विवरण से यह निष्कर्ष निकलता था कि इनके मालवी के रूप होने की पूरी सभावना है लेकिन प्राप्त नमूनो के परीक्षण से स्पष्ट हो जाता है कि वे विकृत वुदेली के हैं। फिर मराठी का एक रूप

समझी जाने वाली कोष्टी वोलियाँ मराठी एवं वुदेली का मिश्रण सिद्ध हुई जिसमे प्रमुख आधार दूसरी वोली थी। इस मिश्रित रूप के व्यवहारकर्ता ३,२४२ थे। अत मे, ३००० पँवार जिन्हे छिंदवाडा की एक विशेष वोली से सवद्ध किया गया था, आगे चलकर ज़िले की सामान्य वुदेली के भाषी प्रमाणित हुए।

इस प्रकार छिंदवाडा में वोली जाने वाली वुदेली के निम्नलिखित आँकडे मिलते है —

ज़िले की सामान्य वुदेली --		
'वघेली' (तथाकथित)	३५,०००	
वुदेली	८३,५००	
पँवारी	३,०००	
		१२१,५००
गाओली		
राघोवसी		२४,०००
किरारी		
कोष्टी		३,२४२
कुभारी		४,४००
	कुल योग	१५३,१४२

अतिम पाँच वोलियो का विवरण वाद मे दिया जायगा। यहाँ पहली तीन पर विचार अपेक्षित है। इसका व्यवहार १२१,५०० व्यक्तियो द्वारा किया जाता है।

मध्य छिंदवाडा मे प्रचलित वोली मे स्थान तथा भाषियो की जाति के अनुसार भेद हो जाता है। अपनी स्वय की विशेषताओ के अतिरिक्त यह वोली सामान्य हिंदोस्तानी से स्वतत्रतापूर्वक मिश्रित हुई है। नि सन्देह इसका कारण यही है कि आर्य जाति का एक वडा भाग उत्तरी भारत से आया है। यह मिश्रण विलकुल यान्त्रिक है। एक वाक्य मे हिंदोस्तानी प्रयोग मिलता है और दूसरे मे उसी भाव को वुदेली माध्यम से व्यक्त किया जाता है यथा अन्य पुरुषवाचक सर्वनाम का कर्ताकारक कभी हिंदोस्तानी 'उस-ने' होता है और कभी स्थानीय वुदेली 'ओ-ने' अथवा 'वो-ने'। दूसरी ओर हिंदोस्तानी के समान 'को' परसर्ग कभी कर्म-सप्रदान के लिए प्रयुक्त होता है (जैसे 'रहन-को चलो-

गओं') और कभी वुदेली की भाँति सवघकारक के लिए (यथा 'तेरो और भगवान-को कसूरवार)। निम्नलिखित नमूने मे हिंदोस्तानी शब्द-रूप-रचना के अनेक उदाहरण मिलते है।

हिंदोस्तानी से असवद्ध नीचे लिखी विशेषताएँ छिंदवाडा की विभिन्न वोलियो मे दृष्टिगत होती है। वे विभिन्न स्रोतो से एकत्रित की गई है और अधिकतर (किंतु सब नही) सलग्न नमूने मे मिल जायँगी।

संज्ञाएँ—कर्म-संप्रदान के चिन्हस्वरूप (हिंदोस्तानी 'को' के अतिरिक्त) विशुद्ध वुदेली 'खों' का तत्स्थानी 'खूं' मिलता है यथा 'मे-खूं' (मुझको)। 'खअ' एव 'खे' का भी प्रयोग होता है। अपादान-करण के लिए 'से' एव 'सअ' आते है।

सर्वनामो मे 'मैं', 'तैं' तथा जो (यह, कौन) के विकृत रूप क्रमश 'मे' ('मो' नही), 'ते' ('तो' नही) तथा 'जे' ('जा' नही) है जैसे 'मे-खूं', 'जे-खूं' (कर्म, जिसको)।

अन्यपुरुष का सर्वनाम 'ओ' अथवा 'वो' है, 'वो' नही और इसका विकृत रूप (हिंदोस्तानी के अतिरिक्त) 'वा' की अपेक्षा 'ओ', 'वो' अथवा 'उवो' है। अतिम रूप कुमियो में सामान्य है।

इन सभी सर्वनामो का सप्रदान 'हे' होता है यथा 'मेहे' (मुझको)', तेहे '(तुझको), 'जेहे' (किसको) और 'ओहे' (उसको)। कभी-कभी अतिम स्वर अनुनासिक हो जाता है जैसे 'मेहें'। यह रूप वुदेली 'मोए' आदि का तत्स्थानी है।

क्रियाओ मे अस्तित्वसूचक क्रिया का भूतकालिक रूप सामान्यत 'हतो' है किंतु विशेषत कुमियो मे 'हयो' (दक्खिनी हिंदोस्तानी 'अत्या' से तुलनीय) एव 'थो' हिंदोस्तानी 'था' का वुदेली अथवा कनौजी विकृत रूप) मिलता है। 'कहहूँ' के लिए 'कहूँ' आदि मे सकोचन की सामान्य वुदेली प्रवृत्ति भी दृष्टिगत होती है। 'देन' (देना) का भूतकालिक रूप 'दओ' अथवा 'देओ' है। यही स्थिति 'लेन' (लेना) की है।

यह भी उल्लेखनीय है कि 'स्त्री या पुरुष ने कहा' के लिए 'कहो' शब्द मिलता है, प्रामाणिक वुदेली के समान स्त्रीलिंग रूप 'कही' नही।

अन्य दृष्टियो मे यह वोलियाँ सामान्य वुदेली से निकटत सवद्ध है।

इनकी अधिकाश विशेषताएँ निम्नलिखित नमूने से स्पष्ट हो जाएँगी। इसके लिए मैं श्री एल० एन० चौधरी का कृतज्ञ हूँ। स्त्रियो द्वारा व्यवहृत वोली का यह नमूना सारे मध्य छिंदवाडा की सामान्य जन-भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

[सं० २६]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (मिश्रित बोली) (जिला छिंदवाडा)

(श्री एल० एन० चौधरी, १८९९)

एक आदमी-के दो बेटे हते। उन-में-से छोटे-ने अपने बाप-से कहो दादा मेरो हिस्सा-को माल मे-खूं दे-दो। इस-पर उस-ने अपनी घर जिन्दगी बाँट दओ। मुतके दिन बीतन न पाये कि छोटे बेटा सबरो माल-टाल इकठो कर-के दूर-के मुलक-में चलो गओ। और ओ-ने अपनी पूंजी बदमाँसी-में खरच कर-डारो। और जब ओ-ने सब खरच कर-डारो तब वो मुलक-में एक बडो भारी काल पडो ओ-खूं तगी होन लगी। और वह उन मुलक-के एक भले आदमी-के जोरे रहन-को चलो-गओ। इस आदमी-ने ओ-खूं अपने खेतों-मे सुवरों-के चराउन-के लाने भेजो। वह खुसी-से अपनो पेट फल फूल-से भरत-थो जे-खूं सुवर खात-थे और कोई आदमी ओ-खूं कछू नहीं देत-थे। जब वह आप-ई आओ तब ओ-ने यह कहो। मेरे बाप-के कितने तनखाहदार नोंकरों-को पूरी पूरी रोटी खान-को और देन-को मिलत-है और मैं भूखो मरत-हूँ। मैं अब उठ-के अपने दादा-के जोरे जाहूँ और ओ-से यह कहूँ कि दादा मैं तेरो और भगवान-को कसूरवार हूँ और मैं तेरो बेटा कहन-के लायक नईं हूँ। मे-खूं अपनो एक तनखाहदार नोंकर कर-के राख-ले॥

गाओली, राघोवसी तथा किरारी

यह अपने नाम की जातियो की बोलियाँ है। इनकी सूचनाएँ छिंदवाडा से प्राप्त हुई हैं। इन बोलियो के व्यवहारकर्ताओ के अनुमानित आँकडे निम्नलिखित हैं :—

गाओली	१६,०६३
राघोवसी	३,११४
किरारी	४,७५०
कुल योग	२४,०००

इनके द्वारा व्यवहृत बोलियाँ मूलत छिंदवाड़ा जिले की प्राथमिक भाषा-सूची मे मालवी के रूपो के नाम से वर्गीकृत की गयी थी लेकिन वस्तुत यह जिले की सामान्य विकृत बुंदेली से किसी प्रकार भी भिन्न नही है। यह प्रत्येक के उदाहरण से भलीभाँति स्पष्ट हो जायगा। इन तीन मे से राघोवसी मे हिंदोस्तानी से अत्यधिक उधार-ग्रहण हुआ है।

[सं० २७.]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वुदेली (गाओली) (जिला छिंदवाड़ा)

कोई आदमी-को दो छोकरे हये। वो-में-से नान्हे छोकरा-ने वाप-से कहो कि दादा मेरो हिस्सा कर-दे । तो ओ-के दादा-ने हिसा वाटा कर-दओ। सुतके दिन नहीं भये-हये के नान्हे छोकरा-नें अपनो सव धन ले-के दूर मुलख-खे चलो गओ ॥

उपर्युक्त उदाहरण में भूतकालिक अकर्मक क्रिया-रूप के कर्ता के लिए कर्ताकारक चिन्ह 'ने' का व्यवहार द्रष्टव्य है, 'छोकरा ने चलो गओ।' यहाँ संस्कृत 'पुत्रेण गतम्' के समान क्रिया का अव्यक्तिवाचक प्रयोग है।

[सं० २८]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वुदेली (राघोवंसी) (जिला छिंदवाड़ा)

कोई आदमी-के दो लडके थे। वो-में-से छोटे-ने अपने दादा-से कहा के दादा धन-में-से जो मेरो हिस्सा वैठे सो मेहे देव । तव उन-के वाप-ने अपना सव धन वाट दओ। वहोत दिन नहीं वीते कि छोटे लड़के-ने अपनो सव धन जमा कर-के दूर देस-को निकल-गओ ॥

यहाँ भी कर्ता के साथ कर्ता-कारक-चिन्ह जोड कर अकर्मक क्रिया का अव्यक्तिवाचक प्रयोग हुआ है।

[सं० २९]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

वुदेली (किरारी) (जिला छिंदवाड़ा)

कोई आदमी-के दो छोकरा हते। वो-में-से नाँने छोकरा-ने अपने वाप-से कहो दादा धन-को जो हिस्सा मेरा है सो मेहे दे-दे। तो ओ-के दादा-ने हिस्सा वाँटा कर-दी। सुतके दिन नहीं भये-हते के छोटे छोकरा-ने अपने हिस्सा-को सवरो धन जमाकर-के दूर देस-को चलो-गओ ॥

इस उदाहरण में भी अकर्मक क्रिया का ऐसा ही प्रयोग विद्यमान है।

नागपुर की 'हिन्दी'

छिंदवाडा के बिलकुल दक्षिण मे ज़िला नागपुर है जहाँ की मुख्य आर्य-भाषा मराठी है। यहाँ के १०५,६०० व्यक्ति 'हिंदी'-भाषी बतलाए गये हैं। यह व्यक्ति किसी विशेष स्थान तक सीमित नही है वरन् सारे ज़िले मे फैले हुए है। वे अथवा उनके पूर्वज मूलत उत्तर के थे। यह 'हिंदी' अस्थायी रूप से मालवी के एक रूप की भाँति वर्गीकृत की गयी थी। आगे और जानकारी मिलने पर लगा कि अभिव्यक्ति का यह माध्यम ऐसा नही है जिसे सही अर्थ मे बोली कहा जा सके। उदाहरणो से स्पष्ट होता है कि यह छिंदवाडा के समान बुंदेली का एक विकृत रूप है किन्तु इसमे मराठी का मिश्रण अधिक हुआ है। ज़िले के मराठी माध्यम वाले स्कूलो के कारण यह निरतर प्रभावपूर्ण होती जा रही है और निश्चय ही एक दिन बुंदेली तत्व को नि शेष कर देगी।

उपरोक्त विवरण निम्नलिखित उदाहरण से और भी स्पष्ट हो जायगा।

[सं० ३०]

भारतीय-आर्य परिवार **केन्द्रीय वर्ग**

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (नागपुर की 'हिन्दी') (ज़िला नागपुर)

एक आदमी-खे दो पोर्‍या हते। ओ-मेँ-को नन्हो लरका बाप-खे किहे दादा मोरे हिस्सा-को माल मो-खे दे-दे। फेर ओ-ने अपनी जिनगी-की दोई पोर्‍यन-खे बाटनी कर-दई। आगे थोडेच दिन-मेँ नन्हे पोर्‍या-ने अपनी सब धन सावडी। फेर ऊ दूसरे मुलक-मेँ फिरन-खे गओ। वहाँ अपनो सब पैसा ओ-ने चहुलबाजी-मेँ उडा दओ॥

कोष्टी बोलियाँ

सन् १८९१ की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेशो के कोष्टियो अर्थात् रेशम बुनने वालो की सख्या १३७,८९१ थी। इनमे से १२,००० विशेष बोलियो के व्यवहारकर्ता बतलाये गये थे। उनका विभाजन यह था —

छिंदवाडा—		
मराठी कोष्टी	२,६३८	
हिंदी कोष्टी	६०४	
		३,२४२
चाँदा		८,०००
भँडारा		८००
	कुल योग	१२,०४२

इस जाति के अन्य व्यक्ति सामान्य मराठी-भाषी कहे गये थे। छिंदवाडा मे ६०४ व्यक्ति अपवाद थे, शेष सब १२,०४२ व्यक्ति मराठी की एक विशेष बोली के प्रयोगकर्ता बतलाये गये थे। इनमे बरार के २,६५० कोष्टियो को जोड कर कुल सख्या १४,६९२ हो जाती है। इनकी बोली पर आगे कुभारी के साथ विचार किया जाएगा।

इन स्थानों से प्राप्त उदाहरणो के परीक्षण से स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ वस्तुत कोई विशेष कोष्टी बोली विद्यमान नही है। अभिप्राय यह है कि यह लोग बुंदेली, छत्तीसगढ़ी तथा मराठी के एक विकृत मिश्रण का व्यवहार करते है और स्थानविशेष के अनुसार मिश्रण के परिमाण मे अतर हो जाता है।

कहा जा चुका है कि छिंदवाडा जिला दो मुख्य भागों में विभाजित है। उत्तर मे बालाघाट अथवा उच्च भूभाग मे विकृत बुंदेली का प्रचलन है। जेरघाट या निम्न भूभाग वस्तुत नागपुर का एक भाग एव बरार का समतल भूमिक्षेत्र है। बालाघाट की कोष्टी बोली 'हिंदी कोष्टी' नाम से जानी जाती है क्योंकि यह जेरघाट की कोष्टी की अपेक्षा बुंदेली मे अधिक प्रभावित है।

नीचे एक नमूना छिंदवाडा की 'हिंदी कोष्टी' का है। दूसरे उदाहरणस्वरूप चाँदा की एक लोककथा दी गयी है जिसमें मराठी तत्त्व का प्राधान्य है।

[सं० ३१]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (मिश्रित 'हिन्दी' कोष्टी) (जिला छिंदवाड़ा)

कोई मनुष्य-का दो पुत्र हताँ। ऊन-मेँ-से छोटे-ने पिता-से कही दादा सपत्ती-मेँ-से जो मोरो हिस्सा होय सो मो-खे दे दे। ऊ-ने उन-खे अपनो धन बाँट दई। बहुत दिन नहीँ भया-हताँ कि छोटे लडका सब कछु इकट्ठो कर-के दूर देश-खे चलियो गये॥

चाँदा की कोष्टी मराठी से अधिक मिश्रित है। यहाँ सम्प्रदान का चिह्न ('न') द्रष्टव्य है जो गुजराती की किसी बोली से आया प्रतीत होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि मध्य प्रदेशो के बहुतेरे रेशम बुनने वाले मूलत गुजरात मे ही आये थे।

[सं० ३२]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (मिश्रित कोष्टी बोली) (जिला चाँदा)

एक मानुस-ला दुय लहान पोर्‍या होता। एक पोर्‍या आनि एक पोरगी। पोर्‍या होती वो रूपन फार साजरो हो तो। पोरगी साधारन होती। एक दिवस वँय दुय पोर्‍या

आरसा जवर खेलता खेलता पोर्‍या पोरगी-ला वलत वाई येन आरस-मा आसी देखवन कोन साजरो दिसत । पोरगी ला वो भेस नही वाटे । वना समजे की यो मला हिनावनाटी वलत । मग वा आपलो वाप जवर जाऊन भाई-को गह्राना मागीस । वा बलीस वावा आरसा-मा रूप देखून समाधान पावनु यो वायको-को काम । वा-मा मानसुन मन दिनु नही । वाप दुय झन-ला पोट सग धरून उन-की सामावानी करीसा वो बलीस पोर्‍या हो तुम्ही झगडो नको ।–आज पासल तुम्ही दुय जन-ही दर-रोज आरसा-मा देखन-जा ॥

वरार की कोष्टी तथा कुंभारी

वरार के कोष्टी तथा कुम्हार भी बुंदेली के एक विकृत रूप का व्यवहार करते है । इनके आँकडे निम्नलिखित है —

कोष्टी—

अकोला	३००	
एलिचपूर	२५०	
बुल्डाना	२,१००	
		२,६५०

कुभारी

बुल्डाना		५८०
	कुल योग	३,२३०

नीचे बुल्डाना से प्राप्त कुँभारी का एक नमूना प्रस्तुत है। कोष्टी बोली के लिए पृथक उदाहरण की आवश्यकता नही हे। कुभारी वोलियो पर एक सामान्य टिप्पणी भी दी जा रही है।

कुंभार बोलियाँ

कहा जा चुका है कि मध्य प्रदेशो तथा वरार के कुम्हारो की अपनी अलग बोली है जिसे कुँभारी नाम से जाना जाता है। प्राप्त उदाहरणो से यह सिद्ध नही होता। इनमे केवल यही प्रकट होता है कि इन प्रदेशो के कुछ कुम्हार अपने क्षेत्रविशेष की विभिन्न स्थानीय वोलियो के विकृत रूपो का व्यवहार करते है। सन् १८९१ की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेशो एव वरार में कुम्हारो की संख्या इस प्रकार थी—

मध्य प्रदेश	१०२,६८२
वरार	२२,४६५
कुल योग	१२५,१४७

सर्वेक्षण के लिए प्राप्त कुंभारी के आँकड़े निम्नलिखित हैं—

मध्य प्रदेश—

भँडारा	३०	
छिंदवाड़ा	४,४००	
चाँदा	१,०००	
		५,४३०

बरार—

अकोला	४,५००	
बुल्डाना	५८०	
		५,०८०
	कुल योग	१०,५१०

इनमें से भँडारा कुभारी, बघेली का एक विकृत रूप है और 'पूर्वी हिन्दी' (खण्ड ६) में इस बोली के अंतर्गत इस पर विचार किया जा चुका है। चाँदा की कुभारी विकृत तेलुगु है। यहाँ इसका विवरण नहीं दिया जा सकता। अकोला के कुभारो की कोई विशेष बोली नहीं है। वे ज़िले की सामान्य वरहाडी का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार स्थिति यह हो जाती है—

छिंदवाडा की कुभारी	४,४००
बुल्डाना की कुभारी	५८०
कुल योग	४,९८०

छिंदवाडा के ४,४०० कुम्हारो मे से कुछ विकृत बुंदेली का व्यवहार करते हैं और कुछ विकृत मराठी का। इन दोनो के निश्चित आँकड़े देना असभव है अत सबको बुंदेली के अतर्गत रख दिया गया है। इनकी बोली के मराठी रूप पर मध्य प्रदेशो की मराठी (दे० खड ७) के अतर्गत विचार किया जा चुका है।

छिंदवाडा कुभारी का बुंदेली रूप ज़िले की विकृत बुंदेली है। अत इसके लिए अलग से उदाहरण देना व्यर्थ होगा।

बुल्डाना की कुभारी बुंदेली तथा मराठी का विकृत रूप है जिस पर गुजराती अथवा राजस्थानी के प्रभाव चिन्ह हैं। नमूने के लिए अपव्ययी पुत्र-कथा के रूपातर का एक अंश दिया जा रहा है। यह बरार कोष्टी के उदाहरणस्वरूप भी पर्याप्त होगा।

[सं० ३३]

भारतीय-आर्य परिवार केन्द्रीय वर्ग

पश्चिमी हिन्दी

बुंदेली (कुंभारो की विकृत बोली) (जिला बुल्डाना)

एक अदमी-को दो लडका थे। नन्हो बाप-को कव्हानो लागो वा मोरे हिस्ना-की जीनगी मो-का दे। बाप-ने आपनी जीनगी दोनो-मो बाट दई। थोडे दीन-से नन्हो लडको आपनी जिनगी ले-के देस-को उपर गवो। व्हाँ चैनबाजी-मे आपनी जीनगी सब उडा दीई। ए-का सब पैसा खर्च हो-के वी देस-मो बडो काल पडो। ओ-के वास्ते बडी आडचण पडी। फेर ओ एक आदमी-के तरफ जा रहा-है। उइ अदमी-ने अपने खेत-मे डुक्कर राखबे-का धरे। व्हाँ ए आदमी-न डुक्कानी खा डारे-को कोंडा-पर खुषी-से आपन पेट भरे हाते। परतु ओ-को किन्ने ओ-वी दय नहीं। ए-के वास्ते इ-की आखी उघडी। जब तो आपुन-सो कव्हा लागो मोरे बाप-के कितनेक नौकर-पास सुद्धो पुर-को बचे ऐसे है। पण हम ह्याँ भुके मरते। फेर मैं अब बाप-के तरफ जान हुँ ओ-का कहुँ की वा मैं देव-को व तोरू भौत अपराधी हूँ। मैं तारो लडका कहने माफक नहीं। मो-का इ उपराध मोलकरी सरीखो लगाव।।

पश्चिमी हिन्दी में शब्दों एवं वाक्यों की प्रामाणिक सूची

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
१ एक	एक	एक	एक	एक
२ दो	दो	दो	दो	दो
३ तीन	तीन	तीन	तीन	तीन
४ चार	चार	चार	चार	चार
५ पाँच	पाँच	पाँच	पाँच	पाँच
६ छ	छअ	छे	छअ	छि
७ सात	सात	सात	सात	सत्त
८ आठ	आठ	अठ	अठ	अट्ठ
९ नौ	नौ	नव	नो	नूँ
१० दस	दस	दस	दस	दस
११ बीस	बीस	बीस	बीस	बीस
१२ पचास	पचास	पचास	पँचचास	पँचास
१३ सौ	सौ	सव्	सो	सौ
१४ मैं	मैं	मैं	मैं	मैं
१५ मेरा (of me)	मेरा	मेरा	मेरा	मेरा
१६ मेरा (mine)	मेरा	मेरा	मेरा	मेरा
१७ हम	हम	हम	हम	हम, हमें
१८ हमारा (of us)	हमारा	हमारा, अपना	म्हारा	म्हारा
१९ हमारा (our)	हमारा	हमारा, अपना	म्हारा	म्हारा
२० तू	तू	तू	तू	थूँ, तूँ, तौं
२१ तेरा (of thee)	तेरा	तेरा	तेरा	तेरा
२२ तेरा (thine)	तेरा	तेरा	तेरा	तेरा
२३ तुम	तुम	तुम	तम	थम, तम्हें
२४ तुम्हारा (of you)	तुम्हारा	तुमारा	थारा	थारा
२५ तुम्हारा (your)	तुम्हारा	तुमारा	थारा	थारा
२६ वह	वोह (ह्रस्व 'ओ')	वो, वोह (ह्रस्व 'ओ')	ओ, ओह (ह्रस्व 'ओ')	ओह (ह्रस्व 'ओ')

ब्रजभाषा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
एक, एकु	एकु	ऐक, एक	येक	एक
द्वै	दुइ	दो	दुय	द्वै
तीनि, तीन	तीनि	तीन	तीन	तीन
चारि, चार	चारि	चार	चार	चार
पाँच	पाँच	पाँच	पाँच	पाँच
छै	छह, छै	छै	छै	छै
सात	सात	सात	सात	सात
आठ	आठ	आठ	आठ	आठ
नौ	नव्	नौं, नौ	नौ	नौ
दस	दस	दस	दस	दस
बीस	बीस	बीस	बीस	बीस
पचास	पचास	पचास	पचास	पचास
सौ	सव्	सौ	सौ	सौ
हूँ, मैं	मैं	में, मैं	मैं, में	हौं, हौं, में, मैं-ऊँ
मेरौ, मेर्यौ	मोरो	मेरो, मो-को	मोर, मोरौ, म्वार, म्वारौ	मेरौ
मेरो, मेर्यौ	मोरो	मेरो	मोर, मोरौ, म्वार, म्वारौ	मेरौ
हम	हमैं, हमु, हम	हम	हम	हम, हम-ऊँ
हमारौ, हमार्यौ	हमारो	हम-को, हमारो, हमाओ	हमार, हमारौ, हमरौ	हमारौ
हमारौ, हमार्यौ	हमारो	हमारो	हमार, हमारौ, हमरौ	हमारौ
तू	तू	तैं, तूं	तुइँ, तइ, तइँ	तैं, तैं-ऊँ
तेरौ, तेर्यौ	तोरो	तो-को, तेरो	तोर, तोरौ, त्वार, त्वारौ	तिहारौ
तेरौ, तेर्यौ	तोरो	तेरो	तोर, तोरौ, त्वार, त्वारौ	तिहारौ
तुम	तुम, तुम्ह	तुम	तुम	तुम-ऊँ
तुम्हारौ, तुम्हार्यौ, तिहारौ, तिहार्यौ	तुम्हारो	तुम-को, तुमारो, तुमाओ	तुमार, तुमारौ, तुमरौ	तुम्हाऔ
तुम्हारौ, तुम्हार्यौ तिहारौ, तिहार्यौ	तुम्हारो	तुमारो	तुमार, तुमारौ, तुमरौ	तुम्हाऔ
वह, वुह, गु, ग्व	वुह, वहु	वो, ऊ	ऊ, वा	वअ, वअ-ऊँ

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
२७ उसका (of him)	उस-का	उन-का	उस-का	उस-का
२८ उसका (his)	उस-का	उस-का	उस-का	उस-का
२९ वे	वे	वे, ओ	वें	वें, ओह (ह०'ओ')
३० उनका (of them)	उन-का	उन-का	उन-का	उन-का
३१ उन-का (their)	उन-का	उन-का	उन-का	उन-का
३२ हाथ	हाथ	हाथ	हात्	हाथ
३३ पैर	पाँव	पॉव	पाँ	पैर
३४ नाक	नाक	नाँक	नाँक	नक्क
३५ आँख	आँख	आॅख	आँख	अख
३६ मुँह	मुँह	मूं	मुँह	मूंह
३७ दाँत	दाँत	दात	दाँत	दद
३८ कान	कान	कान	कान	केन
३९ वाल	वाल	वाल	वाळ	वाल
४० सिर	सिर	सिर	सिर	सिर
४१ जीभ	जवान	जीभ	जीव	जीव
४२ पेट	पेट	पेट	पेट	पेट
४३ पीठ	पीठ	पीठ	पीठ	ढूई
४४ लोहा	लोहा	लौवा	लोहा	लोया
४५ सोना	सोना	सुन्ना	सोन्ना	सिओना
४६ चाँदी	चाँदी	चाँदी	चाँदी	चाँदी
४७. पिता	वाप	वाप	वाप्पू	वाप्पू
४८ माँ	मा	मा	माँ	मॉ
४९ भाई	भाई	भाई	भाई	भाई
५० वहन	वहिन	भैन	वाहण, वोव्वो (पहला'ओ' ह०)	वीवी
५१ पुरुष	आदमी	आदमी, मरद	यादमी, माणस्	माणस्
५२ स्त्री	औरत	औरत	लुगाई, वीर-वान्नी	वय्यर

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
वा-कौ, वा-कौ, ग्वा-कौ	वुहि-को, वुहि-क्यार्, वुहि-केरो	ऊ-को, ऊ-खों	वा-कौ, वा-केरो आदि	वा-को
वा-कौ, बा-को, ग्वा-कौ	वुहि-को	ऊ-को, ऊ-खों	वा-कौ आदि	वा-कौ
वे, बे, ग्वे	उइ, वे	वे	उँय, वे	वे, वे-ऊँ
विनि-कौ, विनि-कौ, गुनि-कौ	उन-को	उन-को,उन-खों	उन-कौ आदि	विन-को
विनि-कौ, विनि-कौ, गुनि-की	उन-को	उन-को,उन-खों	उन-कौ आदि	विन-कौ
हाथु, हातु	हाँतु	हात्	हाँथ	हाथ
पाँउँ	पाँउँ	पाँउ	ग्वाडौ	पाँव
नाक, नाँक	नाकि	नाक	नाँक	नाक
आँखि	आँखीं	आँख	आँख	आँखि
मोँह, मुँहडौ	मुँहु	मौं	मुह, मोहडो (पहला'ओ' ह्र०)	मोँह, (ह्र०'ओ')
दाँतु	दतियाँ	दाँत	दाँत	दाँत
कानु	कानु	कान	कान	कान
वारु	वारु	वार	वार	वार
मूँडु	मूडु	मूँड, मूँडी	मूँड	मूँड
जीभ	जिभिया	जीभ, जीव	जीभ	जुवान
पेटु	पेटु	पेट	पेट	पेटु
पीँठि	पीठी	पीठ	पीठ	पीठ
लोहौ	लोहु	लोहो, लोउ	ल्वाहो	लोह
सौनौं	सोनु	सोनों	स्वानो	सोनो
चाँदी	चाँदी	चाँदी	चाँदी	चाँदी
कक्कू, दाऊ	वापु	वाप	वाप	कका
अम्मा, मयो	मैया	मताई, मतारी	महतारी	म्हतारी
भैया, भैंकरौ, वीरन	भैआ	भैया	भाई	भैया
भैंनी	वहिनी	वैंन, वेहन	वहिनी	वैंहिन
लोगु, मदुदु, माँसु	मरदु	आदमी, लोग	आदमी	मान्स
लुगाई, वैयरि	लोगाई	लुगाई, औरत	मिहरिया	जर्नी

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बॉंगरू
५३ पत्नी	बीबी	औरत	लुगाई, घर-वाली	लुगाई
५४ बालक	बच्चा	बच्चा	उलाद, जातग्-वाले	छूग्ट
५५ पुत्र	बेटा, लडका	बेटा	बेट्टा	बेटा
५६ पुत्री	बेटी, लडकी	बेटी	बेट्टी, धी	छोरी
५७ दास	घुलाम	गुलाम	गुलाम	नौकर
५८ किसान	काश्तकार	खेडूत	जोत्ता, बोवा, किसान	करसियाँ
५९ चरवाहा	गडरया	ढागर	गदरया	पाली
६० ईश्वर	खुदा	खुदा, अल्लाह	भगवान,राम-जी	राम
६१ प्रेत	शैतान	सैतान	दाना	शितान
६२ सूर्य	सूरज	सूरिज	सुरज	सूरज
६३ चद्रमा	चाँद	चाँद	चॉद	चद
६४ तारा	सितारा	तारा	तारा	तारह
६५ आग	आग	आग	आग	आग
६६ पानी	पानी	पानी	पाणी	पानी
६७ मकान	मकान	घर	घर	ढूण्ड
६८ घोडा	घोडा	घोडा	घोडा	घोडा
६९ गाय	गऊ, गाय	गाई	गॉ	ढाण्डी
७० कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता
७१ बिल्ली	बिल्ली	बिल्ली	बिल्ली	बिल्ली
७२ मुर्गा	मुर्घ	मुर्गा	मुर्गा	कुक्कर
७३ बत्तख	बत्तख	बदख	बत्तक	बत्तक
७४ गधा	गधा	गद्धा	गधा	खोत्ता
७५ ऊँट	ऊँट	ऊँट	ऊँट	उठ
७६ पक्षी	परदा	पखेरु, पखी	चिरया	चिडी
७७ जा	जा	जा	जा	तुर
७८ खा	खा	खा	खा	जीम
७९ बैठ	बैठ	बैठ	बैठ	बैट
८० आ	आ	आ	आव	आ
८१ मार	मार	मार	मार	मार
८२ खडे हो	खडा हो	खडे हो	खडा हो	खड

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुदेली	बुदेली (बनाफरी)	बुदेली (ग्वालियर की भदौरी)
घर-वारी, वहू	मेहरारू	जनी, बैयर, बौरिया	मिहरिया	लुगाई, घर-वाली
वालकु, छौट्टा, छौडा	वचवा	वालक, मोडला	(उभय लिंग के लिए कोई शब्द नही)	लौआ
वेटा, पूटु	वेटवा	लरका, वेटा	लरका	लला
विटिया, वेटी, धी	छोकरिया	विटिया, मोरी	विटिया	विटिया
गुलामु, टहलुआ	गुलामु	लैं-पालक	रूटया	चाकर
किसानु	किसानु	किसान	किसान	किसान
गडरिया	चरवाहु	गडरिया	गडरिया	पोहिया
पनमेसुर, भगमानु	दैउ	परमेसुर, ईसुर, भगवान्	पनमेसुर	पनमेंसुर
सैतानु	परेत	भूत, पिरीत	भूत	ममान
सूरजु, सुज्जू	सुरिजु	सूरज	सूरज	सूर्ज
चदा	जुंधैआ	चदा, जुनैआ	चदरमा	चद्रमा
तरैया	नकहत	तारे, तरैयाँ	तारागन	तरैयाँ
आगि	आगि	आगि	आगि	आगि
पानी	पानी	पानी	पानी	पानी
वाखरी	ओवरी (ह्र० 'ओ')	घर, वखरी	घर	घर, भाखर
घोडा	टटुआ	घुरवा	घ्वारी	घोरा
गैया	गाई	गऊ, गैया	गाइ	गैया
कुत्ता	कूकुरु	कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता
विलैया	विलारि	विलैया	विलैया	विलैया
मुर्गा	मुरगु	मुरगी	मुरगा	मुरगा
वतक	वत्तक	वदक	वदक	वदक
गदहा, गधा	गदहा	गधा	गधा	गदहा
ऊँटु	ऊँटु	ऊँट	ऊँट	ऊँट
चिरैया	चिरियाँ	चिरैया, पखेरा	चिरैया	पखैरू
जौ, जा	जाउ	जा	जा	जा
खाउ, जेंउ	खाउ	खा	खा	जें
वैठ	वैठु	वैठ	वैठ	वेठ
आ	आउ	आ	आव	आ
मार, पीट	कूट	मार, पीट, कूट	मार	मार
ठाडे होउ	ठाढा हो	ठाढा रे	ठाड हो	ठाडे हो

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
८३ मर	मर	मर	मर	मर
८४ दे	दे	दे	दे	दे
८५ दौड	भाग	भाग	भाग, दोड	भाज
८६ ऊपर	उपर	ऊपर	उप्पर	ऊपर
८७ निकट	नजदीक	नजीक, पास	नेडे	नेडे
८८ नीचे	नीचे	नीचे, तले	तळे	हेठ
८९ दूर	दूर	दूर	दूर	परे
९० पहले	पेश्तर, पहले	सामने	पहले, साह्मी	सामने
९१ पीछे	पीछे	पीछे	पिच्छे	पाछे
९२ कौन ?	कौन	कौन	कोण	कौण
९३ क्या ?	क्या	क्या	के	के, कै
९४ क्यों ?	क्यूँ	क्यूँ	क्यूँ	क्यूँ
९५ और	और	ने, अने, होर, और	अर, हर, ओर, और	होर
९६ लेकिन	लेकिन	पन, लेकिन, मगर	पर, अकै	पर
९७ अगर	अगर	अगर, जो	अज्या, जो	जे
९८ हाँ	हाँ	हाँ, होय	हाॅ	हाॅ
९९ नही	नहीं	नँ	नीं, नाॅ	नहीं
१०० हाय !	अफसोस	अरे, रे, तोबा	वाह	मोच
१०१ एक पिता	बाप	बाप	बाप्पू	बाब्बू
१०२ एक पिता का	बाप-का	बाप-का	बाप्पू-का	बाब्बू-का
१०३ एक पिता को	बाप-को	बाप-को, -कू	बाप्पू-कूँ,-नूँ,-ने	बाब्बू-ती, -ते
१०४ एक पिता से	बाप-से	बाप-से	बाप्पू-ते, -ते	बाब्बू-का-नी-ती,-ते
१०५ दो पिता	दो बाप	दो बाप	दो बाप्पू	दो बाब्बू
१०६ कई पिता	बाप	बाप	बाप्पू	घणे बाब्बू
१०७ पिताओं का	बापों-का	बापाँ-का	बाप्पू-का	बाब्बुआँ-का
१०८ पिताओं को	बापों-को	बापाँ-को, -कू	बाप्पू-कूँ, -नूँ,-ने	बाब्बुआँ-ती
१०९ पिताओं से	बापों-से	बापाँ-से	बाप्पू-तेँ, -ते	बाब्बुआँ-का-नी-ती
११० एक पुत्री	लड़की	बेटी	बेट्टी	छोरी

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	वुंदेली	वुंदेली (बनाफरी)	वुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
मर, मज्जाउ	मरु	मर	मर	मर
देउ	देउ	दे	दे	दे
भजि जाउ, भगि जाउ	भागु	दोर, भाग	धौर	दोर
ऊपर	ऊँचे	ऊपर	ऊपर	ऊपर
जौरें, ढिंग	नगीच	पास, नगीच	एँगर	ढिंग, लग-ते
नीचैं	तर-खले	नीचे, तरे	खाली	नीचे
दूरि	फ़ासिले	दूर, अलग	दूर	दूर
आँगें, सनुँही	पहले	आँगें, सामने	पेंस्तर	आँगे
पीछैं, पाछैं	पाछे	पीछैं, पछैं	पाछैं	पीछे
को	कौनु	को	कौन, को	को
का, कहा	काहा	का, काहे	का	कहा
काए-कूँ, काहे-कूँ	क्यों	काहे, काये, क्यों	काहे	काये-कों
औरु	औरु	ओर	और	और
परि	लेकिन, पर, पे	पर, परत, फिर	आकेल	पर, फिर
जौ	जौ	जो	जो	जो
आँहाँ, हाँ हाँ	हा, अच्छो	हओ, हाँ	हाँ	हओ
नाँइँ, नाँही	नहीं	नैयाँ, नइँ	नहीं	नाहीं
हाइ हाइ, अरे रे	सोचु	पछताव, अरे	हाय हाय	सोच
दाऊ	वापु	वाप	वाप	कका
दाऊ-की	वापु-को	वाप-को	वाप-कौ, -केरौ, आदि	कका-कौ
दाऊ-कूँ, -कौं, -कें	वापु-को	वाप-खों	वाप-कौं, आदि	कका-कों
दाऊ-सूँ	वापु-से	वाप-सें	वाप-सौं, आदि	कका-सों
द्वै दाऊ	दुइ वापु	दो-वाप	दुय वाप	द्वै कका
दाऊ	वापुन	वापन	वाप	गल्ले कका
दाउनि-की	वापुन-को	वापन-को	वापन-कौ	गल्ले कका-कौ
दाउनि-कूँ, कौं, -कैं	वापुन-को	वापन-खों	वापन-कौं	गल्ले कका-कों
दाउनि-सूँ	वापुन-से	वापन-सें	वापन-सौं	गल्ले कका-सों
विटिया	छोकरिया	विटिया	विटिया	विटिया

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
१११ एक पुत्री का	लडकी-का	बेटी-का	बेट्टी	छोरी-का
११२ एक पुत्री को	लडकी को	बेटी-कू	बेट्टी	छोरी-ती
११३ एक पुत्री से	लरकी-से	बेटी-से	बेट्टी	छोरी-का-नी-ती
११४ दो पुत्रियाँ	दो लडकियाँ	दो बेटियाँ	दो बेट्टी	दो छोर्याँ
११५ पुत्रियाँ	लडकियाँ	बेटियाँ	बेट्टीं	छोर्याँ
११६ पुत्रियो का	लडकियों-का	बेटियाँ-का	बेट्यूं-का	छोर्याँ-का, छोर्याँ-का
११७ पुत्रियो को	लडकियो-को	बेटियाँ-कू	बेट्यूं-कूं,-नूं, -ने	छोर्याँ-ती
११८ पुत्रियो से	लडकियों-से	बेटियाँ-से	बेट्यूं-तें, -ते	छोर्याँ-का-नी-ती
११९ एक भला पुरुष	एक नेक आदमी	एक अच्छा आदमी	चोक्खा यादमी	एक छेल माणस्
१२० एक भले पुरुष का	एक नेक आदमी-का	एक अच्छे आदमी-का	चोक्खे यादमी-का	एक छेल माणस्-का
१२१ एक भले पुरुष को	एक नेक आदमी-को	एक अच्छे आदमी-कू	चोक्खे यादमी-कूं, -नूं, -ने	एक छेल माणस्-ती
१२२ एक भले पुरुष मे	एक नेक आदमी-से	एक अच्छे आदमी-से	चोक्खे यादमी-तें,-ते	एक छेल माणस्-का-नी-ती
१२३ दो भले पुरुष	दो नेक आदमी	दो अच्छे आदमी	दो चोक्खे यादमी	दो छेल माणस्
१२४ भले पुरुष	नेक आदमी	अच्छे आदमी	चोक्खे यादमी	छेल माणस्
१२५ भले पुरुषो का	नेक आदमियों-का	अच्छे आदमी-का	चोक्खे यादम्यूं-का	छेल माणसाँ-का
१२६ भले पुरुषो को	नेक आदमियों-को	अच्छे आदमी-कू	चोक्खे यादम्यूं-कूं, -नूं, -ने	छेल माण्साँ-ती
१२७ भले पुरुषो मे	नेक आदमियो-से	अच्छे आदमी-से	चोक्खे यादम्यूं-तें, ते	छेल माणसाँ-का-नी-ती
१२८ एक भली स्त्री	एक नेक औरत	एक अच्छी औरत	चोक्खे बीर-बानी	एक छेल बरयर
१२९ एक बुरा लडका	एक खराब लडका	एक खराब छोरा	भुण्डा लोण्डा	एक भूण्डा छूरट

ब्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुदेली	बुदेली (बनाफरी)	बुदेली (ग्वालियर की भदौरी)
विटिया-कौ	छोकरिया-को	विटिया-कौ	विटिया-कौ	विटिया-कौ
विटिया-कूँ, -कौं, -कैं	छोकरिया-को	विटिया-खों	विटिया-कौं	विटिया-कौं
विटिया-सूँ	छोकरिया-से	विटिया-से	विटिया-सौं	विटिया-सौं
द्वै विटियाँ	दुइ छोकरियाँ	दो विटियाँ	दुय विटिया	द्वै विटियाँ
विटियाँ	छोकरियाँ	विटियाँ मोड़िअन	विटियाँ	गल्ले विटियाँ
विटियनि-कौ	छोकरियन-को	विटियन-को	विटियन-कौ	गल्ले विटियाँ-कौ
विटियनि-कूँ, -कौं, कैं	छोकरियन-को	विटियन-खों	विटियन-कौं	गल्ले विटियाँ-कौं
विटियनि-सूँ	छोकरियन-से	विटियन-सें	विटियन-सौं	गल्ले विटियाँ-सौं
एक भलौ मद्दु	नीको मरदु	एक नोनों मानस्, एक भलो मानस	येक अच्छा आदमी	एक भलौ मान्स
एक भले मद्द-कौ	नीके जने-को	एक भले मानस्-को	येक अच्छे आदमी-कौ	एक भले मान्स-कौ
एक भले मद्द-कूँ, -कौं, कैं	नीके जने-को	एक भले मानस्-खों	येक अच्छे आदमी-कौं	एक भले मान्स-कौं
एक भले मद्द-सूँ	नीके जने-से	एक भले मानस्-सें	येक अच्छे आदमी--सौं	एक भले मान्स-सौं
द्वै भले मद्द	दुइ नीके जने	दो भले मानस्	दुय अच्छे आदमी	द्वै भले मान्स
भले मद्द	नीके जनेन	भले(नोनें)मानस्	अच्छे आदमी	गल्ले भले मान्स
भले मद्दनि-कौ	नीके जनेन को	भले मानसन्-को	अच्छे आदमिन-कौ	गल्ले भले मान्स-कौ
भले मद्दनि-कूँ, -कौं, -कैं	नीके जनेन को	भले मानसन्-खों	अच्छे आदमिन-कौं	गल्ले भले मान्स-कौं
भले मद्दनि-सूँ	नीके जनेन से	भले मानसन्-सें	अच्छे आदमिन-सौं	गल्ले भले मान्स-सौं
एक भली बैयरि	नीकी लोगाई (हृ० 'ओ')	एक नोनी लुगाई	येक अच्छी मिहरिया	एक भलीजनी
एक भौंडौ छौडा	नागा लरिका	एक बुराओ लरका	येक लटौ लरका	एक बुरौ लरका

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	वम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
१३०. भली स्त्रियाँ	नेक औरतें	अच्छी औरतों	चोक्खी वीर-वान्नीं	छेल वय्यरा
१३१ एक बुरी लडकी	एक खराब लडकी	एक खराब छोकरी	भुन्डी लोन्डी	एक भूण्डी छोरी
१३२ अच्छा	नेक, अच्छा	अच्छा	चोक्खा	छेल, छैल
१३३ वेहतर	वेहतर	(उस-से) अच्छा	घणा चोक्खा	और छेल
१३४ सवसे अच्छा	सव-से अच्छा, निहायत उम्दअ	सव-से अच्छा	सव-तें घणा चोक्खा	घणे-ते घणा छेल
१३५. ऊँचा	ऊँचा	ऊँचा	उन्च्चा	ऊँचा
१३६ उच्चतर	जियादअ ऊँचा	उससे ऊँचा	घणा उन्च्चा	और ऊँचा
१३७ उच्चतम	सव-से ऊँचा	सव-से ऊँचा	सव-तें घणा उन्च्चा	घने-ते घना ऊँचा
१३८ एक घोडा	घोडा	घोडा	घोडा	घोडा
१३९ एक घोडी	घोडी	घोडी	घोडी	घोडती
१४० घोडे	घोडे	घोडे	घोडे	घोडे
१४१. घोडियाँ	घोडियाँ	घोड्याँ	घोडीं	घोरत्याँ
१४२ एक साँड	साँड	एक वैल	विजार, गोहरा (ह्० 'ओ')	खागिड
१४३ एक गाय	गाय	एक गाई	गाँ	ढाण्डी
१४४ कई साँड	साँड	वैलाँ	विजार, गोहरे (ह्० 'ओ')	खागड़े
१४५ गाएँ	गायें	गायाँ	गाँ	ढाण्ड्याँ
१४६ एक कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता	कुत्ता
१४७ एक कुतिया	कुत्या	कुत्ती	कुतया	कुत्ती
१४८ कुत्ते	कुत्ते	कुत्ते	कुत्ते	कुत्ते
१४९ कुतियाँ	कुत्याँ	कुत्त्याँ	कुतयाँ	कुत्त्याँ
१५० एक वकरा	वकरा	वोकड	वकरा	वकरा
१५१ एक वकरी	वकरी	वकडी	वकरी	वकरी
१५२ वकरे	वकरे	वोकडे	वकरे	वकर्‍याँ
१५३ एक हिरन	हिरन	नर हरना	हिरण	मिरग
१५४ एक हिरनी	हिरनी	हरनी	हिरणी	मिरगनी

व्रजभाखा	कनौंजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेला (ग्वालियर की भदौरी)
भली ठैयरि	नीकी लोगाई (ह्र० 'ओ')	अच्छी जनीं	अच्छीं मिहरियाँ	गल्ले भली जनीं
एक भौंडी छोटी	नागा छोकरिया	बुरई बिटिया	येक लटी बिटिया	एक बुरी बिटिया
भलौ	नीकु, नीको	अच्छो, नोनों	अच्छा	नींको, अच्छो
नैंक भलौ	बिसेख अच्छो	बहुत अच्छो, नोनों	बहुत अच्छा	बडो नींको
सब-सूं भलौ	निकनु-माँ नीकु	बहुत-ही नोनों (माजो या चोखो)	बेहद अच्छा	सब-तें नींको, सब-तें अच्छो
ऊँचौ	ऊँचो	ऊँचो	ऊँचा	ऊँचो
नैंक ऊँचौ	बहुतु ऊँचो	भौत ऊँचो, बडो ऊँचो	बहुत ऊँचा	बाँहत ऊँचो
सब-सूं ऊँचौ	ऊँचन-माँ ऊँच	भौंतई ऊँचो	बेहद ऊँचा	सब-तें-ऊँचो
एक घोडा	टटुआ	एक घुरवा	येक घ्वारो	एक घोडा
एक घुडिया	घोड़िया	एक घुरिया	येक घोडी	एक घुरिया
घोडा	बहुत टटुआ	घोरे	घ्वार	गल्ले घोरे
घुडियाँ	घोडियाँ	घुरियाँ	घोडीं	गल्ले घुरियाँ
एकु साँडु, एकु बिजारू	साँडा	एक साँड	येक बहुरा	एक साँड, एक बद्धा
एक गैया	गाई	एक गैया	येक गाइ	एक गैया
साँड	साँडा	साँडन्	बहुरा	गल्ले बद्धा
गैयाँ	गैयाँ	गैयाँ	गाइ	गैयाँ
एक कुत्ता	कूकुरु	एक कुत्ता	येक कुत्ता	एक कुत्ता
एक कुतिया	कुकरिया	एक कुतिया	येक कुत्ती	एक कुतिया
कुत्ता	कुकरवन्	कुत्तन्	कुत्ता	गल्ले कुत्ता
कुतियाँ	कुकरियाँ	कुतियाँ	कुत्तीं	गल्ले कुतियाँ
एक बोकरा	बोकरा	एक बुकरा	येक बुकरा	एक बुकरा, एक टैंना
एक बोकरी	बुकरियाँ	एक छिरिया	येक बुकरी	एक छिरिया
बोकरा	बुकरेवाँ	छिरियाँ, बुकरियाँ	बुकरा	गल्ले टैंना
एकु हिरनु	हिरनु	एक हिन्ना	येक मिग्गा	एक हिन्ना
एक हिरनी	हिरनी	एक हिन्नी	येक छिगारी	एक हिन्नी

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
१५५ कई हिरन	हिरन	हरन	हिरण	मिरग
१५६ मैं हूँ	मैं हूँ	मैं हूँ	मैं हूँ	मैं हूँ, सूँ, हाँ, साँ
१५७ तू है	तू है	तू है	तू है	तूँ है, सैं, हे, से
१५८ वह है	वोह है (ह्ल० 'ओ')	वो है	ओ हे	ओह, (ह्ल० 'ओ)' है, सै, हे, से
१५९ हम हैं	हम हैं	हम हैं	हम हैं	हम हैं, सैं
१६० तुम हो	तुम हो	तुम हो	तुम हो	थम हो, सो
१६१ वे हैं	वे हैं	वो हैं	वें हैं	ओह (ह्ल० 'ओ') हैं, सैं
१६२ मैं था	मैं था	मैं था, अथा	मैं था	मैं था
१६३ तू था	तू था	तू था, अथा	तू था	तूँ था
१६४ वह था	वोह था (ह्ल० 'ओ')	वो था, अथा	ओ था	ओह (ह्ल० 'ओ') था
१६५ हम थे	हम थे	हम थे, अथे	हम थे	हम थे
१६६ तुम थे	तुम थे	तुम थे, अथे	तम थे	थम थे
१६७ वे थे	वे थे	वो थे, अथे	वें थे	ओह (ह्ल० 'ओ') थे
१६८ हो	हो	हो	हो	हो
१६९ होना	होना	होना	होणा	होणा
१७० होते हुए	होता	होता	होत्ता	होंदा
१७१ होकर	होकर	हो-को	हुआ	होकर
१७२ मैं हो सकता हूँ	मैं होऊँ	मैं होऊँ	मैं हूँ	.
१७३ मैं होऊँगा	मैं होऊँगा	मैं होऊँगा	मैं हूँगा	मैं हूँगा
१७४ मुझे होना चाहिए	मैं होता	मैं होता	मैं होत्ता	. .
१७५ पीट	मार	मार	मार	मार
१७६ पीटना	मारना	मारना	मारणा, मारण	मारणा
१७७ पीट रहा	मारता	मारता	मारता	मारदा

ब्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
हिन्न	हिरनन्	हिन्नां		गल्ले हिन्ना-हिनियाँ
मैं हूँ, मैं ऊँ	मैं हौं	मैं हों, आँउँ	मैं आँहूँ, हौं	मैं हौं
तू है, तू ऐ	तू है	तैं है, आय	तैं आही, ही	तैं है
वुह है, गु ऐ	वहु है	वो है आय	वा आहै, है, आइ	वअ है
हम हैं, हम ऐं	हमु हनु	हम हैं, आँय	हम आहैं, आहेन, हन	हम हैं
तुम हौ, तुम औ	तुम हौ	तुम हो, आव	तुम आहू, आहा, हा	तुम हो
वे हैं, ग्वे एँ	वे हैं	वे हैं, आँय	उँय आहैं, आहीं, हैं, आँइ	वे हैं
मैं हौ (औ), हो (ओ)	मैं रहौं, थो, हतो	मैं हतो, तो	मैं हतो, तो, हतोंय, तोंय, रहौं	मैं हतो, हो
तु हौ, हो	तू रहै, थो, हतो	तैं हतो, तो	तैं हतो, तो, हतोय, तोय, रहस्	तैं हतो, हो
वह हो, गु हो	वहु रहै, थो, हतो,	वो हतो, तो	वा हतो, तो, रहै	वअ हतो, हो
हम है, हे	हम रहनु, थे, हते	हम हते, ते	हम हते, ते, हत्यन्, त्यन, रहन, रहैं	हम-ऊँ हते, हे
तुम है, हे	तुम रहौ, थे, हते	तुम हते, ते	तुम हते, ते, हत्यो, त्यों, रहा	तुम-ऊँ हते, हे
वे है, ग्वे हे	वे रहैं, थे, हते	वे हते, ते	उँय हते, ते, रहैं	वे-ऊँ हते, हे
होउ	हुइ जाउ	हो	हो	हो
ह्वैवो	होअन	होन	होन	होन
होतु	हुइ रहो-है	होत	होत	होतु
ह्वै-कैं, है-कैं	हुइ-कैं, भै-कैं	हो-कैं	हो-कैं	हो-कैं
मैं होऊँ	मैं हुइ सकौं	मैं होऊँ	मैं होअउँ	मैं-ऊँ हों
मैं होऊँगो	मैं हुइहौं मैं हुइहौं	मैं होऊँगो	मैं हुइहों, हूहौं	मैं-ऊँ होऊँगो
मारि (एक०), मारौ (बहु०)	मारौ	मार, पीट, कूट	मार	मारो
मारिवो	मारबु	मारबो, मारन्	मारन, मारैं, मारब, मारबो	मारवो, मान्नो
मारतु, मात्तु	मारतु	मारत	मारत	मारत, मात्तु, मात्तअ

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (टपरी दोआब)	बांगरू
१७८ पीट कर	मार-कर	मार-को	मार-कै	मार-कर
१७९ मैं पीटता हूँ	में मारता-हूँ	मैं-ने मारता-हूँ	में मारूँ	मैं मारूँ-सूं
१८० तू पीटता है	तु मारता-हे	तू-ने मारता-हे	तू मारे	तू मारै-सै
१८१ वह पीटता है	वोह मारता-है	दो मारता-हे	ओ मारे	ओह(लु०'ओ') मारै-सै
१८२ हम पीटते हैं	हम मारते-हैं	हम मारते-हे	हम मारें	हम मारैं-सैं ('सै' नहीं)
१८३ तुम पीटते हो	तुम मारते-हो	तुम मारते-हो	तम मारो	तम्हें मारो-मो
१८४ वह पीटते हैं	वे मारते-हैं	वो मारते-है	वें मारे	वैं मारैं-सै (सैं' नहीं)
१८५ मने पीटा (भू०का०)	मैंने मारा	मैं-ने मारा	में मारा	मैं-ने मार्‌या
१८६ तूने पीटा (भू०का०)	तू-ने मारा	तू-ने मारा	तें मारा	तैं-ने मार्‌या
१८७ उसने पीटा (भू० का०)	उन-ने मारा	उन-ने मारा	उस-ने मारा	उस-ने मार्‌या
१८८ हमने मारा (भू०का०)	हम-ने मारा	हम-ने मारा	हम-ने मारा	म्हा-ने मार्‌या
१८९ तुमने मारा (भ०का०)	तुम-ने मारा	तुम-ने मारा	तुम-ने मारा	था-ने मार्‌या
१९० उन्होने मारा(भू०का०)	उन्हों-ने मारा	उन-ने मारा, वो मारा	उन-ने मारा, वो मारा	उन-ने मार्‌या
१९१ मैं मारता हूँ	मैं मारता-हूँ	मैं मारता-हूँ	मैं मारता-हूँ	मैं मारूँ-सूँ
१९२ मैं मारता था	मैं मारता-था	मैं मारता-था	मैं मारता-था	मैं मार रिया-था
१९३. मैंने मारा था	मैं-ने मारा-था	मैं-ने मारा था	मैं-ने मारा-था	मै-ने मार्‌या-था
१९४ मैं मारूँ	मैं मारूँ	मैं मारूँ	मैं मारूँ	...
१९५ मैं मारूँगा	मैं मारूँगा	मैं मारूँगा	माडँ मारूँगा	में मारूँगा
१९६ तू मारेगा	तू मारेगा	तू मारेगा	तू मारेगा	तूँ मारेगा

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
मारि-कैं, -कें	मारि-कैं	मार-कें	मार-कै	मार-कें
मैं मारतु (मात्तु) -हूँ, मैं मात्तूं	में मारत-हौं	मैं मारूँ, मारत-हौं	मैं मारत-हौं	हौं मात्तअ-हौं
तू मारतु (मात्तु) -है, तू मात्तै	तू मारत-है	तूं मारत-हे	तैं मारत-ही	तैं मात्तअ-है
वह मारतु(मात्तु) -है, गु मात्तै	वह मारत-है	वो मारत-है	वा मारत-है	वग्र मात्तअ-है
हम मारतु(मात्तु) -हैं, हम मात्तैं	हम मारत-हनु	हम मारत-हैं	हम मारत-हैं	हम मात्तअ-हैं
तुम मारतु(मात्तु) -हौ, तुम मात्तौ	तुम मारत-हौ	तुम मारत-ही	तुम मारत-हा	तुम मात्तग्र-हो
वे मारतु (मात्त) -हैं, ग्वे मात्तैं	वहु मारत-हैं	वे मारत-हैं	उँय मारत-हैं	वे मात्तअ-हैं
मैं-नें मार्यौ	मैं-ने मारो	मैं-ने मारो	मैं-नें मारो, मारौंय	मैं-ने मारौ
तैं-नें मार्यौ	तू-ने मारो	तूं-ने, तैं-ने मारो	तै-नै मारो, मारोय	तैं-ने मारौ
वा-नें (वा-नें, ग्वा -नें) मार्यौ	उइँ मारो	ऊ-ने मारो	वा-नै मारो, मारोस्	वा-ने मारौ
हम-नें मार्यौ	हम-ने मारो	हम-ने मारो	हम-नै मारो, मार्यन	हम-ने मारौ
तुम-नें मार्यौ	तुम-ने मारो	तुम-ने मारो	तुम-नै मारो, मार्यो	तुम-ने मारौ
विन-नें (विन-नें, गुन-नें) मार्यौ,	उन्हन-ने मारो	उन-ने मारो	उन-नै मारो, मारोन	विन-ने मारौ
मैं मात्तूं	में मार रहो-हौं	मैंमारत-आँउँ	मैं मारत-हौं	मे मात्तअ हौं
मैं मार-रह्यौ	मैं मार रहो-थों	मैं मारत-हतो	मैं मारत-हतो, मारत हतोंय	मैं मात्तअ हतो
मैं-ने मार्यौ-अउ	मैं-ने मारो-थों	मैं-ने मारो-तो	मैं-नें मारो-हतो, मारो-हतोंय	मे-ने मारौ हतौ
मैं मारूँ मैं मारूँगो	मैं मरिहौं मैं मरिहौं	मैं मारों मैं मारिहों, मारहों या मारूँ-गो	मैं मारों मैं मरिहौं	हौं मारौं हौं मारौंगो
तू मारैगो	तू मरिहै	तैं मारिहे, मारहे या मारे-गो	तइँ मरिहै	तैं मारैगो

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वनाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
१९७ वह मारेगा	वोह (ह्ल० 'ओ') मारेगा	वो मारेगा	वो मारेगा	ओह (ह्ल० 'ओ') मारेगा
१९८ हम मारेंगे	हम मारेंगे	हम मारेगा	हम मारेगा	हम मारेंगे
१९९ तुम मारोगे	तुम मारोगे	तुम मारेगा	तुम मारेगा	थम मारेंगे
२००. वे मारेंगे	वे मारेंगे	वो मारेगा	वो मारेगा	ओह (ह्ल० 'ओ') मारेंगे
२०१ मैं मारता	मैं मारता	मैं मारता	मैं मारता	...
२०२ मैं मारा जाता हूँ	मैं मारा-जाता-हूँ	मैं मारा जाता-हूँ	मैं मारा जाता-हूँ	मैं मार्‌या जान्दा हाँ
२०३ मैं मारा गया	मैं मारा-गया	मैं मारा गया	मैं मारा गया	मैं मार्‌या गया
२०४ मैं मारा जाऊँगा	मैं मारा-जाऊँगा	मैं मारा जाऊँगा	मैं मारा जाऊँगा	मैं मार्‌या जाऊँगा
२०५ मैं जाता हूँ	मैं जाता-हूँ	मैं जाऊँ, जाता-हूँ	मैं जाऊँ, जाता-हूँ	मैं जाऊँ-मूँ
२०६ तू जाता है	तू जाता-है	तू जाता-है	तू जा	तूँ जावे-मैं
२०७ वह जाता है	वोह (ह्ल० ओ') जाता-है	वो जाता-है	ओ जाए, जा	ओह (ह्ल० 'ओ') जावे-मैं
२०८ हम जाते हैं	हम जाते-हैं	हम जाते-है	हम जाएँ, जाँ	हम जाएँ-सैं
२०९ तुम जाते हो	तुम जाते -हो	तुम जाते-हो	तम जाओ	थम जाओ-सो
२१० वे जाते हैं	वे जाते-हैं	वो जाते है	वें जाएँ, जाँ	ओह (ह्ल० 'ओ') जावैं-सैं
२११ मैं गया	मैं गया	मैं गया	मैं गया, गिया	मैं गया
२१२ तू गया	तू गया	तू गया	तू गया, गिया	तूँ गया
२१३ वह गया	वोह (ह्ल० 'ओ') गया	वो गया	ओ गया, गिया	ओह (ह्ल० 'ओ') गया
२१४ हम गए	हम गए	हम गए	हम गये	हम गए
२१५ तुम गए	तुम गए	तुम गए	तम गये	थम गए
२१६ हम गए	वे गए	वो (ह्ल० 'ओ') गए	वें गये	ओह (ह्ल० 'ओ') गए
२१७ जा	जा	जा	जा	जा

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुन्ली (ग्वालियर की भदौरी)
वह मारेगौ	वहु मरिहै	वो मारिहे, मारहे या मारे-गो	वा मारी	वअ मारह
हम मारेंगे	हम मरिहनु, हम मरिहैं	हम मारिहैं, मारहें या मारें-गे	हम मरिहे, मरिहैं	हम-ऊँ मारहैं
तुम मारौगे	तुम मरिहौ	तुम मारिहो, मारहो या मारो-गे	तुम मरिहा, मरिहौ	तुम-ऊँ मारहौ
वे मारेंगे	वे मरिहैं	वे मारिहैं, मारहैं या मारें-गे	उँय मरिहैं	वे-ऊँ मारहैं
मैं मार्यौ जातूं	मैं मारो जात-हौं	मैं मारो जात	मैं मारो जात-हौं	मैं मारौ हौं
मैं मार्यौ जातु-औ	मैं मारो गओ-थौं	मैं मारो गओ	मैं मारो गओ	मैं मारौ हतो
मैं मार्यौ जाऊँगौ	मैं मारो जैहौं	मै मारो जैहों	मैं मारो जैहौं	मैं मारौ जाऊँगो
मैं जातूं	मैं जाऊँ, जात-हौं	मैं जात	मैं जात-हौं	मैं चलौं, मैं जात-हों
तू जातु-ऐ	तू जाए, जात-है	तैं जात	तैं जात-ही	तैं चलै, तैं जात-है
वह जातु-ऐ	वहु जाए, जात-है	वो जात	वा जात-है	वअ चलै, वअ जात-है
हम जातें	हम जानु, जात-हनु	हम जात	हम जात-हैं	हम-ऊँ जात-हैं
तुम जातौ	तुम जाअउ, जात-हौ	तुम जात	तुम जात-हा	तुम-ऊँ जात-हो
वे जातें	वे जाएँ, जत-हैं	वे जात	उँय जात-हैं	वे-ऊँ जात-हैं
मैं गयौ	मै गओ-रहौं	मैं गओ (स्त्री० 'गयी')	मैं गओ, गा, गओंय	मैं गयौ
तू गयौ	तू गओ-रहै	तूं गओ	तैं गओ, गा, गओय	तैं गयौ
वह गयौ	वहु गओ-रहै	वो गओ	वा गओ, गा	वअ गयौ
हम गए	हम गए-रहनु	हम गये (स्त्री० 'गयीं')	हम गए, गे, गयन	हम-ऊँ गय
तुम गए	तुम गये-रहो	तुम गये	तुम गए, गे, गयो	तुम-ऊँ गये
वे गए	वे गये-रहैं	वे गये	उँय गए, गे	वे-ऊँ गये
जाउ, जाअउ	जाउ	जा	जा	जाउ

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
२१८ जा रहा	जाता	जाता	जात्ता	जान्दा
२१९ गया	गया	गया	गया, गिया	गया
२२० तुम्हारा क्या नाम है ?	तुम्हारा नाम क्या है ?	तुमारा नाम क्या है ?	तेरा के ना है ?	थारा कै नू सै ?
२२१ इस घोडे की क्या आयु है ?	इस घोडे-की उम्र क्या है ?	ये घोडे-की उम्र कितनी है ?	यू घोटा कै वरस-का ?	योह (ह्ल० 'ओ') घोडा के वडा है ?
२२२ यहाँ से कश्मीर कितनी दूर है ?	यहाँ-से कश्मीर कितनी दूर है ?	ह्याँ-से कश्मीर कितने दूर है ?	हिन्तर कस्मीर कितनी दूर हे ?	ऐटे-ते कश्मीर कितनी वाट है ?
२२३ तुम्हारे पिता के घर में कितने पुत्र हैं ?	तुम्हारे वाप-के घर-में कितने वेटे हैं ?	तुमारे वाप-के घर-में कितने वेटे है ?	तेरे वाप्पू-के घर--में कै वेट्टे ?	थारे वाब्बू-के घर कए जरयट हैं ?
२२४ आज मैं वहुत दूर चला हूँ।	मई आज वहुत चला-हूँ।	आज मइँ वहोत चला।	आज में वहोत दूर-लो पाहूँ गया।	मै आज घने दूर चाल्या।
२२५ मेरे चाचा के वेटे का व्याह उस-की वहन से हुआ है।	मेरे चचा-के लडके-की उस-के वहिन-से शादी हुई-है।	मेरे चाचा-के वेटे-ने उस-की वहिन-से शादी किया।	मेरे चाच्चा-के वेट्टे-का व्याह उस-की वाहण-की साथ हुआ।	मेरे काके-के छोरे-का व्याह उस-की वीवी-सेती होया-से।
२२६ सफेद घोडे की जीन घर मे है।	घर-मेंसफेद घोडे-का ज़ीन है।	घर-में सुफेद घोडे-का जीन है।	कोट्ठी-मे धोळे घोडे-की काट्ठी हे।	ढूण्ड-में धौले घोडे-की काठी से।
२२७ उसकी पीठ पर जीन कस दो।	उस-की पीठ-पर ज़ीन कसो।	उस-के पीठ-पर ज़ीन रख।	उस-के उप्पर काट्ठी वांधो।	उस-की कुड-पर काठी धर दियो।
२२८ मैंने उसके वेटे को कोडो से वहुत पीटा है।	मैं-ने उस-के लडके-को वहुत-से तस्मों-से मारा-है।	मैं-ने उस-के वेटे-कू वहोत छड्याँ मारा।	में उस-के वेट्टे-कै वहोत वेंत मारे।	मै-ने उस-के छोरे-ती घणे कोड्याँ मैं ते मारयअ-से।

ब्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की मदीगी)
जातु	जातु	जात	जात	जात
गयौ	गओ	गओ	गओ, गा, गौ	गयौ
तिहारौ नाम कहा ऐ ?	तुम्हारो कौनु नामु है ?	तुमाओ (तोरो) का नाओ (ह्र० 'ओ') है ?	तुमार का नाँव है ?	तिहारो का नाँउँ है ?
जौ घोडा-कैं बरस कौ ऐ ?	जौ टटुआ कित्ती उमिर-को है ?	जो घुरवा कैं बर्स-को है ?	या घुरवा कैं बरस-का है ?	जि घोरा कितनी बरसन-को है ?
ह्याँ-ते कस्मीरि-कूं कितेक दूरि ऐ ?	इहाँ-ते कस्मीर कितनी दूरि है ?	इत-से कस्मीर कितेक दूर है ?	इहाँ-तेँ कश्मीर कितनी दूर है ?	हियाँ-सेँ कसमीर कित्ती दूर है ?
तिहारे दाऊ-की बाखरि-में कितेक पूत ऐं ?	तुम्हारे बापु-के घर-महँ कित-ने लरिका हैं ?	तुमाये बाप-के घर में कै लरका हे ?	तुमार बाप-के घर-मैं कै लरका हैं ?	तिहारे पिता-के घर-में कै लरका हैं ?
आजु मैं भौतु चलौ-ऊँ।	मैं आजु दूरि चलो रहों।	मैं आज बिलात-रिन्गो फिरो।	आज मैं बहुत निआगो।	आज हौं बौहत चल-कें आओ हौं।
मेरे काका-कौ पूत वा-की भैनी-कूं ब्यायौ-ऐ।	हमारे चाचा-को लरिका बहि-की बहिनी-ते बियाहो है।	मेरे कक्का-को लरकाऊ-की वैन-को बिआ-हो है।	मोरे कका-के लरका खाँ बहिनीवा-की ब्याही है।	हमारे कका-के लरका-कौ ब्याह वा-की बैहिन-सें भओ-है।
बाखरि-मे बौरे घोडा-की जीन ऐ।	ओबरी-में सपेद टटुआ-को जीनु धरो-है।	सपेद घुरवा-को पलँचा ऊ घर-में धरो है।	घर-मैं सुपेद घुर-वा-का पलँचा धरो है।	वा घर-में वा सुफेद घोरा-को पल्लँचा धरो है।
वा-की पीँठि-पै जीन धरि देउ।	टटुआ-केरी पीठी-पर जीनु धर-देउ।	ऊ-की पीठ-पै पलँचाँ धर दो।	वा-की पीठ-पर पलँचा धर दया।	वा पल्लँचा-कों वा-पै कसो।
मैंने वा-के पूत-कूं भौत कुरन-सूं मारौ-ऐ।	वहि-केलरिका-काँ-मैं ने बहुत बेंतन मारो-है।	मेंने ऊ-के लरका खों खूब कोरन-से मारो।	वा-के लरका-खाँ मैं-नैं बहुत चपकन् मारो-है।	हम-ने जा लरका-कें बौहत ढुंडु कियाँ दई।

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
२२९ वह पहाड़ी के ऊपर मवेशियों को चरा रहा है।	वोह (ह्र० 'ओ') पहाड़-की चोटी-पर मवेशी चरा-रहा-है।	वो डोंगर-के सिर-पर ढोर चराता-है।	ओ टिल्ले-पे ढाँगर चुगावे।	ओह (ह्र० 'ओ') पहाड़-के सिखर डाँगर चरावे-सै।
२३० वह उस पेड़ के नीचे एक घोड़े पर बैठा है	वोह (ह्र० 'ओ') उस दरख्त-के नीचे घोड़े पर-बैठा-है।	वो उस झाड़-के तले घोड़े-पर बैठा-है।	ओ उस रूख-के तळे घोड़े-पे चढा बट्ठआ।	ओह (ह्र० 'ओ') एक घोड़े-पर उस रूख-के तले बैठा-से।
२३१ उसका भाई उसकी बहन से लंबा है।	उस-का भाई उसकी बहिन-से ज़ियादा लंबा है।	उस-का भाई उसके भैन-से ऊँचा है।	उस-का भाई उस-की बाहण-तैं घणा उन्च्चा।	उस-का भाई उस-की बीबी-ते घना ऊँचा से।
२३२ उसका मूल्य ढाई रुपये है।	उस-की कीमत ढाई रुपये है।	उस-की कीमत अटाई रुपिया है।	वा चीज ढाई रुपए-की।	उस-का मोल ढाई रोपया सै।
२३३ मेरे पिता उस छोटे मकान में रहते हैं	मेरा बाप उस छोटे घर-में रहता-है।	मेरा बाप उस छोटे घर-में रहता-है।	मेरा बाप्पू उस छोटटे घर-में रहे।	मेरा बाब्बू उस छोटी हू-ण्ड-में रहवे-से।
२३४ यह रुपया उसको दे दो।	उस-को येह रुपया दे-दो।	ये रुपिया उस-कू देओ। (ह्र० 'ओ')	यू रुपैया उसे दे-दो।	योह (ह्र० 'ओ') रोपया उस-ती दे-दो।
२३५. वह रुपये उससे ले लो।	उस-से वोह (ह्र० 'ओ') रुपये ले-लो	वो रुपिया उस-के पास-से लेओ। (ह्र० 'ओ')	ये रुपए उस-पा-तैं ले-लो।	उन रोपया-ती उस-ती ले-लो।
२३६ उसको खूब पीटो और रस्सियों से बाँध दो।	उस-को खूब मा-रो और र-स्सियों-से बाँध-दो।	उस-को खूब मा-रो और रस्सी-से बाँधो।	उसे घणा मार-पीट-के जेव-ड़ी-से बाँधो।	उस-ते ज़ोर मा-रो अर जीव-ड़्याँ-सीते बाँध-दियो।
२३७ कुएँ से पानी खींचो।	कूए-से पानी खींचो।	बवे-से पानी निकालो।	कुए-में-तैं पाणी खिन्चो।	कूएँ-से पानी काढ़ दियो।
२३८ मेरे सामने चलो।	मेरे सामने चलो।	मेरे आगे चलो।	मेरे आगे चल्ल।	मेरे आगे चालो।

ब्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
वुह पहाडी-की टुगमी-पै ढोर चरावतु-ऐ।	वहु गोरुअन-काँ पहाड-की-चुटैया- पर चरावत- हैं।	वो पहार-की चुटिआ-पै ढोर चराउत-आय।	वा पहार-के ऊपर गोरु चरावत-है।	वा डाँडे-पै पोहिया-पौहे चराइ रही-है।
वुह घोडा-पै वा पेड-के नीचैं बैठौ-भयौ-ऐ।	वहु एक टट्टुआ-पर वा रुख-के तरे वैठो है।	वो ऊ रुख-के नँचे घुरवा-पै वैठो है।	वा वा प्याडे-के तरैं घुरवा-पै वैठो है।	वअ घोरा-पै चढो ठाढो-है पेड-के नीचे।
वा-को भैंकरी वा-की भैंनि-सूँ लम्बी ऐ।	वहि-को भाई वहि-की वहिन-से ऊँचो है।	ऊ-को भैया ऊ-की वैन-से ऊँचो है।	वा-को भाई वा-की विहन-सों ऊँचो है।	वा-को भैया वा-की वैहिन-मों बडो है।
वा-कौ मोलु अढाई रुपैया ऐ।	वा-को दाम अढाई रुपया हैं।	ऊ-को दाम अढाई रुपैया हैं।	वा-को मोल अढाई रुपैया है।	वा-के दाम अढाई रुपैया हैं।
मेरौ दाऊ वा छोटी वाख-रि-में रहतु-ऐ।	हमार वापु उहि छोटी ओवरी (ह० 'ओ')-महँ वसत-है।	मेरे वाप ऊ हलके घर-में रत-हैं।	मोर वाप वा हलकी मडैया-में रहत है।	मेरौ कका वा छोटी-सी वा-खर-में रहत-है।
वा-कूँ जि रुपै-या दै-देउ।	जे रुपया वहि-का देउ।	जो रुपैया ऊ-खों देइ राखो।	वा-खाँ या रुपै-या दै-द्या।	जे रुपैया उन-कों देउ।
वा-पै-तें वे रुपैया लै-लेउ।	उन रुपयन-काँ उन-से लै-लेउ।	वे रुपैया ऊ-सें लेइ लो।	वा सों या रुपेया लै-ल्या।	वे रुपैया लै लेउ।
वा-कूँ खुबु पीटौ औरु वा-कूँ रस्सिनि-ने वाँधी।	वहि-काँ वहुत मारी औरु व-हि-काँ जौरी-से वाँधि-देउ।	ऊए ऐन मार-कें जे ओरा(ह० 'ओ')-में वाँव देओ	वा-खाँ खूब मार और जिवरी-सै वाँध द्या।	.
कूआ-में-सूँ पानी खैंचौ।	कुवाँ-ते पानी खैंचि-लेउ।	कुआँ-से पनी ऐंछो।	पानी कुवा-तैं ऐंच-ला।	कुआँ- तैं पानी भर लाउ।
मेरे सौंहीं चलौ।	हमारे सामने चलो।	मोरे आँगें रेंगो।	मोर आँगें नैंग।	हमारे सामनें फिरो।

हिन्दी	हिन्दोस्तानी (दिल्ली)	बम्बई की दक्खिनी	वर्नाक्यूलर हिन्दोस्तानी (ऊपरी दोआब)	बाँगरू
२३९ तुम्हारे पीछे किस-का लड़का आता है?	तुम्हारे पीछे किस-का लड़का-आता-है?	किस-का छोकरा तेरे पीछे आता-है?	तेरे पिच्छे किस-का लोन्डा आवे?	किस-का जरयट थारे पाछे आवे-से?
२४० तुमने वह किनसे खरीदा?	तुम-ने वोह (ह्र० 'ओ') किस-से खरीदा-है?	ये तू-ने किस-के पास-से वेचले-लिया?	तैं या चीज किस-के तैं लै?	ओह (ह्र०'ओ') था-ने किस-ते मोल-लिया?
२४१ गाँव के एक दुकानदार से।	गाँव-के एक दूकान्दार-से।	खेडी-के दूकान्दार के पास-से।	गाम-के बानया-पा-तैं।	गाम-के एक हट्टी आले-ते।

व्रजभाखा	कनौजी (कानपुर)	बुंदेली	बुंदेली (बनाफरी)	बुंदेली (ग्वालियर की भदौरी)
तिहारे पाछैं कौन-कौ छौंडा आमतु-ऐ ?	तुम्हारे पाछे केहि-को लरिका आवतु-है ?	कौन-को मोडा तुमाये पाछे आउत ?	क्या-को लरका तुमार पाछैं आवत-है ?	कौन-कौ लरका चलौ आउत-है पाछें ?
तुम-नें वह कौन-पैं-सूं मोल लियौ ?	वहि-काँ तुम-ने केहि-से लओ-रहै ?	वो तुम-ने कौन-सें लओ तो ?	वा क्या-खैं लई-है ?	कौन-नें तुम-नें वा-कों लओ ?
गाम-के एक दुकान-वारे-पैं सूं ।	गाँउँ-के दुकान्दार-ते ।	गाँव-के एक वानियाँ-सें ।	गाँव-के दुकानदार-मैं ।	वा गाँउँ-के वनियें-के-तें ।

परिशिष्ट 'क'

महत्त्वपूर्ण प्रारम्भिक तिथियों की सूची

ईसा के पश्चात्

१६०० सम्राट् अकबर का शासन-काल। अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी।

१६०२ डच ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना।

१६०५ सम्राट् जहाँगीर का सिंहासनारोहण।

१६१५ सर टी० रो का दूतावास, सूरत मे अंग्रेज़ी फैक्टरी की स्थापना।

१६१६ 'हिन्दोस्तान' भाषा का बिलकुल प्रारम्भिक लिखित उल्लेख (टॉम कारएट द्वारा बोली जानेवाली)

१६२० आगरा में जेसुइट कालेज का खोला जाना, वहाँ अंग्रेजी एजेन्सी की स्थापना।

१६२३-२४ पेत्रो देला वल भारत मे।

१६२८ सम्राट् शाहजहाँ का सिंहासनारोहण।

१६३० फारसी, हिन्दोस्तानी, अंग्रेजी तथा पुर्तगाली के सूरत शब्दकोश का संकलन।

१६४० हुगली मे अंग्रेजी फैक्टरी की स्थापना।

१६५३ हैनरिक रॉथ आगरा के जेसुइट कालेज मे अध्यापक हुए।

१६५५ टेरीकृत 'पूर्वी भारत की यात्राएँ' शीर्षक ग्रंथ का प्रकाशन। टेरी सर टी० रो के साथ गये (१६१५)।

१६५८ सम्राट् औरंगजेब का सिंहासनारोहण।

१६६१ बम्बई का अंग्रेजी शासन को दिया जाना।

१६६२ पेत्रो देला वलकृत 'भारतीय यात्राएँ' प्रकाशित।

१६६४ हेनरिक रॉथ का रोम जाना और किरचेर से मिलना।

१६६७ किरचेर कृत 'China Illustrata'; लक्रोज़ की बर्लिन मे पुस्तकाध्यक्ष के रूप मे नियुक्ति।

१६७२ जे० फ्रेयर की पूर्वी भारत तथा फारस की यात्राओं का प्रारम्भ और इसका १६८१ तक चलना, प्रकाशन का प्रारंभ १६९८ मे।

१६७२ ओ डेपरकृत 'एशिया' का डच मे प्रकाशन।

१६७३ जे० ओगिल्वीकृत 'एशिया'।

१६७८ हेनरीकस वान र्‌हीड टॉट ड्रेकेमटीनकृत 'Hortus Indicus Malabaricus' के प्रकाशन का प्रारम्भ।
१६८० एण्ड्री मुलरकृत 'Oratio Orationum'
१६८१ ओ० डेपरकृत 'एशिया' (जर्मन अनुवाद) का नूरन्वर्ग मे प्रकाशन।
१६९४ टॉमस हाइडकृत 'Historia Shahiludii'
१६९६ चारनॉक द्वारा कलकत्ता में फोर्ट विलियम की स्थापना
१६९८ जे० फेयरकृत 'पूर्वी भारत तथा फारस मे यात्राएँ' प्रकाशित, देखिए १६७२।
१७०४ फ्रासिसकस एम० तुरोनेसिस ने अपनी 'Lexicon Linguae Indostanicae' शीर्षक कृति पूरी की।
१७०८ सम्राट् बहादुरशाह का सिंहासनारोहण।
१७११ केटलेर का दूतावास।
१७१२ सम्राट् जहाँदरशाह का सिंहासनारोहण।
१७१३ सम्राट् फर्रुखसियर का सिंहासनारोहण।
१७१५ केटलेर का व्याकरण, चेम्बरलेन तथा विलकिन्स की 'Oratio Dominica'
१७१९ सम्राट् मुहम्मदशाह का सिंहासनारोहण।
१७२६–२९ वेयर की खोजे।
१७३९ लक्रोज़ की मृत्यु, देखिए १६६७, नादिरशाह द्वारा भारत पर आक्रमण।
१७४३ मिलकृत 'Dissertationes Selectae'
केटलेर के व्याकरण का प्रकाशन। मनोल दा एजम्पचैम द्वारा एक बगाली व्याकरण तथा शब्दावली लिज़बन मे प्रकाशित।
१७४४ शुल्ट्‌ज़कृत 'Grammatica Hindostanica'
१७४५–५८ शुल्ट्‌ज़ के बाइबिल अनुवाद।
१७४८ सम्राट् अहमदशाह का सिंहासनारोहण। फिट्‌ज़कृत 'Sprachmeister' प्रकाशित।
१७५४ सम्राट् आलमगीर द्वितीय का सिंहासनारोहण।
१७६१ Alphabetum Brammhanicum,'
पानीपत का तीसरा युद्ध। अहमदशाह दुर्रानी द्वारा मराठो की पराजय।
१७७२ वारेन हेस्टिग्ज़, बगाल के गवर्नर। हैडले का व्याकरण प्रकाशित।
१७७३ फर्गूसन का 'हिन्दोस्तानी शब्दकोश' प्रकाशित।
१७७८ लिज़बन मे 'Grammatica Indostana' प्रकाशित।

१७८२ इवारस ऐवेलकृत 'Symphona Symphona'
१७८६ मारक्विस ऑफ कार्नवालिस, गवर्नर जनरल ।
१७८७ गिलक्राइस्ट द्वारा प्रकाशन प्रारम्भ ।
१७८८ लन्दन मे 'Indian Vocabulary' प्रकाशित ।
१७९० हैरिसकृत 'Dictionary of English and Hindostany' प्रकाशित ।
१७९१ रोम मे 'Alphabeta Indica' प्रकाशित ।
१७९३ सर जॉन शोर, गवर्नर जनरल । विलियम कैरी का कलकत्ता पहुँचना ।
१७९८ लॉर्ड मॉर्निंगटन (मारक्विस ऑफ वेलेज़ली) गवर्नर जनरल ।
१८०० राबर्टकृत 'Indian Glossary'
१८०१ लेबेडेफ का व्याकरण । कैरी का पहला बंगाली 'न्यू टेस्टामेंट' छपा ।
१८०५ मारक्विस ऑफ कार्नवालिस, दूसरी बार गवर्नर जनरल । डब्ल्यू० हण्टरकृत 'न्यू टेस्टामेंट' का हिन्दोस्तानी मे अनुवाद, मुहम्मद फितरत तथा अन्य विद्वान् देश-वासियो की सहायता से किया गया ।
१८०६ एडलगकृत 'मिथ्रिडेट्स' की पहली जिल्द का प्रकाशन । हेनरी मार्टिन भारत आये और 'न्यू टेस्टामेंट' का अनुवाद प्रारम्भ किया ।
१८०७ अर्ल ऑफ मिण्टो, गवर्नर जनरल ।
१८१० हेनरी मार्टिन का 'न्यू टेस्टामेंट' का उर्दू अनुवाद, जो सभी परवर्ती रूपांतरों का आधार है, मुहम्मद फितरत की सहायता से पाडुलिपि के रूप मे पूर्ण हुआ ।
१८११ कैरी द्वारा एक हिन्दी न्यू टेस्टामेंट प्रकाशित ।
१८१२ सिरामपोर प्रेस मे आग । 'न्यू टेस्टामेंट' के हेनरी मार्टिनकृत रूपातर प्रकाशित होने के पूर्व नष्ट हो गये ।
१८१३ अर्ल ऑफ मोएरा (मारक्विस ऑफ हेस्टिंग्ज) गवर्नर जनरल । कैरी ने 'Pentateuch' हिन्दी मे प्रकाशित किया ।
१८१४ 'न्यू टेस्टामेंट' का हिन्दोस्तानी में किया हुआ हेनरी मार्टिन का अनुवाद प्रकाशित । कैरी द्वारा हिन्दी में 'न्यू टेस्टामेंट' का प्रकाशन ।